ओ३म्

सत्यार्थ प्रकाश एवं सरल व्याख्या

लेखिका :
श्रीमती पुष्पा गुप्ता (एम. ए.)

परोपकारिणी सभा, अजमेर से अनुमति प्राप्त रचना

लेखिका	पुष्पा गुप्ता (एम.ए)
संपादक	विनय आर्य आचार्य अनिल शास्त्री
	सर्वाधिकार सुरक्षित
प्रकाशक	**वैदिक प्रकाशन** दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा 15 हनुमान रोड, नई दिल्ली–110001
संपर्क	**aryasabha**@yahoo.com **aryasabha**@yahoo.com Facebook.com/**arya.samaj** Twitter.com/**thearyasamaj** दूरभाष : **9540045898**
प्रथम संस्करण	2022
मुद्रक	विद्या दर्शन ऑफसेट प्रिंर्टस
मूल्य	
आई.एस.बी.एन.	**978-81-955263-1-4**

thearyasamaj.org

विषय-सूची

- सत्यार्थ प्रकाश सार IV
- प्रकाशकीय V
- प्रस्तावना VIII
- दो शब्द XI
- महर्षि दयानन्द का मन्तव्य XIV

1. ईश्वर के नामों का परिचय 1
2. बाल-शिक्षा 9
3. अध्यापन तथा ब्रह्मचर्य 13
4. समावर्त्तन, विवाह, गृहस्थाश्रम 27
5. वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम 44
6. राजधर्म 50
7. ईश्वर और वेद 65
8. सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति प्रलय आदि विषय 89
9. विद्या-अविद्या और बंध-मोक्ष विचार 109
10. आचार-अनाचार, भक्ष्य-अभक्ष्य व्याख्या 131
11. आर्यावर्त के विभिन्न मतों का विधिपूर्वक खंडन 141
12. चार्वाक, बौद्ध और जैन आदि नास्तिक मतों का खंडन 199
13. ईसाई और यहूदी मत खंडन 234
14. इस्लाम मत का खंडन 281

thearyasamaj.org

“सत्यार्थप्रकाश सार”

दिया है दयानंद ने उपहार वेद का
सत्यार्थप्रकाश में है सार वेद का
ओं नाम प्रभु का खोलकर कहा
सत्य की तराजू में तोलकर कहा
परमात्मा बताया निराकार ओं का
सत्यार्थप्रकाश में है सार वेद का।

अग्नि, वायु आदि हैं सभी के लिए
ईश्वर भी अनादि है सभी के लिए
दे गए सभी को अधिकार वेद का
सत्यार्थप्रकाश में है सार वेद का।

सर्वशक्तिमान का आखीर नहीं है
किसी संप्रदाय की जागीर नहीं है
संसार में फैलाया समाचार वेद का
सत्यार्थप्रकाश में है सार वेद का।

नमस्ते अभिवादन को चलाया ऋषि ने
दलितों महिलाओं को उठाया ऋषि ने
देखो ये कैसा है चमत्कार वेद का
सत्यार्थप्रकाश में है सार वेद का।

●●●

thearyasamaj.org

प्रकाशकीय...

सत्यार्थ प्रकाश है–अमृत कलश

मानव समाज को वैदिक सन्मार्ग दिखाने वाले, सम्पूर्ण वसुधा पर प्रेम सुधा बरसाने वाले महर्षि दयानंद सरस्वती जी द्वारा रचित सत्यार्थ प्रकाश उनकी एक विशेष और प्रमुख रचना है। यह एक ऐसा अमृत कलश है, जिसके अमृत कणों को प्राप्त करके लाखों–करोड़ों मनुष्यों ने अपने जीवन को सत्य से प्रकाशित किया है। सत्यार्थ प्रकाश एक ऐसा अनुपम ग्रंथ है जो वेदों पर आधारित ईश्वर का सत्य स्वरूप, उसकी उपासना विधि, न्याय व्यवस्था, कल्याणकारी विद्या, वैदिक धर्म, संस्कृति और संस्कार, हर आयुवर्ग के मानवीय कर्तव्य इत्यादि समस्त अनिवार्य तथ्यों को ठीक ठीक समझाता है। दुनिया में जितने भी अज्ञान, अविद्या, अंधकार, ढोंग, पाखंड और अनेकानेक प्रचलित कुरीतियां हैं उनसे बचकर सुख, समृद्धि, शांति और कल्याण के मार्ग पर अग्रसर होने के लिए मानवमात्र को सत्यार्थ प्रकाश पढ़ना ही चाहिए।

सत्यार्थ प्रकाश को लेकर कई लोगों का कहना है कि इसमें खण्डन ही खण्डन है, इसमें विरोध ही विरोध है, इसमें अन्य मत–मतांतरों की निंदा ही निंदा है। यहां पर मैं डंके की चोट पर कहना चाहता हूं कि सत्यार्थ प्रकाश में केवल और केवल सत्य ही सत्य है, जो जैसा है उसको महर्षि द्वारा वैसा ही कहने, मानने और करने का सफल प्रयास है, अगर किसी को इस कालजयी अमर ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में अटल, अटूट वैदिक सिद्धान्तों पर आधारित सत्य के दर्शन नहीं होते तो उसे समझना चाहिए कि उसकी अपनी दृष्टि में ही दोष है। **महर्षि दयानंद जी ने सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में स्पष्ट रूप से लिखा है कि "आजकल बहुत से विद्वान प्रत्येक मतों**

thearyasamaj.org

में हैं, वे पक्षपात छोड़ सर्वतंत्र सिद्धांत अर्थात जो– जो बातें सबके अनुकूल सबमें सत्य हैं, उनका ग्रहण और जो एक दूसरे के विरुद्ध बातें हैं उनका त्याग कर परस्पर प्रीति से बरतें और बरतावें तो जगत का पूर्ण हित होवे।" महर्षि के इस संदेश में संपूर्ण जगत के कल्याण की भावना निहित है, उनका मानना था कि जो प्रचलित मत हैं, संप्रदाय हैं, उनमें भी विद्वान हैं और उन मतों में भी सर्वतंत्र सिद्धांत हैं, उनकी धारणा थी कि जो जो बातें सब मतों में एक दूसरे के अनुकूल और समान हैं उनका विद्वान प्रचार करें और जो जो बातें प्रतिकूल तथा विरुद्ध हैं उनका प्रचार न किया जाए। महर्षि दयानंद सरस्वती का किसी से कभी कोई द्वेष भाव नहीं था उन्हें तो असत्य से घृणा थी। क्योंकि वे सत्य सनातन वैदिक सिद्धान्तों के पक्षधर थे। इसलिए महर्षि के मानने वालों में हिंदू, मुस्लिम, सिख, इसाई भारतीय और विदेशी सब लोग थे। महर्षि ने सबको आर्य बनने और बनाने का संदेश दिया। उन्होंने अपने ग्रंथों में और प्रवचनों में आर्यजाति, आर्यावृत, आर्यभाषा आदि शब्दों का ही प्रयोग किया, उनका गुजराती, संस्कृत और हिंदी भाषा पर अधिकार था किंतु उन्होंने देशी विदेशी भाषाओं को सीखने की प्रेरणा मानव मात्र को प्रदान की। महर्षि का दृष्टिकोण विस्तृत और व्यापक था, वे संपूर्ण मानवजाति और मानवता के परम हितेषी धर्मात्मा महापुरुष थे। लेकिन उन्होंने कभी भी, कैसी भी परिस्थिति में सत्य से समझौता नहीं किया। महर्षि का कहना था कि "विरोध की आंच से सत्य की कांति चौगुना चमकती है। दयानंद को यदि कोई तोप के मुंह के आगे रखकर भी पूछेगा कि सत्य क्या है? तब भी उसके मुंह से वेद की ही श्रुति निकलेगी।" ऐसे निर्भीक महान संन्यासी सा उदार हृदय संसार में कोई अन्य दिखाई नहीं देता।

दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा द्वारा संचालित सेवा प्रकल्पों में सत्यार्थ प्रकाश को विश्व स्तर पर जन जन तक पहुंचाने का संकल्प प्रमुख है। इस कार्य को अधिक गति देने के लिए सभा ने एक स्थाई निधि की दिव्य योजना

भी बनाई है। जिसके माध्यम से सत्यार्थ प्रकाश लगातार विश्व की संस्थाओं में भेजे जा रहें हैं। सभा का प्रयास है कि भारत के समस्त महत्वपूर्ण संस्थानों और पुस्तकालयों में तथा सभी दूतावासों में, स्कूल–कॉलेजों में इस महान ग्रंथ को पहुंचाया जाए। यह भारत के हर नागरिक तथा विश्व के प्रत्येक व्यक्ति के जीवन को प्रकाशित करे। इस महान परोपकारी कार्य में हमें निरन्तर सफलता मिल रही है। इस क्रम में "सत्यार्थ प्रकाश एवं सरल व्याख्या" जिसे परोपकारिणी सभा अजमेर द्वारा प्रकाशित करने का अधिकार प्राप्त है, इसकी लेखिका पुष्पा गुप्ता जी द्वारा किया गया प्रयास अत्यंत प्रशंसनीय है। प्रस्तुत पुस्तक के प्रकाशन का सुझाव आर्यसमाज के सम्मानित अधिकारी श्री राजीव चौधरी जी ने दिया है। यह पुस्तक प्रत्येक पाठक के लिए अत्यंत सरल, सहज भाषा, भाव और शैली में प्रस्तुत की गई है, लेकिन महर्षि द्वारा रचित सत्यार्थ प्रकाश पर ही पूरी तरह आधारित है, इसे पढ़कर साधारण मानव भी महर्षि के सत्य सन्देश, उपदेश से ज्यादा लाभ प्राप्त करेंगे, मैं लेखिका के प्रति कृतज्ञता व्यक्त करते हुए सभी पाठकों से अनुरोध करता हूं कि सत्यार्थ प्रकाश को जन जन तक पहुंचाने वाले अभियान में सम्मिलित होवें और सत्यार्थ प्रकाश एवं सरल व्याख्या को स्वयं पढ़ें और दूसरों को भी पढ़ावें।

–विनय आर्य
महामंत्री
दिल्ली आर्य प्रतिनिधि सभा

●●●

thearyasamaj.org

प्रस्तावना...

सत्य और असत्य का विवेचन, धर्म एवं अधर्म की व्याख्या, जीवन तथा जगत का सच्चा, सरल, सत्यमार्ग, प्रभु का सत्य–स्वरूप और प्राप्ति आदि किसी एक ग्रन्थ में खोजनी हों, तो वह सत्यार्थ–प्रकाश ग्रन्थ है। जैसा उसका नाम है, वैसा ही उसका काम व प्रभाव है। सत्य के आर्य को प्रकाशित करके सन्मार्ग दर्शन कराये, वह सत्यार्थ–प्रकाश है। ऋषि दयानन्द के मानवजाति पर जहाँ अनेक उपकार हैं। वहाँ महर्षि की महत्वपूर्ण उल्लेखनीय तथा स्मरणीय देन सत्यार्थ प्रकाश है। सत्यार्थ–प्रकाश जैसा दूसरा ग्रन्थ संसार में नहीं है। ऋषिवर ने इस ग्रंथ की भूमिका में लिखा है, मेरा इस ग्रंथ को बनाने का मुख्य प्रयोजन सत्य–अर्थ को प्रकाशित करना है। जो सत्य है, उसे सत्य और जो मिथ्या है उसको मिथ्या प्रतिपादित करना।' मनुष्य का आत्मा सत्यासत्य को जानने वाला है। वह स्वार्थ, लोभ, अज्ञान, दुराग्रह आदि के कारण पाप और अधर्म कर जाता है।

यह पूरा ग्रन्थ चौदह समुल्लासों अर्थात् भागों में लिखा गया है। इसमें दस समुल्लास पूर्वाद्ध के हैं। इनमें जीवन तथा जगत के उपयोगी निर्माण उत्थान, कल्याण, श्रेष्ठमार्ग आदि का दिग्दर्शन कराया गया है। परमात्मा के नाम की व्यावहारिक, चर्चा, माता–पिता, गुरुजनों आदि के द्वारा बालकों का पठन–पाठन, शिक्षा कैसी और किन ग्रंथों की हो, गृहस्थ धर्म, वेद, ईश्वर, सृष्टि–उत्पत्ति, कर्मफल, मोक्ष, आचार–अनाचार, भक्ष्याभक्ष्य, आदि महत्वपूर्ण उपयोगी विषयों पर तर्क, युक्ति, प्रमाण, वैज्ञानिक दृष्टि आदि से विवेचन किया गया है। महर्षि के विवेचन की विशेषता रही है–प्रश्नोत्तर शैली में गूढ़–गंभीर विषयों को समझा देना। उत्तरार्द्ध के चार समुल्लासों में भारतीय मत–मतान्तरों, ढोंग, पाखंड गुरुडम, ईसाईयत तथा इस्लाम में फैली तर्कहीन, बुद्धिविरुद्ध, अवैज्ञानिक आदि बातों का खंडन किया गया है। इस खंडन में ऋषि की दृष्टि सर्वत्र,

thearyasamaj.org

सत्य प्रकाशित एवं प्रतिपादित करने की रही है। उनका ध्येय रंचमात्र भी किसी का दिल दुखाने का नहीं रहा है। उन्होंने बिना पक्षपात के जो जैसा है, वैसा दिखाया तथा बता दिया है। सच्चाई है कि वैचारिक तथा सैद्धान्तिक स्तर पर मत–मतान्तरों, ईसाइयत, इस्लाम आदि से टक्कर लेने के लिए, हिन्दू समाज में व्याप्त अंधविश्वास ढोंग–पाखंड मिटाने के लिए और समग्र क्रान्ति लाने के लिये सत्यार्थ–प्रकाश की रचना की गई।

इस ग्रन्थ की अनेक विशेषतायें हैं। जिसने भी इस ग्रंथ को पढ़ा, सुना तथा समझा उसी का कायाकल्प हो गया। सत्यार्थप्रकाश को पढ़कर न जाने कितने नास्तिक से आस्तिक बन गए। कितने लोग मिथ्या अज्ञान, अन्धा–श्रद्धा, पोपलीला आदि से बच गए। जो इस ग्रंथ को पढ़ लेगा, वह जीवनोद्देश्य से कभी नहीं भटकेगा। वह बेसिर–पैर की बातों, बनावटी गुरुओं, महन्तों आदि के चक्कर में नहीं फँसेगा। यह ग्रंथ अपने में प्रकाशस्तम्भ है। जो भी इसके सम्पर्क में आया, उसकी सत्य की आँखें खुल गई। सत्यार्थ–प्रकाश जादू का काम करता है। आरंभ में जब भारतीय मारीशस गए थे, तो साथ में सत्यार्थ–प्रकाश ले गए। इस ग्रंथ का वहाँ इतना स्थायी प्रभाव रहा कि जगह–जगह आर्यसमाज मन्दिर बन गए। वहाँ आर्यसमाज का उल्लेखनीय कार्य हो रहा है। मुंशीराम को स्वामी श्रद्धानन्द बनाने में इस ग्रन्थ की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। जितना सत्यार्थप्रकाश का प्रचार एवं प्रसार होगा, उतना ही जीवन और जगत से अज्ञान, पाखंड कुरीतियाँ आदि शीघ्र समाप्त होंगी। वर्तमान में धर्म, भक्ति, परमात्मा आदि के नाम पर गुरुडम, अंधश्रद्धा, अज्ञान, पुजापा–चढ़ावा, गुरु–महन्त आदि तेजी से बढ़ रहे हैं। चारों ओर भीड़ लग रही है। धर्म–भक्ति और परमात्मा व्यापार का रूप लेते जा रहे हैं। इन सब बातों की असलीयत तथा सच्चा मार्ग जानने के लिए सत्यार्थप्रकाश से बढ़ कर पैमाना न होगा। यह ग्रन्थ सच्चाई की आँखें खोल देता है। इसीलिए ढोंगी, पाखंडी, स्वार्थी, अंध–विश्वासी आदि लोगों को यह ग्रंथ अच्छा नहीं लगता है। श्रीमति पुष्पा जी गुप्ता द्वारा लिखित 'सत्यार्थप्रकाश एवं सरल व्याख्या' अपने में महत्वपूर्ण और प्रेरक ग्रंथ है। उन्होंने ऋषि के मंतव्यों, आदर्शों, विचारों, सिद्धान्तों आदि की मूलात्मा को सुरक्षित व स्थापित

thearyasamaj.org

रखते हुए, सरल, सुबोध शैली में ऋषि की विचारधारा को आगे बढ़ाया है। श्रीमति पुष्पा जी गुप्ता स्वयं में साधिका, स्वाध्यायशीला, चिन्तक, विचारक एवं ऋषि–विचारों में ओतप्रोत हैं। उन्होंने अध्यापकीय शैली में जनसामान्य के लिए सीधे–सादे शब्दों में कठिन विषयों को भी रोचक व सुपाठ्य बनाकर प्रस्तुत किया है। इस ग्रंथ की यही महत्वपूर्ण तथा प्रेरक विशेषता है। लोग मूल सत्यार्थ–प्रकाश को कठिन समझकर नहीं पढ़ते हैं। यह ग्रंथ इस समस्या का निराकरण करेगा। मुझे पूर्ण विश्वास है कि जितना इस ग्रंथ का प्रचार एवं प्रसार होगा उतना ही देश–धर्म–जाति–मानवता आदि का हित और कल्याण होगा। इसी भाव व भावना से प्रेरित होकर लेखिका ने 'सत्यार्थ प्रकाश एवं सरल व्याख्या' का प्रणयन किया है।

मैं सम्माननीया श्रीमति पुष्पा जी गुप्ता की नीरोगता, दीर्घायु और अनुकूलता की प्रभु से कामना और प्रार्थना करता हूँ। मुझे आशा और विश्वास है कि 'सत्यार्थ प्रकाश एवं सरल व्याख्या' से अधिक से अधिक जिज्ञासु पाठक लाभान्वित होंगे।

विनीत :
डा. महेश विद्यालंकार
रीडर, मोतीलाल नेहरु कालेज़
दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली।

●●●

thearyasamaj.org

दो शब्द...

कभी–कभी तुच्छ दिखाई देने वाली बातें भी मनुष्य के हृदय पर गहरा प्रभाव छोड़ जाती हैं। शिवरात्रि की छोटी सी घटना ही तो थी जिसने ऋषि के जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन लाकर बालक मूलशंकर को स्वामी दयानंद बना दिया। यह कार्य अपने हाथ में लेने की प्रेरणा मुझे भी मारीशस यात्रा से ही मिली। मारीशस में सत्यार्थप्रकाश का वहाँ के लोगों के जीवन पर जो प्रभाव और वेद प्रचार के प्रति जो उत्साह देखने को मिला उसने मुझे यह सोचने पर विवश कर दिया कि मारीशस में तो केवल एक सत्यार्थप्रकाश पहुँचा जिसने वहाँ के लोगों की जीवन की दिशा बदल दी, वहाँ वेद–ज्ञान की ज्योति जग गई और पूरे उत्साह से आर्यसमाज का प्रचार व प्रसार हो रहा है तो क्या कारण है कि इस पुण्यभूमि भारत में, आर्यसमाज की प्रगति नहीं हो रही है?

इस विषय पर गंभीरता से विचार करने पर मैं इस निष्कर्ष पर पहुँची हूँ कि हमें संस्कृत भाषा का ज्ञान नहीं है और सत्यार्थप्रकाश के हिन्दी रूपान्तर की भाषा भी कठिन होने के कारण कोई इसे पढ़ने में रुचि नहीं लेता। इसमें कोई संदेह नहीं कि आर्यसमाज के पास उच्चकोटि के विद्वानों और वेदज्ञान के ज्ञाता धुरंधर आचार्यों की कोई कमी नहीं है और समय–समय पर होने वाले सम्मेलनों में मंचो से उनके उच्चकोटि के विचार भी सुनने को मिलते हैं, जो थोड़े समय के लिए श्रोताओं को प्रभावित तो करते हैं परन्तु शीघ्र ही लोग उन सुनी हुई बातों को भूल जाते हैं। संध्या–यज्ञ कर लेने से ही हम अपने धार्मिक कर्त्तव्य को पूरा हुआ मान लेते हैं। इस समय आर्य–समाज के प्रचार के लिए जो कार्य हो रहा है वह तो इस प्रकार है जैसे किसी पेड़ को हरा भरा रखने के लिए उसकी जड़ को न सींच कर शाखाओं और पत्तों को सींचा जा रहा हो। केवल बड़ी–बड़ी योजनाएँ बनाकर और महासम्मेलन बुलाकर हम वेदप्रचार करने में सफल नहीं हो सकते। इसके लिए आवश्यक है कि हम सत्यार्थप्रकाश के ज्ञान को जन–जन तक पहुँचायें।

वर्तमान युग विज्ञान का युग है। आजकल लोग हर बात को तर्क की कसौटी पर परखते हैं, यदि हम अपने धर्म की ठीक जानकारी लोगों तक पहुँचायें तो यह कार्य उतना कठिन नहीं है, जितना दिखाई देता है। जिस प्रकार वैज्ञानिक पुराने

thearyasamaj.org

सिद्धान्तों के गलत सिद्ध हो जाने पर नए सिद्धान्त अपना लेते हैं और विज्ञान के क्षेत्र में उन्नति हो रही है, उसी प्रकार यदि सभी मनुष्य उदार हृदय से अपने–अपने धर्म की असत्य और अनुपयोगी बातों को छोड़कर सत्य को अपनाना शुरू कर दें तो सारी मानव–जाति की आध्यात्मिक उन्नति हो सकती है। सत्य सभी धर्मों में एक सा है, सत्य दो हो ही नहीं सकते। कुछ उदार हृदय ईसाई और मुसलमान विद्वान जो समस्त मानव–जाति का हित चाहते हैं उन्होंने यह स्वीकार कर लिया है कि वेद ईश्वरीय ज्ञान है जिसमें हजारों लाखों वर्ष पूर्व ज्ञान–विज्ञान के वे गूढ़ रहस्य खोले गए हैं जिन्हें आज भी मानव नहीं खोज पाया है। ऐसे ही कुछ विद्वानों के विचार निम्नलिखित हैं।

"वेद ही हमारे जीवन को उच्च कर सकते हैं। यूरोप के तमाम दर्शन और विज्ञान इसके सामने तुच्छ है, इसलिए वेदों की तरफ जाओ।"

— प्रो. एमर्सन

"वेदों में जो अतुलनीय ज्ञान भरा हुआ है उसे केवल क्रांतदर्शी लोगों की दृष्टि ही प्रकट कर सकती है।"

— मोरिस मैटर्लिक

"संसार से बाहर रहने वाला इन ईसाइयों का खुदा उपनिषदों के परमात्मा के आगे एक बच्चा है।"

— विलियम जेम्स

"वैदिक धर्म अत्यंत प्राचीन और सम्पूर्ण धर्म है और संसार के धर्मों की श्रेणी में प्रथम भाग और स्थान उसी का है। मैं चाहता हूँ कि उसके मनोहर और मनोरंजक उपदेशों और विचारों का संक्षेप तैयार करूँ ताकि सब उसे सुगमता से पढ़ और समझ सकें।"

— टालस्टाय

"स्वामी साहब में मजहबी तअस्सुब (धार्मिक पक्षपात) बिलकुल न था।"

— इमदाद हुसैन मुस्लिम शिक्षाविद

"ऋषि दयानंद सच्चे विश्वामित्र अर्थात् विश्व के मित्र थे। उन्होंने सत्यार्थप्रकाश में स्वतंत्र आलोचना के द्वारा एक पुण्य कार्य किया है। अन्य विचार वालों को उस पर स्थिर चित्त से विचार करना चाहिए – यदि बताए गए दोष ठीक जचे तो प्रसन्नतापूर्वक अपने धर्म का संस्कार करें, इससे उन्नति ही होगी।"

— जहूर बख्शे, प्रसिद्ध मुस्लिम विद्वान

thearyasamaj.org

धर्म पूजा–पाठ की विधि नहीं हैं, धर्म मनुष्य को सत्य का ज्ञान करवाने और असत्य का त्याग कर आत्मा को उन्नत बनाने का साधन है। यही कारण है कि आज संसार भर के देशों के लोग शांति पाने की आशा लिए भारत में आ रहे हैं। ऐसे समय में यदि हम यहाँ के मतमतान्तरों के दोषों को दूर कर सत्य ज्ञान का प्रकाश फैला सकें तो निश्चय ही भारत को विश्व का गुरु कहलाने का खोया हुआ गौरव फिर से प्राप्त हो जायेगा। आजकल पका–पकाया खाने का युग चल रहा है इसीलिए मैनें यह प्रयास किया है कि सत्यार्थप्रकाश के सम्पूर्ण ज्ञान से जनमानस को परिचित करवाने के लिए उसे सरल और संक्षिप्त रूप से लोगों के सामने प्रसतुत करूँ। पाठक इसे स्वयं पढें, इसके बहुमूल्य ज्ञान से लाभ उठाये और दूसरों को भी पढ़ने के लिए प्रेरित करें। सत्यार्थप्रकाश को पढ़कर जो कुछ मेरी तुच्छ बुद्धि ग्रहण कर पाई है, उन्हीं भावों को मैंने अपने शब्दों में प्रकट किया है। इसकी सारी विषयवस्तु सत्यार्थप्रकाश की ही है, मैंने अपनी ओर से इसमें कुछ नहीं जोड़ा है, केवल सरल शब्दों में लिखने का प्रयत्न किया है जिससे हिन्दी का सामान्य ज्ञान रखने वाला पाठक भी इसे पढ़ सके। हर भारतीय नर–नारी को सत्यार्थप्रकाश से परिचित करवाना ही मेरा उद्देश्य है।

लेखिका
पुष्पा गुप्ता एम. ए.

●●●

thearyasamaj.org

महर्षि दयानन्द का मन्तव्य

महर्षि ने वेदों का गहन अध्ययन करने के पश्चात् भारत में पाए जाने वाले अनेक धर्मों और उनके साहित्य का भी विस्तृत अध्ययन किया। इसके साथ ही विदेशों से आए ईसाई, यहूदी और इस्लाम धर्म के साहित्य का भी विश्लेषण किया। सभी धर्मों के गुण–दोषों की पक्षपात रहित समीक्षा करने के बाद उन्होंने सत्यार्थप्रकाश की रचना की और उसे इसे लिखने का उद्देश्य निम्नलिखित शब्दों में प्रकट किया है।

"इस ग्रन्थ को बनाने का मुख्य प्रयोजन जो सत्य है उसको सत्य और जो असत्य है उसको असत्य सिद्ध करना ही है। जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा ही कहना, लिखना और मानना सत्य कहाता है। जो मनुष्य पक्षपाती होता है वह अपने असत्य को भी सत्य और दूसरे विरोधी मतवाले के सत्य को भी असत्य सिद्ध करनें में प्रवृत्त रहता है, इसीलिए वह सत्य को प्राप्त नहीं होता। विद्वान् आप्तों का यही मुख्य काम है कि उपदेश व लेख द्वारा सब मनुष्यों के सामने सत्य और असत्य का स्वरूप समर्पित कर दें, पश्चात वे स्वयं अपना हित अहित समझ कर सत्य को ग्रहण करके और असत्य को त्याग कर आनन्द से रहें।"

"मनुष्य का आत्मा सत्य और असत्य को जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्या आदि दोषों से सत्य को छोड़ कर असत्य की ओर झुक जाता है। परन्तु इस ग्रन्थ में ऐसी बात नहीं रखी है। इसका उद्देश्य किसी का मन दुखाना या किसी को हानि पहुँचाना नहीं है। किन्तु जिससे मनुष्य जाति की उन्नति और उपकार हो, सत्य और असत्य को मनुष्य लोग जानकर सत्य को ग्रहण करें और असत्य को छोड़ दें। सत्य उपदेश के बिना मनुष्य जाति की उन्नति नहीं हो सकती।"

"यदि इसमें कोई त्रुटि रह गई हो तो जो भी मत पक्षपात–रहत होकर मनुष्य–मात्र के हित की भावना से प्रकट किया जायेगा और सत्य होगा उसे संगृहीत किया जायेगा। आजकल बहुत से मत–मतान्तर फैल गए हैं उनमें जो–जो बातें सबके अनुकूल और सबमें सत्य हैं उन्हें ग्रहण कर लिया जाये और एक दूसरे का विरोध त्याग कर परस्पर प्रीति बढ़ावें तो जगत का पूर्ण

हित हो। विद्वानों के विरोध की अपेक्षा अविद्वानों के विरोध से अनेक प्रकार के दुःख बढ़ते हैं और सुख की हानि होती है। यह हानि स्वार्थी मनुष्यों को प्रिय है जिसने सब मनुष्यों को दुःख सागर में डुबा दिया है। स्वार्थी लोग सदा विरोध करने में तत्पर रहते हैं और अनेक प्रकार के विघ्न खड़े करते हैं, परन्तु अंत में सत्य की विजय और असत्य की पराजय होती है। सत्य ही से विद्वानों का मार्ग विस्तृत होता है।"

गीता में कहा गया है *"जो–जो विद्या और धर्मप्राप्ति के कर्म हैं वे प्रथम करने में विष के तुल्य और पश्चात अमृत के सदृश होते हैं।"*

"जब तक मनुष्य जाति में परस्पर मिथ्या मत–मतान्तर का विरुद्धवाद न छूटेगा, तब तक परस्पर आनन्द न होगा। यदि हम सब मनुष्य और विशेष रूप से विद्वान् लोग आपसी ईर्ष्या–द्वेष छोड़, सत्य और असत्य का निर्णय करके, सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करना कराना चाहें तो हमारे लिए यह बात असंभव नहीं है। यह निश्चय है कि विद्वानों के विरोध ही ने सबको विरोध जाल में फँसा रखा है। यदि ये लोग अपने प्रयोजन में न फँसकर सबके प्रयोजन को सिद्ध करना चाहें तो सभी एकमत हो जायें। यदि वादी–प्रतिवादी सत्य और असत्य निश्चय के लिए वाद–विवाद करें तो अवश्य निश्चय हो जाये। यही सज्जनों की रीति है कि अपने या पराये दोषों को दोष और गुणों को गुण जानकर, गुणों का ग्रहण और दोषों का त्याग करें।"

"सत्यार्थप्रकाश में सब मत–मतान्तरों की गुप्त व प्रकट बुरी बातों का प्रकाश कर विद्वान् और अविद्वान् सभी लोगों के सामने रखा है जिससे सब इन पर निप्पक्ष होकर विचार करें और निड़र होकर असत्य बातों का त्याग करें। सत्य को अपनाने से सब मतों में विचारों की एकता होने से परस्पर प्रीति और सूझ–बूझ बढ़ेगी जिससे प्राणीमात्र के सुख और आनन्द में वृद्धि होगी और समस्त मानव जाति उन्नति की ओर अग्रसर होगी।"

सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका से उद्धृत

●●●

thearyasamaj.org

ईश्वर के नामों का परिचय

1

ओ३म् परमपिता परमेश्वर का निज नाम है। वैसे तो ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव अनुसार अनगिनत नाम हैं। लेकिन मुख्य नाम ओ३म् ही है, बाकी सभी नाम गौण या साधारण हैं। यह ओंकार शब्द परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है क्योंकि इसमें अ, उ और म् तीन अक्षरों का समूह है। इस एक ओ३म् नाम में ईश्वर के बहुत से नाम आ जाते हैं। जैसे 'अ' से विराट, अग्नि और विश्व आदि, 'उ' से हिरण्यगर्भ, वायु और तेजस् आदि और 'म' से ईश्वर, आदित्य और प्राज्ञ आदि नामों का बोध होता है।

प्रश्न : परमेश्वर के कई नाम ऐसे हैं जो देवताओं और औषधियों के नाम भी हैं, ऐसा क्यों?

उत्तर : एक ही शब्द के कई अर्थ होते हैं परन्तु जहाँ उस शब्द का जो अर्थ उचित है, वहाँ उसी अर्थ में प्रयोग होना चाहिए। जैसे 'सैन्धव' शब्द का अर्थ घोड़ा और लवण या नमक है। यदि कोई सैंधव कहने पर भोजन के समय घोड़ा और युद्ध के समय नमक ले आए तो उचित नहीं होगा। जो वस्तु उपस्थित हो उसे छोड़कर जो उपस्थित न हो उसके पीछे भागना कहाँ की बुद्धिमत्ता है? परमेश्वर सबसे बढ़कर है और कोई उसके समान नहीं है तो फिर उस शब्द को जिसका प्रयोग इन्द्र या ब्रह्मांड के लिए होता है परमेश्वर के नाम के रूप में प्रयोग करने पर आपको आपत्ति क्यों है? परमेश्वर का कोई नाम अनर्थक नहीं है। वेदों और उपनिषदों में ऐसे कई मंत्र आते हैं जिनसे ईश्वर के नामों की सार्थकता सिद्ध होती है। इनमें से कुछ नाम इस प्रकार हैं :–

1. ओ३म नाम एक ऐसा नाम है जिसका कोई दूसरा अर्थ नहीं है। ईश्वर के बाकी सभी नाम अलग–अलग अर्थों में भी प्रयोग किए जाते हैं। आकाश की भांति व्यापक और सबसे बड़ा होने के कारण ईश्वर का नाम ओ३म् है।

thearyasamaj.org

2. वह परमात्मा अनेक प्रकार से जगत को प्रकाशित करता है इसलिए उसका नाम 'विराट' है।
3. सबका पालन करने के कारण वह ईश्वर 'प्रजापति' कहलाता है।
4. सारी सृष्टि का जीवन मूल होने के कारण वह ईश्वर 'प्राण' कहाता है।
5. वह ईश्वर सर्वत्र व्यापक और अविनाशी होने से 'अक्षर' कहलाता है।
6. जो प्रलय में सबका काल और काल का भी काल है उस ईश्वर को 'कालाग्नि' कहा जाता है।
7. जो स्वयं प्रकाश स्वरूप है उस ईश्वर को 'स्वराट' कहा गया है।
8. जो ईश्वर प्रकृति आदि पदार्थों में व्याप्त है उसे 'दिव्य' नाम से स्मरण किया जाता है।
9. जिसके उत्तम पालन करने के ढंग और पूर्ण कर्म है वह ईश्वर 'सुपर्ण' नाम से जाना जाता है।
10. जिसका स्वरूप महान् है और जो वायु के समान अनन्त बलवान है उस ईश्वर का नाम 'मातरिश्वा' है।
11. जिस ईश्वर की आत्मा महान् है वह 'गुरूत्मान्' कहलाता है।
12. वह परमेश्वर ज्ञानस्वरूप, सर्वज्ञ, जानने, प्राप्त होने और पूजा करने योग्य है इसलिए उसका नाम 'अग्नि' है।
13. सूर्य आदि तेजस्वरूप पदार्थों की उत्पत्ति और निवास–स्थान होने के कारण परमेश्वर का नाम 'हिरण्यगर्भ' है।
14. सब भूतप्राणी जिसको प्राप्त होते हैं उस परमेश्वर का नाम 'भूमि' है।
15. जो आकाश आदि सब भूतों में व्याप्त हो रहा है, उस ईश्वर का नाम 'विश्व' है।
16. जो चराचर जगत का धारण, पालन और प्रलय करता और सब बलवानों से बलवान है, इससे उस ईश्वर का नाम 'वायु' है।
17. सूर्य आदि प्रकाशमान लोकों का प्रकाशक होने के कारण उस ईश्वर का नाम 'तेजस्' है।
18. सत्य, विचारशील, ज्ञान और अनंत ऐश्वर्य का स्वामी होने के कारण उसका नाम 'ईश्वर' है।

19. जिसका विनाश कभी नहीं होता उस ईश्वर का नाम 'आदित्य' है।
20. ईश्वर अपने भ्रान्ति–रहित ज्ञान से इस जगत को उसके वास्तविक रूप में जानता है इसलिए उसे 'प्राज्ञ' कहा जाता है।
21. जो सबसे स्नेह और प्रीति रखता है, न किसी का शत्रु है, न किसी से उदासीन है इसलिए उस ईश्वर का नाम 'मित्र' है।
22. मुक्ति की इच्छा रखने वाले धर्मात्मा और योगीजन जिसे श्रेष्ठ और वरण करने योग्य मानते हैं, इसीलिए उस ईश्वर को 'वरुण' कहते हैं।
23. जो पाप–पुण्य कर्मों को नियमों में बाँधता और यथोचित न्याय करता है, उस परमेश्वर का नाम 'अर्यमा' है।
24. समस्त ऐश्वर्यों से युक्त होने के कारण ईश्वर का नाम 'इन्द्र' है।
25. वह परमेश्वर बड़ों से बड़ा, आकाश आदि ब्रह्मांडो का स्वामी होने के कारण 'बृहस्पति' कहलाता है।
26. सब चर–अचर जगत में व्यापक होने के कारण परमात्मा का नाम 'विष्णु' है।
27. अत्यंत पराक्रम युक्त होने से उसका नाम 'उरुक्रम हैं
28. इस चराचर जगत की उत्पत्ति करने से उस ईश्वर का नाम 'सविता' है।
29. परमात्मा को, सबसे ऊपर विराजमान, सबसे बड़ा और अनन्त बलयुक्त होने के कारण 'ब्रह्म' कहा जाता है।
30. सब जड़ चेतन पदार्थों की आत्मा होने और सबको अपने प्रकाश से प्रकाशित करने के कारण ईश्वर को 'सूर्य' कहा जाता है।
31. सब जीवों से श्रेष्ठ, प्रकृति और आकाश से भी सूक्ष्म और सब जीवों का अंतर्यामी होने से ईश्वर का नाम 'परमात्मा' है।
32. जो सबमें व्यापक होकर सबको ढँक लेता है अर्थात् अपने में समा लेता है इसलिए उस ईश्वर का नाम 'कुबरे' है।
33. सब जगत का विस्तार करने से उस ईश्वर का नाम 'पृथ्वी' है।
34. दुष्टों का ताड़न करने और अदृश्य परमाणुओं का एक दूसरे से संयोग–वियोग करवाने के कारण ईश्वर का नाम 'जल' है।
35. जो सब ओर से जगत का प्रकाशक ईश्वर है, उसका नाम 'आकाश' है।

thearyasamaj.org

36. दुष्ट कर्म करने वालों को दंड देने या रुलाने से ईश्वर का नाम 'रुद्र' है।
37. सबमें निवास करने या व्यापक होने से ईश्वर का नाम 'नारायण' है।
38. सबको आनंद देने वाला होने से ईश्वर का नाम 'चन्द्र' है।
39. सब जीवों का कल्याण या मंगल करने के कारण ईश्वर को 'मंगल' कहते हैं।
40. सब जीवों के बोध का कारण होने से ईश्वर का नाम 'बुध' है।
41. जो अत्यन्त पवित्र है और जिसके संग से सब जीव भी पवित्र हो जाते हैं उस ईश्वर का नाम 'शुक्र' है।
42. जो सबमें धैर्यवान है उस ईश्वर का नाम शनैश्चर है।
43. जिसके स्वरूप में कोई दूसरा संयुक्त नहीं अर्थात जो एकान्तस्वरूप है, जो दुष्टों को छोड़ने और दूसरों को छुड़ाने वाला है उस ईश्वर का नाम 'राहु' है।
44. जो सब जगत का निवास स्थान, सब रोगों से रहित और जो मुक्त जीवों को मुक्ति में रोगों से छुड़ाता है उसका नाम 'केतु' है।
45. जो सर्वत्र व्यापक होकर सब जगत के पदार्थों को संयुक्त करता है, जो ब्रह्मा से लेकर सब ऋषि मुनियों का पूज्य है, उस परमात्मा का नाम 'यज्ञ' है।
46. जो सब जीवों को देने योग्य पदार्थों को देता और ग्रहण करने योग्य पदार्थों को ग्रहण करता है उस ईश्वर का नाम 'होता' है।
47. जो सब लोक–लोकान्तरों को अपने नियमों में बाँधकर चलाता है, किसी को उन नियमों का उल्लंघन नहीं करने देता वह परमेश्वर पृथ्वी आदि लोकों को धारण, रक्षण और सुख देने के कारण 'बन्धु' कहलाता है।
48. जैसे पिता अपनी संतान की उन्नति चाहता है उसी प्रकार ईश्वर सब जीवों की उन्नति चाहने के कारण 'पिता' कहकर पुकारा जाता है।
49. जो सब पिताओं का पिता है उस परमेश्वर का नाम 'प्रपितामह' है।
50. माता की भाँति सब जीवों की उन्नति और सुख चाहने वाला होने से ईश्वर को 'माता' नाम से पुकारा जाता है।
51. जो सब सत्य विद्याओं को उत्पन्न करने वाला, सकल विद्यायुक्त चारों वेदों के ज्ञान का उपदेश देने वाला और ब्रह्मा आदि गुरुओं का भी

thearyasamaj.org

गुरु है, जिसका कभी नाश नहीं होता, उस ईश्वर का नाम 'गुरु' है।

52. जो प्रकृति के पंचभूतों को यथायोग्य मिलाकर सृष्टि के सब जीवों को जन्म देता है और स्वयं कभी जन्म नहीं लेता, उस ईश्वर का नाम 'अज' है।
53. जो ईश्वर सम्पूर्ण जगत को रचकर, बढ़ाता है उसका नाम 'ब्रह्मा' है।
54. जो पदार्थ होते हैं उनको सत् कहते हैं, उन सबसे श्रेष्ठ होने के कारण ईश्वर का नाम 'सत्य' है।
55. सब सत्य और सम्पूर्ण विद्याओं को जानने के कारण ईश्वर का नाम 'ज्ञान' है।
56. ईश्वर का कोई परिमाण नहीं है इसीलिए उसका नाम 'अनन्त' है।
57. ईश्वर से पूर्व कुछ भी न होने के कारण उसे 'अनादि' कहते हैं।
58. जो सब धर्मात्मा जीवों को आनंद देता है और सब मुक्त जीव उसमें आनंद पाते हैं इसलिए ईश्वर का नाम 'आनंद' है।
59. जो सदा वर्तमान हो, जिसे काल अपनी सीमा में न बाँध सके उस ईश्वर का नाम 'सत्' है।
60. जो स्वयं चेतन स्वरूप है और सब जीवों को सत्य–असत्य का ज्ञान देकर सचेत करता है, उस परमेश्वर का नाम 'चित' है।
61. सत्य, चित और आनंद देने वाला होने के कारण उस ईश्वर का नाम 'सच्चिदानंद' है।
62. निश्चल और अविनाशी होने से ईश्वर का नाम 'नित्य' है।
63. स्वयं शुद्ध होने और सबको शुद्ध करने वाले ईश्वर का नाम 'शुद्ध' है।
64. जो सदा सबको जाननेहारा है उस ईश्वर का नाम 'बुध' है।
65. जिसमें सब आकाश आदि भूत बसते हैं और जो सबमें वास करता है उस परमेश्वर का नाम 'वसु' है।
66. सदा अशुद्धियों से दूर रहने और मुक्त जीवों को छुड़ाने वाले ईश्वर का नाम 'मुक्त' है। उसे शुद्ध बुद्ध मुक्त भी कहते हैं।
67. ईश्वर का कोई आकार नहीं है, वह कभी शरीर धारण नहीं करता इसीलिए उसका नाम 'निराकार' है।
68. इन्द्रियों के रूप–रस–रंग आदि विषयों से अलग होने के कारण ईश्वर का नाम 'निरंजन' है।

thearyasamaj.org

69. सब जड़—चेतन पदार्थो का स्वामी होने से ईश्वर का नाम 'गणेश या गणपति' है।
70. सारे संसार का अध्यक्ष या मुखिया होने के कारण ईश्वर का नाम 'विश्वेश्वर' है।
71. जो सब व्यवहारों का आधार होकर भी किसी व्यवहार में अपने स्वरूप को नहीं बदलता उस ईश्वर का नाम 'कूटस्थ' है।
72. सब जगत को बनाने में समर्थ होने से ईश्वर का नाम 'शक्ति' है।
73. जिसकी उपासना सब जगत, विद्वान और योगीजन करते है उस शोभायुक्त परमात्मा का नाम 'श्री' है।
74. जो सब चराचर जगत को देखता, शोभाओं की शोभा और जो वेदादि शास्त्र और विद्वान योगियों का लक्ष्य अर्थात् देखने योग्य है उस परमेश्वर का नाम 'लक्ष्मी' है।
75. जिस परमात्मा को विविध—विज्ञान अर्थात् शब्द—अर्थ प्रयोग का ज्ञान है उसका नाम 'सरस्वती' है।
76. अपने सभी कार्य दूसरों की सहायता के बिना करने में समर्थ होने के कारण ईश्वर को 'सर्वशक्तिमान' कहा जाता है।
77. जो प्रमाणों की परीक्षा से सिद्ध हो और जिसका न्याय पक्षपात रहित हो उस ईश्वर को 'न्यायकारी' कहते हैं।
78. जो बिना किसी सहायता के सहज स्वभाव से इस जगत को बनाता और अपने स्वरूप में आनंद से आप ही क्रीड़ा करता, जो सबको जीत सकता है परन्तु उसे कोई नहीं जीत सकता, जो सदा प्रसन्न और शोक—रहित रहता तथा दूसरों को हर्षित और दुःखों से छुड़ाने वाला, सबमें व्याप्त और जानने योग्य है उस परमेश्वर को 'देव' कहते हैं। यदि स्त्रीलिंग में वर्णन हो तो 'देवी' कहते हैं।
79. जो सबको शिक्षा देने हारा, सूक्ष्म से सूक्ष्म, स्वप्रकाश स्वरुप, समाधि में बैठकर बुद्धि से जानने योग्य है उसको 'परमपुरुष' कहते हैं।
80. जो अभय का दाता, सबकी रक्षा करने और दुष्टों को दंड देने वाला है उस ईश्वर का नाम 'दयालु' है।
81. जिस ईश्वर का सजातीय कोई दूसरा नहीं है, वह अपने जैसा आप ही है इसीलिए उसे 'अद्वैत' कहा जाता है।

thearyasamaj.org

82. जो परमेश्वर सर्वज्ञ, सर्वसुख सम्पन्न, पवित्र और अनन्त बल आदि गुणों वाला है उसे अपने इन गुणों के कारण 'सगुण' कहा जाता है।
83. ईश्वर जड़ जगत के शब्द, रूप, रस गंध आदि गुणों से पृथक होने के कारण 'निर्गुण' कहलाता है।
84. जो जड़–चेतन सबमें व्यापक होकर सबको नियम में रखता है उस घट–घट वासी परमात्मा का नाम 'अन्तर्यामी' है।
85. जो सब ऐश्वर्यो से युक्त और भजने योग्य है उस ईश्वर को 'भगवान' कहते हैं।
86. जो सब प्राणियों के कर्मफल की व्यवस्था करता और सब अन्यायों से पृथक रहता है उस परमात्मा का नाम 'यम' है।
87. जो विज्ञानशील और मानने योग्य है उस ईश्वर का नाम 'मनु' है।
88. जो सब जगत में पूर्ण हो रहा है उस परमेश्वर को 'पुरुष' कहा जाता है।
89. वह ईश्वर सारे जगत का भरण–पोषण करने के कारण 'विश्वम्भर' कहलाता है।
90. जो जगत के सब पदार्थ और जीवों की संख्या करता है उस ईश्वर का नाम 'काल' है।
91. जो सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय में बच रहा है इसलिए उस परमात्मा का नाम 'शेष' है।
92. जो सत्य का उपदेशक, सब विद्यायुक्त धर्मात्माओं को प्राप्त होने योग्य छल–कपट से रहित है उस ईश्वर का नाम 'आप्त' है।
93. जो सबका कल्याण करने वाला है उस ईश्वर का नाम 'शंकर' है।
94. जो सब देवों का देव, सूर्य आदि पदार्थों का प्रकाशक है उस ईश्वर का नाम 'महादेव' है।
95. जो सब धर्मात्मा और मुक्ति चाहने वालों को प्रसन्न करता है और जिसकी सब कामना करते हैं उस ईश्वर का नाम 'प्रिय' है।
96. जो कभी किसी से उत्पन्न नहीं हुआ, जो आप से आप ही है, उस परमात्मा का नाम 'स्वयंभू' है।

thearyasamaj.org

97. वह सब विद्याओं का जानने वाला है और वेद द्वारा सब विद्याओं का उपदेश देने वाला है, इस लिए उस ईश्वर का नाम 'कवि' है।

98. जो कल्याण स्वरूप और कल्याण करने हारा है उस ईश्वर का नाम 'शिव' है।

99-101. ईश्वर सब चराचर जगत को अपने भीतर ग्रहण करने वाला है इसलिए उसका नाम 'अन्न' 'अन्नाद' और 'अत्ता' है। जैसे गूलर के फल में जीव पैदा होते हैं और उसी में रहकर मर जाते हैं। उसी प्रकार परमेश्वर में ही इस जगत की व्यवस्था है। ये सभी नाम ईश्वर के गुण कर्म स्वभाव के अनुसार ही हैं।

यहाँ ओ३म् के अतिरिक्त ईश्वर के 100 नामों का वर्णन किया गया है जबकि ईश्वर के नाम अनगिनत हैं। मनुष्य को धर्मयुक्त कर्म करने चाहिए, अधर्म–युक्त नहीं। ईश्वर का निज नाम 'ओ३म्' अपने में पूर्ण है इसलिए उसके आगे हरि आदि शब्द नहीं जोड़ने चाहिए।

प्रश्न : आपने सत्यार्थ प्रकाश के आरंभ और अंत में मंगलाचरण क्यों नहीं लिखा?

उत्तर : जो न्याय, पक्षपात रहित, सत्य वेदोक्त ईश्वर की आज्ञा के अनुसार आचरण करना है, वही मंगलाचरण कहाता है। इस ग्रंथ में आरंभ से लेकर अंत तक सत्य का आचरण करने के कारण कहीं अमंगल नहीं है अर्थात् आरंभ से लेकर अंत तक मंगलाचरण ही है।

●●●

thearyasamaj.org

2
बाल-शिक्षा

शिक्षा का मनुष्य जीवन में विशेष महत्व है। शिक्षा के बिना नर पशु के समान होता है। वेद में कहा गया है कि बालक को अच्छी शिक्षा देने वाले तीन उत्तम शिक्षक होने चाहिए–माता, पिता और आचार्य। बालक को सबसे पहले शिक्षा माता से ही मिलती है, जो उसे सभ्य बनाती है। बालक माता से शब्दों का शुद्ध उच्चारण, बात करने का ठीक ढंग, उठना–बैठना, बड़ों का सम्मान करना और सबसे प्रेम करना सीखता है। बालक के लिए जहाँ पुस्तकों का ज्ञान आवश्यक होता है, वहीं आचरण की शिक्षा का भी विशेष महत्व होता है। पिता बालक के लिए उचित शिक्षा का प्रबन्ध करता है और सांसारिक व्यवहार का ज्ञान देता है। गुरु बालक की रुचि के अनुसार ज्ञान–विज्ञान के विभिन्न विषयों और धार्मिक उपदेशों से शिक्षा देकर उसके जीवन को संवारता है।

माता–पिता दोनों शरीर से स्वस्थ और प्रसन्न हों और किसी प्रकार का मानसिक क्लेश न हो, तभी गर्भ धारण करना चाहिये। रजोदर्शन के 5वें से 16 वें दिन के बीच का समय गर्भ धारण के लिए उचित होता है। इसमें पड़ने वाली एकादशी और त्रयोदशी के दो दिन छोड़ देने चाहिए। माता–पिता के लिए अत्यंत उचित है कि गर्भाधान से लेकर बालक के जन्म तक मादक और बुद्धिनाशक पदार्थों का त्याग कर शांति, आरोग्य, बल–बुद्धि, पराक्रम और सुशीलता प्रदान करने वाले घी, दूध, मिष्ठान, अन्न आदि श्रेष्ठ पदार्थों का सेवन करें।

जन्म लेने पर बालक का नाड़ी छेदन करके उसे सुगंधित जल से स्नान करवाएँ और सुंगधियुक्त पदार्थों से होम करके जातकर्म संस्कार करें। बालक की माता के लिए पौष्टिक भोजन का विशेष प्रबंध करना चाहिए। जिससे उसके शरीर की दुर्बलता दूर हो और बालक को भी पौष्टिक दूध प्राप्त हो। बालक के लिए यदि माता का दूध पर्याप्त न हो तो गाय और बकरी के दूध में समान

thearyasamaj.org

मात्रा में जल मिलाकर बुद्धि, बल और निरोगता प्रदान करने वाली औषधियां मिलाकर दूध को उबालें और छानकर बालक को पिलाएं। माता–पिता दोनों को संयम से रहना चाहिए।

माता–पिता दोनों ही संतान को ऐसी शिक्षा देने का प्रयत्न करें जिससे संतान जितेन्द्रिय, विद्याप्रिय और सत्संग में रुचि रखने वाली बनें। व्यर्थ क्रीड़ा, रोना, हंसना, लड़ाई–झगड़ा और किसी से ईर्ष्या द्वेष तथा लोभ न करें। बच्चों को उपस्थेन्द्रिय (मूत्रेन्द्रिय) को हाथ न लगाने दें। इससे हाथ में दुर्गंध आती है और नपुंसकता होती है। जब लड़का या लड़की पांच वर्ष का हो जाये तो उसे देवनागरी अक्षरों का ज्ञान अवश्य करायें। दूसरी भाषा का भी आवश्यकता के अनुसार ज्ञान दिया जा सकता है। बालक को अच्छी शिक्षा, विद्या, धर्म, ईश्वर के विषय में ज्ञान देने के साथ–साथ माता, पिता, आचार्य, विद्वान्, राजा, प्रजा, मित्र, बहिन, भाई और सेवक के साथ कैसे व्यवहार करना चाहिए इसकी जानकारी दें और अच्छे आचरण की प्रेरणा देने वाले वेदमंत्र या दोहे उन्हें कंठस्थ (जुबानी याद) करवाएँ। यदि बच्चों को उचित शिक्षा दी जायेगी। तो वे इस बात को भली प्रकार समझ जायेंगे कि मनुष्य को अपने किए हुए पाप–पुण्य कर्मों का फल सुख–दुःख के रूप में भोगने के लिए परमेश्वर की व्यवस्था में रहते हुए दूसरा जन्म धारण करना ही पड़ता है। इससे वे धूर्तों, झाड़–फूँक करने वाले चेलों, तांत्रिकों और ठगने वाले ज्योतिषियों के चंगुल में नहीं फँसेंगे। कोई उन्हें मूर्ख बनाकर न तो लूट पायेगा और न ही गलत राह पर चला सकेगा।

प्रश्न : संसार में राजा–प्रजा का सुखी–दुःखी होना क्या ग्रहों का फल नहीं है?

उत्तर : नहीं। ये सब पाप–पुण्यों का फल है। चेतन पदार्थ या जीव तो क्रोध करता या प्रसन्न होता है और सुख–दुःख दे सकता है लेकिन मंगल, सूर्य, शनि आदि ग्रह तो जड़ होने के कारण ताप या प्रकाश आदि देने के सिवाय कुछ नहीं कर सकते।

प्रश्न : तो क्या ज्योतिष–शास्त्र झूठा है?

उत्तर : नहीं, उसमें जो गणित विद्या है वह ठीक है, लेकिन फलित (भाग्य बताना) सब झूठी है।

प्रश्न : क्या जन्मपत्र बनवाना व्यर्थ है?

उत्तर : हां, परिवार में संतान का जन्म होने पर आनंद होता है, परन्तु जन्मपत्र बनाने वाला नवग्रहों के चक्कर में उलझाकर उस आनंद को दुःख में बदल देता है। ग्रहों के प्रभाव को शांत करने के नाम पर स्वयं पूजा करवाकर दान आदि के रूप में मिला धन रख लेते हैं। कभी–कभी यजमान को सब कुछ बढ़िया बताकर झूठ–मूठ खुश करके मनमाना धन लूटते हैं। मंत्र–तंत्र करने वाले गंडा–ताबीज़ बनाकर कह देते हैं कि अमुक देवता या पीर कोई विघ्न नहीं होने देगा। यहां तक कि शीतला रोग के लिए भी मंत्र–यंत्र बनाकर दे देते हैं। उनसे पूछना चाहिए कि क्या उनके देवता, पीर या चेले मृत्यु से, परमेश्वर के नियम और कर्म–फल से बचा सकेंगे? क्या उनके घरों में किसी की मृत्यु नहीं होती और कोई रोगी नहीं होता? तब उनके पास आपको देने के लिए कोई उत्तर नहीं होगा। मारणमंत्र, मोहनमंत्र और वशीकरण आदि मंत्र सब उनके पाखंड हैं। इसीलिए बचपन में ही वेदों का सच्चा ज्ञान देना जरूरी है जिससे कोई भी व्यक्ति इनके जाल में न फंसे। वीर्य की रक्षा करने में आनन्द और नाश करने से दुःख की प्राप्ति होती है। यह जानकारी देना भी बहुत जरूरी है जिससे पूर्ण युवा होने तक लड़के–लड़कियां ब्रह्मचर्य का पालन करके अनेक रोगों से बचे रहें और जब गृहस्थ में प्रवेश करें तो उन्हें सुख प्राप्त हो। जन्म से पांच वर्ष तक माता शिक्षा दे, 6 से 8 वर्ष तक पिता शिक्षा दे और नौवें वर्ष में आचार्य के पास शिक्षा प्राप्त करने के लिए भेजा जाना चाहिए।

विद्यार्थी जीवन में माता–पिता और गुरु का ताड़न अमृत के समान होता है और लाड़–प्यार विष के समान होता है। माता–पिता और आचार्य को चाहिए कि वे ईर्ष्यावश ताड़ना न करें। इन तीनों को ऊपर से कठोर दिखाई देने वाले और भीतर से कृपा–दृष्टि रखने वाले होना चाहिए। बच्चों को ज्ञान–विज्ञान और धार्मिक शिक्षा देने के साथ–साथ चोरी, आलस्य, व्यभिचार, झूठ बोलना, हिंसा, ईर्ष्याद्वेष आदि दोषों को छोड़ने की भी शिक्षा दें। किसी के सामने बुरा आचरण करने वाला व्यक्ति मृत्यु तक उससे सम्मान नहीं पा सकता।

मनुष्य को सत्य बोलना चाहिए और किसी को झूठा वचन नहीं देना चाहिए। अभिमान या अहंकार नहीं करना चाहिए, इससे सब शोभा और लक्ष्मी नष्ट हो जाती है। दूसरों को हानि पहुंचाकर अपना काम निकालना छल–कपट कहलाता है। किसी के किए हुए उपकार को मानें, मधुर वचन बोलें, कड़वे वचन किसी

thearyasamaj.org

से न कहें, बड़ों को नमस्ते करके उन्हें उचित आसन पर बिठाएं, स्वयं अपने उचित स्थान पर बैठें, अपने बैठने के लिए किसी दूसरे को न उठाएँ, गुणों का ग्रहण प्रसन्नता से करें, दोषों का त्याग करें, सज्जनों का संग करें, माता–पिता और गुरु की तन–मन–धन से प्रीतिपूर्वक सेवा करें, ऐसी शिक्षा बच्चों को बचपन से ही दी जानी चाहिए जिससे बड़े होने पर उनका आचरण प्रशंसायोग्य हो।

अज्ञात जल में प्रवेश न करें क्योंकि इससे डूबने और जीव जन्तुओं द्वारा हानि पहुँचाए जाने का भय होता है। किसी दुष्ट की बातों पर विश्वास न करके माता–पिता और गुरु की आज्ञा का ही पालन करें। शुद्ध भोजन करें, जितनी भूख हो उससे कुछ कम भोजन करें, इससे शरीर निरोग रहेगा और आयु बढ़ेगी।

जो माता–पिता अपनी संतान को उचित शिक्षा नहीं देते वे अपनी संतान के वैरी होते हैं। माता–पिता का कर्त्तव्य, परमधर्म और कीर्ति का काम यही है कि वे अपनी संतान को तन–मन–धन से विद्या, धर्म, सभ्यता, शुद्ध आचरण और उत्तम शिक्षा देकर सुयोग्य बनाएँ।

●●●

thearyasamaj.org

अध्यापन तथा ब्रह्मचर्य 3

विद्या विहीन नर पशुतुल्य है' यह एक प्रसिद्ध कहावत है। सोना—चांदी, हीरे—मोती आदि मनुष्य के शरीर की शोभा तो बढ़ा सकते हैं परन्तु मनुष्य की आत्मा तो उत्तम—विद्या, शिक्षा, सदाचार आदि गुण—कर्म—स्वभाव रूपी आभूषणों से ही सुशोभित होती हैं। माता—पिता और आचार्य को चाहिए कि वे बालक—बालिकाओं को उत्तम विद्या और ज्ञान से समृद्ध बनायें जिससे उनका व्यक्तित्व प्रभावशाली बनें। मूल्यवान आभूषण पहनने से तो कई बार जीवन भी संकट में पड़ जाता है इसलिए छोटे बच्चों को तो आभूषण कदापि नहीं पहनाने चाहिए।

श्रेष्ठ व्यक्ति वही है जिसका मन विद्याग्रहण में तत्पर रहता हो, सुन्दर सुशील स्वभाव वाला हो, सत्यभाषण आदि नियमों का पालन करने वाला हो, अभिमान से रहित होकर सत्य उपदेश द्वारा दूसरों की मलीनता दूर करके उनके दुःखों को दूर करने और वेद में बताए गए श्रेष्ठ कर्मों को करते हुए दूसरों के उपकार में लगा रहता हो।

8 वर्ष की आयु में लड़कों को लड़कों की पाठशाला में और लड़कियों को लड़कियों की पाठशाला या गुरुकुल में पढ़ने के लिए भेजना चाहिए। लड़कों को शिक्षा देने का कार्य अध्यापक और लड़कियों को शिक्षा देने का कार्य अध्यापिकाएं ही करें। लड़के और लड़कियों की पाठशालाएं नगर से 4 कोस दूर और एक दूसरे से दूर होनी चाहिये। शिक्षाकाल में विद्यार्थी पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए उत्तम विद्या, शिक्षा, शील—स्वभाव, शरीर और आत्मा का बल बढ़ाएं। अध्यापक और अध्यापिकाएं सुशिक्षित, धार्मिक विचार वाले और चरित्रवान होने चाहिए। पाठशालाओं में बिना किसी भेदभाव के सबको समान खानपान, वस्त्र और आसन दिए जाएं जिससे धनी और निर्धन सभी को शिक्षा के समान अवसर प्राप्त हों। जब कभी विद्यार्थी बाहर या नगर में जाएँ तो उनके

thearyasamaj.org

अध्यापक–अध्यापिकाएं साथ रहें जिससे उनमें से कोई भी कुचेष्टा न करे। शिक्षा प्राप्ति के समय में विद्यार्थियों का माता–पिता से सम्पर्क नहीं होना चाहिए जिससे विद्या चिन्तामुक्त रहते हुए उत्तम से उत्तम विद्या प्राप्त करें।

शिक्षा प्राप्ति के लिए भेजते समय गायत्री मंत्र का उपदेश करें और अर्थ समझाएं। 'हे मनुष्यो! जो सर्वज्ञ, सच्चिदानंद, नित्य शुद्ध–बुद्ध–मुक्त स्वभाव, सकल ऐश्वर्ययुक्त, दयालु, न्यायकारी, अजन्मा, अमर, निराकार, सबका उत्पादक, धर्त्ता, पालन–कर्त्ता और शुद्ध चेतन स्वरूप परमात्मा है, उसीको हम धारण करें। वह परमेश्वर हमारी आत्मा और बुद्धियों को सत्यमार्ग पर चलाए'।

गायत्री मंत्र का उपदेश करके संध्या–उपासना की स्नान, आचमन और प्राणायाम आदि क्रियाएं सिखलाएं जिससे बाहरी शरीर शुद्ध और निरोग बना रहे। मनु–स्मृति में कहा गया है, 'जल से शरीर, सत्य आचरण से मन, विद्या और तप से बुद्धि पवित्र होती है और निश्चय दृढ़ होता है। प्राणायाम से मन, इन्द्रियों के दोष दूर हो जाते हैं और अशुद्धि दूर होने से ज्ञान का प्रकाश होता है'। वैसे तो प्राणायाम पांच प्रकार के हैं परन्तु इनमें से बाहरी और भीतरी प्राणायाम ही मुख्य हैं।

बाहरी प्राणायाम करते समय मूलेन्द्रिय को ऊपर खींचकर श्वास बाहर निकालें और उसे जितना समय रोक सकें बाहर ही रोक दें। इसी तरह भीतरी प्राणायाम करते समय श्वास को भीतर खींच कर जितना रोक सकें भीतर ही रोकें। प्राणायाम जितना सामर्थ्य और इच्छा हो उतना ही करें और प्राणायाम करते समय मन में ओ३म् का जाप करते रहें। शेष तीन प्राणायामों में श्वास जहां का तहां रोकना, श्वास बाहर से भीतर आने लगे तो उसे रोकने के लिए भीतर का श्वास बाहर फेंकें और यदि भीतर का श्वास बाहर जाने लगे तो उसे रोकने के लिए बाहर से श्वास भीतर खीचें। इस प्रकार प्राणायाम करने से प्राण वश में हो जाता है, शरीर का बल–पुरुषार्थ बढ़ता है, बुद्धि तीव्र हो जाती है और वेद शास्त्र आदि सूक्ष्म विषयों को भी शीघ्र ग्रहण कर लेती है।

हथेली में जल लेकर आचमन करने से कफ और पित्त शान्त होते हैं। अंग–स्पर्श करने से आलस्य दूर होता है। संध्या–उपासना को ब्रह्मयज्ञ कहते हैं। संध्या एकान्त में बैठकर एकाग्रचित होकर प्रातः सायं दोनों समय करनी चाहिए। अग्निहोत्र या हवन, यज्ञ को देवयज्ञ कहते हैं। यज्ञ में स्वाहा कहकर आहुति देते समय आत्मा और वाणी में एकरूपता होनी चाहिए। जैसे परमात्मा

thearyasamaj.org

ने सब प्राणियों के सुख के लिए सब पदार्थ रचे हैं वैसे ही मनुष्यों को भी परोपकार करना चाहिए।

प्रश्न : होम से क्या उपकार होता है?

उत्तर : हां, होम करने से जल और वायु शुद्ध होते हैं, रोग दूर होते हैं जिससे प्राणियों को सुख मिलता है। वर्षा समय पर होने से धन–धान्य में वृद्धि होती है।

प्रश्न : चंदन आदि घिसकर लगाने और घी आदि खाने से तो उपकार होता है, उसे अग्नि में जलाना कहां की बुद्धिमानी है?

उत्तर : अगर तुम पदार्थ विद्या जानते तो ऐसा न कहते। अग्नि में डाला हुआ पदार्थ सूक्ष्म होकर वायु के साथ दूर–दूर स्थानों में पहुंचकर दुर्गन्ध दूर करता और सुगंधि फैलाता है।

प्रश्न : अगर ऐसा ही है तब तो केसर, कस्तूरी, सुगंधित फूल और इत्र आदि पदार्थ घर में रखने से सुगंधित होकर वायु सुखकारक होगा?

उत्तर : नहीं। सुगंध में इतनी सामर्थ्य नहीं है कि घर की दूषित वायु को बाहर निकाल कर शुद्ध वायु का प्रवेश करा सके। अग्नि ही का सामर्थ्य है कि दूषित वायु और दुर्गंधयुक्त पदार्थों को छिन्न–भिन्न और हलका करके बाहर निकाल कर पवित्र वायु को प्रवेश करा देता है।

प्रश्न : तो मंत्र पढ़कर होम करने का क्या प्रयोजन है?

उत्तर : इनके बार–बार बोले जाने से यह मंत्र याद हो जाते हैं जिससे वेद पुस्तकों का पठन–पाठन और रक्षा होती है। इससे होम करने के लाभों की जानकारी भी मिल जाती है।

प्रश्न : क्या होम न करने से पाप होता है?

उत्तर : हां। जिस मनुष्य के शरीर से निकलने वाली दुर्गंध वायु, जल आदि को दूषित कर रोग फैलाती है, उससे प्राणियों को जितना दुःख प्राप्त होता है उतना पाप उस मनुष्य को होता है। उस पाप को दूर करने के लिए उतनी सुगंध फैलाना और यज्ञ द्वारा वातावरण को शुद्ध करना जरूरी होता है। होम से लाखों मनुष्यों का उपकार होता है। मनुष्यों को घी आदि पौष्टिक पदार्थ खाने भी चाहिए जिससे उनका शरीर और आत्मा बलवान बनें।

thearyasamaj.org

प्रश्न : प्रत्येक मनुष्य कितनी आहुति करे और एक–एक आहुति का परिमाण कितना होना चाहिये?

उत्तर : मनुष्य को प्रतिदिन कम से कम 6–6 माशे घी की 16 आहुतियां अवश्य करनी चाहिए। अगर अधिक कर सके तो बहुत अच्छा हो। ब्रह्मचारी को केवल ब्रह्मयज्ञ और देवयज्ञ ही करने चाहिये। ब्राह्मण द्वारा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य को, क्षत्रिय द्वारा क्षत्रिय और वैश्य को और वैश्य द्वारा वैश्य को शिक्षा दी जानी चाहिए। शूद्र भी यदि विद्या में रुचि रखता हो तो मंत्रसंहिता को छोड़कर बाकी सब शास्त्र उसे भी पढाये जाएं।

बालक को 8वें वर्ष में शिक्षा पाने के लिए आचार्य के पास भेजें और वह 25 वर्ष की आयु तक अपनी विद्या पूरी करे। यदि कोई चाहे तो 44 या 48 वर्ष तक ब्रह्मचारी रहकर भी शिक्षा प्राप्त कर सकता है। छान्दोग्य उपनिषद में कहा गया है कि साधारण ब्रह्मचर्य में बालक 24 वर्ष की आयु तक उत्तम ब्रह्मचारी रहकर वेद आदि विद्या और सुशिक्षा ग्रहण करें। मध्यम ब्रह्मचर्य 44 वर्ष की आयु तक होता है। इससे ब्रह्मचारी के प्राण, इन्द्रियां, अंतःकरण और आत्मा बलयुक्त हो के सब दुष्टों को रुलाने और श्रेष्ठों के पालन करने हारे होते हैं। उत्तम ब्रह्मचर्य में 48 वर्ष की आयु तक ब्रह्मचर्य करके जो विद्या ग्रहण करता है उसका प्राण अनुकूल होता है और इसके द्वारा आयु 400 वर्ष तक बढ़ाई जा सकती है। जो मनुष्य ब्रह्मचर्य का ठीक ढ़ंग से पालन करते हैं वे सब प्रकार के रोगों से रहित होकर धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

शरीर की चार अवस्थाएं होती हैं। (1) 16 वर्ष तक शरीर का विकास होता है। (2) 16 से 24 वर्ष तक सब धातुओं में वृद्धि होती है। 25वें वर्ष में यौवन का आरंभ होता है। (3) 26 से 40 वर्ष की आयु तक धातुओं की पुष्टि होती है और चौथी अवस्था में सारे धातु पुष्ट होकर पूर्णता को प्राप्त होते हैं।

प्रश्न : क्या ब्रह्मचर्य का यह नियम स्त्री और पुरुष दोनों के लिए एक समान है।

उत्तर : नहीं। ब्रह्मचर्य का पालन स्त्री–पुरुष दोनों को करना चाहिए, परन्तु दोनों की आयु में अन्तर रखा गया है। यदि पुरुष 25 वर्ष तक ब्रह्मचर्य करे तो स्त्री 16 वर्ष यदि पुरुष 40 वर्ष तक तो स्त्री 24 वर्ष तक, पुरुष 48 वर्ष तक तो भी स्त्री 24 वर्ष से आगे ब्रह्मचर्य न करे। यदि स्त्री या पुरुष जीवन भर विवाह न करना चाहें तो वे मरणपर्यन्त ब्रह्मचर्य कर सकते हैं।

thearyasamaj.org

तैतिरीय उपनिषद् में पढ़ने–पढ़ाने वालों के नियम इस प्रकार बताए गए हैं। पढ़ने पढ़ाने वाले सत्य आचरण करते हुए, धर्म पर चलते हुए, मन की वृत्ति को दोषों से हटाकर, ज्ञान–विज्ञान को भली भांति जानकर, अतिथियों की सेवा करते हुए, वीर्य की वृद्धि और रक्षा करते हुए, मनुष्य संबंधी व्यवहार करते हुए और सन्तान तथा राज्य का पालन करते हुए पढ़ता रहे और पढ़ाता रहे।

मनुष्य को सफल जीवन व्यतीत करने के लिए पांच यम और पांच नियमों का पालन करना चाहिए।

पांच यम इस प्रकार हैं। अहिंसा (वैरत्याग) सत्य (सच मानना, बोलना और करना) अस्तेय (मन, वचन, कर्म से चोरी न करना) ब्रह्मचर्य (इन्द्रियों और कामवासना पर नियंत्रण) और अपरिग्रह (आवश्यकता से अधिक संग्रह करके लोभ न करे)

पांच नियम इस प्रकार हैं। शौच (स्नान आदि से शरीर की पवित्रता) सन्तोष (पुरुषार्थ करते हुए जो प्राप्त हो उसमें प्रसन्न रहना) तप (कष्ट सहकर भी धर्मयुक्त काम करना) स्वाध्याय (पढ़ना–पढ़ाना) ईश्वर प्राणिधान (ईश्वर की भक्ति में आत्मा को अर्पित करना)। यम–नियम दोनों का पालन किए बिना मनुष्य उन्नति नहीं कर सकता।

मनुष्य को न तो अत्यधिक कामातुर होना चाहिए और न ही कामना रहित। क्योंकि कामना या इच्छा किए बिना तो वेदों का ज्ञान और वेदों में बताए गए कर्म भी नहीं किए जा सकते। मनुष्य को सकल विद्या पढ़ते–पढ़ाते हुए, सदा सत्य बोलना, प्रतिदिन पंचमहायज्ञ करना (ब्रह्मयज्ञ, देवयज्ञ, पितृयज्ञ, बलिवैश्वदेव यज्ञ और अतिथि यज्ञ) सत्य विद्याओं का दान देना, उत्तम ज्ञान ग्रहण करना, सन्तान उत्पन्न करना, शिल्पविद्या और ज्ञान–विज्ञान में उन्नति करते हुए, परमेश्वर की भक्ति के आधार रूप इस शरीर को 'ब्राह्मण शरीर' बनाना है। इसके लिए आवश्यक है कि जैसे सारथि घोड़ों को नियंत्रण में रखता है वैसे ही मनुष्य अपनी इन्द्रियों को नियंत्रण में रखे। इन्द्रियों को वश में करने से सभी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं लेकिन यदि जीवात्मा इन्द्रियों के वश में हो जाये तो मनुष्य बड़े–बड़े पाप कर बैठता है।

वेद का पढ़ना–पढ़ाना, संध्या अग्निहोत्र आदि नित्यकर्म प्रतिदिन करने चाहिए, किसी दिन भी नागा नहीं डालना चाहिए। जैसे झूठ बोलने में सदा

पाप और सत्य बोलने में सदा पुण्य होता है वैसे ही बुरे कर्म करने में अनध्याय (नागा या छुट्टी) और अच्छे कर्म करने में सदा स्वाध्याय ही होता है। विद्वानों और विद्यार्थियों को वैर बुद्धि छोड़कर सब मनुष्यों को कल्याण के मार्ग का उपदेश सदा मधुर और विनम्र वाणी से करना चाहिए। धर्म की उन्नति चाहने वाले को चाहिए कि वह सदा सत्य पर चलें और सदा सत्य का उपदेश करें। जिस मनुष्य की वाणी और मन शुद्ध तथा सुरक्षित रहता है, वही वेदों के सिद्धान्तरूप फल को प्राप्त करता है।

जो ब्राह्मण सब वेदज्ञान और परमेश्वर को जानता है वह प्रतिष्ठा को विषतुल्य और अपमान को अमृत के समान समझता है। जो ब्राह्मण वेद पढ़ने के बजाय दूसरे कामों में लगा रहता है वह शूद्रभाव को प्राप्त होता है।

ब्रह्मचारी बालक–बालिकाओं को मदिरा, मांस सेवन, गंध, माला, रस, खटाई, हिंसा, आंखों में काजल, जूता–छाता आदि का प्रयोग नहीं करना चाहिए। उन्हें काम, क्रोध, लोभ, मोह, भय, शोक, ईर्ष्या, द्वेष, राग–रंग, जुआ, चुगली–निंदा, झूठ बोलना, स्त्री को पुरुष का और पुरुष को स्त्री का दर्शन, दूसरों को हानि पहुंचाना आदि बुरे कर्म कभी नहीं करने चाहिए। उन्हें एकान्त में सोना चाहिए और वीर्य की रक्षा करनी चाहिए।

आचार्य आश्रम में रहने वाले शिष्यों को ऐसा उपदेश दे कि वे सदा सत्य बोलें, धर्म पर चलें, आलस्य रहित होकर पढ़ें, पूर्ण ब्रह्मचर्य से समस्त विद्याओं को ग्रहण करने के पश्चात विवाह कर योग्य सन्तान उत्पन्न करें। प्रमाद (भ्रम या लापरवाही) से सत्य, धर्म, निरोगता, चतुराई और पढ़ना–पढ़ाना कभी न छोड़ें। माता–पिता, विद्वानों और अतिथि की सेवा करें, झूठ कभी न बोलें, धर्मयुक्त कर्म करें और पाप का आचरण कभी न करें। अगर उनके बीच कोई उत्तम धर्मात्मा विद्वान् या ब्राह्मण आ जाये तो उसके समीप बैठें, उसके वचनों पर विश्वास किया करें। मनुष्य को चाहिए कि उन्हें श्रद्धा, अश्रद्धा, शोभा, लज्जा, भय या प्रतिज्ञा से दान दें। जब कभी किसी धर्म–कर्म के करने में संशय हो तो जैसा विद्वान् लोग कहें उसीके अनुसार करें, यही वेद का उपदेश है।

मनुस्मृति में कहा गया है कि वेद और वेद के अनुकूल स्मृतियों में बताए गए धर्म का आचरण करें। जो धर्म के आचरण से रहित है उसे सम्पूर्ण सुख प्राप्त नहीं होता। वेदनिन्दक या विद्वानों का अपमान करने वाले नास्तिक को जाति, समाज और देश से बाहर निकाल देना चाहिए।

thearyasamaj.org

श्रुति (वेद) स्मृति (वेदानुकूल अन्य ग्रंथ) सदाचार और जो अपनी आत्मा को प्रिय अर्थात जिसको आत्मा चाहता है, यही धर्म के चार लक्षण हैं। इनके द्वारा ही धर्म–अधर्म की पहचान होती है। पक्षपात रहित न्याय, सत्य का ग्रहण, असत्य का त्याग करते हुए आचरण करना धर्म और इसके विपरीत चलना अधर्म है। जो लोभ और काम के जाल में नहीं फंसते उन्हीं को धर्म का ज्ञान होता है।

राजा को चाहिए कि वह सभी वर्णों के लोगों को शिक्षित करवाये। केवल ब्राह्मणों के शिक्षित होने से ही समाज की उन्नति नहीं हो सकती। यदि क्षत्रिय, वैश्य आदि शिक्षित होते हैं तभी ब्राह्मण भी अधिक विद्याभ्यास करते हैं और धर्म पथ पर चलते है। यदि क्षत्रिय आदि अविद्वान् हों तो ब्राह्मण भी झूठ पाखंड आदि मनमाना व्यवहार करने लगते हैं। यदि ब्राह्मण भी अपना कल्याण चाहते हैं तो उन्हें क्षत्रिय आदि को वेदादि सत्यशास्त्रों का अभ्यास अधिक प्रयत्न से कराना चाहिए। क्योंकि यही लोग विद्या, धर्म, राज्य और लक्ष्मी की वृद्धि करने वाले होते हैं। ये दूसरों की सहायता से नहीं पलते इसलिए विद्या–व्यवहार में भी पक्षपाती नहीं हो सकते। जब सब वर्णों में सुशिक्षा होती है तो कोई पाखंडी अधर्मयुक्त मिथ्या व्यवहार नहीं चला सकता। पुरुषों के समान स्त्रियाँ भी शिक्षित होनी चाहिए।

कौन सी शिक्षा उत्तम है इसे जानने के लिए पांच प्रकार से परीक्षा की जाती है।

1. जो विद्या ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव और वेदों के अनुकूल हो वह सत्य है, उसके विरुद्ध असत्य है।
2. जो सृष्टि के नियम के अनुकूल है वह सत्य है और जो उसके विरुद्ध है वह असत्य है, जैसे बांझ को पुत्र उत्पन्न होना।
3. जो सत्यवादी, निष्कपट और धार्मिक विद्वान् उपदेश दे वह ग्रहण करने योग्य है, उसके विरुद्ध ग्रहण करने योग्य नहीं है।
4. जो आत्मा की पवित्रता और विद्या के अनुकूल हो, जिससे आत्मा को प्रसन्नता अनुभव हो जैसे अपने को सुखप्रिय, दुःख अप्रिय है वैसे ही यह जान लें कि यदि दूसरों को सुख–दुःख दूंगा तो वे भी प्रसन्न और अप्रसन्न होंगे अर्थात् दूसरों से वैसा व्यवहार करो जैसा तुम उनसे अपने लिए चाहते हो।

thearyasamaj.org

5. आठों प्रमाणों की सहायता से जो सत्य–सिद्ध हों। न्यायशास्त्र में इनकी व्याख्या इस प्रकार की गई है :

(1) **प्रत्यक्ष :** जो ज्ञान इन्द्रियों के साथ मन का और मन के साथ आत्मा का संयोग होने से होता है। जैसे जल लाओ कहने पर मांगने वाला और लाने वाला दोनों जल को ही प्रत्यक्ष देखते हैं।

(2) **अनुमान :** जब कारण को देखकर कार्य का, कार्य को देखकर कारण का या किसी प्रकार के समान धर्म से जो ज्ञान हो उसे अनुमान कहते हैं। जैसे बादलों को देखकर वर्षा का अनुमान या नदी के बढ़ते प्रवाह को देखकर ऊपर हुई वर्षा का अनुमान या किसी दूसरे स्थान पर पहुंच जाने से चलने का अनुमान होता है।

(3) **उपमान :** जो धर्म की समानता से सिद्ध करने योग्य ज्ञान का साधन हो उसे उपमान कहते हैं। जैसी गाय होती है वैसी ही नीलगाय होती है।

(4) **शब्द प्रमाण :** पूर्ण विद्वान, धर्मात्मा, परोपकार प्रिय, सत्यवादी, पुरुषार्थी जितेन्द्रिय पुरुष जैसा अपनी आत्मा में जानता हो और जिससे सुख प्राप्त हुआ हो उसके कथन को वेद अनुकूल होने के कारण ठीक मानना शब्द प्रमाण है।

(5) **एतिह्य :** किसी ने अपने जीवन में जैसा किया हो उसे ठीक मानकर अनुकरण करना एतिह्य कहलाता है।

(6) **अर्थापत्ति :** कारण होने से कार्य और कार्य होने से कारण कहे बिना दूसरी बात सिद्ध नहीं होती, यही अर्थापत्ति है।

(7) **संभव :** जो बात सृष्टि क्रम के अनुकूल हो उसे संभव मानते हैं।

(8) **अभाव :** जो चीज जहां न हो उसे अभाव कहते हैं, ऐसी वस्तु किसी और जगह से लाने से अभाव दूर हो जाता है। जैसे हाथी ले आ कहने पर वहां हाथी का अभाव है लेकिन बाहर से हाथी ले आने से अभाव दूर हो जाता है।

जब मनुष्य को सत्य–असत्य का, प्रमाणों से सिद्ध होने पर ज्ञान हो जाता है और धर्म के अनुसार चलने से उसे समान धर्म रखने वाले पदार्थों का उनके गुण, कर्म और स्वभाव के अनुसार उनके स्वरूप का ज्ञान हो जाता है (जैसे

thearyasamaj.org

पृथ्वी और जल दोनों जड़ होते हुए भी अलग हैं पृथ्वी कठोर और जल कोमल होता है) तो वह अपने श्रेष्ठ तत्वज्ञान से मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।

इस सृष्टि में पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, काल, दिशा, आत्मा और मन ये नौ द्रव्य हैं। इनमें से 6 क्रिया करते रहते हैं और आकाश, काल, दिशा ये तीन द्रव्य क्रिया नहीं करते। इन 6 क्रियाशील द्रव्यों का तत्वज्ञान होने पर ही मोक्ष की प्राप्ति होती है।

(1) **पृथ्वी** : रूप, रस, गंध, स्पर्श ये पृथ्वी के गुण हैं। इनमें से गंध पृथ्वी का स्वाभाविक गुण हैं। रूप, रस और स्पर्श उसे अग्नि, जल और वायु के योग से प्राप्त होते हैं।

(2) **जल** : जल के गुण रूप, रस, स्पर्श और शीतलता है। इनमें से रस, शीतलता तो जल के स्वाभाविक गुण हैं। रूप और स्पर्श उसे अग्नि और वायु के योग से प्राप्त होते हैं।

(3) **तेज** : तेज में रूप और स्पर्श गुण हैं। रूप उसका स्वाभाविक गुण है और स्पर्श का गुण उसे वायु के योग से प्राप्त होता है।

(4) **वायु** : स्पर्श वायु का स्वाभाविक गुण है लेकिन गर्मी–सर्दी के गुण उसे तेज और जल के योग से प्राप्त होते हैं।

(5) **आकाश** : शब्द आकाश का स्वाभाविक गुण है। उसमें रूप, रस, गंध, स्पर्श आदि गुण नहीं होते।

(6) **काल** : जो नित्य पदार्थों में न हो और अनित्य पदार्थ में हो उसे काल कहते हैं।

(7) **दिशा** : पूर्व, पश्चिम, उत्तर, दक्षिण, ऊपर, नीचे इन्हें ही व्यवहार में दिशा कहते हैं लेकिन इन दिशाओं के कोणों में चार दिशाएं और होती हैं, पूर्व–दक्षिण के बीच 'आग्नेयी'; दक्षिण–पश्चिम के बीच नैऋति; पश्चिम–उत्तर के बीच 'वायवी' और उत्तर–पूर्व के बीच 'ऐशान' दिशा कहलाती है।

(8) **आत्मा** : 'जिसमें राग–द्वेष, पुरुषार्थ, सुख–दुःख, ज्ञान आदि गुण हों वह जीवात्मा है। श्वास लेना, छोड़ना, आंख बंद करना और खोलना, प्राण का धारण करना, मनन करना, गति या जाना, इन्द्रियों को विषयों में चलाना और इनसे भूख–प्यास, सुख–दुःख, पीड़ा, इच्छा, प्रयत्न आदि विषयों का ग्रहण करना आत्मा के गुण और कर्म हैं।

(9) **मन** : जिसमें एक समय में दो पदार्थों का ग्रहण नहीं होता उसे मन कहते हैं।

प्रश्न : गुण किसे कहते हैं और कितने प्रकार के हैं?

उत्तर : रूप, रस, गंध, स्पर्श, परिमाण, पृथकता, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, बुद्धि, संख्या, सुख, दुःख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह, संस्कार, धर्म, अधर्म और शब्द ये 24 गुण हैं।

जो किसी द्रव्य पदार्थ के आश्रय में रहे और दूसरा गुण धारण न करे और एक दूसरे की इच्छा न करे, उसे गुण कहते हैं।

जिसका ग्रहण नेत्रों से हो वह रूप, जीभ से हो वह रस, नाक से हो वह गंध, त्वचा से हो वह स्पर्श, कान से हो वह शब्द, जिसकी गिनती हो वह संख्या, जिसका माप–तोल हो वह परिमाण, एक दूसरे से अलग होना पृथकता, एक दूसरे में मिलना संयोग, एक के अनेक टुकड़े हो जाना विभाग, जो पहले हुआ हो या दूर हो परत्व, जो निकट हो, अपरत्व, जिससे अच्छे–बुरे का ज्ञान हो बुद्धि, आनन्द का नाम सुख, क्लेश का नाम दुःख, राग का नाम इच्छा, विरोध का नाम द्वेष, अनेक प्रकार के बल–पुरुषार्थ का नाम प्रयत्न, भारी होना गुरुत्व, पिघलना द्रवत्व, प्रीति या चिकनापन होना स्नेह, दूसरे के योग से वासना का होना संस्कार, न्याय और कठिनता से चलना धर्म, अन्याय और कोमलता से चलना अधर्म कहलाते हैं।

प्रश्न : कर्म किसे कहते हैं।

उत्तर : शरीर के द्वारा कुछ करने के लिए जो चेष्टा की जाती है उसे कर्म कहते हैं जैसे : आना, जाना, घूमना, छूना, उठाना, फैलाना आदि। एक द्रव्य के आश्रित, गुणों से रहित, संयोग और विभाग होने में जो अपेक्षा रहित कारण हो, उसको कर्म कहते हैं।

द्रव्यों में द्रव्यपन, गुणों में गुणपन, कर्मों में कर्मपन ये सब सामान्य और विशेष कहलाते हैं। जैसे ब्राह्मणों में ब्राह्मणत्व होना सामान्य है लेकिन क्षत्रिय आदि से उनका ब्राह्मणत्व विशेष है। गुण और गुणी, कार्य और कारण, क्रिया और क्रियावान, ईश्वर और जीव का नित्य संबंध होने से 'समवाय' कहाता है और दूसरे द्रव्यों का परस्पर जो अनित्य संबंध होता है उसे संयोग कहते हैं। इसी प्रकार जिन द्रव्यों का गुण समान जाति का हो उसे साधर्म्य कहते हैं

thearyasamaj.org

जैसे पृथ्वी और जल दोनों जड़ होने के कारण समान हैं। लेकिन जिन द्रव्यों के गुण एक होते हुए भी उनका धर्म अलग हो वहां वैधर्म्य होता है जैसे पृथ्वी और जल दोनों जड़ हैं लेकिन पृथ्वी का धर्म कठोरता और सूखापन है, जल का धर्म रस, द्रव्यता और कोमलता है जो पृथ्वी के धर्म के विरुद्ध है।

कारण के होने से ही कार्य या कर्म होता है, काम न भी हो तो भी कारण का अभाव नहीं होता अर्थात कारण रहता है लेकिन यदि कारण न हो तो कार्य कभी नहीं हो सकता। कारण में जैसे गुण होते हैं, वैसे ही कार्य में होते हैं। द्रव्यों के स्वाभाविक गुण नित्य होते हैं लेकिन योग से होने वाले गुण अनित्य होते हैं जैसे गंध पृथ्वी का स्वाभाविक गुण होने के कारण नित्य है, रूप, रस आदि अनित्य हैं।

जब साधन और साध्य अर्थात् सिद्ध करने योग्य और जिससे सिद्ध किया जाये, उन दोनों या एक साधन का निश्चित धर्म का सहचार है उसी को व्याप्ति कहते हैं, जैसे अग्नि से धुंआ होता है इसलिए धुंआ और अग्नि का सहचार है। जब धुंआ उड़कर दूर चला जाता है उस समय अग्नि उसके साथ नहीं होती लेकिन धुंआ रहता है अर्थात् अग्नि के छेदन, भेदन, सामर्थ्य से जलादि पदार्थ धुंए के रूप में प्रकट होते हैं।

विद्यार्थियों को ऐसी शिक्षा दी जाये जिससे उन्हें सत्य का ज्ञान हो और भ्रम का निवारण हो जाये। शिक्षा देते समय माता–पिता और आचार्य इस बात का ध्यान रखें कि सभी वर्णों का उच्चारण ठीक प्रयत्न से हो, उसके बाद भाषा ज्ञान करवाने के लिए महर्षि पाणिनी की अष्टाध्यायी और पांतजलि का महाभाष्य पढ़ाया जाये जिससे विभिन्न शब्दों की उत्पत्ति किस–किस धातु से हुई, उनके लिंग, वचन, कारक, काल, सन्धि, सन्धि–विच्छेद, उपसर्ग प्रत्यय, अर्थों आदि का ज्ञान हो जाए। जितना परिश्रम व्याकरण पढ़ने में करना पड़ता है उतना बाकी ज्ञान प्राप्त करने में नहीं करना पड़ता क्योंकि भाषा–ज्ञान हो जाने से बाकी शास्त्र आसानी से समझ आ जाते हैं। जो व्यक्ति शब्द, अर्थ, और उनके संबंध को जानने वाला है उसे विद्या उसी प्रकार प्राप्त हो जाती है जैसे सुन्दर पत्नी पति को अपना समर्पण कर देती है। विद्या विद्वानों के लिए ही अपने स्वरूप को प्रकट करती है, अविद्वानों के लिए नहीं। उसके बाद छन्द, अलंकार, श्लोक–रचना आदि सिखाए जायें और फिर चारों वेद, चार उपवेद (आयुर्वेद, धनुर्वेद, गंधर्व और अर्थ या शिल्प वेद) 4 ब्राह्मण ग्रंथ (ऐतरेय, शतपथ, साम

और गोपथ), छः वेदांग (शिक्षा, कल्प, व्याकरण, ज्योतिष, निरुक्त और छन्द) और छः दर्शन–शास्त्र पढ़ायें जायें। जो वेदों को पढ़कर, धर्मात्मा योगी होकर उस ब्रह्म को जानते हैं वे सब परमेश्वर में स्थित होकर मुक्ति रूपी परमानंद को प्राप्त होते हैं। इसलिए जो कुछ पढ़ें उसे अर्थ सहित अच्छी तरह समझ कर पढ़ें।

आयुर्वेद अर्थात् चरक, सुश्रुत आदि महर्षियों द्वारा रचित वैद्यक शास्त्र हैं जिसमें रोग, उसके कारण, लक्षण, चिकित्सा, छेदन–भेदन (शल्यक्रिया) औषधि, पथ्य, शरीर–विज्ञान, देश–काल, वस्तु के गुण आदि का ज्ञान दिया गया है।

धनुर्वेद में राजकार्य, शस्त्रविद्या, युद्ध, सेना संगठन और प्रशिक्षण, व्यूह रचना, आदि का ज्ञान देने के साथ–साथ, राज्य की रक्षा, प्रजा से न्यायपूर्ण व्यवहार, श्रेष्ठों का पालन और दुष्टों को दंड देने का विस्तृत वर्णन है।

गंधर्ववेद में नृत्य, संगीत, ताल, राग, वाद्य आदि का ज्ञान दिया गया है। अर्थवेद या शिल्पवेद में पदार्थ के गुण विज्ञान, क्रिया कौशल, नए–नए पदार्थों का निर्माण, अंकगणित, बीजगणित, सूर्य–सिद्धांत, भूगोल, खगोल, भूगर्भ विद्या आदि का ज्ञान दिया गया है।

उसके बाद सब प्रकार के कला कौशल, यंत्रकला, ग्रह–नक्षत्र विज्ञान, जन्म पत्र, मुहूर्त आदि निकालना सिखाया जाये। शिक्षा प्राप्त करने वाला मनुष्य सदा आनंद में रहता है। सदैव ऋषि द्वारा रचित ग्रंथों का ही अध्ययन करें इसके अलावा बाकी ग्रंथ त्याज्य हैं।

प्रश्न : क्या त्याज्य ग्रंथों में कुछ भी सत्य नहीं है? अगर है तो आप उसे ग्रहण क्यों नहीं करते?

उत्तर : उनमें थोड़ा सत्य है, अधिक असत्य है। जैसे उत्तम अन्न भी विषयुक्त होने से ग्रहण नहीं किया जाता। वैसे ही इन ग्रंथों को छोड़ना उचित है। इनसे भला कम और बुरा अधिक होने की संभावना रहती है। इन ग्रंथों में जो सत्य है वह सब वेद शास्त्रों में पाया जाता है इसलिए उसे ग्रहण करने की जरूरत ही नहीं रह जाती।

प्रश्न : क्या आप पुराण इतिहास को नहीं मानते? इनमें कौन सत्य और असत्य है?

उत्तर : हम पुराणों में सत्य इतिहास को मानते हैं, झूठ को नहीं। हम शतपथ

ऐतरेय आदि ब्राह्मणग्रंथों में लिखे इतिहास, पुराण कल्प, गाथा और नाराशंसी को मानते हैं लेकिन भागवत पुराण आदि को नहीं।

प्रश्न : तुम्हारा मत क्या है? तुम छः शास्त्रों को क्यों मानते हो जबकि उनमें एक ही विषय पर अलग–अलग विरोधी मत प्रकट किए गए हैं?

उत्तर : हमारा मत वेद है, वेद में जो करने, छोड़ने और मानने को कहा गया है हम उसी को मानते हैं। तुम छः शास्त्रों में एक ही विषय पर जिस विरोध की बात करते हो वह ठीक नहीं हैं। जैसे वैद्यक शास्त्र में निदान, चिकित्सा, औषधिविज्ञान और पथ्य सब अलग–अलग कहे जाते हैं परन्तु सबका सिद्धान्त रोग को दूर करना ही हैं उसी प्रकार छः दर्शन शास्त्रों में एक–एक महर्षि ने एक–एक भाग का वर्णन किया है इन सबमें सृष्टि के छः कारणों और उनके द्वारा उस एक ईश्वर का ज्ञान दिया गया है इसलिए इनमें कोई विरोध नहीं है। ईश्वर ने सृष्टि की रचना की है इसलिए वह कर्त्ता है, उसके द्वारा रचना कर्म है, कर्म करने में पुरुषार्थ होता है, पदार्थों की आवश्यकता होती है, साधन की आवश्यकता होती है और समय भी चाहिए। इन्ही छः बातों का वर्णन इन छः शास्त्रों में है इसलिए इन सबका उद्देश्य उस ब्रह्म का ज्ञान देना ही है।

मनुष्य को चाहिए अविद्या, अज्ञानता और उनको बढ़ाने वाली सभी बुराइयों से दूर रहे और विद्या के प्रकाश की ओर बढ़ने का प्रयत्न करता रहे।

प्रश्न : क्या स्त्रियां और शूद्र भी वेद पढ़ें?

उत्तर : हाँ। वेद पढ़ने का अधिकार सभी को है। यजुर्वेद में एक मंत्र में परमेश्वर उपदेश देता है "जैसे मैं सब मनुष्यों के लिए संसार और मुक्ति का सुख देने वाली चारों वेदों की वाणी का उपदेश करता हूं, वैसा ही तुम भी किया करो'। सब मनुष्यों (चारों वर्णों, पुरुष–स्त्रियों) को वेद पढ़–पढ़ा, सुन–सुनाकर विज्ञान को बढ़ाकर, अच्छी बातों का ग्रहण और बुरी बातों को छोड़कर, दुःखों से छूटकर आनंद प्राप्त हो। वेदों की निन्दा करने वाला परमेश्वर को न मानने वाला नास्तिक होता हैं। यदि ईश्वर ने शूद्र आदि को पढ़ने–सुनने का अधिकार न देना होता तो वह उन्हें कान और वाणी क्यों देता। ईश्वर न्यायकारी है वह ऐसा पक्षपात कभी नहीं करता है। जहां कहीं निषेध किया है वहां उसका अभिप्राय केवल इतना ही है कि जिसमें सीखने योग्य बुद्धि नहीं है या जिसकी रुचि ही नहीं है उस मूर्ख पर व्यर्थ श्रम न किया जाये। स्त्रियां भी सुशिक्षित होती थीं तभी तो स्वर सहित वेद मंत्रों का उच्चारण और उपदेश करती थीं। वेदों

में स्त्रियों की शिक्षा पर विशेष बल दिया गया है और कहा गया है कि स्त्रियों को पुरुषों के समान व्याकरण, धर्म, वैद्यक, गणित और शिल्प विद्या तो अवश्य सीखनी चाहिए क्योंकि इसके बिना वे सत्य–असत्य का निर्णय, पति से अनुकूल व्यवहार, सन्तानोत्पत्ति, उनका पालन, सुशिक्षा, घर के कार्यों को कुशलता से चलाना आदि कार्य ठीक ढ़ंग से नहीं कर सकेगी।

विद्या अमूल्य धन है जिसे न चोर चुरा सकता है, न कोई छीन सकता है, यह संकट के समय भी काम आता है, देश–विदेश कहीं भी जाने पर साथ रहता है। इसलिए जितना बन पड़े उतना प्रयत्न तन मन से विद्या की वृद्धि के लिए करना चाहिए। विद्या एक ऐसा अक्षय कोष है जो ज्यों–ज्यों खर्च करें, त्यों–त्यों बढ़ता है। वैसे तो सभी दान श्रेष्ठ हैं लेकिन वेद–विद्या का दान अतिश्रेष्ठ है। इसलिए सबको शिक्षा और वेदविद्या के प्रचार में यथायोग्य प्रयत्न और सहयोग करना चाहिए।

thearyasamaj.org

समावर्त्तन, विवाह, गृहस्थाश्रम 4

मनुस्मृति में कहा गया है कि ब्रह्मचर्य का पालन करने के उपरांत माता–पिता को चाहिए कि वे समान योग्यता और शिक्षा रखने वाले लड़के और लड़की का विवाह करवा कर उन्हें गृहस्थाश्रम में प्रवेश करवाएं। गृहस्थाश्रम में प्रवेश करने से पहले लड़के या उसके माता–पिता को आचार्य को गोदान देकर उसका सत्कार करना चाहिए। इसी प्रकार लडकी का पिता लड़के को गोदान देकर सत्कार करें। ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य कुलों के लड़के और लड़कियों के विवाह अपने–अपने वर्णों के कुलों में ही होने चाहिए। लड़के का विवाह माता के कुल की 6 पीढ़ियों और पिता के गोत्र की कन्या से न करें। विवाह दूर स्थान पर ही करना चाहिए।

निकट और दूर विवाह करने के गुण :

1. बचपन से निकट रहने के कारण आपसी लड़ाई झगड़े, गुण, दोष स्वभाव और विपरीत आचरण होने से प्रेम नहीं हो सकता।
2. एक गोत्र या मातृकुल में विवाह होने पर धातुओं के अदल–बदल न होने से उन्नति नहीं होती, जैसे पानी में पानी मिलाने से कोई विशेष गुण नहीं पैदा होता।
3. मातृ और पितृकुल से पृथक कुल में विवाह होना उसी प्रकार लाभदायक होता है जैसे दूध में मिश्री या सोंठ आदि मिलाने से उसका गुण बढ़ जाता है।
4. दूर देश में विवाह होने से जलवायु, खानपान बदल जाने से रोग दूर हो जाते हैं, बढ़ते नहीं।
5. निकट संबंध होने से एक दूसरे के सुख–दुःख का ज्ञान और विरोध होना भी संभव होता है। दूरी होने से प्रेम की ड़ोर लंबी होती है, निकटस्थ विवाह में नहीं।

thearyasamaj.org

6. दूर–दूर देशों में होने वाले पदार्थों की प्राप्ति आसनी से हो जाती है।
7. दूर होने से कन्या का आना–जाना बार बार न होने से माता पिता पर आर्थिक बोझ कम रहता है।
8. निकट होने से एक दूसरे को अपने–अपने पितृकुल से मिलने वाली सहायता का घमंड रहने से झगड़ा बढ़ेगा, एक दूसरे की निन्दा और विरोध अधिक होगा।

चाहे कोई कितना भी धनी या उच्चकुल क्यों न हो, इस दस कुलों का त्याग कर दें।

1. सत्कर्मों से हीन, 2. सत्पुरुषों से रहित, 3. वेदविद्या से विमुख, 4. शरीर पर बड़े–बड़े रोम हों, 5. बवासीर हो, 6. क्षय या तपेदिक, 7. खांसी–दमा, 8. आमाशय, 9. मिरगी, 10. श्वेत या गलित कोढ़ वाले कुलों में विवाह न करें। क्योंकि ये सब रोग विवाह करने वाले कुल में भी पहुंच जाते हैं।

इसके अतिरिक्त पीले रंग वाली, अधिक अंगों अर्थात् पुरुष से लंबी चौड़ी, रोगी, लोम रहित या बहुत लोमवाली, बहुत बोलने वाली और भूरे नेत्रों वाली कन्या से विवाह नहीं करना चाहिए। नक्षत्र, वृक्ष, नदियों, पर्वतों, पक्षी और भीषण नाम वाली कन्या से विवाह नहीं करना चाहिए। जिसका शरीर सुडौल, नाम सुन्दर, अच्छी चाल, सूक्ष्म लोम, सुन्दर केश और दांत हों ऐसी कन्या से विवाह करना चाहिए।

प्रश्न : विवाह का समय और प्रकार कौन सा अच्छा है?

उत्तर : कन्या के लिए 16 से 24 वर्ष तक और लड़के के लिए 25 से 48 वर्ष तक विवाह का समय सबसे उत्तम है। आमतौर पर 16 वर्ष की लड़की और 25 वर्ष के लड़के का विवाह हो जाता है। जिस देश में इस प्रकार ब्रह्मचर्य और विद्याभ्यास करने वाले लड़के–लड़कियों के विवाह होते हैं वह सुखी होता है। कुछ लोगों ने ऐसे श्लोक बना रखे हैं जिनमें 8वें वर्ष में गौरी, 9वें वर्ष में रोहिणी बताकर कन्याओं का विवाह करवा दिया जाता रहा और बाल विवाह न करने वालों को यह भय दिखाया जाता था कि रजस्वला होने से पहले कन्या का विवाह न करने पर माता–पिता और बड़ा भाई तीनों को नरक में जाना पड़ेगा। पौराणिक लोग तो गौरी (पार्वती) रोहिणी (वसुदेव की पत्नी) को माता समान पूजते हैं लेकिन यहां वे कन्याओं को गौरी–रोहिणी बताकर उनसे विवाह

thearyasamaj.org

की भावना रखते हैं। उन लोगों के ये श्लोक वेद शास्त्रों के विरुद्ध हैं क्योंकि 16 वर्ष की आयु की कन्या और 25 वर्ष का पुरुष ही शरीर से बलिष्ठ और उत्तम संतान उत्पन्न करने योग्य होते हैं। मनुस्मृति में कहा गया हे, रजोदर्शन के तीन वर्ष बाद ही कन्या का विवाह होना चाहिए।

प्रश्न : विवाह माता–पिता के अधीन होना चाहिए या लड़का–लड़की के अधीन रहे?

उत्तर : विवाह लड़के–लड़की की इच्छा और प्रसन्नता से ही होना चाहिए, इससे विरोध की संभावना कम होती है और संतान उत्तम होती है। माता–पिता को चाहिए कि सम्बन्ध तय करते समय लड़के और लड़की की इच्छा को अवश्य ध्यान में रखें। जिस कुल में स्त्री से पुरुष और पुरुष से स्त्री सदा प्रसन्न रहती है, उसी कुल में आनंद, लक्ष्मी और कीर्ति निवास करती है जहां विरोध और कलह होता है वहां दुःख, दरिद्र और निन्दा निवास करती है।

जब लड़का–लड़की विवाह करना चाहें तब उनका कुल, विद्या, विनय, शील, रूप, आयु, बल शरीर का परिमाण एक–दूसरे के अनुकूल होने चाहिए। यदि इनका मेल न हो तो विवाह में कुछ भी सुख नहीं होता।

जो पुरुष ब्रह्मचर्ययुक्त युवा होकर, विद्या–विज्ञान में उन्नत होकर, अत्यंत शोभायुक्त होकर समाज में प्रतिष्ठित होता है और जो स्त्री पूर्ण युवावस्था को प्राप्त, उत्तम विद्या प्राप्त, सुशील व विनम्र स्वभाव वाली होती है वही समाज में सम्मान पाती है। ऐसे पुरुष–स्त्री का विवाह होने से ही उत्तम सन्तान उत्पन्न होती है और वे चिरकाल तक गृहस्थ का सुख भोगते हैं। जब माता–पिता ने अपनी इच्छा से लड़के–लड़कियों के विवाह करने शुरू कर दिए तो नित्य नई–नई समस्याएं पैदा होने लगीं और कष्ट बढ़ गए। इसलिए विवाह समान वर्ण, गुण, कर्म और स्वभाव के अनुकूल ही होने चाहिए।

प्रश्न : क्या जिनके माता–पिता ब्राह्मण होते हैं वही ब्राह्मण हो सकते हैं या जिनके माता–पिता दूसरे वर्ण के हों उनकी सन्तान भी ब्राह्मण हो सकती है?

उत्तर : हां, हो सकते हैं। महाभारत में विश्वामित्र क्षत्रिय से और मातंग ऋषि का शूद्र से ब्राह्मण बन जाना लिखा है। वेद में वर्णव्यवस्था जन्म से नहीं, कर्म से निश्चित की जाती थी, ऐसा माना गया है। बालक या बालिका की

विद्याग्रहण करने की योग्यता, बल, बुद्धिचातुर्य और मंदबुद्धि को देखकर ही उन्हें ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र बनाया जाता था। उस समय ऊंच–नीच का भेदभाव न होने के कारण एक ही परिवार के सदस्य ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र हो सकते थे। वर्णव्यवस्था का माता–पिता से कोई संबंध न था।

प्रश्न : क्या तुम परम्परा का भी खंडन करोगे?

उत्तर : तुम पांच–सात पीढ़ियों से चली आने वाली रीति को परम्परा कहते हो, लेकिन हम वेद तथा सृष्टि के आदि से चली आने वाली परम्परा को मानते हैं। यदि तुम्हारी बात को मानें तब तो यह मानना पड़ेगा कि जिसके पूर्वज धर्मात्मा हों उसे धर्मात्मा होना चाहिए और जिसके पूर्वज दुष्ट हों उसे दुष्ट होना चाहिए। इस तरह तो व्यक्ति को अपने को ऊंचा उठाने का अवसर ही नहीं मिलेगा और यदि सभी धर्मात्मा हो जायें तो दुःख कभी होगा ही नहीं तुम ऐसा मानते हो।

प्रश्न : यजुर्वेद के एक मंत्र में कहा गया है कि ईश्वर के मुख से ब्राह्मण, भुजाओं से क्षत्रिय, जांघों से वैश्य और पांवों से शूद्र उत्पन्न हुए। जैसे मुख भुजा नहीं हो सकता और भुजा मुख नहीं हो सकता वैसे ही ब्राह्मण क्षत्रिय और क्षत्रिय ब्राह्मण नहीं हो सकता?

उत्तर : ईश्वर की सृष्टि में जो मुख के सदृश उत्तम हो वह ब्राह्मण, बलवीर्य का नाम बाहु है इसलिए जिस में बल अधिक हो वह क्षत्रिय, जांघों से इधर–उधर जाना होता है इसलिए जो सब देशों में जाकर व्यापार करें वे वैश्य और जो पाँव के समान नीचे हो वह शूद्र कहाता है। ईश्वर तो निराकार है उसके मुख, हाथ, टाँगे और पाँव हो ही नही सकते। यदि तुम्हारी बात मानें तब तो जहां–जहां से कोई उत्पन्न हो उसका आकार वैसा–वैसा ही होना चाहिए।

मनुस्मृति में भी कहा गया है कि शूद्रकुल में उत्पन्न होकर भी यदि कोई अपने गुण, कर्म, स्वभाव से ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य के गुणों वाला हो जाये तो वह उसी कुल को धारण करता है। इसी तरह किसी उच्चकुल में उत्पन्न होने वाला अपने कुल की उत्तमता को बनाए न रखे तो उसे अपने गुण, कर्म, स्वभाव के अनुसार नीचे का कुल अपनाना होता है। इससे यह सिद्ध होता है कि वर्ण का संबंध धर्म और अधर्म के अनुसार आचरण से है, जन्म या माता–पिता के कुल से नहीं। स्वार्थी लोगों ने अपनी अयोग्य संतान के मोह में जन्म से वर्णव्यवस्था का आरंभ कर दिया।

thearyasamaj.org

प्रश्न : यदि इस तरह एक वर्ण से दूसरे वर्ण में जाने लगे तो जिन माता–पिता की सन्ताने दूसरे वर्णों में चली जायेगीं उनका वंश समाप्त हो जायेगा और फिर उनकी सेवा कौन करेगा?

उत्तर : न किसी की सेवा में विघ्न होगा और न ही वंश समाप्त होगा क्योंकि जिस तरह उनकी संतानें दूसरे वर्णों में जायेगी, दूसरों की संतान भी तो उनके वर्ण में आयेगी। विद्यासभा और राजसभा की व्यवस्था से उन्हें अपनी सन्तान के बदले सन्तान मिल जायेगी। वैदिक काल में सभी गुणों वाली सन्तान मिलकर उसी प्रकार रहती थीं जैसे आजकल परिवार में योग्य और अयोग्य सन्तान माता–पिता के साथ ही रहती है। हां, इतना अवश्य है कि विद्वान का विवाह विदुषी कन्या से हो, अर्थात् समान गुण कर्म स्वभाव होने पर ही पति–पत्नी में प्रीति रहेगी।

प्रश्न : चारों वर्णों के कर्त्तव्य, कर्म और गुण क्या हैं?

उत्तर : वेदों में चारों वर्णों में कामों का विभाजन इस प्रकार किया गया है कि सभी वर्ण अपने–अपने कर्त्तव्य का पालन करते हुए राज्य, समाज और अर्थव्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में योगदान देते रहें।

ब्राह्मण के कर्त्तव्य, गुण, कर्म : ब्राह्मण के पढ़ना–पढ़ाना, यज्ञ करना–कराना, दान देना–लेना ये छः कर्म हैं। ब्राह्मण मन से बुरे कर्म करने की इच्छा न करे, विषयों से इन्द्रियों को रोके, जितेन्द्रिय हो, शरीर को बाहर और भीतर के मलों से शुद्ध रखे, सुख–दुःख, निन्दा–प्रशंसा, हानि–लाभ, मान–अपमान, हर्ष–शोक आदि को छोड़कर धर्म में दृढ़ निश्चय रखे, जो वस्तु जैसी हो उसको वैसा जाने, वेद, ईश्वर, मुक्ति, कर्म, पुनर्जन्म में विश्वास रखे, सत्संग करे, माता–पिता आचार्य और अतिथियों की सेवा करने वाला हो।

क्षत्रिय के कर्त्तव्य, गुण–कर्म : न्याय से प्रजा की रक्षा अर्थात् पक्षपात छोड़कर श्रेष्ठों का सत्कार और दुष्टों का तिरस्कार करना, दानशीलता, धर्म में प्रवृत्ति, विद्या ग्रहण करना, वेद आदि शास्त्रों का पढ़ना–पढ़ाना, विषयों में न फंसकर जितेन्द्रिय रह कर शरीर और आत्मा को बलवान बनाए रखना, निर्भय होकर युद्ध करना, सदा तेजस्वी और धैर्यवान रहना, राजा और प्रजा संबंधी व्यवहार में अति चतुर होना, युद्ध में पीठ न दिखाना परन्तु यदि शत्रु को धोखा देने के लिए और अपनी सेना की जीत के लिए आवश्यक हो तो ऐसा करे, और प्रतिज्ञा को पूरा करना, उसे कभी भंग न करना ये क्षत्रिय के गुण हैं।

thearyasamaj.org

वैश्य के कर्त्तव्य, गुण, कर्म : गाय आदि पशुओं का पालन और वृद्धि करना, विद्या–धर्म की वृद्धि के लिए धन खर्च करना, यज्ञों का करना, वेद शास्त्रों का पढ़ना–पढ़ाना, सब प्रकार का व्यापार करना, उचित ब्याज पर धन देना, खेती करना ये वैश्य के गुण हैं।

शूद्र के कर्त्तव्य, गुण, कर्म : शूद्र को योग्य है निन्दा, ईर्ष्या, अभिमान आदि दोषों को छोड़कर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्यों की सेवा में अपना जीवन लगाना।

गुण–कर्म के अनुसार वर्ण–व्यवस्था रखने से उत्तम वर्ण वाले अपने गुण–कर्म ठीक रखेंगे जिससे उन्हें नीचे न गिरना पड़े और शूद्र लोगों में ऊंचे वर्ण में जाने का उत्साह बना रहेगा। जिससे समाज में सभी की उन्नति होगी। योग्यता के आधार पर काम का बंटवारा होने से ब्राह्मण विद्या की उन्नति में लगे रहेंगे, क्षत्रिय राज्य को हानि नहीं होने देंगे, वैश्य आर्थिक उन्नति में सहायता करेंगे और शूद्र अपने शारीरिक श्रम से इनकी सहायता करेंगे। जिससे राज्य और समाज के सभी वर्गों की उन्नति होगी।

विवाह के लक्षण : विवाह 8 प्रकार का होता है। (1) 'ब्राह्म विवाह' सबसे उत्तम है इसमें वर और कन्या पूर्ण ब्रह्मचर्य का पालन करके परस्पर प्रसन्नता से विवाह करते हैं। (2) माता–पिता धार्मिक कर्म करते हुए अलंकार युक्त कन्या दामाद को सौंपे तो यह विवाह 'दैव' कहलाता है। (3) वर से कुछ लेकर किया जाने वाला विवाह 'आर्ष' कहाता है। (4) धर्म की वृद्धि के लिए यदि दोनों विवाह करें तो 'प्राजापत्य' कहाता है। (5) वर और कन्या को कुछ देके विवाह होना 'आसुर' कहाता है। (6) असमय किसी कारण से वर–कन्या का परस्पर इच्छा से संयोग होना 'गन्धर्व' विवाह कहाता है। (7) बलात्कार या छीन झपट कर किया हुआ विवाह 'राक्षस'। (8) पागल, सोई हुई, नशीला पदार्थ खिलाकर बलात्कार संयोग करना 'पैशाच' विवाह कहलाता है। ब्रह्म विवाह उत्तम, दैव मध्यम, आर्ष, आसुर और गंधर्व निष्कृष्ट राक्षस और पैशाच महाभ्रष्ट हैं।

जब लड़के और लड़की की शिक्षा पूर्ण होने वाली हो तो उनके माता–पिता को उनके गुण–कर्म व स्वभाव के अनुसार योग्य पात्र को देखकर लड़के और लड़की को उनके फोटो दिखा देने चाहिए और उनके बारे में जानकारी देनी चाहिए। अध्यापक लोग उनका जीवन इतिहास देखकर विचार करें कि दोनों के गुण कर्म स्वभाव मिलते हैं या नहीं। यदि गुण कर्म स्वभाव मिलते हों और दोनों एक दूसरें को फोटो देखकर पसंद कर लें तो माता–पिता या आचार्य

thearyasamaj.org

की उपस्थिति में विवाह होना योग्य है। विवाह से पूर्व लड़के और लड़की दोनों को विशेष पौष्टिक भोजन खिलाना चाहिए जिससे विद्याध्ययन के समय में आने वाली दुर्बलता दूर हो जाये। विवाह के समय वेदी और मण्डप रचकर उसमें सुंगधित पदार्थों से होम किया जाये और आए हुए अतिथियों का उचित सत्कार करें। इसके बाद संस्कार विधि में बताए गए समय और विधि के अनुसार गर्भाधान करें। गर्भ की चौथे और आठवें महीने में विशेष रक्षा करें और खान–पान का विशेष ध्यान रखें। चौथे महीने में पुंसवन और आठवें महीने में सीमन्तोन्नयन संस्कार करें। जन्म होने पर बालक व माता दोनों को गर्म जल से स्नान करवाएं और फिर बालक की नाभि की जड़ से चार अंगुल ऊपर छोड़कर नाड़ी में सूत को अच्छी तरह बांध कर नाड़ी काटें। इतना ध्यान रखें कि नाड़ी में से एक बूंद रक्त भी बाहर न निकले। उसके बाद उस कमरे को शुद्ध करके द्वार के भीतर सुगन्धित पदार्थ और घी से होम करें। पिता बालक के कान में 'वेदोऽसीति' अर्थात 'तेरा नाम वेद है' सुनाकर, सोने की शलाका के ऊपर घी और शहद लगाकर बालक की जीभ पर ओ३म् लिखे और घी तथा शहद चटवायें। उसके बाद माता बालक को दूध पिलाए। छः दिन तक बालक को माता का दूध अवश्य पिलाना चाहिए।

जिस कुल में पति–पत्नी प्रसन्नता से रहते हैं वहां सब सौभाग्य निवास करते हैं और सन्तान भी उत्तम होती है। जहां पति–पत्नी में प्रसन्नता नहीं होती वहां दुःख और दरिद्रता रहती है। जिस घर में स्त्री का सम्मान होता है उस कुल में उत्साह और प्रसन्नता बनी रहती है और वह कुल सर्वदा बढ़ता रहता है। इसलिए पुरुषों को चाहिये कि वे समय–समय पर स्त्रियों को वस्त्र–आभूषण आदि उपहार देते रहें। स्त्री को चाहिए कि वह घर को सदा स्वच्छ रखे, भोजन इस प्रकार बनाये जिससे शरीर व आत्मा निरोग बने रहें। यदि घर में नौकर–चाकर हों तो उनसे अच्छी तरह काम ले और पूरी निगरानी रखे जिससे नौकर कोई काम बिगाड़ने न पाएं। स्त्री को सबसे हितकारी वचन कहने चाहिए, व्यर्थ वाद–विवाद नहीं करना चाहिए। उसे दूसरों के हितकर वचन सुनकर बुरा नहीं मानना चाहिए। विदुरनीति में कहा गया है कि दूसरों को प्रसन्न करने के लिए प्रिय वचन बोलने वाले तो बहुत मिल जाते हैं परन्तु सुनने में अप्रिय लेकिन हितकारी वचन कहने वाला दुर्लभ होता है। सत्पुरुष लोग दोष दूसरे के मुंह के सामने कहते हैं और प्रशंसा पीठ के पीछे करते

हैं लेकिन दुष्ट लोग मुंह के सामने प्रशंसा और पीठ पीछे निन्दा करते हैं। गुणों को गुण और दोषों को दोष कहना स्तुति है और गुणों को दोष और दोषों को गुण कहना निन्दा है।

गृहस्थाश्रम में आने के बाद भी गृहस्थ को प्रातः सायं संध्या–यज्ञ करना चाहिए। विद्या और विज्ञान को बढ़ाने के लिए शास्त्रों का अध्ययन करना चाहिए। विद्वानों का संग, दान देना, दिव्यगुणों को धारण करना चाहिए।

प्रश्न : त्रिकाल संध्या क्यों नहीं करनी चाहिए।

उत्तर : तीन समय सन्धि नहीं। प्रातः और सायंकाल दो समय ही ऐसे हैं जब प्रकाश और अंधकार में सन्धि होती है। इसलिए दो ही समय संध्या का विधान है। इन दोनों समयों में वातावरण शांत होता है, मनुष्यों को कामकाज की भागदौड़ नहीं होती। दिन के बीच में ऐसा निश्चिन्त वातावरण नहीं होता जिसमें मनुष्य मन चित्त की एकाग्रता से प्रभु का चिन्तन कर सके।

प्रश्न : श्राद्ध और तर्पण का क्या अभिप्राय है?

उत्तर : पितृयज्ञ अर्थात देव विद्वान, पढ़ने–पढ़ाने वाले माता–पिता और परिवार के बड़े लोगों, वृद्ध ज्ञानियों और परमयोगियों की सेवा करनी चाहिए। पितृयज्ञ के दो भेद हैं एक श्राद्ध और दूसरा तर्पण। जिस क्रिया से सत्य का ग्रहण किया जाये उसको श्रद्धा और जो कर्म श्रद्धा से किया जाए उसे श्राद्ध कहते हैं अर्थात् सच्ची श्रद्धा से माता–पिता आदि पूर्वजों की सेवा करना श्राद्ध है, मरे हुए लोगों के नाम से किसी को प्रसन्न करना नहीं। जिस कर्म से माता–पितादि पितर प्रसन्न या तृप्त किए जायें उसको तर्पण कहते हैं। इसलिए श्राद्ध और तर्पण जीवितों के लिए हैं, मृतकों के लिए नहीं।

जो विद्वान पुरुष और विदुषी स्त्रियां स्वयं विद्यादान देते हों और उनके पुत्र, शिष्य, सेवक यदि उनके समान हों तो उनका सत्कार करना ऋषितर्पण कहलाता है।

पितृयज्ञ : (पितृतर्पणम) : जो परमात्मा और पदार्थ–विद्या में निपुण हो, जो ऐश्वर्य का रक्षक, रोगरहित और दूसरों का रोगनाशक हो, शाकाहारी भोजन करने वाला हो, जो जानने के योग्य वस्तु के रक्षक, जिनका धर्मयुक्त कर्म करने का समय हो, जो दुष्टों को दंड देकर न्याय करने वाले हों, सन्तानों का पालन और रक्षा करने वाले पिता, स्नेहमयी माता, दादा–दादी, नाना–नानी, अपनी

स्त्री, बहिन, एक गोत्र के तथा अन्य कोई भद्रपुरुष वृद्ध हों, उन सबको अत्यन्त श्रद्धा से उत्तम अन्न, वस्त्र आदि देकर अच्छे प्रकार तृप्त करना या ऐसे कर्म करना, जिससे उनकी आत्मा तृप्त और शरीर स्वस्थ रहे, ही श्राद्ध और तर्पण कहलाता है।

(बलिवैश्वदेव) : जो कुछ भोजन में बनाएं, उसमें से नमकीन और खट्टा पदार्थ छोड़कर घी और मीठा भोजन लेकर बलिवैश्वदेव यज्ञ के मन्त्रों द्वारा दस आहुतियां प्रतिदिन देवें। इसके बाद थाली या भूमि में पत्ता रखकर 15 भाग संस्कार विधि के अनुसार मन्त्र पढ़ते हुए रखें। इन भागों को अतिथि को खिलायें या अग्नि में छोड़ देवें। उसके बाद 6 भाग भूमि पर रखें जो किसी भूखे प्राणी, कुत्ते–कौए आदि को देवें। (कुत्ता, पापी, चांडाल, पापरोगी, कौए कृमि आदि) हवन करने का उद्देश्य यह है कि यदि पाकशाला में भोजन बनाते समय अदृष्ट रूप से किसी जीव की हत्या हुई तो होम के द्वारा वहां का वातावरण शुद्ध होकर उतना उपकार हो जाए।

अतिथि यज्ञ : अकस्मात धार्मिक, सत्य का उपदेशक, परोपकारी, सर्वत्र घूमने वाला, पूर्ण–विद्वान, परमयोगी, संन्यासी जब गृहस्थ के यहां आए तो उसे उचित सत्कार और आसन देकर बिठाएं और उत्तम पदार्थों से उसकी सेवा कर उसे प्रसन्न करें। उसके पश्चात् उसके पास बैठकर ज्ञान–विज्ञान, धर्म अर्थ काम मोक्ष की प्राप्ति करवाने वाले उपदेश सुनें और उनको अपने जीवन में उतारें। लेकिन वेद निन्दक, दुराचारी, दुष्ट, अधर्मी और पाखंडियों को अतिथि नहीं मानना चाहिए, ऐसे लोगों का वाणी से भी सत्कार न करें। ब्रह्मयज्ञ (सन्ध्या) करने से विद्या, शिक्षा, धर्म सभ्यता आदि गुण बढ़ते हैं। देवयज्ञ (हवन) से वायु वर्षा जल की शुद्धि होने से निरोगता, बुद्धि, बल, पराक्रम बढ़कर धर्म अर्थ काम और मोक्ष का अनुष्ठान (नियमपूर्वक किसी काम का करना) पूरा होता है।

पितृयज्ञ से माता–पिता, ज्ञानी महात्माओं की सेवा करने से ज्ञान बढ़ता हैं सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करके जीवन सुखी होता है। माता–पिता और बड़ों से जो सेवा प्राप्त की हुई होती है उसके प्रति कृतज्ञता प्रकट होती है।

बलिवैश्वदेवयज्ञ से पाकशाला शुद्ध होने के साथ–साथ कुत्तों, कौओं आदि भूखों का भी पालन हो जाता है।

अतिथि यज्ञ से जहां विद्वानों की सेवा होती है वहां यदि कोई संदेह हो तो वह भी उनके उपदेशों से दूर हो जाता है।

thearyasamaj.org

रात्रि के चौथे पहर उठकर आवश्यक कार्य करके परमात्मा का ध्यान करें, कभी अधर्म न करें। अधर्म से मनुष्य धर्म की मर्यादा छोड़कर मिथ्याभाषण, कपट, पाखंड, विश्वासघात आदि कर्म करता हुआ धन आदि ऐश्वर्य प्राप्त करके, मान प्रतिष्ठा प्राप्त करके, अन्याय से दूसरों को जीतता है, पहले तो खूब बढ़ता है लेकिन बाद में शीघ्र नष्ट हो जाता है जैसे जड़ कटा हुआ वृक्ष नष्ट हो जाता है।

उत्तम पुरुष पक्षपातरहित होकर संयम में रहता हुआ दूसरों को भी सत्य और धर्म पर चलने का उपदेश देता है। यज्ञ का करने वाला आचार्य, पुरोहित, मामा, अतिथि, अपने आश्रित, बालक, वृद्ध, पीड़ित, वैद्य, संबंधी, मित्र, माता–पिता, बहिन, भाई, पुत्र, पुत्री, स्त्री, सेवक के विरुद्ध कभी लड़ाई झगड़ा न खड़ा करे।

जो व्यक्ति झूठ बोलने वाला, अनपढ़, धर्मार्थ दूसरों से दान लेने वाला ये तीनों अपने दुष्ट कर्मो से स्वयं तो दुःख सागर में डूबते हैं परन्तु अपने दान–दाताओं का भी नाश कर देते हैं। अज्ञानी दानदाता का नाश इसी जन्म में और लेने वाले का नाश अगले जन्म में हो जाता है।

पाखंडियों के लक्षण : जो कुछ भी धर्म न करता हो परन्तु धर्म के नाम पर दूसरों को ठगता हो, लोभी, कपटी, अपनी बड़ाई स्वयं करने वाला, हिंसक स्वभाववाला, वैर–बुद्धि रखने वाला हो उसे बिल्ली के समान धूर्त और नीच समझो। जो कीर्ति के लिए दृष्टि नीची रखे, ईर्ष्यालु (बदले की भावना रखने वाला) विश्वासघाती, स्वार्थी, हठी (झूठी बात पर भी अड़ा रहने वाला) झूठमूठ सुशील, सन्तोषी और साधु दिखाई दे उसे बगुले के समान नीच समझो।

स्त्री और पुरुष को चाहिए कि वे दूसरों को पीड़ा पहुंचाए बिना परलोक में सुख प्राप्त करने के लिए धर्मरूपी धन इकट्ठा करें क्योंकि अकेला जीव ही जन्म–मरण को प्राप्त होता है उसे ही धर्म का फल सुख और अधर्म का फल दुःख रूप में भोगना पड़ता है। स्त्री, पुत्र, माता–पिता कोई उसके साथ नहीं जाता। व्यक्ति पाप करके जो पदार्थ लाता है उसे सारा परिवार भोगता (सुख पाता) है परन्तु उस पाप कर्म का फल अकेले पाप करने वाले को ही भोगना पड़ता है। इसलिए मनुष्य को इसी जीवन में धर्म पर चलते हुए नित्य अच्छे कर्म करने चाहिए और पाप से दूर रहना चाहिए। धर्म कर्म करने से अज्ञान का अंधकार दूर हो जाता है और व्यक्ति उस परलोक अर्थात् परमात्मा को

thearyasamaj.org

शीघ्र पा लेता है। धर्म में सदा दृढ़ रहने वाला, कोमल स्वभाव, सत्यवादी, जितेन्द्रिय धर्मात्मा मनुष्य जो झूठ बोलने वालों, क्रूर और हिंसक दुष्टों से दूर रहता है वह मन को जीतकर, विद्यादि दान देता हुआ सुख प्राप्त करता हुआ पूर्ण आयु को प्राप्त होता है। लेकिन दुष्ट पुरुष सदैव निन्दा और दुःख का भागी होता है तथा कम आयु भोगता है।

स्वाधीनता में सुख और पराधीनता में दुःख होता है परन्तु जो एक–दूसरे के अधीन काम है, वह अधीनता से ही होना चाहिए जैसे स्त्री और पुरुष का व्यवहार एक–दूसरे के अधीन होता है। स्त्री और पुरुष को एक–दूसरे की प्रसन्नता के बिना कोई व्यवहार नहीं करना चाहिए। स्त्री का पूजनीय देव उसका पति और पुरुष की पूजनीय अर्थात सत्कार योग्य देवी उसकी पत्नी है।

प्रश्न : अध्यापक और अध्यापिका कैसे होने चाहिए?

उत्तर : जो धर्म में दृढ़, उद्यमी, सुख–दुख, हानि–लाभ में हर्ष–शोक कभी न करे, विषयों की ओर आकर्षित न हो, सदैव धर्मयुक्त कर्म करने और अधर्म के कामों का त्याग करने वाला, ईश्वर और वेद में श्रद्धा रखने वाला, सत्य का आचरण करने वाला, कठिन विषय को शीघ्र समझने वाला, स्वाध्यायशील, परोपकारी, निस्वार्थी, विभिन्न शास्त्रों को जानने वाला, तर्क में निपुण, तीव्र स्मरण शक्ति रखने वाला, ग्रन्थों के अर्थ का यथार्थ वक्ता, जिसकी वाणी सब विद्याओं और प्रश्नोत्तरों में अति निपुण हो, जो सत्य सुने और जिसकी बुद्धि सुने हुए सत्य के अनुसार हो, ऐसे उत्तम गुणवान आर्य ही अध्यापक और अध्यापिकाएं होने चाहिए।

जिसने कोई शास्त्र न पढ़ा हो, घमंडी, दरिद्र होते हुए भी बड़े–बड़े मनोरथ रखने वाला, बिना कर्म किए पदार्थों की इच्छा रखने वाला, बिना बुलाए सभा में या किसी के घर घुसने और उच्च आसन पर बैठने वाला, विश्वास के अयोग्य वस्तु या मनुष्य पर विश्वास करने वाले को कभी अध्यापक या अध्यापिका नियुक्त नहीं करना चाहिए। जहां ऐसे अध्यापक या उपदेशक होते हैं वहां अविद्या, अधर्म, असभ्यता, कलह, विरोध और फूट बढ़ के दुःख बढ़ता है।

विद्यार्थी को विषय सुखों की इच्छा नहीं रखनी चाहिए। विद्या प्राप्त करने के लिए तप और त्याग का जीवन व्यतीत करना होता है। जो विद्यार्थी आलसी, जड़बुद्धि, नशे या दूसरे विषयों में फंसा हो, व्यर्थ बातें कहने–सुनने में रुचि रखता हो, चंचल, अभिमानी, पढ़ते पढ़ाते रुक जाने वाला हो, उसे विद्या कभी नहीं आती।

अध्यापक और विद्यार्थी दोनों ही शुभ लक्षणों वाले होने चाहिए। अध्यापकों को विद्यार्थियों को उनके गुणकर्म के अनुसार वैसी ही शिक्षा देनी चाहिए जिसके वे योग्य हों।

जो विद्यार्थी ब्राह्मण बनने के योग्य हो उसे ऐसी शिक्षा देनी चाहिए जिससे वह सत्य बोलने, मानने और करने वाला, सभ्य, शांत, सुशील, विचारशील और परिश्रमी बनें।

वह शरीर और आत्मा का बल बढ़ाकर वेद और शास्त्रों का ज्ञान प्राप्त कर विद्वान बने। अध्यापक उसकी कुचेष्टा छुड़ाने और पूर्ण–विद्या देने का प्रयत्न करते रहें जिससे उन्हें पूर्ण–विद्या, पूर्ण आयु, पूर्णधर्म और पुरुषार्थ करना आ जाये।

जो विद्यार्थी क्षत्रिय बनने के योग्य हो उसे ऐसी शिक्षा देनी चाहिए जिससे वह दृढ़ निश्चयी, सत्यप्रिय, धैर्यवान, शास्त्रों का जानने वाला, शरीर से बलवान, शीघ्र निर्णय शक्ति वाला, परस्पर प्रेम और सहयोग करने वाला, न्यायप्रिय, प्रजा का रक्षक, अस्त्र–शस्त्र चलाने में निपुण, युद्ध–विद्या के नियमों को जानने वाला, धर्म और राज्य की रक्षा के लिए प्राणों का त्याग करने की भावना रखने वाला बन जाये।

जो विद्यार्थी वैश्य बनने के योग्य हो उसे वेदादि शास्त्र पढ़ा के, विभिन्न देशों की भाषा, व्यापार की रीति (भाव जानना, खरीदना, बेचना आदि) लाभ के कार्य आरम्भ करना, पशु पालन और खेती की उन्नति करने, धन को बढ़ाने, देश–देशान्तरों में आने–जाने, निष्कपट और सत्यवादी होकर व्यापार करने, वस्तुओं की रक्षा करने, धर्म की उन्नति में धन खर्च करने आदि का ज्ञान करवाना चाहिए।

जो कुछ भी बनने के योग्य न हो उसे शूद्र बनने के योग्य शिक्षा दी जानी चाहिए जैसे पाकविद्या में निपुण होना, विद्वानों की प्रेम से सेवा करने, तीनो वर्णों के लोगों के कार्य में सहायता करना आदि कार्य सिखाये जायें। जिन लोगों की ये सेवा करें उनका यह धर्म है कि वे इनके खान–पान, वस्त्र–मकान और विवाह आदि का व्यय करें और प्रतिमास खर्च के लिए धन भी दें। इस प्रकार चारों वर्ण परस्पर प्रीति, सहयोग, एकता, उपकार, सज्जनता, सुख–दुःख, हानि–लाभ में एक दूसरे के साथ मिलकर रहें। समाज में रहने वाले सभी स्त्री–पुरुषों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि पति–पत्नी को अधिक

समय तक एक–दूसरे से अलग न रहना पड़े। यदि पति लम्बे समय के लिए विदेश जाए तो पत्नी को भी साथ ले जाना चाहिए।

प्रश्न : क्या बहुविवाह होना चाहिए या नहीं?

उत्तर : एक समय में एक ही विवाह होना चाहिए। लेकिन यदि किसी स्त्री या पुरुष का विवाह हुआ हो लेकिन उनका पति या पत्नी से संयोग न हुआ हो तो ऐसे स्त्री या पुरुष का पुनः विवाह होना चाहिए। ब्राह्मण क्षत्रिय और वैश्य तीनों वर्णों में क्षतयोनि स्त्री और क्षतवीर्य पुरुष का पुनः विवाह नहीं होना चाहिए।

प्रश्न : पुनर्विवाह में क्या दोष है?

उत्तर : पुनर्विवाह से स्त्री–पुरुष में प्रेम कम होता है। दूसरा विवाह होने पर पति या पत्नी पहले विवाह के पूर्व पति या पूर्व पत्नी के पदार्थों को प्राप्त करने के लिए उनके परिवार वालों से झगड़ने लगते हैं, कई बार तो पुराने कुलों की सम्पत्ति बेचकर उनका नाम निशान तक मिटा दिया जाता है, पतिव्रत और स्त्रीव्रत धर्म नष्ट हो जाता है।

इन दोषों के कारण पुनर्विवाह या बहुविवाह नहीं होना चाहिए।

प्रश्न : जब वंश–छेदन हो जाये तब भी उनका कुल नष्ट हो जायेगा। स्त्री–पुरुष आदि व्यभिचारी होकर गर्भपात आदि दुष्टकर्म करने लगेंगे। इसलिए पुनर्विवाह होना अच्छा है?

उत्तर : नहीं। अगर स्त्री–पुरुष ब्रह्मचर्य में रहना चाहें तो ऐसा कोई बखेड़ा नहीं होगा। जहां तक वंश चलाने का सम्बन्ध है अपनी ही जाति की सन्तान गोद ले लेंगे तो कुल चलेगा, नहीं तो नियोग द्वारा सन्तान उत्पन्न कर लें।

प्रश्न : पुनर्विवाह और नियोग में क्या भेद है?

उत्तर : पुनर्विवाह के बाद विधवा स्त्री उसी विवाहित पति के घर में रहती है, उसकी पहले पति से उत्पन्न संतान उसके नये पति की सम्पति की उत्तराधिकारी नहीं होती और वे उसके पहले पति की सन्तान ही कहलाते हैं और उसी की सम्पत्ति के उत्तराधिकारी होते हैं। विवाहित स्त्री–पुरुष के लिए एक–दूसरे की सेवा करना आवश्यक है लेकिन नियोग करने वाले स्त्री–पुरुष का कुछ भी सम्बन्ध नहीं रहता। विवाहित स्त्री–पुरुष का सम्बन्ध मरने तक रहता है। लेकिन नियोग करने वालों का सम्बन्ध सन्तान उत्पन्न करने का

thearyasamaj.org

काम पूरा हो जाने पर नहीं रहता। विवाहित स्त्री–पुरुष गृहस्थी के कार्यों में एक–दूसरे का साथ देते हैं,

प्रश्न : विवाह और नियोग के नियम एक से हैं या अलग–अलग?

उत्तर : थोड़ा भेद है। विवाहित पति–पत्नी मिलकर 10 तक सन्तान उत्पन्न कर सकते हैं परन्तु नियोग किए हुए एक स्त्री या एक पुरुष दो या चार सन्तान उत्पन्न कर सकते हैं, अधिक नहीं। विधवा स्त्री या विधुर पुरुष का ही नियोग होता है, कुमार–कुमारी का नहीं।

विवाहित पति–पत्नी सदा एक साथ रहते हैं परन्तु नियोग किया हुआ पुरुष या स्त्री हमेशा साथ नहीं रहते। अगर स्त्री अपने लिये नियोग करे तो दूसरा गर्भ धारण कर लेने पर उस पुरुष से कोई सम्बन्ध नहीं रखती। इसी तरह यदि पुरुष अपने लिए नियोग करे तो भी स्त्री के दूसरा गर्भधारण करने के बाद पुरुष उस स्त्री से सम्बन्ध न रखे। स्त्री 2–3 वर्ष तक सन्तान का पालन करके पुरुष को सौंप दे। विवाहित स्त्री–पुरुष की सन्तान उनके पास रहती है। एक विधवा स्त्री नियोग करके 2 सन्तान अपने लिये और दो–दो अन्य चार पुरुषों के लिये उत्पन्न कर सकती है। इस तरह एक स्त्री 10 से अधिक सन्तान उत्पन्न न करे क्योंकि अधिक उत्पन्न की हुई सन्तान दुर्बल, दुर्बुद्धि और अल्पायु होगी और स्त्री–पुरुष भी बुढ़ापे में दुःख पाते हैं।

प्रश्न : यह नियोग की बात व्यभिचार के समान दीखती है?

उत्तर : नहीं! जैसे नियम से विवाह होने पर व्यभिचार नहीं कहाता वैसे ही नियमपूर्वक नियोग होने से व्यभिचार नहीं कहाता। जैसे विधिपूर्वक विवाह होने पर समागम में व्यभिचार, पाप व लज्जा नहीं होती वैसे ही वेदशास्त्रों के अनुसार किए गये नियोग में भी व्यभिचार, पाप व लज्जा नहीं माननी चाहिए।

प्रश्न : यह वेश्या के सदृश कर्म दिखाई देता है?

उत्तर : वेश्या के समागम में निश्चित पुरुष का कोई नियम नहीं है लेकिन नियोग में विवाह के समान नियम है। इसलिए नियोग से समागम करने में कोई लज्जा नहीं होनी चाहिए। सृष्टि के नियम में स्त्री–पुरुष का स्वाभाविक व्यवहार रुक नहीं सकता, केवल योगी ही इस नियम के विपरीत चल सकते हैं। यदि नियोग करने के नियम को रोक दिया जाये तो समाज में गुप्त रूप से कुकर्म होने लगेंगे। इस व्यभिचार और कुकर्म को रोकने का यही एक उपाय है कि

जो स्वेच्छा से जितेन्द्रिय न रह सकें उन्हें नियोग की सुविधा मिलनी चाहिए। इससे व्यभिचार कम होगा, प्रेम से उत्तम सन्तान होगी और मनुष्यों की वृद्धि भी संभव होगी। गर्भहत्या छूट जायेगी।

प्रश्न : विनयोग में क्या–क्या बात होनी चाहिए? अपने वर्ण में ही होना चाहिए या दूसरे वर्ण में भी हो सकता है?

उत्तर : विवाह की तरह नियोग भी प्रसिद्धि से होना चाहिए। स्त्री–पुरुष दोनों की प्रसन्नता होनी चाहिए। कुटुम्ब के पुरुष स्त्रियों को नियोग की जानकारी होती है और यह निश्चित होता है कि सन्तान उत्पन्न करने के लिए ही नियोग किया जा रहा है। उसके बाद कोई सम्बन्ध न रहेगा। दूसरे गर्भधारण के बाद कोई सम्बन्ध नहीं रखा जाता। नियोग अपने ही वर्ण में या अपने से उच्चवर्ण में ही होना चाहिए, अपने से नीच वर्ण में नहीं। जब कोई पुरुष विधवा से विवाह नहीं करना चाहता तो कोई कुमारी कन्या भी किसी विधुर से विवाह नहीं करना चाहेगी। ऐसी अवस्था में विधवा और विधुर को सन्तान की आवश्यकता होने और स्वाभाविक इच्छापूर्ति के लिए नियोग करना ही धर्म है।

प्रश्न : वेदादि शास्त्रों में विवाह का प्रमाण है, नियोग का है या नहीं?

उत्तर : ऋग्वेद के 10वें मंडल में कहा गया है कि विधवा स्त्री अपने देवर या नियोग किये हुए पति से सन्तान उत्पन्न कर लेवे। देवर का अर्थ पति का छोटा, बड़ा भाई या जिससे नियोग करे वह पुरुष होता है अर्थात दूसरा पति। यदि विधवा अपने लिए सन्तान पाने के लिए नियोग करे तो सन्तान उसकी होगी और यदि पुरुष सन्तान पाने के लिये नियोग करे तो सन्तान उस पुरुष की होती है। यदि पति से समागम होने से पूर्व ही विधवा हो जाये तो उसका विवाह पति के छोटे भाई से हो सकता है।

प्रश्न : एक स्त्री या पुरुष कितने नियोग कर सकते हैं और विवाहित नियुक्त पतियों का नाम क्या होता है?

उत्तर : एक स्त्री या पुरुष ग्यारह नियोग कर सकते हैं। पहला विवाहित नियुक्त पति 'सोम' दूसरा 'गन्धर्व' तीसरा 'अग्नि' और चौथे से लेकर ग्यारहवें तक 'मनुष्य' कहलाते हैं। जब विधवा स्त्री की कोई सन्तान न हो या सन्तान का नाश हो जाये तभी सन्तान उत्पत्ति के लिये उसे नियोग करना चाहिए। एक नियोग में दूसरा गर्भ रहने तक सम्बन्ध रहना चाहिए लेकिन यदि नियोग

दोनों (स्त्री–पुरुष) के लिये हुआ हो तो चौथे गर्भ के बाद दोनों में कोई सम्बन्ध न रहे। नियोग या विवाह सन्तान उत्पत्ति के लिये ही ही होना चाहिए, पशुओं की तरह कामक्रीड़ा के लिये नहीं।

प्रश्न : नियोग पति की मृत्यु के बाद होता है या पति के जीते जी भी?

उत्तर : नियोग पति या पत्नी की मृत्यु के बाद ही होता है परन्तु विशेष परिस्थितियों में पति या पत्नी के जीते जी भी हो सकता है। यदि पति या पत्नी में से कोई सन्तान उत्पन्न करने के अयोग्य हो तो उसे दूसरे को नियोग करने की आज्ञा दे देनी चाहिए। इसी तरह यदि पति या पत्नी किसी गम्भीर बीमारी का शिकार हो तो भी उसे दूसरे को नियोग करने को कह देना चाहिए। कुन्ती और माद्री ने नियोग द्वारा ही पाण्डवों को जन्म दिया था, व्यास जी ने अपने दोनों भाईयों (चित्रांगद और विचित्रवीर्य) की मृत्यु के बाद उनकी पत्नियों से नियोग किया जिससे धृतराष्ट्र और पाण्डु पैदा हुए थे और एक दासी से नियोग द्वारा विदुर का जन्म हुआ था। यदि पति परदेस गया हो तो पत्नी 3 से 8 वर्ष तक प्रतीक्षा करने के बाद नियोग करके सन्तान उत्पन्न करे परन्तु पति के लौट आने पर नियुक्त पति छोड़ दे। यदि 8 वर्ष तक सन्तान न हो और स्त्री बांझ हो तो पति नियोग करके सन्तान उत्पन्न करे। यदि सन्तान हो के मर जाती हो और यदि लड़कियां पैदा होती हों तो पुत्रप्राप्ति के लिए स्त्री–पुरुष नियोग कर सकते हैं। यदि पति अन्यायी हो तो पत्नी या पत्नी कर्कशा हो तो पति भी नियोग करके सन्तान उत्पन्न कर लेवे। स्त्री और पुरुष को रज और वीर्य को अमूल्य समझकर व्यर्थ नहीं गंवाना चाहिए।

प्रश्न : विवाह क्यों करना चाहिए? विवाह बन्धन में बन्धकर स्त्री–पुरुष को दुःख भोगना पड़ता है। इसलिए यह बन्धन तब तक ही रखना चाहिए जब तक प्रीति हो। क्या प्रीति न रहने पर यह बन्धन तोड़ देना उचित नहीं?

उत्तर : यह तो पशुओं का व्यवहार है, मनुष्यों का नहीं। ऐसा करने से कोई किसी की सेवा न करेगा। भय और लज्जा न रहने से व्यभिचार फैलेगा। छोटी–छोटी बातों पर मनमुटाव हो जाने से परिवार टूट जायेगा और सन्तान पर इसका बुरा प्रभाव पड़ेगा। उत्तराधिकार की समस्या भी पैदा हो जायेगी।

जहां तक हो सके पति–पत्नी अपने वर्णाश्रम के अनुसार तन–मन–धन

thearyasamaj.org

से सदा परमार्थ किया करें। माता–पिता, सास–ससुर की सेवा करे, मित्रों–सम्बन्धियों, विद्वानों आदि से प्रेमपूर्वक व्यवहार करे, दुष्टों को सुधारने का यत्न करे, सन्तानों को भली प्रकार विद्वान और सुशिक्षित बनाने में धन का व्यय करे और मोक्ष की प्राप्ति का साधन भी करें।

प्रश्न : गृहस्थाश्रम सबसे बड़ा है या छोटा?

उत्तर : गृहस्थाश्रम सबसे बड़ा है। ब्रह्मचर्य, वानप्रस्थ और संन्यास तीनों आश्रम इसी पर आश्रित हैं। इस आश्रम के बिना किसी आश्रम का कोई व्यवहार सिद्ध नहीं होता।

●●●

thearyasamaj.org

वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम 5

गृहस्थ आश्रम के कर्त्तव्य पूरे करने पर मनुष्य को वानप्रस्थ आश्रम में जाना चाहिए। जब केश सफेद होने लगें, त्वचा ढीली होने लगे, पुत्र के यहां पुत्र उत्पन्न हो गया हो तो मनुष्य को घर छोड़कर जंगल या एकान्त स्थान में चले जाना चाहिए। कन्दमूल, शाक, फल आदि से यज्ञ करे और उसी से अतिथि की सेवा और अपना निर्वाह करे। यदि पति अकेला जाये तो पत्नी को पुत्रों के पास छोड़ जाये। यदि दोनों जाना चाहें तो दोनों वानप्रस्थी बन सकते हैं। वानप्रस्थ में अपना अधिकतर समय स्वाध्याय, धार्मिक कार्यों, सत्संग, योगाभ्यास, सुविचार और ज्ञान प्राप्त करने में लगाए। सबसे मित्रता रखे, इन्द्रियों का दमन करे, सब पर दया करे, विद्यादि का दान करे और किसी से कुछ न लें। शरीर के सुख के लिए अधिक साधन न जुटाए, भूमि पर सोए, अपने आश्रितों या सम्बन्धियों से ममता न रखे, पत्नी साथ हो तो भी उससे वासनात्मक सम्बन्ध न रखे। धर्म–कर्म यज्ञ करते हुए सत्य और पवित्र आचरण बनाये रखे, इससे आत्मा निर्मल होकर उस पूर्ण पुरुष परमात्मा को प्राप्त होकर आनन्दित हो जाती है।

प्रश्न : यदि कोई गृहस्थ और वानप्रस्थ आश्रम किए बिना संन्यासाश्रम में जाए तो क्या पाप होता है या नहीं?

उत्तर : होता भी है और नहीं भी होता। जो बाल्यावस्था में संन्यास लेकर फिर विषयों में फंसे उसे पाप होता है वह महापापी और जो न फंसे वह महापुण्यात्मा सत्पुरुष है।

जिस दिन वैराग्य हो जाये उसी समय घर छोड़कर संन्यास ले लेवे, गृहस्थाश्रम से वानप्रस्थी बने बिना भी संन्यास लिया जा सकता है या जो पूर्ण–विद्वान जितेन्द्रिय हो वह ब्रह्मचर्य आश्रम से ही संन्यास ले सकता है। संन्यासी बुद्धिमान होकर वाणी और मन को अधर्म से रोके और अपनी आत्मा को परमात्मा के चिन्तन में लगाये। जिसकी आत्मा योगी न हो उसे संन्यास

लेकर भी बुद्धि से परमात्मा की प्राप्ति नहीं होती। संन्यास लेने से पहले यह जान लें कि संसार के भोगों को देखकर मन विचलित तो नहीं होगा। यदि वैराग्य का विश्वास हो जाये तो हाथ में अर्पण करने के लिए कुछ लेकर वेद आदि जानने वाले और परमेश्वर को जानने वाले गुरु के पास जाकर अपने सन्देहों की निवृत्ति करें। अविद्या में फंसे, नीच गति वाले, झूठे कर्मकाण्डों में फंसे, राग–रंग में डूबे हुए लोगों का संग कदापि न करें। वेदमन्त्रों का अर्थ सहित ज्ञान और उनके अनुसार शुद्ध अन्तःकरण से आचरण करने वाला ही संन्यासी होता है और मुक्ति सुख को प्राप्त होता है। मुक्ति के बिना दुःख नाश नहीं होता। जब तक शरीर रहता है तब तक तो सुख–दुःख होता रहता है, जीवात्मा शरीर से मुक्त होकर ही मुक्ति की अवस्था में परमेश्वर के साथ शुद्ध होकर रहता है, तब उसे सुख–दुःख प्राप्त नहीं होता।

संन्यासी को धन, भोग–पदार्थों और सन्तान के मोह से अलग होकर मोक्ष प्राप्ति के साधनों में तत्पर रहना चाहिए। संन्यासी को यज्ञोपवीत और शिखादि धारण करने की आवश्यकता नहीं रहती। वेदादि विद्याओं का उपदेश करने वाले संन्यासी को मुक्ति का आनन्द–स्वरूप लोक प्राप्त होता है।

प्रश्न : संन्यासी का धर्म क्या है?

उत्तर : संन्यासी मार्ग में चलते समय इधर–उधर न देखकर दृष्टि नीचे रखे, जल छानकर पीये, सदा सत्य बोले, मन से विचार कर सत्यग्रहण करे और असत्य को छोड़ दे। यदि कोई उस पर क्रोध करे तो भी उस क्रोध करने वाले के क्रोध को सहन करते हुए उसके कल्याण के लिए ही उपेदश करे, अपनी वाणी पर पूर्ण नियन्त्रण रखे, कभी झूठ न बोले। अपने आत्मा और परमात्मा में स्थिर रहते हुए इस संसार में धर्म और विद्या को बढ़ाने के लिए उपदेश करता हुआ विचरण करता रहे। सिर, दाढ़ी मूंछ मुंडवाकर, भगवे वस्त्र धारण करे, कमण्डल और दण्ड धारण करे।

इन्द्रियों को अधर्माचरण से रोक, रागद्वेष छोड़कर निर्वैर भाव से व्यवहार करता हुआ मोक्ष के लिए सामर्थ्य बढ़ाया करे। संन्यासी स्वयं धर्मात्मा होकर दूसरों को धर्मात्मा करने में प्रयत्न किया करे। सब प्राणियों को सत्य का उपदेश और विद्यादान से उन्नति कराना संन्यासी का मुख्य कर्म है। केवल संन्यासी के चिन्ह धारण करने से ही कोई संन्यासी नहीं हो जाता। संन्यासी को प्राणायाम करके अपनी आत्मा, अन्तःकरण और इन्द्रियों के दोष, धारणा से पाप, प्रत्याहार से

thearyasamaj.org

संगदोष, ध्यान से हर्ष–शोक अविद्यादि दोषों को नष्ट करना चाहिए। संन्यासी आकांक्षारहित और सब बाहर–भीतर के व्यवहारों में पवित्र होकर इस शरीर में सुख और मृत्यु के पश्चात् मुक्ति सुख को प्राप्त करता है। इसलिए ब्रह्मचारी, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम वालों को दस लक्षणों वाले धर्म का सदैव पालन करना चाहिए।

धैर्य, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच (भीतर–बहार की पवित्रता) इन्द्रिय–निग्रह, सद्बुद्धि (बुद्धि नाशक पदार्थों का प्रयोग, दुष्टों का संग, आलस्य–प्रमाद को छोड़कर सत्पुरुषों का संग, योगाभ्यास, धर्माचरण, ब्रह्मचर्य आदि शुभकर्मों से बुद्धि का बढ़ाना), विद्या, सत्य, अक्रोध ये दस धर्म के लक्षण हैं। चारों आश्रमों वाले इन पर स्वयं चलें और दूसरों को समझाकर इन पर चलाना संन्यासियों का काम है। संन्यासी हर्ष–शोक आदि से मुक्त होकर ब्रह्म में स्थिति होता है और वह अन्य आश्रमों वालों के अधर्मयुक्त व्यवहारों को छुड़ाकर उनके संशयों को दूर करके, धर्मयुक्त व्यवहारों में उन्हें प्रवृत्त कराया करें।

प्रश्न : संन्यास केवल ब्राह्मण ही का धर्म है व क्षत्रियादि भी कर सकते हैं?

उत्तर : बिना पूर्ण विद्या के धर्म, परमेश्वर की निष्ठा और वैराग्य के संन्यास ग्रहण करने में संसार का विशेष उपकार नहीं हो सकता। पूर्ण विद्या ब्राह्मण को ही प्राप्त होती है इसलिए उन्हें ही संन्यास ग्रहण करने का अधिकार होता है। क्षत्रियादि के लिए ब्रह्मचर्य का पालन ही उचित है।

प्रश्न : संन्यास ग्रहण की आवश्यकता क्या है?

उत्तर : जैसे शरीर में सिर का महत्व है वैसे ही आश्रमों में संन्यास का महत्व है। संन्यासी के बिना विद्या और धर्म की वृद्धि नहीं हो सकती। संन्यासी जितना पक्षपात रहित होकर व्यवहार कर सकता है उतना दूसरे आश्रमों वाले नहीं कर सकते। संन्यासी को सत्यविद्या से पदार्थों के विज्ञान की उन्नति का जितना अवकाश मिलता है उतना अन्य आश्रम वालों को नहीं मिलता। जो ब्रह्मचर्य से संन्यासी बनता है वह जगत को सत्यशिक्षा देकर जितनी उन्नति कर सकता है, उतनी उन्नति गृहस्थ वा वानप्रस्थ आश्रम करके संन्यास लेने वाले नहीं कर सकते।

प्रश्न : संन्यास ग्रहण करने से सृष्टि के विकास के ईश्वरीय नियम का विरोध होता है। इस तरह तो मनुष्य जाति नष्ट हो जायेगी?

उत्तर : गृहस्थाश्रम करने पर भी कइयों की सन्तान नहीं होती या होकर नष्ट हो जाती है। कई बार लड़ाई–झगड़ों में बहुत से लोगों की जान चली जाती है ऐसे में एक संन्यासी ही उन्हें समझा बुझाकर बहुत से लोगों की जान बचा सकता है, फिर सभी लोग तो संन्यास नहीं लेते इसलिए मनुष्यजाति नष्ट नहीं हो सकती।

प्रश्न : संन्यासी लोगों का कहना है कि यह जगत और जगत का व्यवहार झूठा है इसलिए इसमें फंसना बुद्धिमानों का काम नहीं। वे अपने को ब्रह्म मानकर संतुष्ट रहते हैं और दूसरों को भी यही उपदेश देते हैं कि 'तू भी ब्रह्म है'। वे पाप–पुण्य को देह और इन्द्रियों का धर्म मानते हैं, आत्मा का नहीं। आप संन्यास का धर्म कुछ अलग बताते हैं, किसे ठीक माना जाये?

उत्तर : क्या संन्यासी को अच्छे कर्म नहीं करने चाहिए? मनु ने कहा है कि वैदिक धर्म युक्त सत्यकर्म संन्यासियों को भी अवश्य करने चाहिए। यदि मनुष्य भोजन खाना जैसे कर्म नहीं छोड़ सकता तो फिर उत्तम कर्म करने छोड़कर पापी क्यों बनें। संन्यासी भी गृहस्थों से अन्नवस्त्र लेता है इसलिए बदले में उन्हें सत्योपदेश न दें तब तो वह महापापी हो जायेगा। यदि संन्यासी सत्य का उपदेश, वेदादि सत्यशास्त्रों का विचार और प्रचार नहीं करते तो वे पृथ्वी पर बोझ के समान हैं। जो कर्म हम शरीर से करते हैं उनका कराने वाला आत्मा होता है इसलिए फल भी जीवात्मा ही भोगता है जो अपने को ब्रह्म कहते हैं वे अज्ञानी हैं जीव अल्पज्ञ होता है, ब्रह्म सर्वज्ञ, जीव वद्ध और मुक्त होता रहता है जबकि ब्रह्म नित्य शुद्ध, बुद्ध, मुक्त है। जीव जन्म लेता है और मरता है, ब्रह्म अजन्मा है और अमर है। जीव अविद्या में फंसता है, ब्रह्म नहीं। इसलिए उनका यह उपदेश झूठा है।

प्रश्न : क्या संन्यासी को अग्नि और धातु को नहीं छूना चाहिए?

उत्तर : जो ब्रह्म की आज्ञा का पालन करते हुए सुकर्म करता है और दुष्ट कर्मों का त्याग करता है वह संन्यासी है। इसलिए यह बात ठीक नहीं है।

प्रश्न : अध्यापन और उपदेश तो गृहस्थ किया करते हैं फिर संन्यासी का क्या प्रयोजन है?

उत्तर : वैसे तो सब आश्रमों वाले सत्य का उपदेश कर सकते हैं परन्तु मुख्य रूप से पुरुष–स्त्रियों को सत्य उपदेश देना और विद्या पढ़ाना ब्राह्मणों

का ही काम है। जितना समय और भ्रमण करने से होने वाले अनुभव से प्राप्त ज्ञान संन्यासी के पास होता है उतना अन्य किसी के पास नहीं। यदि कोई ब्राह्मण वेद विरुद्ध आचरण करे तो उस पर नियन्त्रण रखने के लिए संन्यासी का होना आवश्यक है।

प्रश्न : क्या संन्यासी को एकत्र और एक रात्रि से अधिक कहीं नहीं ठहरना चाहिए?

उत्तर : यह बात थोड़ी तो ठीक है क्योंकि एक ही जगह रहने से संयासी जगत का उपकार अधिक नहीं कर सकता और राग–द्वेष भी अधिक होता है। लेकिन अगर एकत्र और एक ही स्थान पर रहकर उपकार होता हो तो अधिक रहने में कोई दोष भी नहीं है। राजा जनक के यहां तो कई संन्यासी इकट्ठे वर्षों तक रहते रहे। जहां तक एकत्र रहने की बात है तो इससे पाखण्डियों को यह भय होता होगा कि उनके साथ रहने वाला कोई उनकी पोल खोल देगा इसलिए उन्होंने ऐसा कहा होगा।

प्रश्न : क्या संन्यासी को स्वर्णदान देने वाला नरक में जाता है? श्राद्ध में संन्यासी के आने से पितर भाग जाते हैं, क्या ये बातें ठीक हैं?

उत्तर : नहीं, यदि संन्यासियों को अधिक धन मिलेगा तो सत्यज्ञान और वेदविद्या का प्रचार अधिक होगा। पाखण्ड विद्या का खंडन अधिक होने के डर से पाखंडियों नें ऐसी बातें कह दी ताकि धन के अभाव में उनका खंडन न होने पाये। मूर्खो और स्वार्थियों को दान देने में तो दोष है, विद्वान और परोपकारी संन्यासियों को दान देने में नहीं। हां, इतना अवश्य है कि संन्यासियों को अपने पास अधिक धन नहीं रखना चाहिए क्योंकि चोर आदि द्वारा चुराये जाने और मोहित हो जाने का भय बना रहता है। संन्यासी जहां जायेंगे वहां वेदविरुद्ध बातों का विरोध करेंगे अर्थात मृतकों का श्राद्ध होने नहीं देंगे इसलिए यह ठीक है कि उनके आने से पितर भाग जाते हैं।

प्रश्न : ब्रह्मचर्य से संन्यास लेकर निभाना बहुत कठिन होता है इसलिए क्या गृहस्थ और वानप्रस्थ आश्रम के बाद वृद्ध होकर ही संन्यास लेना चाहिए?

उत्तर : जो इन्द्रियों को न रोक सकता हो और न निभा सकता हो वह ब्रह्मचर्य से संन्यास न लेवे लेकिन जिसने वीर्यरक्षण के गुण और विषयों में

आसक्ति के दोष जान लिये हों और अपने आप पर नियन्त्रण रख सकता हो उसका ब्रह्मचर्य से संन्यास लेना भी उचित है। जैसे स्वस्थ व्यक्ति को वैद्य और औषधि की आवश्यकता नहीं होती, उसी प्रकार जिसने विद्या की वृद्धि, धर्म की वृद्धि और सब संसार का उपकार करने का निश्चय कर लिया हो, वह विवाह न करे। संन्यास उसी को लेना चाहिए जो लेने का अधिकारी हो, जो अधिकारी न हो वह स्वयं तो डूबता ही है, दूसरों को भी ले डूबता है। राजा का सम्मान केवल अपने राज्य में होता है लेकिन संन्यासी की पूजा तो सभी जगह होती है इसलिए संन्यासियों को उचित है कि सदा सत्योपदेश, शंका–समाधान, वेदादि सत्यशास्त्रों का पढ़ाना और वेदोक्त धर्म की वृद्धि प्रयत्न से करके सब संसार की उन्नति किया करे। परन्तु जो इस संन्यास के मुख्य धर्म का पालन नहीं करते अर्थात सत्य का उपदेश और विद्या की वृद्धि नहीं करते वे पतित और नरकगामी होते हैं।

प्रश्न : क्या साधु, वैरागी और गुसांई आदि संन्यासियों में गिने जायेंगे या नहीं?

उत्तर : नहीं। इन सब में संन्यास का एक भी लक्षण नहीं है इसलिए इनको संन्यासाश्रम में नहीं गिन सकते। ये सब स्वार्थी और ढोंगी होने के कारण झूठे प्रपंच रचकर लोगों को अपने मत में फँसाते हैं। जो स्वयं धर्म में चलकर सब संसार को धर्म में चलाते हैं, जो आप इस लोक और परलोक में सुख का भोग करते हैं और सब संसार को इस लोक और परलोक में सुख का भोग कराते हैं, वे ही धर्मात्मा जन संन्यासी और महात्मा है।

●●●

राजधर्म 6

समाज को नियम में चलाने और शान्ति—व्यवस्था बनाये रखने के लिए कुशल शासन का होना आवश्यक होता है। राजा और प्रजा के सम्बन्ध नियमित करने के लिए राजा और तीन सभायें होनी चाहिएं। (विद्यासभा, धर्मसभा और राजसभा) जो सारी प्रजा की स्वतन्त्रता की रक्षा करे और उन्हें विद्या, धर्म, सुशिक्षा और धन से समृद्ध बनायें। राजा क्षत्रिय होते हुए भी ब्राह्मण की भांति परम—विद्वान होना चाहिए जो न्यायपूर्वक राज्य की रक्षा करने के योग्य हो। अथर्ववेद में कहा गया है कि राजा उसी को सभापति नियुक्त करे जो मानव समाज में ऐश्वर्य वाला, शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाला, स्वयं शत्रुओं से पराजित न होने वाला, सम्माननीय व्यक्ति और प्रशंसनीय गुण कर्म स्वभाव वाला हो। जिसकी शरण में आश्रय मिल सकता हो। सभापति के अधीन सभा हो, सभा के अधीन राजा, राजा और सभा दोनों प्रजा के अधीन हों और प्रजा राजसभा के अधीन रहे। यदि ऐसा न होगा तो प्रजा से स्वाधीन रहकर राजा सिंह की भांति निरंकुश होकर निरीह प्रजा पर अत्याचार करेगा और किसी को अपने से ऊपर नहीं उठने देगा। जो भी विरोधी शक्ति पाना चाहेगा उसे अनुचित ढंग से दंड देकर अपना स्वार्थ सिद्ध करेगा। प्रजा के विद्वान लोगों को सर्वसम्मति और पक्षपात रहित होकर ऐसे व्यक्ति को राजा नियुक्त करना चाहिए जो सबका मित्र हो और राज्य की रक्षा करने और धन—ऐश्वर्य की वृद्धि करने में समर्थ हो।

राजा के पास शक्तिशाली सेना हो और आग्नेयादि अस्त्र, बन्दूक, तोप, धनुषवाण, तलवार आदि शस्त्रों का पर्याप्त भंडार हो। सेना भलीभांति प्रशिक्षित हो। सेना प्रशंसनीय और विजय प्राप्त करने वाली हो। जब तक राज्य में मनुष्य धार्मिक रहते हैं तब तक राज्य बढ़ता है, जब दुराचारी बढ़ते हैं तो राज्य का नाश हो जाता है। महाविद्वान को विधानसभा का अधिकारी, धार्मिक विद्वान को धर्म सभा का अधिकारी और प्रशंसनीय धार्मिक पुरुषों को राजसभा में नियुक्त

करके उनमें से जो सबसे योग्य हो उसे राजसभा का सभापति नियुक्त करके सब प्रकार से उन्नति करें। प्रजा तीनों सभाओं की सम्मति से बनाये गये उत्तम कानूनों या नियमों का पालन करते हुए व्यवहार करे।

सभापति, विद्युत के समान शीघ्र ऐश्वर्यकर्त्ता, वायु के समान सबको प्रिय और हृदय की बात जानने वाला, निष्पक्ष न्यायधीश के समान व्यवहार करने वाला, सूर्य के समान न्याय, विद्या और धर्म का प्रकाशक और अविद्या का नाशक, अग्नि के समान दुष्टों को भस्म करने वाला, वरुण के समान दुष्टों को बांधने वाला, चन्द्र के समान श्रेष्ठ पुरुषों को आनन्ददाता, धन के अध्यक्ष के समान राजकोष को भरने वाला हो। जिसके तेज के सामने कोई भी आंख उठाकर देखने का साहस न कर सके, ऐसा व्यक्ति सभापति होना चाहिए। राजा का चिन्ह राजदंड है, राजा न्याय, चार वर्ण और चार आश्रमों के धर्म का संरक्षक, सबका शासनकर्ता, प्रजा का रक्षक होता है। वह दुष्टों को दंड देकर सारी प्रजा को आनंदित कर देता है। राजा पक्षपातरहित, सत्यवादी, विचारक, बुद्धिमान, धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष की सिद्धि करने वाला होता है। ऐसे विद्वान और गुणवान राजा को ही दण्ड धारण करने का अधिकार दिया जाये और वह श्रेष्ठ पुरुषों (सभाओं और अधिकारियों) की सहायता से न्यायरूपी दंड चलाने में समर्थ हो। विषयों में आसक्ति रखने वाला, ईर्ष्या रखने वाला, कुटिल, नीचबुद्धि, अविद्वान, अधर्मात्मा व्यक्ति राजा हो तो राजदंड ऐसे धर्म से रहित, विद्या और सुशिक्षा से रहित, विषयों में आसक्त, विद्वानों की सहायता लिए बिना राज्य चलाने वाले राजा का परिवार–सहित नाश कर देता है। इसलिए राजा वही होना चाहिए जो पवित्र आत्मा, सदाचारी, सत्पुरुषों का संगी, बुद्धिमान और नीतिशास्त्र के अनुकूल चलते हुए न्यायरूपी दंड को चलाने में समर्थ हो।

मुख्य सेनापति, मुख्य राज्य–अधिकारी, मुख्य न्यायधीश और प्रधान या राजा ये चारों सब विद्याओं में पूर्ण विद्वान होने चाहिएं। जिन तीन सभाओं की सहायता से राज्य कार्य चलाया जाता है उन तीनों में कम से कम दस–दस विद्वान होने चाहिए। इनमें चारों वेद, न्यायशास्त्र, धर्मशास्त्र आदि जानने वाले वे विद्वान लिए जाने चाहिए जो ब्रह्मचारी, गृहस्थ और वानप्रस्थ तीनों वर्गों से हों जिससे राजनीति के अच्छे नियम बनाए जा सकें। इन सभाओं द्वारा की गई व्यवस्था का कोई भी उल्लंघन न करे। विशेष परिस्थितियों में तीन विद्वानों की सभा या एक उत्तम संन्यासी जिस धर्म की व्यवस्था करे उसका पालन करना ही

श्रेष्ठ धर्म है। अत्यधिक योग्य व्यक्ति भी बहुत से अज्ञानियों की तुलना में अच्छी व्यवस्था कर सकता है। विद्यासभा, धर्मसभा और राजसभा में सदा विद्वान और धार्मिक पुरुषों को ही लिया जाना चाहिए। अज्ञानी, जन्म से शूद्र, वेदविद्या और आचरण से रहित व्यक्ति को कभी नहीं लेना चाहिए।

राजा और राजसभा के सभी सदस्यों को चारों वेदों की कर्म–उपासना, ज्ञान, दंडनीति, न्यायविद्या और आत्मविद्या का (परमात्मा के गुण, कर्म, स्वभाव को ठीक–ठीक जानना) ब्राह्मणों से या शंकासमाधान करते हुए दूसरों से पूछकर ही ज्ञान प्राप्त होना चाहिए। उन्हें नियमित रूप से योगाभ्यास द्वारा अपनी इन्द्रियों को वश में रखना चाहिए तभी वे प्रजा को अपने नियन्त्रण में रखने में समर्थ हो सकेंगे।

राजा और तीनों सभाओं के सभी सदस्यों को काम से उत्पन्न दस और क्रोध से उत्पन्न आठ दुष्ट व्यसनों में नहीं फंसना चाहिए यदि कोई दोष हो तो उसे प्रयत्न करके छोड़ देना चाहिए। काम से उत्पन्न दोष धर्म को और क्रोध से उत्पन्न दोष शरीर को नहीं रहने देते अर्थात् मनुष्य को धर्म और आचरण से गिरा देते हैं। काम से उत्पन्न व्यसन (1) नशीली वस्तुओं का प्रयोग (2) जुआ (3) स्त्रियों का विशेष संग (4) शिकार खेलना (5) दिन में सोना (6) दूसरों की निन्दा (7) गाना (8) बजाना (9) नाचना (नाच करना, कराना, सुनना और देखना) (10) व्यर्थ आवारा घूमते रहना। इसमें से पहले चार महादुष्ट व्यसन हैं।

क्रोध से उत्पन्न व्यसन (1) बिना अपराध दंड देना (2) कठोर वचन बोलना (3) अन्याय में धन खर्च करना (4) चुगली करना (5) बलात्कार करना (6) द्रोह रखना (अर्थात दूसरों की बड़ाई या उन्नति देख कर जलना) (7) दोषों में गुण (8) गुणों में दोष लगाना या निकालना। इनमें से पहले तीन महादुःखदायक हैं। काम से उत्पन्न चार और क्रोध से उत्पन्न तीन महादोष अर्थात ये सात दुर्गुण ऐसे हैं कि इनमें फंसने से मर जाना अच्छा है क्योंकि दुष्ट कर्म करने वाला व्यक्ति जितना अधिक जियेगा उतने ही अधिक बुरे कर्म करके दुःखों और पापों में फंसता जायेगा। राजा और सब मनुष्यों को उचित है कि शिकार, नशीली वस्तुओं के प्रयोग और दुष्ट व्यसनों से दूर रहकर धर्मयुक्त गुण कर्म स्वभाव के अनुसार चलते हुए अच्छे–अच्छे काम करें।

राजसभा के सदस्यों और मन्त्रियों में निम्नलिखित विशेषतायें होनी चाहिए।

thearyasamaj.org

अपने देश अर्थात स्वदेश में उत्पन्न हुआ हो, वेदादि शास्त्रों के जानने वाले, शूरवीर, ऊंचे लक्ष्य वाले, कुलीन, अच्छी तरह परीक्षा किए हुए या परखे हुए और धार्मिक चतुर व्यक्ति हों। ऐसे 7–8 व्यक्तियों को मन्त्री नियुक्त करना चाहिए। मन्त्रियों की सहायता से राज्यकार्य चलाना आसान हो जाता है। राजा या सभापति को चाहिए कि नित्यप्रति कुशलविद्वान मन्त्रियों के साथ बैठक करके राज्य के कार्यों की जानकारी ले और क्या किया जाना चाहिए इसके लिए नीति निश्चित करे। राजा को किसी मन्त्री से मित्रता और विरोध न करते हुए उनके विचार सुनने चाहिए और भली प्रकार सोच विचारकर उचित समय पर अपने विचार प्रकट करके चाहिए। साधारण समय में अपने राज्य की रक्षा करता रहे और जब अपनी शक्ति बढ़ जाये तो शत्रु पर चढ़ाई करके अपने राज्य और राज्य–कोष की वृद्धि करे तथा जिन–जिन प्रदेशों में अशान्ति हो वहां–वहां शान्ति स्थापित करे। इसके अतिरिक्त आलस्य रहित, चतुर और योग्य पुरुषों को विभिन्न पदों पर अधिकारी नियुक्त करे। जो साहसी और निडर हों उन्हें बाहर के बड़े–बड़े काम सौंपें और जो डरपोक हों उन्हें भीतर के काम सौंपे।

राजा को अपने राज्य के भीतर और बाहर की जानकारी प्राप्त करने के लिए दूत भी रखने चाहिए। जो उत्तम कुल में उत्पन्न हो, पवित्र, जो दूसरों के व्यवहार से आने वाले समय में होने वाली घटना को जानने में कुशल हो, उत्साही, निष्कपट, तीव्र स्मरणशक्ति वाला, निडर, सब शास्त्रों में दक्ष, बातचीत करने में व्यवहार–कुशल हो, उसे दूत नियुक्त करना चाहिए। दूत के पास किसी से सन्धि या मेल करने या तोड़ने का अधिकार होना चाहिए। दूत अपनी चतुराई से फूट में मेल करवा सकता है और जहां मेल हो वहां फूट डलवा सकता है। दूत के द्वारा दूसरे राजाओं की गतिविधियां जानकर ऐसा प्रयत्न करना चाहिए जिससे अपने राज्य को हानि न होने पाये।

राजा के अधीन राजकोष, सभा के अधीन सब राज्यकार्य, मन्त्री के अधीन दंड–अधिकार अर्थात किसी को अन्यायपूर्वक दंड न मिले यह देखने का अधिकार होना चाहिए।

राज्य की रक्षा के लिए सुन्दर जंगल, जल से घिरे हुए प्रदेश अर्थात चारों ओर से पहाड़ों से घिरे हुए स्थान में दुर्ग (किले) का निर्माण करना चाहिए इसके मध्य भाग में नगर का निर्माण करना चाहिए। नगर के चारों ओर प्राकार या चारदीवारी बनवाये क्योंकि उसमें बैठा हुआ एक–एक धर्नुधारी बाहर के सौ

शस्त्रयुक्त व्यक्तियों का सामना कर सकता है। दुर्ग में शस्त्र–अस्त्र, धन–धान्य, वाहन (सवारी के साधन) ब्राह्मण जो पढ़ने–पढ़ाने वाले हों, शिल्पकार, यन्त्र, अनेक प्रकार की कलायें, चारा घास, जल आदि का पूरा प्रबन्ध होना चाहिए। दुर्ग ऐसे होने चाहिएं जिनमें सब ऋतुओं में सुखपूर्वक रहने की सुविधा हो और सुविधा से राज्यकार्य चल सके। राजा को क्षत्रिय कुल की सुन्दर, लक्षणयुक्त, समान गुण–कर्म–स्वभाव वाली एक ही स्त्री से विवाह करना चाहिए और दूसरी स्त्रियों की ओर आंख उठाकर भी न देखना चाहिए। राजा को धार्मिक कार्यों के लिए पुरोहित नियुक्त करना चाहिए जो यज्ञ आदि उत्तम कर्मों को किया करे, राजा का धर्म या सन्ध्या–उपासना यही है कि वह रात–दिन राज्य के कामों में लगा रहे और कोई राजकाम बिगड़ने न दे।

राजा अपने योग्य अधिकारियों के द्वारा प्रजा से कर प्राप्त करे। राजा और उसके सभासद वेदानुकूल होकर प्रजा के साथ पिता के समान व्यवहार करें। राज्य का कोई भी अधिकारी उन पर अन्याय न करे इसलिए अपने कर्त्तव्य का ठीक ढंग से पालन करने वाले का उत्साह बढ़ाना और विरुद्ध कर्म करने वाले को दंड देना राजा का कर्तव्य है। वेदादि शास्त्रों को पढ़कर गुरुकुलों से आने वालों का राजा को सत्कार करना चाहिए, उनके द्वारा राज्य में होने वाली विद्या की उन्नति से राज्य हर दिशा में उन्नति की ओर बढ़ता है।

प्रजाहितकारी राजा को जब कभी अपने समान, छोटा या बड़ा युद्ध के लिए ललकारे या चुनौती दे तो उसे युद्ध से कभी पीछे नहीं हटना चाहिए और दृढ़ निश्चय से युद्ध में विजय प्राप्त करनी चाहिए। राजा को निडर होकर युद्ध करना चाहिए, कभी पीठ नहीं दिखानी चाहिए। यदि शत्रु को जीतने के लिए छिप जाना उचित हो तो छिपकर युद्ध करने में भी दोष नहीं होता। सिंह की तरह क्रोध में सामने आकर बेमौत मरना अर्थात मूर्खता से मरना उचित नहीं। युद्ध में नागरिकों, निहत्थे लोगों, जो अधीनता स्वीकार करते हों, स्त्रियों, बालकों, वृद्धों आदि पर शस्त्र चलाना उचित नहीं है। जो लोग युद्ध में घायल हो गये हों और भाग रहे हों उन्हें मारना नहीं चाहिए। उन्हें पकड़ कर बंदीगृह में रखें, उनके भोजन और रहने तथा घायलों के इलाज का भी प्रबन्ध करना चाहिए। शत्रु की स्त्रियां भी यदि बन्दी बनाई गई हों तो उन पर बुरी दृष्टि न डालकर सम्मानपूर्वक उन्हें उनके देश में भेज देना चाहिए। युद्ध में पीठ दिखाकर भागने वाले को दंड मिलता है और जीवन भर अपमान सहना पड़ता

है और यदि भागता हुआ मारा जाये तो उसके सभी पुण्यफल नष्ट हो जाते हैं। युद्ध में जिसने जो रथ, हाथी, घोड़े, धन—धान्य, छत्र, गाय आदि पशु, स्त्रियां द्रव्य, घी—तेल आदि के कुप्पे जीते हों वही उस—उसका ग्रहण करे। सेना जीते हुए पदार्थों में से 16वां भाग राजा को दे और राजा उस धन में से जो सब ने मिलकर जीता हो उसका 16वों भाग दे और जो युद्ध में मर गया हो उसकी स्त्री और सन्तान को उसका भाग दे और उसकी स्त्री तथा असमर्थ सन्तान का पालन और शिक्षा का प्रबन्ध करे। जो कोई भी अपने राज्य की रक्षा, वृद्धि, प्रतिष्ठा, विजय और आनन्दवृद्धि की इच्छा रखता हो वह इस मर्यादा का उल्लंघन कभी न करे।

राजा और राजसभा दंड से अलब्ध (जो प्राप्त नहीं) की प्राप्ति की इच्छा, नित्य देखभाल से प्राप्त की रक्षा, रक्षित की वृद्धि अर्थात व्याज आदि से बढ़ावे और बढ़े हुए धन को वेदविद्या, धर्म—प्रचार, विद्यार्थियों—वेदमार्ग के उपदेशकों और असमर्थ अनाथों के पालन में लगावे। निष्कपट होकर सबसे बर्ताव करे, नित्यप्रति अपनी रक्षा करके शत्रु के छल को जानकर उसे दूर करे, स्वयं शत्रुओं की कमजोरियों को दूतों द्वारा जाने और अपनी कमजोरियों को शत्रुओं को न जानने देंवे। धन—संग्रह के उपायों पर विचार करके बढावें, पदार्थों और बल की वृद्धि कर शत्रु को जीतने के लिए पराक्रम करें। छिपकर शत्रुओं को पकड़ें, समीप आने वाले बलवान शत्रुओं को खरगोश की भांति चतुराई से पकड़ें या नाश करें। इस प्रकार विजय करने के पश्चात् उस राज्य के डाकू, लुटेरों को साम (मिला लेना), दाम (कुछ देकर) भेद (फूट डालकर) और दंड (शक्ति के प्रयोग) द्वारा अपने वश में करें। जिस प्रकार धान से चावल निकालने वाला धान का छिलका निकालकर सावधानी से चावल अलग कर लेता है, इसी प्रकार राजा अपने राज्य की रक्षा करे। जो राजा मोह और लापरवाही से अपने राज्य को दुर्बल करता है वह राज्य और अपने बंधुओं सहित अपने जीवनकाल में ही नष्ट हो जाता है। इसलिए राजा को राज्य की समृद्धि और रक्षा के काम में हमेशा तत्पर रहना चाहिए इसमें राजा और प्रजा सबका सुख बढ़ता है।

राज्य के कार्य को ठीक ढंग से चलाने के लिए एक—एक गांव में एक—एक प्रधान रखे, दस ग्रामों का प्रबन्ध दूसरे, बीस गांवों का प्रबन्ध तीसरे और इसी तरह सौ, हजार और दस हजार गांवों का प्रबन्ध एक—एक अधिकारी के अधीन रहे। एक गांव का मुखिया, दस गांव वाले अधिकारी और इसी तरह 10 वाला

20 वाले को, 20 वाला सौ वाले को, सौ वाला हजार वाले को और हजार वाला दस हजार वाले तक और वे राजा और राज्यसभा तक प्रतिदिन सूचनायें पहुंचाये। इस तरह पूरे राज्य पर सुगमता से नियन्त्रण किया जा सकता है और समस्याओं से आसनी से निपटा जा सकता है। ऐसी ही व्यवस्था आजकल ग्राम पंचायत, तहसील, जिला स्तर के स्थानीय शासन में देखने को मिलती है। इस प्रबन्ध को ठीक ढंग से चलाने के लिए राजा को दो सभापति नियुक्त करने चाहिए। जिनमें से एक राजसभा में बैठकर उनसे सूचनायें प्राप्त करें और दूसरा आलस्य छोड़कर स्थान–स्थान पर घूमकर सूचनायें एकत्र करे और राजपुरुषों के कामों को देखता रहे। जो नित्य घूमने वाला सभापति हो उसके अधीन सब दूत रहें। दूत भिन्न भिन्न जातियों से हों जो राजपुरुषों और प्रजापुरुषों दोनों से सम्बन्ध रखकर गुप्त–रीति से उनके गुण दोष जानकर जिनका अपराध हो उन्हें दंड दिलाये और अच्छा काम करने वालों को सम्मान दिलायें। बड़े–बड़े नगरों के प्रबन्ध के लिए भी अलग–अलग सभायें बनायें, जिससे नगरों का विकास, भवन–निर्माण, सफाई, सुरक्षा आदि सभी प्रबन्ध सुचारू रूप से चलें। विद्या और धर्म की वृद्धि हो।

यदि कोई राज्य अधिकारी वादी–प्रतिवादी से अन्यायपूर्वक गुप्त धन लेकर पक्षपात से अन्याय करे तो उसकी सारी सम्पत्ति छीनकर देश से निकाल देना चाहिए, जिससे कोई भी राजपुरुष ऐसा कार्य न करे। यदि दंड दिए बिना उसे छोड़ दिया जाता है तो दूसरे लोग बेधड़क होकर दुष्ट कर्म करेंगे। लेकिन राज्य के सभी कर्मचारियों को उनकी सेवा के बदले इतना धन मिलना चाहिए जिससे उनका निर्वाह सुखपूर्वक हो सके। उन्हें सेवानिवृत होने पर भी वेतन का आधा भाग जब तक वे जीवित रहें तब तक मिलता रहे, मरने के बाद नहीं। उनकी सन्तानों को सत्कार या नौकरी उनकी योग्यता के अनुसार देवें। उसकी स्त्री को निर्वाह के लिए धन मिले परन्तु यदि स्त्री और बच्चे कुकर्मी हों तो उन्हें कुछ भी न दिया जाये।

राजसभा राज्य में ऐसे नियम लागू करे जिससे प्रजा सुखी रहे। राजा राजकार्य को चलाने के लिए प्रजा से कर रूप में वार्षिक धन लेवे, कर इतने होने चाहिए जो प्रजा आसानी से दे सके। राजा अपने कोष को भरने के लोभ में प्रजा के सुख का नाश न करे।

राजा को दुष्टों के प्रति कठोर और श्रेष्ठों के प्रति कोमल व्यवहार करना चाहिए।

thearyasamaj.org

राजा को आलस्यरहित होकर अच्छे राज्यप्रबन्ध द्वारा प्रजा का पालन और रक्षा करनी चाहिए। जो राजा और उसके सेवक कानून व्यवस्था ठीक बनाए नहीं रखते और जिनके राज्य में चोर–डाकू लोगों के जीवन और सम्पत्ति को नष्ट करते हैं ऐसा राजा और उसके कर्मचारी महादुःख पाते हैं। मनुस्मृति में कहा गया है कि सभा के नियत किये नियमों पर चलते हुए जो राजा धर्म से प्रजा का पालन करता है वही सुख पाता है। राजा को सुबह तड़के उठकर दैनिक कर्मों से निवृत्त होकर धार्मिक विद्वानों का सत्कार करके सभा में प्रवेश करना चाहिए। वहाँ खड़े खड़े ही प्रजाजनों की बात सुने, फिर मन्त्री के साथ राज्य की व्यवस्था के बारे में विचार करे। उसके बाद मन्त्री को लेकर ऐसे एकान्त स्थान में चला जाये जहां कोई उनकी बात न सुन सके। वहाँ बैठकर परोपकार के लिए गम्भीर समस्याओं पर विचार करे और उसे गुप्त रखे। जो राजा अपनी नीतियां गुप्त रखता है वह धन के अभाव में भी अच्छा राज्य चलाने में समर्थ होता है। राजा को सभा की इच्छा के विरुद्ध कोई मनमानी नहीं करनी चाहिए।

राजा और राजपुरुषों को राज्य में स्थिरता बनाए रखना, शत्रु से युद्ध करने जाना, उनसे मेल करना, दुष्ट शत्रुओं से लड़ाई करना, दो प्रकार की सेना रखकर युद्ध में विजय प्राप्त करना, जब अपना राज्य निर्बल हो तो दूसरे राजा से सहायता लेना ये छः प्रकार के कर्म उससे होने वाले हानि–लाभ को भली प्रकार विचार करने चाहिए। ये सभी कार्य दो–दो प्रकार के होते हैं। सन्धि करते समय शत्रु से मेल या विपरीतता समय की आवश्यकता को देखते हुए करना, कार्यसिद्धि के लिए उचित या अनुचित समय में अपने या अपने मित्र के प्रति अपराध करने वाले शत्रु के साथ विरोध करना, अचानक कोई काम पड़ने पर अकेले या मित्र के साथ शत्रु से लड़ने जाना, यदि स्वयं निर्बल हो जाये तो मित्र के रोकने पर अपने स्थान पर बैठ जाये, सेनापति और सेना के दो विभाग करके युद्ध में विजय करना, अपना कार्यसिद्ध करने के लिए किसी बलवान राजा या महात्मा की शरण लेना जिससे शत्रु हानि न पहुंचाए। यदि यह निश्चय हो कि उस समय युद्ध करने में अपनी हानि और कुछ समय ठहर कर करने में लाभ होगा तो शत्रु से मेल करके उचित समय तक धैर्य से प्रतीक्षा करें और जब अपनी सेना बलवान हो और युद्ध में विजय प्राप्त करने का अपने आपको भरोसा हो तो शत्रु से युद्ध अवश्य करें। जब शत्रु निर्बल हो उस समय भी शत्रु से युद्ध के लिए जाये।

जब सेना की शक्ति युद्धों से कमजोर पड़ जाये तो राजा का प्रयत्न से अपने शत्रुओं को धीरे–धीरे शान्त करते हुए अपने स्थान पर बैठे रहना चाहिए। जब राजा अपने शत्रु को अपने से बलवान जाने दुगनी सेना या सेना के दो विभाग करके विजय प्राप्त करे। यदि शत्रु के आक्रमण का भय हो तो शीघ्र ही किसी धार्मिक बलवान राजा से सहायता लेकर अपनी सेना और प्रजा की रक्षा करे और शत्रु के बल को रोक दे। जिस राजा का आश्रय ले यदि वह धार्मिक हो तो उसका विरोध कभी न करे लेकिन यदि उसके कर्मों में कोई दोष देखे तो निडर होकर उससे युद्ध करे।

नीतिनिपुण राजा इस बात का ध्यान रखता है कि उसके मित्र अधिक हों, तटस्थ और शत्रु कम हों। वह बीते हुए समय में किये गये कामों के गुण दोषों पर विचार करके उन्हें दूर करके वर्तमान कामों को करता है और हानि–लाभ पर विचार करने के बाद ही भविष्य के लिये योजनायें बनाता है। वह इस बात को ध्यान में रखता है कि बीते हुए समय की गलतियां दोहराई न जायें। ऐसा राजा योग्य राजकर्मचारियों की नियुक्ति करता है और शत्रुओं से पराजित नहीं होता। वह तटस्थ और शत्रुओं को वश में रखकर राज्य को हानि नहीं पहुंचाने देता।

राजा को युद्ध करने के लिए जाते समय राज्य की रक्षा का प्रबन्ध, यात्रा के लिए उचित साधनों और सामग्री पहुंचाने का प्रबन्ध, सेना, सवारी के साधनों और शस्त्रों का प्रबन्ध पहले ही कर लेना चाहिए। युद्ध की सारी योजना पहले से निश्चित कर लेनी चाहिए। सेना स्थल, जल और वायु मार्ग से जाती है। भूमिमार्ग से पैदल, घोड़े, हाथी और रथ जायें, जल में नौकाओं और आकाश में विमानों द्वारा जावे। युद्ध के समय भोजन सामग्री और शस्त्रों की कमी न हो। शत्रु के राज्य पर पहुंच कर सेना धीमी गति से आगे बढ़े जिससे शत्रु उसे घेर न लें। ऐसा व्यक्ति जो ऊपर से मित्र बना हो और भीतर से शत्रु से मिला हुआ हो और शत्रु को गुप्त भेद देता हो उस पर कड़ी निगरानी रखनी चाहिए और उसे अपना सबसे बड़ा शत्रु समझना चाहिए। शान्तिकाल में सेना के प्रशिक्षण की ओर विशेष ध्यान दिया जाना चाहिए। युद्ध के समय सेना को दण्डव्यूह' अर्थात दण्ड के समान सीधी आगे बढ़े, 'चक्रव्यूह' अर्थात गाड़ी के समान 'वराहव्यूह' एक दूसरे के पीछे दौड़ना और कभी–कभी मिलकर झुंड बना लेना, 'मकरव्यूह' जैसे मगर कभी सामने आता है और कभी छिप जाता है और फिर

धीरे–धीरे आगे बढ़कर शत्रु पर आक्रमण करता है, 'सूचीव्यूह', जिसमें सेना का अगला भाग सूक्ष्म अर्थात पतला और पीछे का भाग चौड़ा बनाकर लड़ना चाहिए। सेना नीलकण्ठ की भान्ति झपटने के कार्य में कुशल होनी चाहिए। सेनापति को चाहिए कि वह लड़ने वाले वीरों को आठों दिशाओं में रखे और शत्रु की गतिविधियों का ध्यान रखे जिससे शत्रु पीछे से सेना को घेरने न पाए।

अगर राजा को अपनी थोड़ी सेना के साथ शत्रु की बड़ी सेना के साथ युद्ध करना पड़े तो सारी सेना इकट्ठी रखकर युद्ध करना चाहिए परन्तु यदि आवश्यकता पड़े तो इसी सेना को फैला देवे। जब शत्रु की सेना या दुर्ग में प्रवेश करना हो तो 'सूचीव्यहू या वज्रव्यूह' से अर्थात् दो–धारी तलवार की तरह दोनों तरफ शत्रुओं से युद्ध करते हुए आगे बढ़ता जाये। यदि शत्रु तोपों–बन्दूकों से आक्रमण कर रहा हो तो 'सर्पव्यूह' से अर्थात् जमीन पर लेटते हुए आगे बढ़ें और उनके पास पहुंच कर तोप चलाने वालों पर झपट कर उनकी तोपों का मुंह उन्हीं की सेनाओं की ओर मोड़कर उनका नाश करें। अपने सैनिकों को बचाने के लिए बीच में वृद्ध सैनिकों की ओट में अच्छे सैनिकों को आगे बढ़ाकर शत्रु सेना को नष्ट कर दें। सेना ने समुद्र में युद्ध करना हो तो नौका में और थोड़े जल में युद्ध करने के लिए हाथियों पर चढ़कर लड़े। जंगलों में धनुष–बाण और रेतीले प्रदेशों में तलवार व ढाल लेकर युद्ध करें।

राजा युद्ध के समय सैनिकों का उत्साह बढ़ाये और उनके खान–पान, अस्त्र–शस्त्र और इलाज का ठीक प्रबन्ध करके सैनिकों को प्रसन्न रखे। व्यूह या योजना के बिना युद्ध न करे और शत्रु–सेना की गतिविधियों को देखते हुए उसी के अनुसार युद्ध करे। शत्रु को चारों ओर से रोक रखे और उसके अन्न–जल, ईंधन, पशुओं के लिए चारा आदि पदार्थों को दूषित या नष्ट कर दे। शत्रु के तालाब, नगर की चारदीवारी और खाई को तोड़कर, रात्रि को भय दिखाकर जीतने का उपाय करे। जीतकर उससे प्रतिज्ञापत्र लिखवा ले कि तुमको हमारी आज्ञा के अनुकूल चलकर न्याय से प्रजा का पालन करना होगा या हारने वाले राजा के ही वंश के किसी धार्मिक व्यक्ति के हाथ में राज्यकार्य सौंप दे। हारे हुए राजा को भी उचित सम्मान दे, उसे चिड़ाये या लज्जित न करे। उसे भाई या मित्र तुल्य सम्मान दे। राजा के लिए दूरदर्शी और कार्यसिद्धि में सहायता करने वाला मित्र, सोना या भूमि प्राप्त करने से भी अधिक महत्व रखता है। धर्म को जानने वाला, कृतज्ञ, प्रसन्न स्वभाव और गम्भीरता से कार्य

करने वाला छोटा मित्र पाकर भी राजा का सम्मान बढ़ता है। राजा कभी किसी बुद्धिमान, कुलीन, शूर, वीर, चतुर, दानी, कृतज्ञ और धैर्यवान पुरुष को शत्रु न बनाए। ऐसे लोगों को शत्रु बनाकर उसे दुःख प्राप्त होता है। जो अच्छे गुण होते हुए भी उनको कार्यरूप देने का प्रयत्न नहीं करता अर्थात् केवल बातें ही बनाता हो ऐसा व्यक्ति उदासीन कहलाता है।

राजा को प्रातःकाल उठकर स्नान, अग्निहोत्र आदि करने के बाद सभा में जाकर मन्त्रियों से विचार करना चाहिए। उसके बाद सेनाध्यक्षों से मिलकर सेना के प्रशिक्षण, व्यूहशिक्षा, अस्त्र–शस्त्रों की स्थिति और घोड़ों आदि के रख–रखाव, चिकित्सालय, राजकोष आदि को नित्यप्रति देखें और यदि कहीं कोई कमी दिखाई दे तो उसे दूर करवाये। उसके बाद व्यायामशाला में जाकर व्यायाम करे और फिर अपने महल में पत्नी के साथ पौष्टिक, रोग विनाशक, बुद्धि और बल को बढ़ाने वाला पहले से परीक्षा (जांच) किया हुआ भोजन ग्रहण करे। ऐसा करने से राजा सदा सुखी रहेगा और उसके राज्य की उन्नति होगी।

राजा को व्यापारियों और शिल्पकारों से उनको होने वाले सोने–चांदी के लाभ का पचासवां भाग, अन्न आदि में छठा, आठवां या बारहवां भाग कर के रूप में लेना चाहिए। कर इतना लें जिससे प्रजा को खाने–पीने में और धनरहित होने से दुःख न पहुंचे। राजा को प्रजा को अपनी सन्तान के समान सुख देना चाहिए। कोई भी राजकर्मचारी राजा की आज्ञा के विरुद्ध न चले और प्रजा का शोषण न करे यह देखना राजा का कर्त्तव्य है।

राजा और राज्याधिकारियों को देश में प्रचलित प्रथाओं और शास्त्रों के अनुसार अठारह प्रकार के झगड़ों का निपटारा प्रतिदिन करना चाहिए। यदि किसी झगड़े के निपटाने के लिए शास्त्र में नियम का वर्णन न हो तो उस विषय में नया नियम बनाकर निश्चित करे। (1) ऋण लेने–देने का झगड़ा (2) गिरवी रखा हुआ पदार्थ मांगने पर न देना (3) किसी दूसरे के पदार्थ को कोई ओर बेच दे (4) सामूहिक अत्याचार करना (5) दिए हुए पदार्थ का न देना (6) किसी को वेतन कम देना या न देना (7) प्रतिज्ञा के विरुद्ध चलना (8) खरीदने–बेचने में झगड़ा होना (9) पशु के स्वामी और पालने वाले में झगड़ा (10) सीमा का झगड़ा (11) किसी को कठोर दण्ड देना (12) कठोर वचन कहना (13) चोरी, डाका मारना (14) बलपूर्वक (जबरदस्ती) किसी काम को कराना (15) व्यभिचार (16) स्त्री और पुरुष के धर्म में बाधा होना (17) पैतृक

धन के बंटवारे का झगड़ा (18) जड़ और चेतन पदार्थ को दांव में लगाकर जुआ खेलना आदि झगड़ों का निपटारा करने में पक्षपात नहीं करना चाहिए। जिस सभा में सभासदों के देखते हुए धर्म पर चलने वाले को सम्मान और अधर्मी को दंड नहीं मिलता या अधर्म से धर्म, असत्य से सत्य मारा जाता है, वे सभासद घायल या मरे हुए के समान होते हैं। धार्मिक मनुष्य को सभा में प्रवेश नहीं करना चाहिए और यदि जाये तो निडर होकर सत्य का पक्ष ले। अन्याय होते देखकर चुप रहना महापाप है।

जो सब ऐश्वर्यों को देने और सुखों की वर्षा करने वाले धर्म का नाश करता है वह शूद्र या नीच कहलाता है। धर्म ही मनुष्य का सच्चा साथी है जो शरीर छूट जाने के बाद भी साथ रहता है। जिस राजसभा में पक्षपात से अन्याय किया जाता है उस पाप का फल अधर्म करने वाले, साक्षी (गवाह), सभासदों और राजा चारों को मिलता है लेकिन जहां निन्दा के योग्य की निन्दा, प्रशंसा–योग्य की प्रशंसा, दंड के योग्य को दंड और मान के योग्य का मान होता है वहां केवल अधर्म करने वाले को ही पाप लगता है।

न्याय देते समय धार्मिक, विद्वान, निष्कपटी, धर्म के जानने वाले, लोभरहित, सत्यवादी और प्रत्यक्ष देखने वाले की ही गवाही लेनी चाहिए। स्त्रियों की साक्षी स्त्री, ब्राह्मणों के ब्राह्मण, शूद्रों के शूद्र ही साक्षी हों। बलात्कार, व्यभिचार, कामचोरी और वध करने जैसे अपराधों में साक्षी न लें क्योंकि यह सब काम गुप्त रूप से ही किये जाते हैं। दोनों ओर की गवाहियाँ लेकर बहुमत से, अगर गवाहियां बराबर हों तो गुणी पुरुष की गवाही के अनुकूल और यदि दोनों ओर उत्तम गुणी पुरुषों की गवाहियां समान हों तो ऋषि, महर्षि और यतियों की गवाही के अनुसार न्याय करें। गवाही दो प्रकार की होती है आंखों देखी और सुनने से। सच्ची गवाही देने वाले को दण्ड न मिले परन्तु झूठी गवाही देने वाले को यथायोग्य दंड देना चाहिए। उत्तम पुरुषों की सभा में जो देखने और सुनने के विरुद्ध झूठी गवाही दे उसे जीभ काटने का दंड मिलना चाहिए, ऐसा व्यक्ति मरकर भी सुख नहीं पाता। जो स्वभाव से व्यवहार सम्बन्धी बोले उसी गवाही को मानना चाहिए, सिखाये हुए और बार–बार अलग–अलग बोलने वाले की गवाही स्वीकार नहीं करनी चाहिए, वकील गवाही देने वाले से सत्य बोलने की शपथ ले। जो सच्ची गवाही देता है वह लोक–परलोक में सुख भोगता है और झूठी गवाही देने वाला लोक में निन्दित होता और परलोक में दुःख

thearyasamaj.org

को प्राप्त होता है। अतः साक्षी देते समय अपनी आत्मा का अपमान न करके सत्य बोलना चाहिए। अतः साक्षी देते समय अपनी आत्मा का अपमान न करके सत्य बोलना चाहिए। अन्तर्यामी परमेश्वर पाप–पुण्य सबाक देखने वाला है इसलिए उस परमात्मा से डरकर सदा सत्य बोलना चाहिए।

जो लोभ, मोह, भय, मित्रता, काम, क्रोध, अज्ञान या बालपन से साक्षी दें वे सब झूठी समझनी चाहिए। पैसे के लालच में झूठी गवाही देने वाले को धन का जुर्माना लगाकर दंड देना चाहिए। धन का दंड व्यक्ति की आर्थिक स्थिति देखकर बढ़ाया और घटाया जा सकता है। दंड के दस स्थान उपस्थेन्द्रिय (मूत्रस्थान) जीभ, हाथ, पांव, आंख, कान, नाक उदर (पेट), धड़ और देह हैं। जिनमें दंड दिया जा सकता है। दंड देते समय इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि किसी निरपराध को दंड न मिले। वाणी से निन्दा करके, धिक्कार कर, धन का जुर्माना, वध अर्थात् कोड़े मारना या सिर काट देना आदि दंड दिए जाने चाहिए। जिस अंग से अपराध किया जाये उसे काट दें। राजा को न्याय करते समय पिता, आचार्य, मित्र, स्त्री, पुत्र और पुरोहित को भी उनके द्वारा किये गये अपराध का दंड देना चाहिए। यदि राजा भी अपराध करे तो उसे भी दंड मिलना चाहिए। प्रजा की तुलना में राजकर्मचारियों को अधिक दंड मिलना चाहिए। राज्य में जिसका पद जितना ऊंचा हो उसे उतना अधिक दंड देना चाहिए तभी राजकर्मचारी अपराध करने से डरेंगे। जानबूझ कर चोरी करने वाले शूद्र को चोरी से आठ गुणा, वैश्य को सोलह गुणा, क्षत्रिय को बत्तीस गुणा और ब्राह्मण को सौ गुणा या इससे भी अधिक दंड मिलना चाहिए अर्थात जिसका ज्ञान जितना अधिक हो उसे उतना अधिक दंड देना चाहिए। राज्य के अधिकारी या राजा बलात्कार से काम करने वाले डाकुओं को दंड देने में एक क्षण भी देर न करें। जो व्यक्ति साहस से जबरदस्ती करने वाला है वह दुष्ट वचन बोलने वाले, चोरी करने और बिना अपराध से दंड देने वाले से भी बड़ा पापी और दुष्ट है। अगर राजा ऐसे व्यक्ति को दंड नहीं देता तो राज्य में द्वेष बढ़ जाता है और ऐसा राजा शीघ्र नष्ट हो जाता है। मित्रता और अपार धन भी मिले तो भी ऐसे दुःसाहसिक व्यक्ति को दंड दिए बिना ना छोड़े।

धर्म को छोड़कर अधर्म पर चलने वाले गुरु, पुत्र, बालक, ब्राह्मण, शास्त्रों को जानने वाला, पिता या वृद्ध ही क्यों न हों और जो दूसरों को बिना अपराध मारने वाले हों उन्हें बिना विचार किये मार डालना चाहिए। दुष्ट पुरुषों के मारने

वाले को पाप नहीं लगता, चाहे वह प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में मारे, क्योंकि यह क्रोधी को क्रोध से मारना है। जिस राजा के राज्य में चोर, व्यभिचारी, दुष्ट वचन बोलने वाले, बलात्कारी और राजाज्ञा का उल्लंघन करने वाले नहीं होते वही राजा श्रेष्ठ है। जो स्त्री घमंड में आकर अपने पति को छोड़कर व्यभिचार करे उसे कुत्तों से कटवाकर मरवा डालना चाहिए। उसी प्रकार अपनी पत्नी को छोड़कर वेश्यागमन करने वाले पुरुष को अग्नि में तपे हुए लोहे पर सुला के मार डालें। ये दंड बहुत से लोगों के सामने दिया जाये जिससे कोई भी ऐसा कर्म न करे।

प्रश्न : अगर राजा, रानी मुख्य–न्यायधीश या उसकी पत्नी व्यभिचार करें तो उनको दंड कौन देगा? ये लोग किसी दूसरे का दिया दंड क्यों लेंगे?

उत्तर : सभा। उन्हें तो साधारण मनुष्य से भी अधिक दंड मिलना चाहिए। राजा भी एक पुण्यात्मा भाग्यशाली मनुष्य है। यदि उसी को दंड न दिया जाये और वह दंड ग्रहण न करे तो दूसरे मनुष्य दंड को क्यों मानेंगे। यदि राजा को दंड देने की व्यवस्था न हो तो वह अन्याय में डूबकर न्याय धर्म को डुबाकर प्रजासहित स्वयं भी नष्ट हो जायेगा।

प्रश्न : यदि मनुष्य अंग बना नहीं सकता हो तो उसे अंग काटने का दंड नहीं देना चाहिए?

उत्तर : जो इसको कड़ा दंड मानते हैं वे राजनीति को नहीं समझते। एक पुरुष को कठोर दंड देने से दूसरे लोग अपराध करने से डरते हैं इस तरह अपराध रुक जाते हैं लेकिन यदि दंड नरम होगा तो लोग अपराध करने से नहीं डरेंगे और प्रजा का जीवन दुःखमय हो जायेगा। इस तरह बहुत से लोगों को मिलने वाले दंड को यदि जोड़ा जाये तो एक व्यक्ति को दिये जाने वाले दंड से कहीं अधिक होगा। ऐसी अवस्था में दंड कठोर होना ही लाभदायक है।

समुद्र की खाड़ियों, नदी या बड़े नदों में दूरी के अनुसार कर लगाए जायें। महासमुद्र में कर निश्चित नहीं किया जा सकता इसलिए राजा इस प्रकार कर ले जिससे नौकाओं में जाने वालों और राज्य दोनों को लाभ हो। प्राचीन काल में जहाज चलते थे तभी तो दूर–दूर देशों और द्वीपों में नौकाओं के द्वारा व्यापार होता था और समुद्रों में भी उनकी रक्षा का प्रबन्ध किया जाता था। राजा को

thearyasamaj.org

प्रतिदिन राज्य कर्मचारियों के कामों का व्यौरा लेना चाहिए, हाथी घोड़े आदि वाहनों को, आय–व्यय, राजकोष में कीमती पदार्थों और धन की जांच करनी चाहिए। राजा सतर्कता से सभी कार्यों को करता हुआ पापों को छुड़ाकर परमगति मोक्ष सुख को पाता है।

प्रश्न : संस्कृत विद्या में पूरी–पूरी राजनीति है या अधूरी?

उत्तर : पूरी है, क्योंकि आज तक जो भी राजनीति चली, चल रही है या चलेगी वह सब संस्कृत से ही ली गई है। जिन बातों के बारे में प्रत्यक्ष लेख नहीं है वे नियम राजा, पूर्ण विद्वानों की सभा, राजसभा मिलकर बनाती थी जिससे प्रजा धर्म पर चलते हुए सुख से रहती थी।

राजा के लिए उचित है कि बाल–विवाह न होने दे, युवावस्था में भी कोई किसी से बलपूर्वक विवाह न करने पाए, बहुविवाह और व्यभिचार पर रोक लगाए, ब्रह्मचर्य के पालन पर जोर दे जिससे प्रजा का शारीरिक और आत्मिक बल बढ़ें, राज्य में शांति–व्यवस्था बनाए रखने का उचित प्रबन्ध करे क्योंकि व्यवस्था बनाए बिना फूट, लड़ाई–झगड़े, वैर–विरोध से राज्य नष्ट हो जाता है। जैसा बल और बुद्धि का नाशक व्यभिचार और विषयासक्ति है वैसा कोई नहीं है।

जैसा राजा होता है वैसी प्रजा होती है। इसलिए राजा और राजपुरुषों को नियमित और संयमित जीवन व्यतीत कर प्रजा के सामने उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए। धर्म और न्याय पर चलने से ही राज्य की रक्षा होती है और राज्य फलता–फूलता है। यह सम्पूर्ण जगत हम सबके स्वामी उस परमेश्वर का बनाया हुआ है, हम सब उसकी प्रजा या सेवक हैं। इस विचार को धारण करने वाला राजा और उसकी प्रजा धर्ममार्ग को कभी नहीं छोड़ती है।

●●●

thearyasamaj.org

ईश्वर और वेद

7

जिस व्यापक, अविनाशी, सर्वोत्कृष्ट परमेश्वर में सब विद्वान् और पृथ्वी सूर्य आदि लोक स्थित हैं, जो लोग वेदों को पढ़कर और धर्मात्मा योगी होकर उस ब्रह्म को जान लेते हैं, वे उस परमेश्वर में स्थित होकर मुक्ति रूपी परमानन्द को प्राप्त होते हैं। ऋग्वेद में ऐसे मन्त्र आते हैं, जिनका भाव यह है, 'जो सब दिव्य गुण, कर्म, स्वभाव और विद्यायुक्त है जिसमें पृथ्वी, सूर्य आदि लोक स्थित हैं और जो आकाश के समान व्यापक सब देवों का देव परमेश्वर है, उसको जो मनुष्य नहीं जानते, नहीं मानते और न ही उसका ध्यान करते हैं, वे नास्तिक मंदगति सदा दुःखसागर में डूबे रहते हैं। उस परमब्रह्म को जानकर ही सब मनुष्य सुखी होते हैं।

प्रश्न : वेद में ईश्वर अनेक हैं, इस बात को तुम मानते हो या नहीं?

उत्तर : नहीं, वेद में ईश्वर एक है, यह तो लिखा है। ऐसा कहीं नहीं लिखा जिससे यह सिद्ध होता हो कि ईश्वर अनेक हैं।

प्रश्न : वेदों में जो अनेक देवता लिखे हैं, उसका क्या अभिप्राय है?

उत्तर : जिनमें दिव्य गुण होते हैं, वे देवता कहलाते हैं, जैसे पृथ्वी। वेद में इसे ईश्वर या उपासना योग्य नहीं कहा गया है। वेद में स्पष्ट कहा गया है कि जिसमें सब देवता स्थित हैं, वह जानने और उपासना करने योग्य ईश्वर है। परमेश्वर सब देवों का देव होने से महादेव कहलाता है। वही सब जगत की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलयकर्ता, न्यायधीश और अधिष्ठाता (प्रधान) है।

शतपथ में तैंतीस देवता बताए गये हैं जिनमें 8 वसु या गण हैं (पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, सूर्य, चन्द्रमा और नक्षत्र हैं जो सृष्टि के निवास स्थान हैं) 11 रुद्र हैं, (प्राण, अपान, समान, उदान, व्यान, नाग, कूर्म, कृकल, देवदत्त, धनन्जय और जीवात्मा) जो शरीर को छोड़ते समय रुलाते हैं। साल के 12 महीने आदित्य कहलाते हैं (ये पल पल आयु को घटाते हैं), एक इन्द्र (जो

ऐश्वर्य देने वाला है) और एक यज्ञ या प्रजापति है (जिससे वायु, वर्षा, जल व औषधियों की शुद्धि व विद्वानों का सत्कार और अनेक प्रकार की शिल्पविद्याओं से प्रजा का पालन होता है)। शतपथ के 14वें कांड में स्पष्ट लिखा है कि परमेश्वर इन सबसे बड़ा और उनका स्वामी होने के कारण उपासना के योग्य है ।। 1 ।।

हे मनुष्य! जो कुछ इस संसार में जगत है, उसमें व्यापक होकर उसे नियम में चलाने वाला ईश्वर ही है। उससे डरकर तू अन्याय से किसी का धन लेने की इच्छा मत कर। धर्म की न्याय–भावना पर चलते हुए अपनी आत्मा से आनन्द को भोग ।।2।।

ईश्वर सबको उपदेश करता है कि मैं ईश्वर ही पहले होने के कारण इस जगत का स्वामी हूं। मैं अनादि काल से जगत का कारण, सब धनों का दाता और विजय करने वाला हूं। सब जीव मुझे उसी प्रकार पुकारें जैसे सन्तान पिता को पुकारती है। मैं ही संसार के जीवों को सुख देने के लिए अनेक प्रकार के भोजन का प्रबन्ध करता हूं ।।3।।

मैं सूर्य के समान सब जगत का प्रकाशक हूं, मैं न कभी पराजित होता हूं, न मरता हूं। मैं सारे संसार को उत्पन्न करने वाला और सकल ऐश्वर्यों को देने वाला हूं। तुम लोग मुझसे मित्रता रखते हुए विज्ञान आदि धन मांगो ।।4।।

हे मनुष्यो! जो लोग सत्य बोलते हैं, मैं उन्हें ज्ञान आदि धन देता हूं। मैं वेद का प्रकाश करने वाला हूं। इसलिए मैं सत्पुरुषों को वेद का उपदेश देकर उनके ज्ञान को बढ़ाता हूँ और उन्हें यज्ञ करने की प्रेरणा देकर उसका फल प्रदान करता हूं। इस विश्व में जो कुछ होता है उसे करने और धारण करने वाला मैं ही हूं। इसलिए तुम लोग मुझे छोड़कर किसी अन्य की उपासना मत करो।। 5।।

यजुर्वेद में कहा गया है 'हे मनुष्यो! जो सृष्टि के पूर्व सब सूर्य आदि तेजवाले लोकों का उत्पत्ति स्थान, आधार और जो कुछ उत्पन्न हुआ था, है और होगा, उसका स्वामी ईश्वर था, है, और होगा। वह पृथ्वी से लेकर सूर्य लोक तक सृष्टि को बनाकर धारण कर रहा है। उस सुखस्वरूप परमात्मा की ही भक्ति जैसे हम करते हैं वैसे तुम लोग भी करो।

प्रश्न : आप ईश्वर की सिद्धि किस प्रकार करते हो क्योंकि उसमें प्रत्यक्ष प्रमाण कभी नहीं घट सकते?

thearyasamaj.org

उत्तर : हम ईश्वर की सिद्धि प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से करते हैं। न्यायदर्शन में कहा गया है, कानों से, त्वचा से, चक्षु से, जिह्वा से, सूंघने से और मन का शब्द, स्पर्श रूप रस गंध, सुख–दुख, सत्य–असत्य आदि विषयों के साथ सम्बन्ध होने से जो ज्ञान उत्पन्न होता है उसको प्रत्यक्ष कहते हैं। उसमें कोई भ्रम नहीं होना चाहिए। इन्द्रियों और मन से गुण तो प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं, गुणी नहीं। जैसे इन्द्रियों से शब्द, स्पर्श, रूप रस गन्ध आदि गुणों का ज्ञान होने से मन से पृथ्वी को प्रत्यक्ष किया जाता है, वैसे ही इस सृष्टि की रचना आदि का ज्ञान होने से मन से परमेश्वर भी प्रत्यक्ष हो जाता है, जब आत्मा मन को और मन इन्द्रियों को किसी अच्छे–बुरे काम में लगाता है तब उसी क्षण आत्मा के भीतर से बुरे काम करने पर भय, शर्म और अच्छे काम करने पर निडरता, आनन्द और उत्साह के भाव उठने लगते हैं। ये भाव परमात्मा की ओर से जीवात्मा में पैदा किये जाते हैं। जब जीवात्मा शुद्ध होकर परमात्मा का विचार करने लगता है तो उसे दोनों का प्रत्यक्ष हो जाता है। जब परमात्मा का प्रत्यक्ष होता है तो अनुमान से उसका ज्ञान भी हो जाता है। जैसे किसी कार्य को देखकर उसके कारण का अनुमान हो ही जाता है।

प्रश्न : ईश्वर व्यापक है या किसी स्थान विशेष में रहता है?

उत्तर : ईश्वर व्यापक है। जो एक देश में रहता है, उसका प्रभाव उसी देश में होता है हर जगह नहीं। ईश्वर सर्वत्र व्यापक है, इसीलिए वह सर्वान्तर्यामी, सर्वज्ञ, सर्वनिंयता, (सबका संचालक) सबका निर्माता, सबका पालनकर्त्ता और प्रलयकर्त्ता है। उसका प्रभाव सारे ब्रह्मांड में देखा जा सकता है।

प्रश्न : परमेश्वर दयालु और न्यायकारी है या नहीं? दोनों गुण एक–दूसरे के विरुद्ध होने के कारण साथ–साथ कैसे रह सकते हैं?

उत्तर : ईश्वर दयालु और न्यायकारी है। दया और न्याय में नाममात्र भेद हैं। न्याय और दया से एक ही उद्देश्य प्राप्त होता हैं दंड देने का उद्देश्य मनुष्य को अपराध करने से रोकना है ताकि वह दुखों को प्राप्त न हो, यही दया है। जितना अपराध हो उतना ही दंड दिया जाये, यही न्याय है। यदि अपराधी को दंड न दिया जाये तो दया का नाश हो जाता है। एक डाकू को दंड देने से अनेकों मनुष्यों पर दया हो जाती है, यदि उसे छोड़ दिया जाये तो उनके प्रति अन्याय हो जाता है।

प्रश्न : यदि दया और न्याय दोनों का अर्थ एक ही है तो फिर दो शब्दों की क्या आवश्यकता थी, इससे तो यही लगता है कि दोनों का उद्देश्य एक नहीं होता?

उत्तर : संसार में सच्चा–झूठा दोनों सुनाई देता है, परन्तु सच और झूठ का निर्णय करना अपना काम है। ईश्वर की पूर्ण दया तो यह है कि उसने संसार में सुख–दुःख, उनका कम या अधिक होना उसकी न्याय व्यवस्था को प्रकट करता है। वह सबको सुख देने और दुःखों से छुड़ाने की जो इच्छा और प्रयत्न (बाहरी) करता है वही दंड देना और न्याय कहाता है। दोनों का उद्देश्य एक ही है, सबको पाप और दुःख से छुड़ाकर सुखी करना।

प्रश्न : ईश्वर साकार है या निराकार?

उत्तर : निराकार है। साकार व्यापक नहीं होता, उसका गुण, कर्म, स्वभाव और स्थान सीमित होता है। उसे सर्दी–गर्मी, भूख –प्यास और रोग आदि सताते हैं। उसका नाश भी होता है। फिर साकार को बनाने वाला कोई तो होना चाहिए क्योंकि संयोग के बिना साकार उत्पन्न हो ही नहीं सकता। जो संयोग से उत्पन्न ईश्वर निराकार, सर्वव्यापक और सर्वज्ञ है। वह कभी शरीर धारण नहीं करता और न ही मरता है। ईश्वर सब जगत को सूक्ष्म कारणों से स्थूल बना देता है अर्थात सूक्ष्म जीवात्मा का स्थूल शरीर में प्रवेश करा देता है।

प्रश्न : ईश्वर सर्वशक्तिमान है या नहीं?

उत्तर : है। सर्वशक्तिमान शब्द का अर्थ जो चाहे करना नहीं है बल्कि अपने किसी काम में दूसरे की सहायता न लेना है। ईश्वर सृष्टि की उत्पत्ति, पालन, प्रलय और सब जीवों के पुण्य–पाप की यथायोग्य व्यवस्था अपने अनन्त सामर्थ्य से करता है, किसी दूसरे की सहायता नहीं लेता, इसीलिए वह सर्वशक्तिमान है।

प्रश्न : हम तो ऐसा मानते हैं कि ईश्वर जो चाहे कर सकता है?

उत्तर : वह क्या चाहता है? ईश्वर वही चाहता है जो उसका गुण कर्म और स्वभाव है। कोई भी बुरा कार्य करना उसका स्वभाव ही नहीं है, इसीलिए सर्वशक्तिमान का अर्थ जो चाहे कर सकता है, हो ही नहीं सकता।

प्रश्न : परमेश्वर आदि सहित है या अनादि?

उत्तर : अनादि है। जिसका आदि कोई कारण या समय न हो उसे अनादि ही कहते हैं।

thearyasamaj.org

प्रश्न : परमेश्वर क्या चाहता है? उसकी स्तुति, प्रार्थना या उपासना क्यों करनी चाहिए? क्या स्तुति प्रार्थना करने से पाप छूट जाते हैं या कुछ और ही फल मिलता है?

उत्तर : परमेश्वर सबकी भलाई और सबके लिए सुख चाहता है, परन्तु स्वतन्त्रता के साथ। ईश्वर किसी को बिना पाप किए पराधीन नहीं करता। ईश्वर की स्तुति–प्रार्थना अवश्य करनी चाहिए, इससे पाप तो नहीं छूटते, परन्तु ईश्वर में प्रीति बढ़ती है। उसके गुण कर्म स्वभाव से अपने गुण कर्म स्वभाव सुधारने की प्रेरणा मिलती है। प्रार्थना से अभिमान का नाश होता है, उत्साह और ईश्वर की सहायता मिलती है। उपासना से परब्रह्म से मेल और उसका साक्षात्कार होता है।

प्रश्न : स्तुति, प्रार्थना और उपासना स्पष्ट करके समझाइये?

उत्तर : **(1) ईश्वर की स्तुति** : वह सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान, सर्वान्तर्यामी, सर्वोपरि, शुद्ध, सर्वज्ञ परमेश्वर अनन्तकाल से अपनी सनातन (सबसे पुरानी) विद्या वेद द्वारा अपने गुणों का बोध कराता है। मनुष्य ईश्वर के जिस–जिस गुण को ध्यान में रखकर उसकी स्तुति करता है, वह सगुण स्तुति है। ईश्वर न जन्म लेता है, न मरता है, उसमें कोई दोष नहीं है, वह पाप नहीं करता, उसे राग–द्वेष आदि गुणों से पृथक मानकर उसकी स्तुति करना निर्गुण स्तुति है। इसका लाभ यह है कि जीव अपने इष्ट परमेश्वर के गुण–कर्म को देखकर, अपने गुण–कर्म में भी सुधार करने का प्रयत्न करता है। यही ईश्वर की सच्ची स्तुति है। यदि मनुष्य केवल ईश्वर का गुणगान करता है और अपने चरित्र में सुधार नहीं करता तो उसका स्तुति करना व्यर्थ है।

(2) प्रार्थना : ईश्वर की सहायता प्राप्त करने के लिए उससे प्रार्थना की जाती है। यजुर्वेद में अनेक मन्त्रों में प्रार्थनाएँ की गई हैं।

हे प्रकाश स्वरूप परमेश्वर ! आपकी कृपा से, विद्वान, ज्ञानी और योगी जन उपासना करके, जिस बुद्धि को प्राप्त करते हैं, उसी बुद्धि से हम सबको इसी समय युक्त करके बुद्धिमान कीजिए।। 1।।

(यजु. अ. 32 मं. 5)

हे ईश्वर आप प्रकाशस्वरूप हैं, अत्यन्त पराक्रमयुक्त हैं, अत्यन्त बलयुक्त हैं, सामर्थ्ययुक्त हैं, दुष्टों पर क्रोध करने वाले और सहनशील

हैं। मुझ पर कृपा करके आप मुझ में प्रकाश, पूर्ण–पराक्रम, बल और सामर्थ्य भर दें। मुझे दुष्टों पर क्रोध करने और अपनी निन्दा–प्रशंसा सहने वाला बनाइये।। 2।। (यजु अ 19 मं. 9)

हे दयानिधि! मेरा जो मन जागते हुए दूर–दूर जाता और दिव्य गुण युक्त रहता है वह सोते हुए या तो सो जाता है या स्वप्न में दूर–दूर जाने के समान व्यवहार करता है। हे प्रभु! मेरा यह अत्यन्त वेगवान मन शुभ संकल्प वाला हो अर्थात् मेरे मन को शुभ व्यवहार में लगाइये।। 3।।

(यजु अ 34 म. 1 से 6)

हे सर्वान्र्तयामी! जिस मन से धैर्ययुक्त विद्वान लोग यज्ञ और युद्ध आदि में कर्म करते हैं, मेरा वह मन अधर्म को छोड़कर धर्म करने में प्रवृत्त हो जाये। मनुष्यों को चाहिए कि अपने मन को अधर्म से हटाकर, धर्म के आचरण, सुन्दर विचार, विद्या और सत्संग से पवित्र करके ईश्वर की उपासना करें।। 4।।

हे मनुष्यो! जो अन्तःकरण, बुद्धि, चित्त और अहंकार रूप वृत्ति वाला होने से, चार प्रकार से भीतर प्रकाश करने वाला, प्राणियों के सब कर्मों का साधक अविनाशी मन है उसको न्याय और सत्य आचरण में लगाकर अन्याय और अधर्म से दूर कर दो। अतः हे प्रभो! मेरे मन को शुभ गुणों की इच्छा करने वाला और दुष्ट गुणों से पृथक रहने वाला बना दीजिए।। 5।।

हे जगदीश्वर! जिस मन से योगी लोग भूत, वर्तमान और भविष्य के व्यवहारों को जानते हैं, जो मन नाशरहित जीवात्मा को परमात्मा के साथ मिलाकर सब प्रकार से त्रिकालज्ञ बना देता है, जिसमें ज्ञान और क्रिया हे, जो पांच ज्ञानेन्द्रियों, बुद्धि और आत्मा से युक्त रहता है, जो योगरूप यज्ञ को बढ़ाता है, वह मेरा मन योग–विज्ञान युक्त होकर अविद्यादि क्लेशों से दूर रहे।। 6।।

हे परमविद्वान परमेश्वर! आपकी कृपा से जैसे रथ के मध्य धुरी में आरे लगे रहते हैं वैसे ही मेरे मन में चारों वेद प्रतिष्ठित होते हैं और जिसके द्वारा सर्वज्ञ सर्वव्यापी प्रजा का साक्षी चित्त चेतन विदित होता है अर्थात् हमें ईश्वर का ज्ञान होता है वह मेरा मन अविद्या से हट जाये और सदा विद्याप्रिय बना रहे।। 7।।

हे सर्वनियंता ईश्वर! जैसे रस्सी की सहायता से घोड़े अपने नियन्त्रक सारथि को इधर–उधर दौड़ाते हैं वैसे ही मनुष्य का मन उसे इधर–उधर भटकाता है। हृदय में प्रतिष्ठित (विराजमान) गतिमान और अत्यन्त वेगवाला मेरा यह

thearyasamaj.org

मन सब इन्द्रियों को अधर्म से रोक कर, सदैव धर्ममार्ग पर चलाया करे, ऐसी मुझ पर कृपा कीजिए।। 8।।

हे सुखों के दाता, सर्वप्रकाशक, सर्वज्ञ प्रभु! आप हमको अपना सम्पूर्ण ज्ञान प्रदान करके, अधर्म से हटाकर, श्रेष्ठ मार्ग पर चलाइये। हम लोग नम्रतापूर्वक आपकी स्तुति करते हैं, आप हमें पवित्र कीजिए।

(यजु. अ. 40 मं. 16)

हे रुद्र (दुष्टों को रुलाने वाले) आप हमें छोटे–बड़े जन, गर्भ, माता–पिता और प्रिय बन्धुओं का नाश करने के लिए प्रेरित न करें। आप हमें ऐसे मार्ग पर चलायें जिससे हम दंड के भागी न बनें।

(यजु अ. 16 मं. 15)

हे परमगुरु परमात्मन्! आप हमें असत् मार्ग से हटाकर सत्य मार्ग पर चलाइये। अविद्या के अन्धकार को छुड़ाकर विद्यारूपी सूर्य को प्राप्त कराइये और मृत्युरोग को छुड़ाकर आनन्द देने वाले मोक्ष को प्राप्त कराइये। (शतपथ ब्राह्मण 14–3–1–30)

मनुष्य ईश्वर से जिस बात की प्रार्थना करता है उसके लिए उसे स्वयं वैसा प्रयत्न करना चाहिए। जैसे यदि हम सर्वोत्तम बुद्धि की प्राप्ति के लिए परमात्मा से प्रार्थना करते हैं तो उसके लिए जितना प्रयत्न हम कर सकते हैं, उतना प्रयत्न हमें स्वयं करना चाहिए, तभी हमारी प्रार्थना परमेश्वर स्वीकार करेगा। यदि हम हाथ पर हाथ धरे बैठे रहेंगे तो प्रभु हमारी प्रार्थना स्वीकार नहीं करेगा। हमारी प्रार्थना ऐसी होनी चाहिए जिसमें सबके कल्याण की भावना हो। हे प्रभु! आप हमारे शत्रुओं का नाश कर दें या हमारे सभी काम बिना पुरुषार्थ किये स्वयं होते चले जायें, ऐसी प्रार्थना कभी नहीं करनी चाहिए। ऐसी प्रार्थना ईश्वर स्वीकार नहीं करता और बिना पुरुषार्थ किए ईश्वर के भरोसे बैठे रहने से मनुष्य आलसी और निकम्मा हो जाता है। ईश्वर कल्याणकारी प्रार्थना ही स्वीकार करता है, विनाशकारी नहीं।

प्रकृति की प्रत्येक वस्तु क्रियाशील है, परमेश्वर स्वयं सदैव सक्रिय रहता है इसीलिए वह मनुष्यों को आज्ञा देता है कि मनुष्य सौ वर्ष तक कार्य करते हुए जीने की इच्छा करे, आलसी कभी न हो। पृथ्वी, सूर्य, चांद, वृक्ष, पशु–पक्षी आदि सदैव क्रियाशील रहते हैं, इसी प्रकार मनुष्यों को भी कर्म करते रहना

thearyasamaj.org

चाहिए। जैसे एक पुरुषार्थ करते हुए पुरुष की सहायता दूसरा व्यक्ति कर देता है वैसे ही धर्म से पुरुषार्थी मनुष्य की सहायता ईश्वर भी करता है। लेकिन जो मनुष्य स्वयं कार्य नहीं करता उसके सेवक भी काम से जी चुराते हैं और उचित ढंग से काम नहीं करते।

उपासना का आरम्भ करने के लिए यह आवश्यक है कि मनुष्य किसी से वैर न रखे, सबसे प्रेमपूर्वक व्यवहार करे। सत्य बोले, झूठ कभी न बोले, चोरी न करे, छल–कपट न करे, अभिमान न करे और अपनी इन्द्रियों पर नियन्त्रण रखे। इन बातों का अभ्यास करके ही मनुष्य उपासना करने के योग्य बन सकता है। संक्षेप में कहा जा सकता है कि यम–नियमों का पालन किए बिना उपासना करना असंभव है। जो जीव उपासना करना चाहे, उसे एकान्त और पवित्र स्थान में जाकर आसन लगाकर, प्राणायाम के द्वारा अपनी इन्द्रियों को रोककर, मन को नाभि, हृदय, कंठ, नेत्र या पीठ के मध्य में से किसी स्थान पर स्थिर करके अपनी आत्मा और परमात्मा का विवेचन (सोच विचारकर निर्णय करना) करके परमात्मा में मग्न होकर संयमी होना चाहिए। इन साधनों के करने से जीव की आत्मा और अन्तःकरण पवित्र और सत्य को जानने में समर्थ हो जाता है और नित्यप्रति ज्ञान–विज्ञान बढ़ाकर वह मुक्ति तक पहुंच जाता है, जो आठ पहर में एक घड़ी भर भी इस प्रकार ध्यान करता है वह सदा उन्नति की ओर बढ़ता जाता है। जब मनुष्य ईश्वर की उपासना, उसके सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक आदि गुणों के साथ करता है तो यह उपासना सगुण कहलाती है और जब उस ईश्वर को रागद्वेष, रूप, रस, गन्ध, स्पर्श आदि से पृथक मानकर करता है तब वह निर्गुण उपासना कहाती है।

स्तुति, प्रार्थना और उपासना का फल भी जीव को अवश्य मिलता है। जिस प्रकार अग्नि के पास बैठने से सर्दी दूर हो जाती है, वैसे ही परमेश्वर के निकट बैठने से जीव के सब दुःख दूर हो जाते हैं और उसके गुण कर्म स्वभाव पवित्र हो जाते हैं। इतना ही नहीं उसकी आत्मा इतनी बलवान हो जाती है कि वह बड़े से बड़ा कष्ट आने पर भी नहीं घबराता और सहन कर लेता है। जिस परमात्मा ने हमें जीवन में सुख–भोग के लिए सब पदार्थ दिए हैं उसको भूल जाना या न मानना कृतघ्नता और मूर्खता ही है। अतः हमें ईश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना अवश्य करनी चाहिए।

प्रश्न : जब परमेश्वर के नाक–कान–नेत्र आदि इन्द्रियां नहीं हैं, फिर वह इन्द्रियों से किए जाने वाले काम कैसे कर सकता है?

उत्तर : ईश्वर सर्वव्यापक और वेगवान है, नित्य और श्रेष्ठ है इसलिए वह इन्द्रियों के बिना ही सब काम अपने सामर्थ्य से करता है।

प्रश्न : उसको बहुत से मनुष्य निष्क्रिय और निर्गुण कहते हैं?

उत्तर : परमात्मा के समान या उससे बढ़कर कोई नहीं है। परमात्मा वह सर्वोच्च शक्ति है जिसमें अनन्त बल है, अनन्त ज्ञान है और उसकी क्रियायें अनन्त हैं। वह चेतन होने के कारण सदा क्रियाशील रहता है यदि वह निष्क्रिय होता तो जगत की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय न कर सकता। परमात्मा के गुण अनन्त हैं इसलिए वह निर्गुण नहीं, निराकार है।

प्रश्न : जब वह क्रिया करता है तब तो उसकी क्रिया का अंत भी होता होगा?

उत्तर : परमात्मा विद्वान है, वह उतनी ही क्रिया करता है जितनी उचित समझता है, न अधिक न कम।

प्रश्न : परमेश्वर अपना अंत जानता है या नहीं?

उत्तर : परमेश्वर अनन्त है इसलिए उसके अन्त का प्रश्न ही पैदा नहीं होता। यथार्थ (असल) ज्ञान उसे कहते हैं, जो वस्तु जैसी है, उसे वैसी ही जानो। जिस पदार्थ का जैसा गुण–कर्म–स्वभाव हो उसको वैसा ही जानना, यही तो ज्ञान और विज्ञान कहलाता है। जो अविद्या आदि क्लेश, कुशल–अकुशल, इष्ट–अनिष्ट और मिश्रित फल देने वाले कर्मों की वासना से रहित है, वह सब जीवों से श्रेष्ठ ईश्वर कहाता है।

प्रश्न : चेतन एक है या अनेक?

उत्तर : सृष्टि के आदि में ईश्वर, जीव और प्रकृति ये तीन ही तत्व थे। इनमें से ईश्वर और जीव चेतन हैं और प्रकृति जड़ है। ईश्वर चेतन है और एक ही है लेकिन जीव के रूप में चेतन अनेक हैं।

प्रश्न : प्रत्यक्ष से ईश्वर की सिद्धि नहीं होती और न ही प्रमाण, अनुमान आदि घट सकते हैं और सम्बन्धों के अभाव में अनुमान और शब्द प्रमाण भी न घटने से ईश्वर की सिद्धि नहीं हो सकती?

उत्तर : यहां ईश्वर की सिद्धि में प्रत्यक्ष प्रमाण नहीं है और न ही ईश्वर जगत का उपादान कारण है (वह कारण जो स्वयं कार्य का रूप धारण कर

thearyasamaj.org

ले)। सर्वत्र पूर्ण होने से परमात्मा का नाम पुरुष है और शरीर में रहने के कारण जीव का नाम भी पुरुष है। जैसे सूक्ष्म जीव प्रकृति के साथ मिलकर स्थूल शरीर धारण कर लेता है, उसी प्रकार अगर ईश्वर पूर्ण न होता तो वह भी स्थूल शरीर धारण कर लेता। इसलिए परमेश्वर इस जगत का उपादान कारण नहीं है बल्कि निमित्त कारण है (वह कारण जो स्वयं सामने तो नहीं आता परन्तु करने वाला वही होता है)

श्वेताश्वर उपनिषद् में कहा गया है कि प्रकृति के सत्, रज और तम ये तीन तत्व जब जीव के साथ मिलकर अलग–अलग रूप धारण कर लेते हैं तब अनेक प्रकार के जीवों की रचना होती है। प्रकृति के परिणामी होने से उसकी अवस्था बदल जाती है लेकिन ईश्वर के परिणामी (परिवर्तनशील) न होने के कारण उसकी अवस्था कभी नहीं बदलती। प्रकृति सृष्टि में सविकार और प्रलय में निर्विकार है। ईश्वर की रची हुई विविधतापूर्ण यह सृष्टि ही उसकी सत्ता का प्रमाण है, इसलिए ईश्वर की सिद्धि के लिए किसी दूसरे प्रमाण की आवश्यकता ही नहीं है।

प्रश्न : ईश्वर अवतार लेता है या नहीं?

उत्तर : नहीं। जो ईश्वर अपने सामर्थ्य से सबकुछ कर सकता है, उसे जन्म लेकर सीमा में बन्धने की क्या आवश्यकता है।

प्रश्न : गीता में कहा गया है कि 'जब–जब धर्म की हानि होती है तब–तब मैं शरीर धारण करता हूँ?

उत्तर : यह बात वेद विरुद्ध है। श्री कृष्ण धर्मात्मा होने के कारण धर्म की रक्षा करना चाहते थे इसलिए उन्होंने यह कामना की होगी कि मैं हर युग में जन्म लेकर श्रेष्ठों की रक्षा और दुष्टों का नाश करूं। तो ऐसा करने में कोई दोष नहीं है, लेकिन गीता के इस श्लोक से यह सिद्ध नहीं होता कि श्री कृष्ण ईश्वर हैं। सत्पुरुषों का तन–मन–धन सब कुछ परोपकार के लिए ही होता है अतः श्री कृष्ण युग–पुरुष थे।

प्रश्न : संसार में ईश्वर के 24 अवतार होते हैं, इन्हें अवतार क्यों मानते हैं?

उत्तर : अविद्वान लोग ही वेदों के अर्थ ठीक न जानने और लोगों को बहकाने के लिए ऐसी बाते करते हैं, इनमें कुछ भी सच्चाई नहीं है।

प्रश्न : जो ईश्वर अवतार न लेता तो कंस–रावण आदि दुष्टों का नाश कैसे होता?

उत्तर : संसार का यह नियम है कि जो पैदा होगा वह मरेगा भी, इसलिए कंस–रावण आदि का नाश भी होना ही था। जो ईश्वर घट–घट वासी है वह कंस–रावण आदि में भी रहा होगा, तो क्या ईश्वर स्वयं अपने आपको मारेगा। जो ईश्वर बिना शरीर धारण किए जगत की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय करता है उसे इतने छोटे से काम के लिए अवतार लेकर जन्म–मरण के बन्धन में बन्धने की क्या आवश्यकता है। ईश्वर को भक्तों के उद्धार के लिए भी जन्म लेने की जरूरत नहीं होती क्योंकि जो भक्तजन ईश्वर की आज्ञा के अनुकूल चलते हैं, उनका उद्धार करने की सामर्थ्य ईश्वर में है। यदि हम ईश्वर के कर्मो पर विचार करें तो यही कहेंगे कि ईश्वर के समान न पहले कोई था, न है और न ही होगा। जैसे यह कहना सच नहीं हो सकता कि किसी ने अनन्त आकाश को मुट्ठी में पकड़ लिया, वैसे ही ईश्वर का अवतार लेना भी सच नहीं हो सकता। जिनको भी अवतार कहा जाता है उनमें राग–द्वेष, भूख–प्यास, भयशोक, सुख–दुःख, जन्म–मरण आदि गुण होने के कारण वे सब मनुष्य ही थे।

प्रश्न : ईश्वर अपने भक्तों के पाप क्षमा करता है या नहीं?

उत्तर : नहीं! ईश्वर सब जीवों को उनके कर्मों के अनुसार ही फल देता है, वह किसी से पक्षपात नहीं करता। यदि ईश्वर पाप क्षमा कर दे तब तो कोई भी बड़े से बड़ा पाप करने से नहीं डरेगा। ईश्वर का काम न्याय करना है, क्षमा करना नहीं।

प्रश्न : जीव स्वतन्त्र है या परतन्त्र?

उत्तर : जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है परन्तु फल पाने में परतन्त्र अर्थात ईश्वर के आधीन है। कर्म करने वाला होने के कारण जीव को अपने कर्म का फल भोगना ही पड़ता है।

प्रश्न : स्वतन्त्र किसको कहते हैं?

उत्तर : जिसके शरीर, प्राण, इन्द्रियां और अन्तःकरण (मन) उसके अपने अधीन हों। जो कार्य अपने आप किया जाता है उसका फल कार्य करने वाले को स्वयं भुगतना पड़ता है। जो कार्य किसी दूसरे की आज्ञा पर किया जाये,

thearyasamaj.org

उसका फल आज्ञा देने वाले को मिलता है, करने वाले को नहीं। जैसे कोई व्यक्ति किसी शस्त्र से किसी जीव को मार देता है तो दंड मारने वाले को दिया जाता है शस्त्र को नहीं। इसीलिए ईश्वर ने जीव को कर्म करने के लिए स्वतन्त्र रखा है ताकि वह अपनी बुद्धि से सोच–समझ कर कर्म करे और उसे बुरे कर्मों का फल न भोगना पड़े।

प्रश्न : यदि परमेश्वर जीव को न बनाता और सामर्थ्य न देता, तो जीव कुछ भी न कर सकता। इसलिए जीव सब काम परमेश्वर की प्रेरणा से ही करता है फिर जीव को उसका फल क्यों मिलता है?

उत्तर : सृष्टि के तीन पदार्थ (ईश्वर, जीव और प्रकृति) नित्य हैं, इनका नाश नहीं होता। ईश्वर ने प्रकृति के तत्वों से जीव के शरीर का ढांचा बनाया है परन्तु उसमें जो जीव आता है इन्द्रियां उसी के अधीन काम करती हैं। इसलिए कर्मफल जीव ही भोगता है, ईश्वर नहीं। जैसे लुहार लोहे से तलवार बनाता है लेकिन यदि कोई उस तलवार से किसी का वध कर देता है तो दंड वध करने वाले को ही दिया जाता है, लोहे या लुहार को नहीं। यदि ईश्वर ही जीव से कर्म करवाता तो कोई जीव पाप नहीं करता क्योंकि जो ईश्वर स्वयं शुद्ध और पवित्र है, वह किसी को गलत कार्य करने की प्रेरणा कभी नहीं देगा। जीव अपने मन, बुद्धि और इन्द्रियों की प्रेरणा से काम करता है और उनके फल भोगता है।

प्रश्न : जीव और ईश्वर का स्वरूप, गुण, कर्म और स्वभाव कैसा है?

उत्तर : ईश्वर और जीव दोनों चेतन हैं। दोनों का स्वभाव पवित्र, अविनाशी और धार्मिकता आदि हैं। इतनी समानता होते हुए भी दोनों एक दूसरे से भिन्न हैं। ईश्वर सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय सबको नियम में रखना, सब जीवों को उनके पाप–पुण्य के फल देना आदि धर्मयुक्त कार्य करता है, उसकी शक्ति असीमित है। जीव सन्तान उत्पन्न करना, उसका पालन, शिल्पविद्या आदि अच्छे–बुरे कर्म करता है, उसकी शक्तियां सीमित हैं। ईश्वर के नित्य–ज्ञान, आनन्द, अनन्तबल आदि गुण हैं लेकिन जीव में श्वास लेना, छोड़ना, आंखें खोलना और बन्द करना, इन्द्रियों को चलाना, रागद्वेष, सुख–दुःख, हर्ष–शोक, भूख–प्यास आदि गुण होने के कारण वह ईश्वर से अलग है। आत्मा या जीव जब तक शरीर में रहता है तब तक उसके गुण प्रकट होते रहते हैं लेकिन जब जीव शरीर छोड़ देता है तब ये गुण शरीर में नहीं रहते। जीव के गुण

thearyasamaj.org

शरीर धारण करने से ही प्रकट होते हैं, ईश्वर के गुण स्वतः (अपने आप) प्रकट होते हैं। जीव और परमात्मा का भेद गुणों द्वारा ही किया जा सकता है।

प्रश्न : ईश्वर त्रिकालदर्शी है, वह जैसा निश्चय करेगा, जीव वैसा ही करेगा। ईश्वर अपने ज्ञान से जैसा निश्चित करता है वैसा ही जीव कर्म करता है इसलिए जीव स्वतन्त्र नहीं है। इसलिए ईश्वर को जीव को कर्मों का दंड नहीं देना चाहिए।

उत्तर : परमेश्वर का ज्ञान सदा एकरस, अखंडित और वर्तमान रहता है इसलिए उसे त्रिकालदर्शी कहना मूर्खता है। भूत, भविष्य, वर्तमान तो जीवों के लिए हैं, ईश्वर के लिए नहीं। जीव स्वतन्त्र होने के कारण जैसा कर्म करता है, ईश्वर सर्वज्ञ होने से वैसा ही जानता है। जीव वर्तमान समय में कर्म करने में स्वतन्त्र होता है तो ईश्वर उसके भूत, वर्तमान और भविष्य के कर्मों का फल देने में स्वतन्त्र है। ईश्वर का जैसा कर्म का ज्ञान अनादि है, वैसा ही दंड देने का ज्ञान भी अनादि है। उसके दोनों ज्ञान सत्य होने के कारण इसमें कोई भी दोष नहीं आता।

प्रश्न : जीव शरीर में भिन्न विभु है या परिच्छिन्न?

उत्तर : परिच्छिन्न (सीमित या बंटा हुआ)। जीव अगर विभु (सर्वव्यापक प्रभु) होता तो जागना, सोना, स्वप्न अवस्था, जन्म–मरण, संयोग–वियोग और आना–जाना कभी न होता। शरीर में जीव का स्वरूप सूक्ष्म और अल्पज्ञ है लेकिन परमेश्वर तो सूक्ष्म से भी सूक्ष्म, अनन्त, सर्वज्ञ और सर्वव्यापक है। इसलिए जीव और ईश्वर का सम्बन्ध व्याप्य–व्यापक का है अर्थात ईश्वर व्यापक है और सब जीवों और पदार्थो में व्याप्त (रम रहा) है।

प्रश्न : जहां एक वस्तु होती है वहां दूसरी वस्तु नहीं रह सकती, जैसे एक म्यान में दो तलवारें नहीं रहती। इसलिए जीव और ईश्वर का संयोग सम्बन्ध हो सकता है, व्यापक नहीं?

उत्तर : यह नियम समान आकार वाले पदार्थों पर लागू होता है, असमान आकार वालों पर नहीं। जैसे लोहा स्थूल है और अग्नि सूक्ष्म। लोहे में अग्नि व्यापक होकर दोनों एक ही स्थान में रहते हैं। जीव परमेश्वर से स्थूल है और परमेश्वर जीव से सूक्ष्म होने के कारण उसमें व्याप्त है इसलिए दोनों एक ही स्थान में रहते हैं। परमेश्वर व्यापक है और जीव व्याप्य है इसलिए जीव और ईश्वर का सम्बन्ध व्याप्य और व्यापक, सेवक और स्वामी, प्रजा और राजा, पुत्र और पिता जैसा है।

thearyasamaj.org

प्रश्न : ब्रह्म और जीव अलग–अलग हैं या एक?

उत्तर : अलग–अलग

प्रश्न : यदि अलग–अलग है तो वेदों में दिए गये इन महावाक्यों का क्या अर्थ है।

(1) ब्रह्म ज्ञानस्वरूप है (2) मैं ब्रह्म हूं (3) जो तुम हो वह मैं हूं (4) ब्रह्म और मैं एक हूं?

उत्तर : ये वेदवाक्य नहीं है। वे ब्राह्मणग्रन्थों या उपनिषदों में पाये जाते हैं इसलिए सत्य शास्त्रों में इन्हें कहीं भी महावाक्य नहीं कहा गया है फिर भी इनका भाव इस प्रकार है। (1) ईश्वर विशेष ज्ञान का भंडार है (2) मचान पुकारते हैं जब यह कहा जाता है तो इसका अभिप्राय यह होता है कि मचान पर स्थित मनुष्य पुकारते हैं क्योंकि मचान जड़ होने के कारण नहीं पुकारता। वैसे ही ब्रह्म सब पदार्थों में समाया हुआ है लेकिन गुणों की समानता के कारण जीव ब्रह्म के सबसे अधिक निकट है (3) जीव को ब्रह्म का ज्ञान है और मुक्ति में जीव का ब्रह्म से साक्षात सम्बन्ध होता है इसलिए जीव ब्रह्म का सहचारी है (4) जिनका आपस में घनिष्ठ सम्बन्ध होता है वे प्रायः यह कह देते हैं कि मैं और यह एक ही हैं। जीव जब समाधि अवस्था में परमेश्वर के प्रेम में डूब जाता है तो उसे ईश्वर अपने से अलग नहीं लगता। परमेश्वर के गुण कर्म स्वभाव के अनुसार जब जीव के गुण कर्म स्वभाव हो जाते हैं तो समान धर्म होने के कारण जीव ब्रह्म के साथ एकता कह सकता है।

प्रश्न : तत् (ब्रह्म) त्वं (जीव) असि (है) और त्वं (तू) तत् (वह ब्रह्म) असि (है) इसका अर्थ कैसे करोगे?

उत्तर : तुम 'तत' शब्द से क्या अर्थ लेते हो?

प्रश्न : ब्रह्म।

उत्तर : ब्रह्म शब्द तुम कहां से लाए हो?

प्रश्न : छान्दोग्य उपनिषद् के इस वाक्य से 'सोम्येदमग्र आसीदेक मेवा द्वितीयम'।

उत्तर : तुमने इस उपनिषद् को देखा ही नहीं उसमें 'ब्रह्म' नहीं 'वाहं' शब्द लिखा है।

प्रश्न : तो आप 'तत' शब्द से क्या अर्थ लेते हो?

thearyasamaj.org

उत्तर : छान्दोग्य उपनिषद् में ही कहा गया है कि वह परमात्मा जानने योग्य है। जो यह अत्यन्त सूक्ष्म और इस सब जगत और जीव का आत्मा है, वहीं सत्यस्वरूप और अपना आत्मा आप ही है। तू (जीव) उस अन्तर्यामी परमात्मा से युक्त है। वृह्दारण्यक में महर्षि याज्ञवल्क्य अपनी पत्नी मैत्रेयी से कहते हैं "जो परमेश्वर आत्मा (जीव) में स्थित और जीवात्मा से भिन्न है, जिसको मूढ़ जीवात्मा नहीं जानता कि वह परमेश्वर मुझमें व्यापक है। जैसे शरीर में जीव रहता है वैसे ही जीव में परमेश्वर व्यापक है। वह जीवात्मा से अलग रहता हुआ जीवों के पाप–पुण्य को देखकर उनके कर्मफल देकर उन्हें नियम में रखता है। वही अविनाशी स्वरूप तेरे भीतर व्यापक है, तू उसको जान।" इससे स्पष्ट हो जाता है कि जब योगी को समाधि अवस्था में परमेश्वर का दर्शन होता है। तब वह कहता है कि यह जो ब्रह्म मेरे में व्यापक है वही ब्रह्म सब जगह व्यापक है। वास्तव में जीव और ब्रह्म एक नहीं हैं।

प्रश्न : परमेश्वर कहता है कि मैं जगत और शरीर को रचकर जगत में व्यापक और जीवरूप होकर शरीर में प्रविष्ट होता हूं। (1) परमेश्वर ने उस जगत और शरीर को बनाया और वही उसमें प्रविष्ट हुआ (2) इन श्रुतियों का कोई दूसरा अर्थ कैसे करोगे?

उत्तर : तुम्हें व्याकरण का ज्ञान न होने के काण तुमने ऐसे अर्थ निकाले हैं। परमेश्वर शरीर में प्रविष्ट हुए जीवों में बाद में प्रवेश करके वेद द्वारा सब नाम रूप आदि (जगत् के पदार्थों) की विद्या को प्रकट करता है। ईश्वर शरीर में जीव को प्रवेश कराने के बाद जीव के भीतर प्रवेश करता है। 'अनु' शब्द का अर्थ न जानने के कारण तुमने ऐसा अर्थ किया है।

प्रश्न : जिस देवदत्त को मैंने ग्रीष्मऋतु में काशी में देखा था उसी को वर्षाऋतु में मथुरा में देखा। जैसे इसमें केवल शरीर को देखकर देवदत्त मान लिया वैसे ही ईश्वर और जीव दोनों चेतन होने के कारण एक ही दिखाई देते हैं। यदि कुछ गुण छोड़ दिए जायें और केवल कुछ ले लिए जायें तो भ्रमवश एक ही वस्तु अपने वास्तविक रूप से कुछ अलग दिखाई देने लगती है। यहां आप क्या कहेंगे?

उत्तर : पहले यह बताओ कि तुम जीव और ईश्वर को नित्य मानते हो या अनित्य?

प्रश्न : हम वेदान्ती, जीव, ईश्वर, ब्रह्म, जीव और ईश्वर का विशेष

thearyasamaj.org

भेद, अविद्या–अज्ञान, अविद्या और चेतन का योग इन छः पदार्थों को अनादि (सदा से चले आने वाले) मानते हैं परन्तु इनमें से एक ब्रह्म अनादि, अनन्त और नित्य है शेष पांच अनित्य हैं। यह तब तक रहते हैं जब तक अज्ञान रहता है। ज्ञान होने के पश्चात् नाश हो जाने के कारण ये अनादि होते हुए भी नाशवान कहाते हैं?

उत्तर : तुम जिन दो श्लोकों के आधार पर यह सब कह रहे हो वे दोनों श्लोक अशुद्ध हैं। इनके अनुसार अविद्या के योग के बिना जीव सिद्ध नहीं होता और माया के योग के बिना ईश्वर सिद्ध नहीं होता। तुम्हारे छठे पदार्थ अविद्या और चेतन को गिनना व्यर्थ है क्योंकि वह अविद्या, माया, जीव और ईश्वर में शामिल हो गया है। ब्रह्म, माया और अविद्या के योग के बिना ईश्वर नहीं बनता इसलिए ईश्वर को अविद्या और ब्रह्म से अलग गिनना व्यर्थ है। इसलिए तुम्हारे मत में दो ही पदार्थ 'ब्रह्म' और अविद्या' सिद्ध हो सकते हैं, छः नहीं। कार्य और कारण के सम्बन्ध से तुम जीव और ईश्वर का एक होना तभी सिद्ध कर सकते तो जब अनन्त, नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त स्वभाव, सर्वव्यापक ब्रह्म में अज्ञान सिद्ध कर दो। यदि तुम एक देश या स्थान में ब्रह्म के अज्ञान को मानते हो तो ब्रह्म सर्वव्यापक और सर्वत्र नहीं हो सकता और ब्रह्म छिपा हुआ होने के कारण इधर–उधर आता–जाता रहेगा। इस तरह जहां–जहां जायेगा वहां का ब्रह्म अज्ञानी और जहां–जहां से चला जायेगा वहां–वहां का ब्रह्म ज्ञानी होता रहेगा और तुम किसी भी देश के ब्रह्म को अनादि, शुद्ध और ज्ञानयुक्त नहीं कह सकोगे। जो ब्रह्म अज्ञान की सीमा में है, वह अज्ञान को ही जानेगा, ज्ञान को नहीं। इस प्रकार ब्रह्म को अखंड नहीं कहा जा सकेगा। ब्रह्म अखंड है इसलिए अज्ञानी नहीं है, ज्ञानी है। ब्रह्म का किसी वस्तु के साथ समूह सम्बन्ध न होने के कारण वह नित्य है। जैसे शरीर के एक भाग में फोड़ा होने से सारे शरीर को पीड़ा पहुंचती है वैसे ही एक देश में अज्ञान और सुख–दुःख होने से ब्रह्म पर भी उसका प्रभाव होगा और तुम ब्रह्म को शुद्ध न कह सकोगे। यदि अन्तःकरण में पैदा हुए भ्रम के कारण तुम ब्रह्म को जीव मानोगे तो यह प्रश्न उठेगा कि ब्रह्म व्यापक है या एकदेशीय? क्या अन्तःकरण चलता–फिरता है और उसके साथ ब्रह्म भी चलता फिरता है या नहीं?

यदि तुम यह कहते हो कि ब्रह्म एकदेशीय होते हुए भी पृथक–पृथक है। अन्तःकरण तो चलता–फिरता है पर ब्रह्म स्थिर रहता है। इसका मतलब तो

यह हुआ, ब्रह्म के स्थिर रहने के कारण अन्तःकरण के साथ ब्रह्म नहीं जाता। तब तो अन्तःकरण जिस–जिस देश को छोड़ता होगा, वहां का ब्रह्म ज्ञानी हो जाता होगा और जहां–जहां जाता होगा वहां का ब्रह्म अज्ञानी हो जाता होगा। इस तरह तो ब्रह्म क्षण में ज्ञानी और क्षण में अज्ञानी होता रहेगा और जीव को कुछ भी स्मरण नहीं रहेगा। अगर तुम यह कहते हो कि ब्रह्म एक है तब तो ब्रह्म सर्वज्ञ है, यही सिद्ध होगा। यदि तुम कहते हो कि अन्तःकरण भिन्न–भिन्न है और उनमें ब्रह्म भी भिन्न–भिन्न है जाता होगा, तब तो ब्रह्म जड़ माना जायेगा, उसमें कोई ज्ञान नहीं हो सकता। यदि तुम यह मानते हो कि ज्ञान अन्तःकरण और ब्रह्म को नहीं बल्कि अन्तःकरण में स्थित चिदाभास को अर्थात मन पर या जीवात्मा पर पड़ने वाली परब्रह्म की छाया को होता है तो भी इसका मतलब यह हुआ कि मन के द्वारा उस चेतन (जीव) को ही ज्ञान हुआ जो नेत्रों से दिखाई नहीं देता। तुम किसी भी कारण और कार्य के सम्बन्ध से ब्रह्म, जीव और ईश्वर नहीं बना सकोगे। ब्रह्म का ही नाम ईश्वर है और जो ब्रह्म से भिन्न होते हुए भी अनादि, कभी जन्म न लेने और कभी न मरने वाला चेतन है उसी का नाम जीव है। यदि तुम कहो कि चिदाभास का नाम ही जीव है तब तो वह शरीर और अन्तःकरण के साथ ही नष्ट हो जायेगा, फिर मोक्ष का सुख कौन भोगेगा? इसलिए ब्रह्म कभी जीव और जीव कभी ब्रह्म न हुआ है और न ही होगा।

प्रश्न : हमारे मत में ब्रह्म से पृथक कोई सजातीय, विजातीय और स्वगत अवयवों (अंग या भाग) के भेद न होने से एक ब्रह्म ही सिद्ध होता है। जब जीव दूसरा है तो अद्वैत सिद्धि कैसे हो सकती है?

उत्तर : यदि आप विशेष्य और विशेषण विद्या का ज्ञान प्राप्त कर लोगे तो यह भ्रम दूर हो जायेगा। विशेषण प्रवर्तक या संचालक और प्रकाशक भी होता है। इस प्रकार 'अद्वैत' ब्रह्म का विशेषण है, जो उसे जीव से पृथक करता है। ब्रह्म एक है, दूसरा नहीं, अनेक जीव ब्रह्म से पृथक हैं। जैसे अद्वितीय शूरवीर का अर्थ है, उसके समान वीर कोई नहीं है, उससे कम तो हो सकता है। वैसे ही ब्रह्म सदा एक है और जीव तथा प्रकृति के तत्व अनेक हैं। परन्तु इनमें से कोई भी ब्रह्म के समान नहीं है। इससे अद्वैत सिद्धि में कोई कठिनाई नहीं होती।

प्रश्न : ब्रह्म के सत–चित्त–आनन्द और जीव के अस्ति (सत्ता) भाति

(चमक, दीप्ति) और प्रिय–रूप में एकता होती है, फिर खंडन क्यों करते हो?

उत्तर : थोड़े से समान गुण होने से ही एकता नहीं हो सकती। जैसे पृथ्वी, जल, अग्नि आदि जड़ पदार्थ हैं लेकिन इनके स्वभाव अलग–अलग होने के कारण इन्हें एक तो नहीं माना जा सकता। मनुष्य और चींटी दोनों आंख से देखते, मुंह से खाते और पांव से चलते हैं फिर भी अनेक भेद होने के कारण दोनों अलग–अलग हैं।

इसी प्रकार ब्रह्म और जीव दोनों चेतन होते हुए भी, एक नहीं हैं क्योंकि ब्रह्म सर्वत्र, सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है जबकि जीव अल्पज्ञ, अल्प बलवाला और पदार्थ या आकार में सीमित है। दोनों सूक्ष्म हैं लेकिन ब्रह्म जीव से कहीं अधिक सूक्ष्म है।

प्रश्न : वृहदारण्यक उपनिषद् में कहा गया है 'जो ब्रह्म और जीव में थोड़ा सा भी भेद करता है, उसको भय प्राप्त होता है, क्योंकि दूसरे से ही भय होता है?

उत्तर : भय वहां होता है जहां विरोध होता है। जीव का ब्रह्म से कोई विरोध नहीं है बल्कि घनिष्ठ सम्बन्ध है। जब तक जीव ईश्वर के नियम में रहकर शुभ कर्म करता है तब तक उसे भय नहीं सताता, परन्तु जब ईश्वर के नियम के विरुद्ध चलकर पापकर्म करता है तो भयभीत होता है। जब किसी प्रकार का विरोध न हो तब एकता होती है और भय नहीं रहता। विरोध न रहने से सुख और विरोध रहने पर दुःख प्राप्त होता है।

प्रश्न : ब्रह्म और जीव में सदा एकता और अनेकता रहती है। क्या कभी दोनों मिलकर एक होते हैं या नहीं?

उत्तर : ब्रह्म के व्यापक होने से जीव और पृथ्वी आदि पदार्थ उससे अलग नहीं रहते लेकिन उनका स्वरूप अलग–अलग रहता है। जैसे घर बनाने में प्रयोग किये जाने वाले मिट्टी, लकड़ी, लोहा आदि पदार्थ आकाश में ही रहते हैं और घर बन जाने पर भी आकाश में ही रहते हैं। घर बनने से पहले, घर बनने पर, घर नष्ट हो जाने पर तीनों अवस्थाओं में ये पदार्थ आकाश में ही रहे, कभी आकाश से अलग नहीं हुए। इसी प्रकार जीव और संसार के सभी पदार्थ परमेश्वर में व्याप्य होने के कारण परमात्मा से तीनों कालों में भिन्न हैं और स्वरूप से भिन्न होने के कारण कभी एक नहीं हो सकते।

thearyasamaj.org

प्रश्न : परमेश्वर सगुण है या निर्गुण?

उत्तर : सगुण भी है और निर्गुण भी।

प्रश्न : एक ही पदार्थ में सगुणता और निर्गुणता कैसे रह सकती है? जबकि एक म्यान में दो तलवारें नहीं रह सकतीं?

उत्तर : जैसे जड़ के रूप आदि गुण हैं लेकिन चेतन में पाए जाने वाले ज्ञान आदि गुण जड़ में नहीं हैं, वैसे ही चेतन में इच्छा आदि गुण तो हैं लेकिन जड़ में पाये जाने वाले रूप आदि गुण चेतन में नहीं हैं। शरीर जड़ है, आत्मा चेतन है। शरीर के गुण आत्मा में और आत्मा के गुण शरीर में नहीं हैं। जिसके अपने स्वाभाविक गुण होते हैं वह सगुण और जिसमें विरोधी के गुण नहीं होते वे निर्गुण हैं। इसलिए संसार के सभी पदार्थ सगुण भी हैं और निर्गुण भी। परमेश्वर भी अपने गुण, अनन्त ज्ञान और बल आदि होने से सगुण है और जड़ के रूप, रंग, आकार आदि गुण न होने के कारण निर्गुण है।

प्रश्न : संसार में निराकार को निर्गुण और साकार को सगुण कहते हैं अर्थात जब ईश्वर जन्म नहीं लेता तो निर्गुण और जब अवतार लेता है तब सगुण कहलाता है?

उत्तर : यह अज्ञानी और मूर्ख लोगों की कल्पना है। ईश्वर कभी जन्म नहीं लेता, उसका कोई आकार नहीं है फिर साकार और निराकार की बात करना व्यर्थ है।

प्रश्न : परमेश्वर रागी है या विरक्त?

उत्तर : दोनों ही नहीं। राग (लगाव) अपने से भिन्न उत्तम पदार्थ से होता है। परमेश्वर से भिन्न कोई उत्तम पदार्थ है ही नहीं तो उसे किसी से राग कैसे हो सकता है। ईश्वर कण–कण में व्याप्त होने के कारण किसी पदार्थ को छोड़ नहीं सकता, इसलिए विरक्त भी नहीं है।

प्रश्न : ईश्वर में इच्छा है या नहीं?

उत्तर : इच्छा उस वस्तु की होती है, जो प्राप्त न हो, उत्तम हो और जिसे पाकर विशेष सुख मिलता हो। ईश्वर तो सब कुछ बनाने वाला और देने वाला है, इसलिए उसको किसी वस्तु या सुख की अभिलाषा नहीं है। ईश्वर में 'ईषण' है अर्थात् ईश्वर सब प्रकार की विद्या का दर्शन कराता और सारी सृष्टि को उत्पन्न करके धारण करता है। 'जो स्वयंभू, सर्वव्यापक, शुद्ध सनातन, निराकार,

thearyasamaj.blog

परमेश्वर है वह सनातन जीव रूप प्रजा के कल्याण के लिए यथावत रीतिपूर्वक वेद द्वारा सब विद्याओं का उपदेश करता है।

(यजु अ 40 मं 8)

अथर्ववेद में कहा गया है 'जो सबको उत्पन्न करके धारण कर रहा है, वह परमात्मा है जिससे चारों वेद प्रकाशित हुए हैं।

प्रश्न : परमेश्वर को आप निराकार मानते हो या साकार?

उत्तर : निराकार।

प्रश्न : जब ईश्वर निराकार है तो उसने बिना मुंह के वेदविद्या का उपदेश कैसे दिया होगा? क्योंकि वर्णों का उच्चारण करने के लिए मुंह, जीभ, तालु, दांत, ओंठ आदि अवश्य होने चाहिए?

उत्तर : परमेश्वर सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापक है इसलिए वह सब जीवों की अन्तरात्मा को प्रेरणा या उपदेश देता है, मुँह से बोलकर या लिखकर नहीं। उसने सारी वेद विद्या का उपदेश जीवों की जीवात्मा में प्रकाशित कर दिया।

प्रश्न : किनकी आत्मा में कब वेदों का प्रकाश किया?

उत्तर : सृष्टि के आदि में परमात्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा इन ऋषियों के आत्मा में एक–एक वेद का प्रकाश किया।

प्रश्न : उपनिषद् तो कहता है कि ब्रह्मा जी के हृदय में वेदों का उपदेश दिया फिर आप ऋषियों की आत्मा में क्यों कहते हैं?

उत्तर : ब्रह्मा की आत्मा में ऋषियों द्वारा यह ज्ञान स्थापित किया गया। मनुस्मृति में लिखा है 'जिस परमात्मा ने आदि सृष्टि में मनुष्यों को उत्पन्न करके अग्नि आदि महर्षियों के द्वारा चारों वेद ब्रह्मा को प्राप्त कराये और उस ब्रह्मा ने अग्नि, वायु, आदित्य और अंगिरा से ऋृक्, यजु, साम और अथर्ववेद का ग्रहण किया।

प्रश्न : उन चारों में ही वेदों का प्रकाश किया, अन्य में नहीं। इससे ईश्वर पक्षपाती सिद्ध होता है?

उत्तर : वे चार ऋषि सब जीवों से अधिक पवित्रात्मा थे, अन्य उनके समान नहीं थे इसलिए पवित्र ज्ञान का प्रकाश उन्हीं में किया। इसमें कोई पक्षपात दिखाई नहीं देता।

thearyasamaj.org

प्रश्न : किसी एक देश की भाषा में ज्ञान का प्रकाश न करके संस्कृत में ही क्यों किया?

उत्तर : ईश्वर यदि किसी एक देश की भाषा में वेदज्ञान प्रकट करता तो वह पक्षपाती कहलाता, क्योंकि हर एक देश वालों को अपनी भाषा सरल और दूसरों की कठिन लगती है। संस्कृत सब भाषाओं की जननी है, इसलिए वेदज्ञान का प्रकाश किसी और भाषा में न करके संस्कृत में ही किया गया। जैसे ईश्वर की रची हुई पृथ्वी, सूर्य आदि सब देशों के लिए एक से हैं और शिल्पविद्या के कारण हैं, उसी प्रकार परमेश्वर की विद्या की भाषा भी पढ़ने–पढ़ाने में सबके लिए समान परिश्रम करने वाली ही होनी चाहिए। इसीलिए संस्कृत को किसी एक देश की भाषा न कहर देवभाषा कहा जाता है।

प्रश्न : वेद ईश्वर की रचना है, किसी और की नहीं, इसका क्या प्रमाण है?

उत्तर : (1) जैसा ईश्वर सब विद्याओं का ज्ञाता, शुद्ध गुण–कर्म–स्वभाव वाला, न्यायी, दयालुता आदि गुणों वाला है, उसके गुण–कर्म–स्वभाव के अनुसार जिस पुस्तक में कथन हो, वह ईश्वरकृत ही है, किसी अन्य की नहीं।

(2) जिसमें सृष्टिक्रम के प्रत्यक्ष प्रमाण, दक्ष विद्वानों के और उस पवित्रात्मा के विरुद्ध कथन न हों, वह ईश्वर द्वारा दिया गया ज्ञान ही है।

(3) ईश्वर द्वारा दिया गया ज्ञान ही भ्रम–रहित हो सकता है, किसी अन्य का नहीं।

(4) जैसा परमेश्वर है और उसने जैसा सृष्टिक्रम रखा है, वैसा ही ईश्वर, सृष्टि, कारण–कार्य और जीव का वर्णन वेद में है।

(5) इसमें प्रत्यक्ष प्रमाण आदि विषयों के विरुद्ध कुछ न होने के कारण ईश्वरकृत ही हैं।

(6) इसमें इतिहास व कथायें न होना इस बात का प्रमाण हैं कि वेद ज्ञान ईश्वर का दिया हुआ ही है।

(7) वेदज्ञान का हर काल में उपयोगी होना इस बात को सिद्ध करता है कि ऐसा पूर्ण और दोषरहित ज्ञान ईश्वर ही दे सकता है, कोई मनुष्य नहीं।

thearyasamaj.org

(8) वेदों की बहुत सी बातें दूसरे ग्रन्थों में देखने को मिलती हैं इससे सिद्ध होता है कि वेदज्ञान ईश्वरकृत और सबसे प्राचीन है।

प्रश्न : वेद के ईश्वरकृत होने की क्या आवश्यकता थी? क्योंकि मनुष्य धीरे–धीरे ज्ञान बढ़ाकर अपनी पुस्तक बना सकते थे?

उत्तर : कभी नहीं बना सकते थे क्योंकि बिना कारण के कोई कार्य सिद्ध हो ही नहीं सकता। उदाहरण के लिए जंगली मनुष्य सृष्टि को देखकर विद्वान नहीं हो जाते, लेकिन यदि उन्हें किसी योग्य शिक्षक से शिक्षा मिल जाती है तो वे विद्वान हो जाते हैं। आज भी किसी से पढ़े बिना कोई विद्वान नहीं होता। आर्यावर्त से ही शिक्षा का प्रसार होने के बाद ही मिस्र–यूनान आदि देशों में विद्या का विकास हुआ था। इस प्रकार परमात्मा ने ही आदि सृष्टि में जिन ऋषियों को ज्ञान दिया, उन्होंने उसी ज्ञान को दूसरे लोगों तक पहुंचाया। जब तक कोलम्बस अमेरिका में नहीं पहुंचा था तब तक हज़ारों वर्षों से वहां रहने वाले आदिवासी विद्याहीन और मूर्ख ही थे। वर्तमान समय में भी हम लोग अध्यापकों से पढ़कर ही आगे चलकर विद्वान होते हैं। इसलिए सृष्टि के आदिकाल में उत्पन्न ऋषियों का गुरु परमात्मा ही हुआ है। सृष्टि के प्रलय, अज्ञान या घोरनिद्रा के समय जीव ज्ञानरहित हो जाता है लेकिन परमेश्वर नहीं होता, उसीके द्वारा फिर से ज्ञान का प्रकाश किया जाता है।

प्रश्न : वेद संस्कृत भाषा में प्रकाशित हुए। जब अग्नि आदि ऋषि संस्कृत नहीं जानते थे तो उन्होंने वेदों का अर्थ कैसे जाना?

उत्तर : परमेश्वर ने उन्हें ज्ञान करवाया। धर्मात्मा योगी महर्षि लोग जब–जब जिस का अर्थ जानने की इच्छा करके ध्यान में लीन हो, परमेश्वर के स्वरूप में समाधिस्थ हुए तब–तब परमात्मा ने उन्हें उन मन्त्रों के अर्थ समझाये। जब इन महर्षियों ने दूसरे ऋषि मुनियों को ज्ञान दिया तब उन्होंने जो ग्रन्थ रचे थे वे वेदरूपी ब्रह्म की व्याख्या करने के कारण 'ब्राह्मण–ग्रन्थ' कहलाए। वेद में अब भी जिस ऋषि को सबसे पहले जिस–जिस मन्त्र का दर्शन हुआ, और उसने दूसरों को पढ़ाया, उसके शुरू में उस ऋषि का नाम लिखा हुआ मिलता है।

प्रश्न : वेद किन ग्रन्थों का नाम है?

उत्तर : वेद ऋक्, साम, यजु और अथर्ववेद मन्त्र संहिताओं को कहा जाता है, अन्य किसी को नहीं।

thearyasamaj.org

प्रश्न : कात्यायन की प्रतिज्ञासूत्र पुस्तक में ब्राह्मणग्रंथों के मन्त्रों को वेदमन्त्र कहा गया है, क्यों?

उत्तर : वेदों में पुस्तक के आरम्भ और अन्त में वेद शब्द सनातन काल से लिखा हुआ चला आ रहा है लेकिन ब्राह्मणग्रंथों में ऐसा कहीं नहीं लिखा है। पाणिनी ऋषि ने अपने पाणिनीसूत्र में साफ–साफ लिखा है 'ब्राह्मण ग्रन्थों में विषय वेद मन्त्रों से लिए गए हैं, उनकी व्याख्या ब्राह्मणों ने की है'। इस प्रकार कात्यायन का यह कथन सत्य सिद्ध नहीं होता। ब्राह्मण ग्रन्थों में तो ऋषि–मुनियों और राजाओं का इतिहास भी मिलता है। इतिहास तो किसी के जन्म लेने के बाद ही बनता है। वेदों में इतिहास नहीं है। ब्राह्मण ग्रन्थों में इतिहास होने के कारण इन्हें वेद नहीं माना जा सकता।

प्रश्न : वेदों की कितनी शाखायें हैं?

उत्तर : एक हज़ार एक सौ सत्ताईस।

प्रश्न : शाखा किसे कहते हैं?

उत्तर : व्याख्या को शाखा कहा जाता है।

प्रश्न : संसार में विद्वान वेद के अंगों में विभाजन को शाखा कहते हैं?

उत्तर : एक प्रकार से यह ठीक ही है क्योंकि जितनी शाखायें हैं वे उन ऋषियों के नाम से प्रसिद्ध हैं जिन्होंने वेद–संहिता के मन्त्रों की व्याख्या की है। जैसे वेद मन्त्रसंहिता परमेश्वर के नाम से प्रसिद्ध है, वैसे उन मन्त्रों को प्रतीक रखकर उनकी व्याख्या जिस ऋषि ने की है वह उसके नाम से प्रसिद्ध है। परमेश्वरकृत चारों वेद किसी को प्रतीक रखकर नहीं रचे गये, इसलिए वे मूलवृक्ष हैं और ऋषियों द्वारा विषय–विशेष को सामने रखकर की जाने वाली व्याख्या ऋषि–मुनियों द्वारा रचित ही कही जायेगी, परमेश्वरकृत नहीं। जैसे माता–पिता अपनी सन्तान की उन्नति चाहते हैं वैसे ही उस परमात्मा ने सब मनुष्यों पर कृपा करके वेदों को प्रकाशित किया है, जिससे मनुष्य अज्ञान और अविद्या के अन्धकार से छूटकर विद्या–विज्ञान रूपी सूर्य के प्रकाश को प्राप्त कर अत्यन्त आनन्द और सुखों को बढ़ाता हुआ उन्नति करता जाये।

प्रश्न : वेद नित्य हैं या अनित्य?

उत्तर : नित्य हैं। क्योंकि परमेश्वर नित्य है इसलिए उसका ज्ञान, गुण, कर्म, स्वभाव भी नित्य है। अनित्य पदार्थों के गुणकर्म भी अनित्य होते हैं।

thearyasamaj.org

प्रश्न : क्या यह पुस्तक भी नित्य है?

उत्तर : नित्य है। पुस्तक तो कागज–स्याही से बनी होने के कारण नष्ट हो सकती है, लेकिन इसमें लिखे गए जो शब्द, अर्थ और उनके सम्बन्ध हैं, वे नित्य हैं।

प्रश्न : ईश्वर ने जिन ऋषियों को ज्ञान दिया होगा, उन्होंने उस ज्ञान से वेद बना लिए होंगे?

उत्तर : ज्ञान तो वही दे सकता है जो उसे जानता हो। ऐसा सम्पूर्ण ज्ञान देने की सामर्थ्य तो उस सर्वज्ञ परमात्मा के सिवाय किसी की हो नहीं सकती। लेकिन वेदों को पढ़ने के बाद व्याकरण, निरुक्त, कल्प, छंद, ज्योतिष और शिक्षा आदि ग्रन्थ ऋषि मुनियों ने रचे जिससे इन वेदांगों की सहायता से सभी इस ज्ञान को ठीक प्रकार समझ सकें।

इसलिए यह मानना पड़ेगा कि वेद ईश्वरीय रचना है और सभी को वेदज्ञान के अनुसार चलना चाहिए। इसी में सबका कल्याण है।

●●●

thearyasamaj.org

सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति प्रलय आदि विषय 8

प्रश्न : सृष्टि की उत्पत्ति, धारण या स्थिति और प्रलय की शक्ति किसके पास है?

उत्तर : ऋग्वेद, यर्जुवेद और उपनिषदों में इस प्रश्न का उत्तर इस प्रकार दिया गया है।

हे मनुष्य! जिससे यह विविध सृष्टि प्रकाशित हुई है, जो धारणकर्त्ता और प्रलयकर्त्ता है, जो इस सम्पूर्ण जगत का स्वामी है, जिसकी सत्ता से यह सब जगत उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय को प्राप्त होता है, वह परमात्मा है। उसको तू जान और किसी दूसरे को सृष्टिकर्त्ता मत मान।

(ऋ मं 10. सू 129, मं 7)

यह सब जगत सृष्टि से पहले रात रूपी अन्धकार के कारण जानने के अयोग्य और आकाश रूप सब जगत उस अनन्त परमेश्वर के सामने शून्य (खाली स्थान) के समान था। परमात्मा ने अपने सामर्थ्य से इसे कारण रूप से कार्यरूप कर दिया।

हे मनुष्यो! जो सब सूर्यादि तेजस्वी पदार्थों का आधार और जो इस सम्पूर्ण जगत का एक अद्वितीय स्वामी परमात्मा है वह इस जगत की उत्पत्ति से पहले ही विद्यमान था अर्थात उसका अस्तित्व पहले ही था। जिस परमात्मा ने पृथ्वी से लेकर सूर्य तक सारे जगत को उत्पन्न किया है, उस देव की आप प्रेम से भक्ति किया करें। **(ऋग मं 10 सू 121 मं 1)**

हे मनुष्यो! जो सबमें पूर्ण पुरुष और नाशरहित कारण और जीव का स्वामी परमात्मा है, वह पृथ्वी, सूर्य आदि जड़ पदार्थों और जीव के अतिरिक्त है और वही इस भूत, भविष्यत और वर्तमान जगत को बनाने वाला है।

(यजु अ. 31 मं 2)

thearyasamaj.org

जिस परमात्मा की रचना से ये सब पृथ्वी आदि भूत उत्पन्न होते हैं, जीवन पाते हैं और प्रलय को प्राप्त होते हैं, वह ब्रह्म है, उसको जानने की इच्छा करो। **(तैतीरेय उपनिषद)**

इन सब मन्त्रों का भाव यही है कि जिस ब्रह्म से इस जगत का जन्म, स्थिति और प्रलय होता है, वही जानने योग्य है।

प्रश्न : यह जगत परमेश्वर से उत्पन्न हुआ है या अन्य से?

उत्तर : इसका बनाने वाला (कर्त्ता) परमात्मा है, जिसने प्रकृति के तत्वों से इसको बनाया है, इसलिए इस जगत का निमित्त कारण परमात्मा है और उपादान कारण प्रकृति है।

प्रश्न : क्या प्रकृति परमेश्वर ने उत्पन्न नहीं की?

उत्तर : नहीं! प्रकृति भी ईश्वर और जीव की तरह अनादि है।

प्रश्न : अनादि किसको कहते हैं और कितने पदार्थ अनादि हैं।

उत्तर : जो सदा से चला आ रहा हो, उसे अनादि कहते हैं। ईश्वर, जीव और प्रकृति ये तीनों अनादि है।

प्रश्न : इसका प्रमाण क्या है?

उत्तर : ऋग्वेद में कहा गया है कि जैसे ब्रह्म और जीव दोनों चेतनता और पालन आदि गुणों से समान व्यापक और व्याप्त (स्वामी और सेवक) भाव से संयुक्त परस्पर मित्रतायुक्त सनातन तथा अनादि हैं, वैसे ही यह प्रकृति अनादि है। इस मन्त्र में ब्रह्म और जीव के प्रतीक दो चेतन पक्षी हैं और वृक्ष इस जड़ प्रकृति का प्रतीक है। जीव इस प्रकृति का भोग करते हुए कर्म करता है और ब्रह्म जीव को कर्म करते हुए देखकर उसका फल देता है। ब्रह्म इस जगत में बाहर–भीतर सर्वत्र प्रकाशमान हो रहा है। इस प्रकार चेतन होते हुए भी ईश्वर जीव से और जीव ईश्वर से भिन्न है और प्रकृति दोनों से भिन्न है। ये तीनों अनादि हैं। यजुर्वेद में कहा गया है कि अनादि सनातन जीवरूप प्रजा के लिए वेद द्वारा परमात्मा ने सब विद्याओं का ज्ञान प्रकट किया है।

श्वेताश्वर उपनिषद में कहा गया है "परमात्मा, जीव और प्रकृति ये तीनों कभी जन्म नहीं लेते अर्थात् ये तीन सब जगत के कारण हैं, इनका कारण कोई नहीं। ब्रह्म न प्रकृति का भोग करता है और न ही इसमें फंसता है। जीव प्रकृति का भोग करने के कारण इसमें फंसता है और कर्मों का फल भोगता

है। प्रकृति जड़ है और सत्, रज, तम इन तीन गुणों से मिलकर बनी है। इन तीनों गुणों का प्रभाव ही जीव को कर्म करने के लिए प्रेरित करता है। जिस गुण की मात्रा अधिक बढ़ जाती है, जीव के कर्मों पर उसका प्रभाव पड़ता है। जिस जीव पर सतोगुण का प्रभाव अधिक होगा, उसके कर्म दूसरों को सुख देने वाले होंगे। जिसमें रजोगुण की अधिकता होगी, उसमें ईर्ष्या–द्वेष, वैर–विरोध आदि होने के कारण उसका कर्म दूसरों को हानि पहुंचाने वाला होगा। इसी तरह तमोगुण की प्रधानता जीव को हिंसक बना देती है। इससे सिद्ध होता है कि ब्रह्म अनादि, चेतन और सर्वशक्तिमान है। जीव चेतन होते हुए भी ब्रह्म से अलग होने के कारण अपने कर्मफल भोगने के लिए ईश्वरप्रदत्त शरीर धारण करता है, वह अपने मन और बुद्धि के अनुसार कर्म करता है और फल भोगता है। प्रकृति के ये तीनों गुण और अन्य भोग पदार्थ मनुष्य के मन और बुद्धि को भ्रमित करते हैं।" इसलिए वेदों में कहा गया है "अपनी इन्द्रियों का दमन करो और मन को विषयों में न लगाकर ब्रह्म को जानने का प्रयत्न करो।" अतः जो प्रत्यक्ष है, उसके लिए प्रमाण की क्या आवश्यकता है।

प्रश्न : उपनिषदों में कहा गया है कि सृष्टि के पहले सत्, असत्, आत्मा और ब्रह्म रूप था, बाद में वही ब्रह्म अपनी इच्छा से बहुरूप हो गया है। इस जगत में पाए जाने वाले नाना प्रकार के पदार्थ सब ब्रह्मरूप ही हैं, यह कहना कहां तक ठीक है?

उत्तर : आपने उपनिषदों को ठीक से समझा ही नहीं, जिस छान्दोग्य उपनिषद् के आधार पर आप यह सब कह रहे हैं उसी में कहा गया है "पृथ्वी का मूल कारण जल, जल का मूल कारण तेज और तेज का मूल कारण यह नित्य प्रकृति है, उसको जानो"। यही सत्यस्वरूप प्रकृति सब जगत का मूल घर और स्थिति का स्थान है। सृष्टि की रचना से पूर्व यह सब जगत असत् के समान था तथा जीवात्मा, ब्रह्म और प्रकृति में लीन होकर वर्तमान था, उसका अभाव न था। जहां तक 'सर्व खल्विंद ब्रह्म का सम्बन्ध है उसके लिए यही कहा जायेगा कि आपने अधूरा श्लोक लेकर अर्थ का अनर्थ कर दिया। जैसे शरीर के अंग जब तक शरीर के साथ रहते हैं तब तक काम के होते है और शरीर से अलग हो जाने पर निकम्मे हो जाते हैं या किसी दूसरी जगह जोड़ देने से उनका कोई मूल्य नहीं रहता। उसी तरह यदि इस श्लोक को पूरा पढ़े तो इसका अर्थ यह है, 'हे जीव! तू उस ब्रह्म की उपासना कर, जिस

ब्रह्म से जगत की उत्पत्ति, स्थिति और जीवन होता है, जिसके बनाने और धारण करने से यह सब जगत प्रकट हुआ है उसको छोड़कर किसी दूसरे की उपासना न कर। वह चेतन, अखंड और एकरस (सदा एक जैसा रहने वाला) ब्रह्म अनेक प्रकार की वस्तुओं का मेल नहीं है, बल्कि ये सब वस्तुएं अपने अलग–अलग स्वरुप में परमेश्वर के आधार में स्थित हैं।

प्रश्न : जगत के कारण कितने होते हैं?

उत्तर : तीन। निमित्त, उपादान और साधारण। निमित्त कारण उसको कहते हैं जिसके बनाने से कुछ बने, न बनाने से न बने। जो स्वयं नहीं बनता परन्तु दूसरे को बना देता है अर्थात् सृष्टिकर्त्ता परमात्मा ही इस जगत का निमित्त कारण है। उपादान कारण उसको कहते हैं जिसके बिना कुछ न बने और जो अवस्था बदल जाने पर बनता और बिगड़ता है अर्थात वह पदार्थ जिसे लेकर कर्त्ता वस्तु को बनाता है। साधारण कारण उसको कहते हैं जो वस्तु को बनाने में साधन का काम दे। जैसे मिट्टी का घड़ा बनाने में निमित्त कारण कुम्हार है, उपादान कारण मिट्टी है और साधारण कारण कुम्हार का चाक है।

इस जगत को कारण से बनाने, धारण करने और प्रलय करने तथा सबकी व्यवस्था करने वाला परमात्मा ही है। लेकिन इस सृष्टि में रहते हुए काम में आने वाले जो बहुत से पदार्थ जीवों (मनुष्यों) द्वारा बनाए जाते हैं, उनका निमित्त कारण जीव है। ईश्वर जिन पदार्थों का बनाने का निमित्त कारण है उनको बनाने में वह किन साधनों और पदार्थों का प्रयोग करता हैं, उन्हें कैसे और कब बनाता है कोई नहीं जान पाता। लेकिन जीव जिन पदार्थों को बनाता है उसे हम प्रत्यक्ष बनाते हुए देख सकते हैं। उपादान कारण प्रकृति है, जिसे इस संसार को बनाने की सामग्री कहते हैं। प्रकृति जड़ होने के कारण स्वयं न तो बन सकती है और न बिगड़ सकती है लेकिन वही सामग्री दूसरे के बनाने से बनती है और बिगाड़ने से बिगड़ती है। जैसे परमेश्वर द्वारा रचा गया बीज, पृथ्वी और जल के संयोग से वृक्ष बन जाता है। इसी तरह प्रकृति के पांच तत्वों से बनाया गया शरीर, जीव के प्रवेश करने पर चेतन प्राणी बन जाता है।

साधारण कारण उन साधनों को कहते हैं जिनकी सहायता से कोई वस्तु बनाई जाती है। जैसे ज्ञान, दर्शन (सिद्धान्त) बल, हाथ, यन्त्र, मशीनें आदि।

प्रश्न : नवीन वेदान्ती (शंकराचार्य के अद्वैतवादी शिष्य) जो केवल परमेश्वर ही को जगत का निमित्त और उपादान कारण मानते हैं। उनका कहना है कि जैसे मकड़ी बाहर से कोई पदार्थ के लिए बिना अपने अन्दर से ही तंतु निकालकर जाला बनाती है और आप ही उसमें खेलती है ठीक इसी प्रकार ईश्वर भी स्वयं ही इस जगत को बनाकर उसमें क्रीड़ा कर रहा है। मुण्डक उपनिषद् में लिखा है "जो पहले न हो, अन्त में न रहे, वह वर्तमान में भी नहीं है।" लेकिन ठीक इसके विपरीत सृष्टि के आदि में ब्रह्म था जगत नहीं, प्रलय के अन्त में संसार नहीं रहेगा इसलिए वर्तमान में सब जगत ब्रह्म क्यों नहीं है?

उत्तर : अगर तुम्हारे कहने के अनुसार जगत का उपादान कारण ब्रह्म हो तब तो अवस्था में अन्तर आ जाने पर ब्रह्म भी विकारी (जिसमें बिगाड़ आ जाये) हो जायेगा, क्योंकि उपादान कारण के गुण–कर्म–स्वभाव कार्य में भी आ जाते हैं, लेकिन ऐसा है नहीं। ब्रह्म सच्चिदानन्द स्वरूप है लेकिन यह जड़ जगत आनंद रहित है, कुछ लोग तो इसे दुःखों का घर मानते हैं। ब्रह्म जन्म नहीं लेता लेकिन जगत तो उत्पन्न हुआ है। ब्रह्म अदृश्य है परन्तु जगत दिखाई देता है। ब्रह्म अखंड है लेकिन जगत तो खंडरूप अर्थात बंटा हुआ है। ब्रह्म चेतन है, प्रकृति की तरह जड़ नहीं है। आपने मकड़ी का जो उदाहरण दिया है वह सही नहीं है। ब्रह्म ने मकड़ी की अद्‌भुत रचना की है, लेकिन तंतु उसमें स्थित जीव निकालता है, शरीर नहीं। जाले में क्रीड़ा करने वाला भी मकड़ी में स्थित जीव निकालता है, शरीर नहीं। जाले में क्रीड़ा करने वाला भी मकड़ी में स्थित जीव ही है, ब्रह्म नहीं। मकड़ी को तंतु निकालने की जो शक्ति प्राप्त है वह उस ब्रह्म की ही दी हुई है। वह व्यापक ब्रह्म अपने भीतर समाई हुई प्रकृति और परमाणु कारण से इस जगत को बनाकर बाहर प्रकट कर रहा है और स्वयं उसी में व्यापक हो, उसे देख रहा है और आनन्दमय हो रहा है। जब तक सृष्टि रहती है तब तक तो वह जीवों के विचार, ज्ञान–ध्यान, उपदेश और श्रवण में प्रसिद्ध या प्रकट रहता है, लेकिन जब प्रलय हो जाती है तब स्वयं परमेश्वर और मुक्त जीवों को छोड़कर उसे कोई नहीं जानता। वह तब तक अप्रकट रहता है जब तक दूसरी सृष्टि नहीं बन जाती अर्थात् वह ब्रह्म अपने अति सूक्ष्म रूप में अप्रकट रहता है।

ऋग्वेद में स्पष्ट कहा गया है कि यह सब जगत सृष्टि के पहले प्रलय

thearyasamaj.org

में अन्धकार से घिरा हुआ, ढका हुआ सा था। प्रलय आरम्भ होने के बाद भी वैसा ही होता है। उस समय न कुछ जानने योग्य होता है और न ही कोई जानने वाला। वह परमेश्वर जब पुनः सृष्टि की रचना करता है तभी जीव जगत में विचरता हुआ उस ब्रह्म को जानना चाहता है, क्योंकि आत्मा को प्रमाणों से उसका ज्ञान होता है।

प्रश्न : जगत को बनाने में परमेश्वर का क्या प्रयोजन या अभिप्राय है? अगर ये जगत न बनाता तो वह स्वयं भी आनन्द में रहता और जीवों को भी सुख–दुःख न भोगना पड़ता?

उत्तर : परमात्मा सदैव सक्रिय रहता है, इसलिए उसने सृष्टि बनाई है। जहां तक जीवों के सुख–दुःख भोगने की बात है तो सृष्टि में दुःख की तुलना में सुख कई गुणा अधिक है। यदि जीव प्रकृति की वस्तुओं का अनुशासन में रहकर भोग करता है तो उसे सुख मिलता है, दुःख नहीं होता। बहुत से पुण्यात्मा जीव मुक्ति के साधन करके मोक्ष के आनन्द को भी प्राप्त हो जाते हैं। केवल आलसी और निकम्मे लोग ही ऐसी बातें सोचते हैं। ईश्वर सक्रिय है और उसने जीव को भी क्रियाशील बनाया है। अच्छे–बुरे कर्म करना जीव के अपने हाथ में है। अपने लिए हुए कर्मों के फल तो उसे भोगने ही पड़ते हैं, यही ईश्वर का न्याय–विधान है। जैसे आँख का स्वाभाविक गुण देखना है वैसे ईश्वर का स्वाभाविक गुण जगत की उत्पत्ति करके सब जीवों को असंख्य पदार्थ देकर परोपकार करना है। उसका अनन्त सामर्थ्य जगत की उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय और व्यवस्था करने ही से सफल है।

प्रश्न : बीज पहले बना या वृक्ष?

उत्तर : बीज। कारण पहले होने से ही कार्य होता है, इसलिए पहले बीज होता है तभी वृक्ष उत्पन्न होता है।

प्रश्न : अगर परमेश्वर सर्वशक्तिमान है तब तो वह बिना कारण के भी कार्य कर सकता है। अगर वह असंभव को संभव नहीं कर सकता तब वह सर्वशक्तिमान नहीं हो सकता?

उत्तर : सर्वशक्तिमान शब्द का अर्थ दूसरों की सहायता के बिना अपने सब काम पूरे करना है, मनमानी करना नहीं। प्रकृति अनादि है, उसके तत्वों के अपने–अपने गुण हैं। ईश्वर भी प्रकृति के स्वाभाविक गुणों में परिवर्तन नहीं

thearyasamaj.org

कर सकता। ईश्वर न तो जड़ को चेतन बना सकता है और न ही चेतन को जड़। ईश्वर के नियम सत्य व पूर्ण हैं, इसलिए वह इनमें कोई परिवर्तन नहीं करता। ईश्वर अन्यायी, अपवित्र और कुकर्मी नही है जो ऐसे कर्म करे जिनका परिणाम दुःखदायी हो।

प्रश्न : ईश्वर साकार है या निराकार? साकार तो वस्तु बना सकता है परन्तु निराकार हाथ आदि साधनों के बिना जगत कैसे बना सकता है?

उत्तर : ईश्वर निराकार है, अन्य जीवों की भांति उसका भौतिक शरीर और अंग आदि नहीं हैं, न ही उसे भूख–प्यास, सुख–दुःख आदि सताते हैं। शरीर धारी जीव की शक्तियां सीमित होती हैं। ईश्वर निराकार है, इसीलिए उसकी शक्तियां असीम या अपरिमित हैं। यदि ईश्वर शरीरधारी होता तो अणु–परमाणु और प्रकृति को अपने वश में नहीं ला सकता और न ही सूक्ष्म पदार्थों से स्थूल जगत बना सकता है। ईश्वर निराकार, अनन्त शक्तिवाला और पराक्रमों का स्वामी है इसलिए वह स्थूल पदार्थों से शरीर की रचना करता है और उसमें जीव का प्रवेश करवाता है। मूर्ति तो मनुष्य भी बनाता है परन्तु उसमें प्राण नहीं डाल सकता। इससे सिद्ध होता है कि जो काम जीव और प्रकृति से नहीं हो सकते, वह ईश्वर करता है। ईश्वर ही सृष्टि बनाता, धारण करता है और प्रलय करता है।

प्रश्न : अगर ईश्वर निराकार है तो उसका बनाया हुआ जगत भी निराकार होना चाहिए, जैसे साकार जीवों की सन्तान भी साकार होती है?

उत्तर : ईश्वर जगत का निमित्त कारण (कर्त्ता) है। जगत का उपादान कारण तो स्थूल प्रकृति है। सामान्य कारण जीव है, जो सूक्ष्म है। ईश्वर अत्यन्त सूक्ष्म है। वह प्रकृति के पांच तत्वों (पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश और वायु) से शरीर की रचना करता है जो साकार दिखाई देता है परन्तु उसमें विराजमान जीव किसी को दिखाई न देने के कारण निराकार ही है। जब मनुष्य सूक्ष्म जीवों को ही नहीं देख पाता तो वह उस अति सूक्ष्म ईश्वर को कैसे देख सकता है। ईश्वर सृष्टि रचता है, उसके रचे हुए जीव अपने जैसे जीवों को जन्म देते हैं यदि ईश्वर जन्म देने वाला होता तब तो अब तक अनेक ईश्वर हो जाते। ईश्वर एक है और एक ही रहेगा।

प्रश्न : क्या कारण के बिना परमेश्वर कार्य नहीं कर सकता?

उत्तर : नहीं। क्योंकि जो है ही नहीं, उसका होना मान लेना मूर्खता है। संसार की कोई भी वस्तु संयोग के बिना नहीं बनती। माता–पिता के बिना सन्तान उत्पन्न नहीं हो सकती, पृथ्वी जल और बीज के संयोग के बिना अन्न उत्पन्न नहीं हो सकता, जीभ के बिना शब्द का उच्चारण नहीं हो सकता, प्राण के बिना जीवन नहीं हो सकता। ईश्वर अपने बनाए हुए सृष्टि सम्बन्धी नियमों का उल्लंघन नहीं करता, इसलिए वह किसी को भी नियमों का उल्लंघन नहीं करने देता और इस सृष्टि को नियम में रखने में समर्थ है।

प्रश्न : यदि कारण के बिना कार्य नहीं होता तो कारण (प्रकृति) का कारण कौन है?

उत्तर : जितने भी कार्य जगत में होते हैं उनका तो कारण आप जान या देख सकते हैं परन्तु जहां तक कारण का कारण है, वह तीसरा अनादि पदार्थ प्रकृति है। ब्रह्म ने इसी अनादि पदार्थ प्रकृति से समस्त सृष्टि की रचना की है। यदि ब्रह्म, जीव और प्रकृति तीनों में से एक भी न होता तो यह जगत बन ही न पाता।

प्रश्न : नास्तिक लोग ऐसा कहते हैं कि शून्य ही एक पदार्थ है। सृष्टि से पहले भी शून्य था और प्रलय के बाद भी शून्य ही रह जायेगा?

उत्तर : शून्य तो जड़ पदार्थ है, उसमें सब पदार्थ अदृश्य होते हैं। जड़ पदार्थ में किसी को बनाने की शक्ति नहीं होती। जैसे बिन्दु स्वयं कुछ नहीं बनाता लेकिन यदि कोई बनाने वाला उसी बिन्दु से रेखायें खींच देता है तो आकृति बन जाती है, उसी प्रकार संसार के सभी पदार्थ ईश्वर की रचना से बनते हैं। ईश्वर चेतन है, जड़ या शून्य नहीं।

प्रश्न : अभाव से भाव की उत्पत्ति होती है क्योंकि बीज तोड़ने पर उसमें अंकुर दिखाई नहीं देता, लेकिन बीज बोने पर उसमें से अंकुर फूटता है?

उत्तर : बीज में से जो अंकुर फूटता है, वह पहले ही बीज में होता है अतः तुम्हारा यह कहना गलत है कि अभाव से भाव की उत्पत्ति होती है।

प्रश्न : कई कर्म निष्फल होते हैं इससे प्रतीत होता है कि जीव को कर्म करने से फल नहीं मिलता बल्कि कर्मों का फल प्राप्त होना

ईश्वर के अधीन है वह जिस कर्म का फल देना चाहता है, दे देता है और यदि नहीं देना चाहता तो नहीं देता अतः कर्मफल ईश्वराधीन है?

उत्तर : ईश्वर न्यायकारी है वह कर्म किए बिना किसी को फल नहीं देता, मनुष्य जैसा कर्म करता है, उसे वैसा ही फल देता है न किसी को कम देता है और न किसी को अधिक देता है। इसीलिए वेद में कहा गया है, "जीव कर्म करने में स्वतन्त्र है परन्तु फल भोगने में परतन्त्र अर्थात ईश्वर के अधीन है।"

प्रश्न : जब–जब सृष्टि का आरम्भ होता है तब–तब बिना निमित्त कारण के पदार्थों की उत्पत्ति होती है जैसे बबूल आदि तीखे कांटों वाले वृक्ष उगे हुए दिखाई देते हैं?

उत्तर : जिससे पदार्थ उत्पन्न होता है वही उसका निमित्त कारण होता है। कांटों वाला वृक्ष भी बीज से ही उत्पन्न होता है, उसके बिना नहीं।

प्रश्न : सृष्टि के सब पदार्थ उत्पत्ति और विनाश वाले हैं, इसलिए सब अनिष्ट या नाशवान हैं। नवीन वेदान्ती भी मानते हैं कि ब्रह्म सत्य है और जगत मिथ्या है और जीव ब्रह्म से भिन्न नहीं है।

उत्तर : जब ब्रह्म, जीव और प्रकृति नित्य हैं तब सब पदार्थ अनित्य हो ही नहीं सकते।

प्रश्न : सबकी नित्यता भी अनित्य है जैसे अग्नि लकड़ी को जलाकर आप भी नष्ट हो जाती है?

उत्तर : जो लोग ब्रह्म से जगत की उत्पत्ति मानते हैं वह ब्रह्म को नित्य और सत्य मानते हैं तो उसका किया हुआ कार्य भी कभी असत्य और अनित्य नहीं हो सकता। जैसे रस्सी को देखकर भ्रमवश सांप समझ लिया जाता है लेकिन वह रस्सी सांप बन नहीं जाती। जन्मांध व्यक्ति ने किसी बाहरी पदार्थ के रूप को देखा नहीं होता इसलिए उसे स्वप्न में भी कुछ दिखाई नहीं देता और न ही किसी वस्तु के होने का भ्रम होता है। जीव आंखों से जो कुछ देखता है, उन्हीं वस्तुओं को स्वप्न में देखता है। इससे सिद्ध होता है कि जो जागृत अवस्था या वर्तमान समय में सत्य पदार्थ है उनका संस्कार या वासना रूप ज्ञान आत्मा में स्थित होता है, उन्हीं को जीव स्वप्न में प्रत्यक्ष देखता है। जैसे नींद में बाहरी पदार्थों का ज्ञान नहीं रहता लेकिन फिर भी बाहरी पदार्थ विद्यमान होते हैं वैसे ही प्रलय में भी कारण द्रव्य वर्तमान रहता है, नष्ट नहीं होता।

thearyasamaj.org

प्रश्न : जैसे जागृत के पदार्थ स्वप्न और दोनों के (जागृत और स्वप्न) घोरनिद्रा या अज्ञान की अवस्था में अनित्य हो जाते हैं वैसे ही जागृत के पदार्थों को भी स्वप्न के समान मानना चाहिए?

उत्तर : ऐसा कभी नहीं मान सकते क्योंकि स्वप्न और गहरी नींद में बाहरी पदार्थों का अज्ञान होता है इसका यह अर्थ नहीं कि वास्तव में ही वह पदार्थ नहीं होता। जैसे अगर पीठ के पीछे रखी हुई वस्तु दिखाई न दे तो हम यह तो नहीं कह सकते कि वह वस्तु है ही नहीं।

प्रश्न : पांच भूतों के नित्य होने से जगत नित्य है क्या?

उत्तर : नहीं। जिन पदार्थों की उत्पत्ति और विनाश का कारण दिखाई देता है वे नित्य नहीं हो सकते। यदि ऐसा होता तो पंचभूतों से बना यह स्थूल शरीर भी नित्य होता।

प्रश्न : सब पदार्थ पृथक–पृथक हैं। कोई एक पदार्थ नहीं है। जिस–जिस पदार्थ को हम देखते हैं उसमें दूसरा कोई पदार्थ दिखाई नहीं देता?

उत्तर : परमात्मा ने जिन पदार्थों की रचना की है उनका स्वरूप तो हमें अलग–अलग दिखाई देता है, लेकिन वास्तव में उन भिन्न–भिन्न पदार्थों में एक पदार्थ भी है। सच तो यह है कि सभी पदार्थ एक हैं लेकिन उनका रूप अलग–अलग है।

प्रश्न : सब पदार्थों में आपसी अभाव की सिद्धि होने से सब अभाव रूप हैं जैसे गाय घोड़ा नहीं है और घोड़ा गाय नहीं है। इसलिए सबको अभाव रूप मानना चाहिए अर्थात् जो जैसा दिखाई देता है वैसा ही है। उसमें दूसरे रूपों का अभाव रहता है?

उत्तर : जब गाय से गाय का भाव और घोड़े से घोड़े का भाव ही समझा जाता है तो फिर अभाव कभी नहीं हो सकता। यदि पदार्थों का अपना भाव न हो तो उनका एक दूसरे से अन्तर कैसे पता चलेगा।

प्रश्न : स्वभाव से जगत की उत्पत्ति होती है। जैसे पानी और मिट्टी में अन्न सड़ने से कीड़े, पृथ्वी और जल में बीज मिलने से वृक्ष, समुद्र और वायु के मिलने से तरंगें, हल्दी चूना और नीम्बू का रस मिलाने से लेप की औषधि बन जाती है, वैसे ही सब जगत तत्वों के मेल से बना है इसे बनाने वाला कोई नहीं है?

thearyasamaj.org

उत्तर : यदि स्वभाव ही उत्पत्ति का कारण हो तो कभी विनाश नहीं होना चाहिए और यदि विनाश ही स्वभाव हो तो उत्पत्ति नहीं होगी। यदि पदार्थ में उत्पत्ति और विनाश दोनों इकट्ठे मानोगे तो इनकी व्यवस्था कभी नहीं हो सकेगी। यदि तुम निमित्त कारण होने से उत्पत्ति और विनाश मानोगे तो उस निमित्त कारण को पदार्थों से भिन्न मानना ही पड़ेगा। यदि यह जगत स्वभाव से उत्पन्न होता तो अब तक न जाने कितने भूगोल, सूर्य, चन्द्र आदि बन गए होते, लेकिन ऐसा नहीं हुआ। आपने जिन वस्तुओं का योग से बनने का वर्णन किया है वे सब भी तो किसी से मिलाने से ही मिलती हैं। सेरी (लेप की दवाई) बनाने के लिए हल्दी, चूना और नींबू मिलाने वाला तो कोई व्यक्ति होता है, वैसे ही प्रकृति से जड़ तत्वों को मिलाने वाला भी ईश्वर होता है। स्वभाव से सृष्टि नहीं बनती, यह परमेश्वर की ही रचना है।

प्रश्न : इस जगत का कर्त्ता न कोई था और न होगा। यह जगत अनादि काल में जैसा था, वैसा अब भी है। न कभी इसकी उत्पत्ति हुई और न कभी इसका विनाश होगा?

उत्तर : बिना कर्त्ता के कोई काम हो ही नहीं सकता। पृथ्वी आदि पदार्थों में संयोग–विशेष से जो रचना दिखाई देता है वह कभी अनादि नहीं हो सकती है। यदि पत्थर, हीरा, फौलाद आदि को तोड़कर या गलाकर देखें तो इनमें पाए जाने वाले परमाणु अलग–अलग दिखाई देंगे। इससे सिद्ध होता है कि यह जगत पहले नहीं था, यह विभिन्न पदार्थों के संयोग से बना है और समय आने पर इसका विनाश भी होगा और इस जगत का कर्त्ता परमेश्वर ही है।

प्रश्न : अनादि ईश्वर कोई नहीं है, किन्तु जो जीव योगाभ्यास से अणिमा आदि सिद्धियों के द्वारा ऐश्वर्य को प्राप्त होकर सर्वज्ञ आदि गुणयुक्त ज्ञानी होता है केवल वही जीव परमेश्वर कहलाता है।

उत्तर : सिद्धियों को प्राप्त करने के लिए योगाभ्यास और साधना करनी पड़ती है। यदि ईश्वर यह जगत और इसमें रहने वाले जीवधारी शरीर को नहीं बनाएगा तो साधना कौन करेगा? साधना भी साधन के बिना नहीं हो सकती। जीव चाहे जितनी साधना कर ले और सिद्धियां प्राप्त कर ले तो भी उसका ज्ञान और सामर्थ्य (शक्ति) सीमित ही रहेगा, वह ईश्वर के समान नहीं हो सकता। ईश्वर तो अनन्त ज्ञान और शक्तियों का स्वामी है। कोई भी आज तक ईश्वर के बनाए हुए सृष्टिक्रम को बदल नहीं सका, न ही आजतक कोई ईश्वर को जान सका है। अतः जीव कभी ईश्वर नहीं हो सकता।

thearyasamaj.org

प्रश्न : कल्प–कल्पान्तर में ईश्वर अलग–अलग रूप में सृष्टि बनाता है या एक जैसी?

उत्तर : सृष्टि जैसी अब है, वैसी पहले थी और आगे भी वैसी ही होगी। परमेश्वर जैसे सूर्य, चन्द्र, विद्युत, पृथ्वी, अंतरिक्ष बनाता था, वैसे ही अब भी बनाए हैं, वैसे ही आगे भी बनाएगा। ईश्वर के कामों में कोई भूल न होने के कारण वे सदा एक से होते हैं। सुधार या बदलाव उसी के कामों में लाया जाता है जो अल्पज्ञ होने के कारण भूल करता है, ईश्वर के कामों में नहीं।

प्रश्न : सृष्टि विषय में वेदादि शास्त्रों का विरोध है या अविरोध? उपनिषदों में सृष्टि की उत्पत्ति कहीं जल से, कहीं आकाश से बताई गई है। इसी तरह दर्शनशास्त्रों में भी मतभेद पाया जाता है, कहीं कर्म, कहीं न्याय, कहीं काल और कहीं प्रकृति को सृष्टि की उत्पत्ति का कारण माना है। इसी प्रकार वेदों में कहीं पुरुष और कहीं हिरण्यगर्भ आदि से सृष्टि का उत्पन्न होना बताया गया है। इनमें से किसे सच मानें किसे झूठ?

उत्तर : ये सब सच्चे हैं, कोई झूठा नहीं है। झूठा उसको कहते हैं जो सच के विपरीत हो क्योंकि परमेश्वर जगत का निमित्त कारण है और प्रकृति उपादान कारण, इसलिए जब महाप्रलय होता है तो जगत की उत्पत्ति आकाश से होती है। लेकिन जब प्रलय में वायु नष्ट नहीं होती तो जगत की उत्पत्ति वायु से शुरू हो जाती है। इसी प्रकार जहां तक प्रलय होती है वहीं से दोबारा उत्पत्ति का क्रम शुरू हो जाता है। जहां तक पुरुष और हिरण्यगर्भ आदि का सम्बन्ध है, ये सब एक ही ईश्वर के भिन्न–भिन्न नाम हैं इसलिए कोई भ्रम नहीं होना चाहिए। जहां तक दर्शनशास्त्रियों का सम्बन्ध है वैशेषिक में काल, न्याय में पदार्थ, योग में विद्याज्ञान और विचार, सांख्य में प्रकृति के तत्वों का मेल, पूर्वमीमांसा में कर्म और उत्तरमीमांसा में कर्त्ता को महत्व दिया गया है। एक–एक दर्शनशास्त्र में जगत की उत्पत्ति के एक–एक कारण का वर्णन है। जगत में ऐसा कोई भी कार्य नहीं होता जिसे करने में समय न लगे, पदार्थ का प्रयोग न हो, विद्या और ज्ञान की आवश्यकता न पड़ती हो, प्रकृति के तत्वों का मेल न होता हो, कर्म न करना पड़ता हो और कर्त्ता का होना आवश्यक न हो। अतः सब कुछ सच ही तो है, झूठ कहीं नहीं है। उदाहरण के लिए पांच अन्धों और एक मन्ददृष्टि वाले के सामने एक हाथी खड़ा कर दिया तो

thearyasamaj.org

एक ने हाथी को खम्भे जैसा, दूसरे ने सूप (छाज) जैसा, तीसरे ने मूसल जैसा, चौथे ने झाडू जैसा, पांचवें ने चबूतरे जैसा और मन्ददृष्टि ने काला भैंसे जैसा बताया। सभी अपनी–अपनी जगह सच ही तो बोल रहे थे क्योंकि पहले ने टांग, दूसरे ने कान, तीसरे ने सूंड, चौथे ने पूंछ, पांचवें ने पीठ छूकर जो अनुभव किया और छठे को जितना दिखाई देता था उसके अनुसार जो समझ पाये वही तो बताया था।

प्रश्न : जब कारण के बिना कार्य नहीं होता, तो कारण का कारण क्यों नहीं होता?

उत्तर : संसार में दो ही पदार्थ होते हैं– कारण और कार्य। जो कारण है वह कार्य नहीं हो सकता और जो जिस समय कार्य है वह कारण नहीं हो सकता। जिसका आदि–अन्त न हो, जिसका विभाग या संयोग–वियोग न होता हो वह कारण कहलाता है। जिसका आदि–अन्त हो, जिसका संयोग–वियोग होता है वह कार्य कहलाता है। जैसे आंख की आंख, सूर्य का सूर्य नहीं हो सकता वैसे ही सृष्टि की उत्पत्ति के कारण (ब्रह्म) का कारण नहीं हो सकता। अज्ञानी लोग तो मानते हैं कि स्थूल तत्वों के मेल से अपने आप बनी हुई होने के कारण यह सृष्टि कहलाती है, लेकिन यह ठीक नहीं है। विद्वानं लोगों का कथन है कि सृष्टि की उत्पत्ति से पहले प्रकृति कोहरे के समान अन्धकार से घिरी हुई अवस्था में विद्यमान रहती है। उस समय प्रकृति से युक्त परमेश्वर ही सक्रिय रहता है। जब प्रकृति के सूक्ष्म तत्व परमेश्वर के सम्पर्क में आते हैं तो वह अपने ताप के प्रभाव और ज्ञानशक्ति के द्वारा कुछ सूक्ष्म तत्वों को मिलाकर कुछ स्थूल तत्वों की रचना करता है। इस तरह 5 ज्ञानेन्द्रियां 5 कर्मेन्द्रियां और ग्यारहवां मन बनता है। मन ही वह प्रथम बीज है जिसमें सृष्टि रचना की इच्छा में काम का प्रभाव विद्यमान होता है जिससे अनेक प्रकार की औषधियां, वृक्ष और अन्न आदि उत्पन्न होते हैं फिर अन्न से वीर्य और वीर्य से शरीर उत्पन्न होता है। आदि सृष्टि मैथुनी नहीं होती। पहले परमात्मा स्त्रियों और पुरुषों के शरीर बनाकर उनमें जीवों का संयोग कर देता है उसके बाद उत्पत्ति का क्रम चलता रहता है जिससे यह सृष्टि मैथुनी कहाती है।

देखो! शरीर की कैसी अद्भुत रचना है। इसमें हड्डियों के जोड़ों का बना हुआ ढांचा, नाड़ियों के बन्धन, मांस का लेपन, चमड़ी का कवच, जिगर, फेफड़े, हृदय का स्पन्दन (धड़कन) खून साफ करने का प्रबन्ध, अग्नि का प्रबन्ध, रोमकूप,

thearyasamaj.org

आंख की सूक्ष्म पुतली आदि विभिन्न अंगों को बनाकर उनके संचालन का ज्ञान देना, जागना—सोना और स्वप्न अवस्था, भोगने के स्थान, कला—कौशल के ज्ञान के लिए बुद्धि का प्रबन्ध ऐसी सुन्दर रचना उस ईश्वर के सिवाय कौन कर सकता है।

इतना ही नहीं, अनेक प्रकार के रत्न और धातुओं को अपने भीतर समाए हुए सागर, पहाड़ और भूमि, बीजों में अति सूक्ष्म रूप में विद्यमान अनेक रंग—बिरंगे सुगन्धित फूल—पत्ते और खट्टे—मीठे, तीखे—कड़वे फलों वाले पेड़—पौधे, अनेक प्रकार के जीव—जन्तु, सुर्य, चन्द्र, तारे नक्षत्र और अनेक ब्रह्मांड ये सब उस ईश्वर के सिवाय कोई नहीं बना सकता। जब किसी वस्तु को देखें तो दो प्रकार का ज्ञान होता है। एक तो उस पदार्थ का ज्ञान जिससे वस्तु बनी है और दूसरों उसको बनाने वाले का ज्ञान। जैसे किसी सुन्दर आभूषण को देखकर यह पता चल जाता है कि वह सोने का बना हुआ है और उसे किसी कुशल सुनार ने बनाया है। इस प्रकार सृष्टि के भिन्न—भिन्न पदार्थों से उन्हें बनाने वाले परमेश्वर का होना सिद्ध होता है।

प्रश्न : मनुष्य की सृष्टि पहले हुई या पृथ्वी की?

उत्तर : ईश्वर हर एक काम को बड़ी सूझबूझ से करता है, उसने जीवों को बनाने से पहले पृथ्वी बनाई जिससे जीवों की स्थिति और पालन हो सके। यदि पृथ्वी न होती तो जीव रहते कहां?

प्रश्न : सृष्टि के आरम्भ में एक मनुष्य उत्पन्न हुआ या अनेक?

उत्तर : अनेक। जिन जीवों के गुण ईश्वरीय सृष्टि में उत्पन्न होने के योग्य थे, सृष्टि के आरम्भ में ईश्वर ने उनको अनेक रूपों में जन्म दे दिया। यर्जुवेद के एक मन्त्र के अनुसार सृष्टि के आरम्भ में सैंकड़ों हजारों मनुष्य उत्पन्न हुए। इसीलिए यह कहा जाता है कि हम सब एक पिता की सन्तान हैं।

प्रश्न : आदि सृष्टि में मनुष्य की उत्पत्ति बालक, युवा या वृद्ध अवस्था में से किसी एक में हुई थी या तीनों में?

उत्तर : युवावस्था में। अगर ईश्वर बच्चा उत्पन्न करता तो उसका पालन किसके द्वारा होता और यदि वृद्ध उत्पन्न करता तो नई सृष्टि की उत्पत्ति कैसे होती। युवावस्था में ही सन्तान उत्पन्न भी की जा सकती है और उसका पालन भी ठीक ढंग से किया जा सकता है।

thearyasamaj.org

प्रश्न : कभी सृष्टि का प्रारंभ है या नहीं?

उत्तर : नहीं। जैसे दिन के बाद रात और रात के बाद दिन का क्रम चलता रहता है, उसी प्रकार सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय का क्रम भी चलता रहता है। यह चक्र अनादि काल से इसी प्रकार चलता आ रहा है। जिस प्रकार दिन–रात के क्रम का आदि–अन्त नहीं है, उसी प्रकार सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय का भी कोई आदि–अन्त नहीं है। ईश्वर के गुण, कर्म, स्वभाव अनादि हैं, इनका कभी आरम्भ और अन्त नहीं होता, वैसे ही उसके बनाये इस जगत की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय भी अनादि है, इसका भी कभी आरम्भ और अन्त नहीं होता।

प्रश्न : क्या ईश्वर ने कुछ जीवों को मनुष्य, कुछ को हिंसक पशु, कुछ को शान्त स्वभाव पशु और कुछ को कीट–पतंग बनाकर पक्षपात नहीं किया?

उत्तर : जिस जीव के गुण कर्म जैसे होते हैं उसे वैसा ही जन्म मिलता है, इसमें पक्षपात कैसा? मनुष्य जन्म पाने वाले सभी जीव भी एक समान नहीं हैं, उनमें पाया जाने वाला अन्तर भी उनके कर्मों के अनुसार ही हैं।

प्रश्न : मनुष्य की आदि सृष्टि किस स्थान पर हुई?

उत्तर : तिब्बत में।

प्रश्न : आदि सृष्टि में एक जाति थी या अनेक?

उत्तर : एक ही मनुष्यजाति थी। श्रेष्ठ मनुष्य आर्य या देव बन गए और दुष्ट मनुष्य अनार्य या दस्यु (दानव) बन गए। फिर आर्यों के कर्म के आधार पर ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र चार भाग हो गये।

प्रश्न : फिर वे यहां कैसे आए?

उत्तर : जब आर्यों और अनार्यों में झगड़े होने लगे तब आर्य भूमि के इस भाग को खेती और पशुपालन के लिए उत्तम जानकर यहां आ बसे और इस देश का नाम आर्यावर्त हो गया।

प्रश्न : आर्यावर्त की सीमा कहां तक है?

उत्तर : उत्तर में हिमालय से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक, पूर्व में नेपाल के पूर्वी भाग के पहाड़ से निकलकर आसाम के पूर्व में ब्रह्मपुत्र तक और पश्चिम

thearyasamaj.org

में सरस्वती नदी जो अटक में सिन्धु नदी में मिलकर समुद्र में गिरती है। इस सारे भाग को आर्यावर्त कहते हैं।

प्रश्न : इससे पहले इस देश का नाम क्या था और यहां कौन लोग बसते थे?

उत्तर : इस देश का कोई नाम न था और न ही यहां कोई बसता था। सृष्टि की उत्पत्ति के बाद कुछ समय तिब्बत में रहकर आर्य यहां चले आए थे। आर्यों ने ही इस देश में बसकर इसका नाम आर्यावर्त रखा।

प्रश्न : कुछ लोग कहते हैं कि आर्य ईरान से आए थे इसलिए आर्यों का नाम आर्य हुआ। आर्यों के आने से पहले इस देश में असुर बसते थे। आर्यों ने अपने आपको देवता बताया, उनका असुरों से जो संग्राम हुआ वही देवासुर संग्राम कथाओं में आता है?

उत्तर : यह बिल्कुल झूठ है। आर्य धार्मिक, विद्वान और कुशल या दक्ष लोगों को कहते हैं। अनार्य लोग डाकू, दुष्ट, अविद्वान और अधार्मिक होते हैं। ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य इसी आधार पर आर्य कहे गये और शूद्र अनार्य या अनाड़ी। वेद कहता है कि हिमालय पहाड़ में आर्य और मलेच्छ असरुों का जो युद्ध हुआ था, वही देवासुर संग्राम था, जिसमें देवों अर्थात् आयों ने असुरों को हरा दिया था। इससे यह सिद्ध होता है कि आर्यावर्त के बाहर चारों ओर हिमायल के आगे जो स्थान हैं, उन्हीं के निवासियों को अनार्य कहा गया है। दक्षिण में होने वाले राम–रावण के युद्ध को देवासुर संग्राम नहीं कहा गया, इसे आर्यों और राक्षसों का युद्ध कहते हैं। किसी संस्कृत ग्रन्थ या इतिहास में यह नहीं लिखा है कि आर्य लोग ईरान से आकर यहां के जंगली लोगों को हराकर यहां बस गये। आर्यावर्त के उत्तर–पश्चिम में रहने वाले लोगों को असुर और दक्षिण में रहने वालों को राक्षस कहा गया है। आर्यावर्त के ठीक नीचे रहने वालों का नाम नाग और उनके देश का नाम पाताल है। नागवंश की राजकुमारी उलोपी और अर्जुन के विवाह का वर्णन महाभारत में मिलता है। वेदों का कुछ प्रचार आर्यावर्त से बाहर के देशों में भी हुआ था। दुर्भाग्य से परस्पर कलह के कारण यह देश पराधीन हो गया और उसी के परिणाम–स्वरूप आज यहां के निवासी दुःख भोग रहे हैं।

प्रश्न : जगत की उत्पत्ति को कितना समय हो गया?

thearyasamaj.org

उत्तर : वेदों के अनुसार इस सृष्टि का निर्माण एक अरब, सत्तानवें करोड़, उनतीस लाख, उनचास हजार पचानवें वर्ष पूर्व हुआ और उसी समय वेदों का प्रकाश हुआ। इस सत्य को अब विदेशी विद्वान भी स्वीकार करने लगे हैं।

प्रश्न : इस पृथ्वी को कौन धारण करता है? पृथ्वी को कुछ लोग शेषनाग के फन पर, कुछ बैल के सींग पर, कुछ वराह पर, कुछ वायु के आधार पर और कुछ सूर्य के आकर्षण आदि से अपने स्थान पर स्थित मानते हैं। इनमें से किसे सत्य मानें?

उत्तर : जो लोग नाग, बैल, वराह, कछुए आदि पर पृथ्वी को टिका हुआ मानते हैं उनसे पूछना चाहिए कि वे सब किसके आधार पर ठहरे हैं? बैल पर मानने वाले मुसलमान तो चुप हो जायेंगे लेकिन नाग पर मानने वाले कहेंगे कि नाग कछुए पर, कछुआ जल पर, जल अग्नि तथा वायु पर और वायु आकाश में ठहरा है। तो यह सब किस पर ठहरे हैं यह पूछे जाने पर उत्तर यही होगा कि परमेश्वर पर। जो बाकी रहता है उसे शेष कहते हैं। इसी शेष से किसी ने शेषनाग की कल्पना कर ली। लेकिन सच तो यह है कि परमेश्वर उत्पत्ति और प्रलय से पृथक या बाकी रहता है इसलिए उसे शेष कहते हैं और यह जगत उसी के आधार पर स्थित है। ऋग्वेद और अथर्ववेद के मन्त्रों में स्पष्ट कहा गया है कि जिसका कभी नाश नहीं होता, उस परमेश्वर ने भूमि, सूर्य और सब लोकों को धारण किया है।

प्रश्न : इतने–इतने बड़े भूगोलों को परमेश्वर कैसे धारण कर सकता होगा?

उत्तर : जैसे आकाश के सामने पृथ्वी और सागर के सामने जल का कण तुच्छ होता है, वैसे ही उस अनन्त परमेश्वर के सामने अनगिनत लोक भी तुच्छ हैं। यजुर्वेद में कहा गया है कि वह परमात्मा बाहर–भीतर सर्वत्र व्यापक है और सब प्रजाओं में व्यापक होकर सबको धारण कर रहा है।

जैसा कि ईसाई, मुसलमान और पौराणिक उसे विभु (सर्वव्यापक, बहुत बड़ा) न मानकर खुदा या अवतार मानते हैं तब तो वह सृष्टि का धारण कभी न कर सकता क्योंकि बिना प्राप्त किए किसी को कोई धारण नहीं कर सकता और इतना बड़ा ब्रह्मांड कोई मनुष्य प्राप्त (पकड़) नहीं कर सकता अतः वह सर्वव्यापक ईश्वर ही इस ब्रह्मांड को धारण किए हुए है। कुछ लोग कहते हैं कि सब लोक परस्पर आकषर्ण से स्थित हैं तो फिर परमेश्वर की क्या

आवश्यकता? तो इसका उत्तर यह होगा कि जिस वस्तु का आकार होता है उसकी उत्पत्ति और अन्त भी होता है, अगर इन लोकों का अन्त या सीमा है तो जिसके परे कोई दूसरा लोक नहीं है वह किसके आधार पर स्थित है।

अगर सारे भूगोलों या भूलोकों को मिलाकर जगत कहें तो सब जगत का धारणकर्त्ता और आकर्षणकर्त्ता इस जगत की रचना करने वाला ईश्वर ही है, अन्य कोई नहीं। यजुर्वेद के 'हिरण्यगर्भ' मन्त्र में कहा गया है कि पृथ्वी आदि प्रकाश रहित और सूर्य आदि प्रकाश–सहित लोकों और पदार्थों की रचना और धारण वही परमात्मा करता है जो सब में व्यापक है।

प्रश्न : पृथ्वी आदि लोक घूमते हैं या स्थिर हैं?

उत्तर : घूमते हैं।

प्रश्न : कुछ लोग कहते हैं, सूर्य घूमता है पृथ्वी नहीं घूमती, कुछ कहते हैं कि पृथ्वी घूमती है सूर्य नहीं घूमता, किसे सत्य मानें?

उत्तर : पृथ्वी (जल सहित) सूर्य के चारों और अपनी धुरी पर और सूर्य के चारों ओर भी घूमती है, इसी तरह दूसरे लोक भी घूमते हैं।

सूर्य किसी दूसरे लोक के चारों ओर तो नहीं घूमता, लेकिन सब लोकों के आकर्षण गुण में उनके साथ होने के कारण अपनी परिधि में ही घूमता रहता है।

इसलिए दोनों सिद्धान्त पूरी तरह ठीक नहीं हैं। हर ब्रह्मांड में एक–एक सूर्य है जो उस ब्रह्मांड के सभी लोकों को प्रकाशित करता है, जैसे सूर्य से यह पृथ्वी और चांद प्रकाशित होते हैं।

सूर्य के सामने पृथ्वी के अपनी धुरी पर घूमने के कारण ही रात–दिन बनते हैं और छोटे–बड़े होते हैं। सूर्य के चारों और घूमने से ही ऋतुएं बदलती हैं। जब भारत में दिन होता है तो अमेरिका में रात होती है और जब भारत में गर्मी होती है तो आस्ट्रेलिया में सर्दी होती है।

जो लोग कहते हैं कि सूर्य घूमता है पृथ्वी नहीं घूमती वे अज्ञानी हैं। सूर्य तो हमारी पृथ्वी से लाख गुना बड़ा है और करोड़ों कोस दूर है। यदि पृथ्वी ठहरी होती और सूर्य घूमता होता तो धरती पर हजारों वर्षों के दिन–रात होते।

जो सूर्य को स्थिर कहते हैं वे ज्योतिषविद्या को नहीं जानते। सूर्य के अपनी परिधि में घूमने से ही राशियां अपना स्थान बदलती हैं। भारी पदार्थ बिना घूमे

आकाश में नियत स्थान पर कभी स्थित रह ही नहीं सकता। इससे यही सिद्ध होता है कि सूर्य भी अपनी परिधि में घूमता है।

प्रश्न : सूर्य, चन्द्र तारे क्या वस्तुएं हैं और उनमें मनुष्यादि सृष्टि है या नहीं?

उत्तर : ये सब भूगोल या लोक है और इनमें मनुष्य आदि प्रजा भी रहती है। पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु, आकाश, चन्द्र, नक्षत्र और सूर्य ये आठ वसु हैं। इनमें प्रजा का वास है इसलिए ही ये वसु कहलाते हैं। इन लोकों की प्रजा वहां के वातावरण के अनुसार ही होगी। जैसे हमारी पृथ्वी पर अधिक ऊंचे क्षेत्रों के लोग छोटे कद के होते हैं और मैदानी भागों के लम्बे। भारतीय, यूरोपीय, जापानी और अफ्रीकी लोगों में भिन्नता स्पष्ट देखी जा सकती है। परमेश्वर का कोई भी काम बिना प्रयोजन के नहीं होता।

यदि इन लोकों में सृष्टि न होती तो इन्हें बनाने की आवश्यकता ही क्या थी? इसलिए सब लोकों में मनुष्य आदि सृष्टि है।

प्रश्न : जैसे इस देश में मनुष्यादि की आकृति और अंग आदि हैं क्या वैसे ही अन्य लोकों में भी हैं या नहीं?

उत्तर : आकृति में भेद हो सकता है। हमारी इस धरती पर ही चीन, भारत और अफ्रीका के लोगों का रंग–रूप और आकार समान नहीं है अर्थात् थोड़ा–थोड़ा भेद है। अतः जिस स्थान के लोगों की जैसी आवश्यकता होती है उसी के अनुसार ईश्वर उन्हें बनाता है। बर्फीले प्रदेशों में रेंडीयर और भालू पाए जाते हैं जबकि दूसरे क्षेत्रों में गाय, घोड़ा आदि पशु पाए जाते हैं। परन्तु जिस जाति की जैसी सृष्टि इस देश में है वैसी जाति की सृष्टि अन्य लोकों में भी वैसी ही होगी।

परमात्मा ने पूर्वकल्प में (प्रलय से पहले की सृष्टि) जिस प्रकार के सूर्य, चन्द्र, आकाश, भूमि और वहां सुख देने वाले जिन पदार्थों की रचना की थी, वैसे ही इस कल्प में भी रचे हैं तथा सब लोक–लोकान्तरों में भी बनाए हैं। कहीं जरा सा भी भेद नहीं होता।

प्रश्न : जिन वेदों का प्रकाश इस लोक में है, क्या उन्हीं का प्रकाश दूसरे लोकों में भी है?

उत्तर : जैसे एक राजा की नीति पूरे देश में एक सी होती है, उसी प्रकार

thearyasamaj.org

जो परमेश्वर सबका राजा या स्वामी है उसकी नीति भी उसके सभी लोकों में एक सी ही है।

प्रश्न : जब ये जीव और प्रकृति के तत्व अनादि हैं और ईश्वर के बनाए हुए नहीं हैं तो ईश्वर का इन पर अधिकार भी नहीं होना चाहिए, क्योंकि सब स्वतन्त्र हुए हैं?

उत्तर : जैसे राजा और प्रजा एक ही समय में होते हैं और राजा का प्रजा पर अधिकार होता है, वैसे ही जीव और जड़ पदार्थ परमेश्वर के अधीन हैं। जैसे सामर्थ्यवान राजा के अधीन कम सामर्थ्य वाली प्रजा होती है वैसे ही अनन्त सामर्थ्य वाले परमेश्वर के अधीन अल्प सामर्थ्य वाले जीव और जड़ पदार्थ रहते हैं। जैसे प्रजा स्वतन्त्र रूप से जीवन बिताते हुए भी राज्य के कानूनों में बंधी होती है और कानून तोड़ने वाले को दंड मिलता है, ठीक उसी प्रकार सृष्टि के जीव कर्म करने में स्वतन्त्र होते हुए भी कर्म फल भोगने में परतन्त्र हैं। ईश्वर सबको उनके कर्मों के अनुसार फल देता है।

●●●

thearyasamaj.org

9 विद्या-अविद्या और बंध-मोक्ष विचार

जो मनुष्य विद्या और अविद्या के स्वरूप को साथ ही साथ जानता है वह अविद्या (कर्म और उपासना) से मृत्यु को तर के विद्या अर्थात् यथार्थ ज्ञान से मोक्ष को प्राप्त होता है।
(यजु. अ. 40 मं 14)

अविद्या के लक्षण :

(1) नाशवान संसार और शरीर आदि को सदा बना रहने वाला समझ लेना या योगबल से शरीर सदा बना रहता है, ऐसा समझ लेना अविद्या है।

(2) अपवित्रता, झूठ बोलना, चोरी आदि कार्यों को बुरा न समझना।

(3) विषयों में सुख मानकर उनमें रुचि लेना।

(4) जड़ पदार्थों को चेतन समझना या मानना, ये चारों अविद्या के लक्षण हैं।

विद्या के लक्षण : नाशवान को नाशवान जानना, नित्य में नित्य, अपवित्र में अपवित्र, पवित्र में पवित्र, दुःख में दुःख, सुख में सुख, जड़ में जड़ और चेतन में चेतन का भाव जानना विद्या है अर्थात जो पदार्थ जैसा है उसको वैसा जानना विद्या है।

जो जैसा है उसे उसके विपरीत या उलटा जानना अविद्या है। कर्म और उपासना तब तक अविद्या है जब तक इनका सम्बन्ध केवल बाहरी और भीतरी क्रियाओं से होता है, ज्ञान से नहीं। लेकिन जब ज्ञान को साथ रखकर कर्म और उपासना की जाये तो यह विद्या हो जाती है। सरल शब्दों में कहें तो जो मनुष्य शुद्ध या पवित्र कर्म करता है, पवित्र हृदय से परमेश्वर की उपासना करता है और पवित्र ज्ञान रखता है वह मुक्ति को प्राप्त हो जाता है। इसके

theaaryasamaj.org

विपरीत आचरण करने वाला बन्धन में फंसा रहता है। मनुष्य किसी समय भी कर्म, उपासना और अज्ञान से रहित नहीं होता परन्तु उसे असत्य और अविद्या को छोड़कर सत्य और विद्या के आधार पर शुद्ध कर्म करने चाहिए, यही मुक्ति का साधन है।

प्रश्न : मुक्ति किसको प्राप्त नहीं होती?

उत्तर : जो जीव बन्धन में बंधे हुए हैं।

प्रश्न : बन्धन में कौन बंधे हैं?

उत्तर : जो जीव अधर्म, अज्ञान और अविद्या में फंसे हैं।

प्रश्न : बन्धन या मोक्ष स्वभाव से होता है या इसका कोई निमित्त है?

उत्तर : निमित्त से। अगर स्वभाव से होता तो जीव बन्धन और मुक्ति से कभी छुटकारा न पा सकता। जो बन्धन में है वह सदा बन्धन में रहता और मुक्त जीव सदा मुक्त ही रहता लेकिन ऐसा होता हुआ दिखाई नहीं देता।

प्रश्न : जीव ब्रह्म होने से वास्तव में न कभी आवरण (अज्ञान का परदा) में आता है, न जन्म लेता है, न बंधन में बंधता है, न साधना करता है, न छूटने की इच्छा करता है और न ही कभी इसकी मुक्ति होती है क्योंकि जब परमार्थ से बंध ही नहीं हुआ तो फिर मोक्ष कैसा?

उत्तर : ये कथन सत्य नहीं है। जीव का स्वरूप अल्प या सूक्ष्म होने से आवरण में आता है, शरीर के साथ जन्म लेता हुआ जान पड़ता है, पाप–रूप कर्मों के फल भोगने के लिए बन्धन में फंसता है, इस बन्धन को छुड़ाने का यत्न करता है, दुःख से छूटने की इच्छा करता है और शुभ कर्मों के करने से दुःखों से छूटकर परमेश्वर के परमानन्द को पाकर मोक्ष या मुक्ति का सुख भी भोगता है।

प्रश्न : सब धर्म देह और अन्तःकरण (मन) के हैं जीव के नहीं? क्योंकि जीव तो पाप–पुण्य से रहित केवल साक्षी ही है। सर्दी–गर्मी आदि शरीर के धर्म हैं आत्मा निर्लेप है अर्थात आत्मा को इनसे कोई लगाव नहीं है?

उत्तर : देह और अन्तःकरण जड़ हैं। उनको सर्दी–गर्मी का अनुभव नहीं होता। जैसे पत्थर को सर्दी–गर्मी का अनुभव नहीं होता वैसे ही मन और प्राण भी जड़ हैं इनको भी हर्ष–शोक आदि का अनुभव नहीं होता।

मनुष्य को सर्दी–गर्मी, हर्ष–शोक आदि का जो अनुभव होता है वह चेतन जीव ही उसे करवाता है। जैसे बाहरी इन्द्रियों से विषयों को भोगते हुए जीव सुखी या दुःखी होता है, वैसे ही अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार) से संकल्प, विकल्प, निश्चय, स्मरण और अभिमान का करने वाला दंड और सम्मान का भागी होता है।

जैसे तलवार से किसी का वध करने पर दंड तलवार को नहीं बल्कि वध करने वाले को मिलता है, वैसे ही देह, इन्द्रियों अन्तःकरण और प्राण रूपी साधनों से अच्छे–बुरे कर्म करने वाला जीव सुख–दुःख भोगता है। जीव कर्मों का साक्षी नहीं है बल्कि वह कर्मों को करता है और उनका फल भी भोगता है। कर्मो का साक्षी तो परमात्मा है जो जीव को उसके कर्मों के अनुसार फल देता है। जीव कर्मों में लिप्त होता है, परमात्मा नहीं।

प्रश्न : जीव ब्रह्म का प्रतिबिम्ब है जैसे दर्पण (शीशा) के टूटने से बिंब (परछाई) को हानि नहीं होती वैसे ही अन्तःकरण में ब्रह्म का प्रतिबिंब तब तक रहता है जब तक शरीर में जीव रहता है। जब अंतःकरण न होगा तब तो जीव मुक्त होगा?

उत्तर : प्रतिबिंब साकार का साकार वस्तु में होता है। मुख और दर्पण दोनों साकार हैं और पृथक भी हैं। अगर अलग–अलग न हों तो प्रतिबिंब हो ही नहीं सकता। ब्रह्म तो निराकार और सर्वव्यापक है इसलिए उसका प्रतिबिंब हो ही नहीं सकता।

प्रश्न : देखो! जैसे गम्भीर स्वच्छ जल में निराकार और व्यापक आकाश का आभास (झलक) पड़ता है वैसे स्वच्छ अन्तःकरण में परमात्मा का आभास पड़ता है। इसीलिए उसको चिदाभास कहते हैं अर्थात् जीवात्मा पर ब्रह्म के ज्ञान का प्रकाश पड़ता है?

उत्तर : जिस आकाश का आपने उदाहरण दिया है वह साकार है ही नहीं तो उसको कोई आंख से कैसे देख सकता है। जो वस्तु आंख से दिखाई नहीं देती अर्थात् निराकार है तो फिर उसका आभास कैसा?

प्रश्न : यह जो ऊपर की ओर नीला और धुंधलापन है, वह नीला आकाश दिखाई देता है या नहीं?

उत्तर : नहीं।

प्रश्न : तो वह क्या है?

उत्तर : पृथ्वी, जल और अग्नि के अलग–अलग सूक्ष्म कण हैं। नीलापन जलकणों का, धुंधलापन पृथ्वी से उड़े हुए जो धूलकण वायु में घूमते हैं उनका और सूर्य के प्रकाश में जब यह एकाकार दिखाई पड़ते हैं तो हमें आकाश नीला जान पड़ता है और जो प्रतिबिम्ब जल में दिखाई देता है वह इन्हीं कणों का है, आकाश का नहीं। यह कण साकार हैं, निराकार नहीं।

प्रश्न : जैसे घटाकाश, मठाकाश, मेघाकाश और महदाकाश के व्यवहार में भेद होते हैं वैसे ही ब्रह्म के ब्रह्मांड और अन्तःकरण की उपाधि (भ्रम से एक वस्तु का कुछ और दिखाई देना अर्थात् प्रतिष्ठा या नाम) के भेद से ईश्वर और जीव नाम होता है। जब घटादि नष्ट हो जाते हैं तब महाकाश ही कहाता है?

उत्तर : यह बात अज्ञानी लोग ही कहते हैं क्योंकि आकाश कभी नष्ट नहीं होता। वैसे भी आपका यह कथन ठीक नहीं है क्योंकि व्यवहार में 'घड़ा लाओ' ही कहा जाता है 'घड़े का आकाश लाओ' कोई नहीं कहता।

प्रश्न : जैसे सागर में मछलियां, धरती में कीड़े और आकाश में पक्षी आदि घूमते हैं, वैसे ही ब्रह्म में सब अन्तःकरण घूमते हैं। वे स्वयं तो जड़ हैं परन्तु सर्वव्यापक परमात्मा की सत्ता से उसी प्रकार चेतन हो रहे हैं जैसे अगिन में तप कर लोहा अग्निरूप हो जाता है। जैसे पक्षी घूमते–फिरते हैं और आकाश ठहरा हुआ है, उसी प्रकार जीव और ब्रह्म को मानने में कोई दोष नहीं आता?

उत्तर : तुम्हारा यह उदाहरण ठीक नहीं है क्योंकि जो सर्वव्यापी ब्रह्म अंतःकरणों में प्रकाशमान होकर जीव हो जाता है तो उसमें सर्वज्ञ आदि गुण होते हैं, या नहीं। अगर तुम यह कहते हो कि आवरण (परदा) होने से सर्वज्ञता नहीं होती, तो बताओ ब्रह्म ढंका हुआ और खंडित (टुकड़ों में बंटा हुआ) है या अखंडित? अगर तुम अखंडित कहते हो तो बीच में कोई परदा हो ही नहीं सकता। अगर परदा नहीं है तब तो वह ब्रह्म सर्वज्ञ है। अगर तुम यह कहते हो कि ब्रह्म अपने स्वरूप को भूलकर अन्तःकरण के साथ चलता है, स्वरूप से नहीं, तो इसका मतलब यह हुआ कि ब्रह्म स्वयं नहीं चलता।

इस तरह जिस–जिस स्थान से अन्तःकरण जितना–जितना आगे बढ़ता

thearyasamaj.org

जायेगा उस–उस स्थान का ब्रह्म अज्ञानी और भ्रमित होता चला जायेगा और जितना–जितना पीछे छूटता चला जायेगा वहां–वहां का ब्रह्मज्ञानी और पवित्र मुक्त होता चला जायेगा। इस प्रकार तो ब्रह्म को सृष्टि के अन्तःकरण बिगाड़ते रहेंगे और क्षण में बन्धन, क्षण में मुक्ति हुआ करेगी।

अगर तुम्हारे कहे हुए को सत्य मानें तब तो किसी जीव को बीते हुए समय में देखी–सुनी हुई कोई बात याद ही न होती क्योंकि देखने–सुनने वाला ब्रह्म तो अन्तःकरण के साथ आगे बढ़ गया, वहा रहा ही नहीं, लेकिन ऐसा होता नहीं और जीव को बीते हुए समय की बातें याद रहती हैं। इस प्रकार ब्रह्म और जीव कभी एक नहीं हो सकते, दोनों अलग–अलग हैं।

प्रश्न : यह सब तो एक वस्तु में दूसरी वस्तु की स्थापना करना है। जैसे ब्रह्म में सब वस्तुओं, सब जगत और इसके व्यवहार की स्थापना करके जिज्ञासु (जानने की इच्छा रखने वाले) को उस ब्रह्म का बोध करवाना हो। वास्तव में सब ब्रह्म ही हैं।

(नोट : यहां प्रश्न करने वाले से ही प्रश्न पूछकर उत्तरदाता (स्वामी जी) ने उसका भ्रम दूर किया है)।

उत्तर : एक वस्तु में दूसरी वस्तु की स्थापना करने वाला है कौन?

प्रश्न : जीव।

उत्तर : तुम जीव किसको कहते हो?

प्रश्न : अन्तःकरण से अलग किए हुए चेतन को।

उत्तर : अन्तःकरण से अलग किया हुआ चेतन कोई दूसरा है या वही ब्रह्म है?

प्रश्न : वही ब्रह्म है।

उत्तर : तो क्या ब्रह्म ने ही अपने आपमें जगत की झूठी कल्पना कर ली?

प्रश्न : हाँ! लेकिन ब्रह्म की इससे क्या हानि होती है।

उत्तर : होती क्यों नहीं? जो झूठी कल्पना करता है, क्या वह झूठा नहीं होता?

प्रश्न : नहीं। क्योंकि जो मन वाणी से कल्पित या कथित है वह सब झूठा है।

उत्तर : फिर मन वाणी से झूठी कल्पना करने और झूठ बोलने वाला ब्रह्म कल्पित और झूठ बोलने वाला हुआ या नहीं?

प्रश्न : हां, हमको इसमें आपत्ति है जो तुम कहते हो।

उत्तर : वहा रे झूठे वेदान्तियो! तुमने सत्य स्वरूप, सत्यकाम, सत्य–संकल्प परमात्मा को मिथ्याचारी कर दिया, यही तुम्हारी दुर्गति का कारण है। किस वेदसूत्र या उपनिषद् में लिखा है कि परमेश्वर मिथ्या संकल्प और मिथ्यावादी है। कोतवाल चोर को दंड दे यह बात तो समझ में आती है परन्तु चोर कोतवाल को दंड दे यह समझ नहीं आता। तुम स्वयं मिथ्या–संकल्प और मिथ्यावादी हो और अपना दोष व्यर्थ ही ब्रह्म में लगाते हो। यदि ब्रह्म मिथ्याज्ञानी और मिथ्यावादी होता तो यह सब अनन्त ब्रह्म वैसा ही हो जाता। क्योंकि वह एक रस है, सत्य–स्वरूप, सत्यवादी, सत्यमानी और सत्यकारी है इसलिए जो दोष तुम ब्रह्म पर लगाते हो वे सब तुम्हारे अपने दोष हैं, ब्रह्म के नहीं। जिसको तुम विद्या कहते हो, वह अविद्या है क्योंकि आप ब्रह्म न होते हुए भी अपने आप को ब्रह्म मानते हो और ब्रह्म को जीव मानते हो। जो सर्वव्यापक है वह सीमित, अज्ञानी और बन्धन में बंधा हुआ नहीं हो सकता। इसलिए अल्पज्ञ, एकदेशी (सीमित) जीव ही बंधन में बँधता है, सर्वज्ञ, सर्वव्यापी ब्रह्म नहीं।

मुक्ति और बंध भेद

प्रश्न : मुक्ति किसको कहते हैं?

उत्तर : जिसमें छूट जाना हो उसे मुक्ति कहते हैं।

प्रश्न : किससे छूट जाना? किससे सब छूटना चाहते हैं?

उत्तर : दुख से। दुःख से छूट जाने की इच्छा सब करते हैं।

प्रश्न : छूटकर किसको प्राप्त होते है और कहां रहते हैं?

उत्तर : सुख को प्राप्त होते हैं और ब्रह्म में रहते हैं।

प्रश्न : मुक्ति और बन्ध किन बातों से होता है?

उत्तर : परमेश्वर की आज्ञा पालने, अधर्म, अविद्या, कुसंग, बुरे संस्कारों और बुरे व्यसनों से दूर रहने, सत्य बोलने, परोपकार करने, विद्या ग्रहण करने, धर्म की वृद्धि करने, इन सब पर आचरण करते हुए परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना

thearyasamaj.org

और उपासना करने अर्थात् योगाभ्यास करने, विद्या पढ़ने–पढ़ाने, धर्म से पुरुषार्थ करते हुए ज्ञान की उन्नति करने, शुभ कर्म करने, पक्षपात रहित न्याय और धर्म के अनुसार आचरण करने से मुक्ति प्राप्त होती है। इसके विपरीत आचरण करने से बंध होता है।

प्रश्न : मुक्ति में जीव का नाश हो जाता है या विद्यमान रहता है?

उत्तर : विद्यमान रहता है।

प्रश्न : वह कहां रहता है?

उत्तर : ब्रह्म में।

प्रश्न : ब्रह्म कहां है? वह मुक्त जीव एक स्थान पर रहता है या स्वेच्छाचारी होकर सब जगह घूमता है?

उत्तर : जो ब्रह्म सर्वत्र पूर्ण है उसी में रहता हुआ मुक्त जीव बिना किसी बाधा के आनन्दपूर्वक स्वतन्त्र विचरता है।

प्रश्न : मुक्त जीव का स्थूल शरीर रहता है या नहीं?

उत्तर : नहीं रहता।

प्रश्न : जब शरीर नहीं रहता फिर वह सुखः–दुःख का भोग कैसे करता है?

उत्तर : मुक्ति में जीव के सत्य संकल्प आदि स्वाभाविक गुण–सामर्थ्य तो रहते हैं, केवल भौतिक शरीर नहीं रहता। जैसे शरीर के आधार में रहता हुआ जीव इन्द्रियों से सुख भोगता है वैसे ही मुक्ति में जीव अपनी संकल्प शक्ति से सब आनन्द भोग लेता है। जब सुनना चाहता है तब कान, स्पर्श करना चाहता है तो त्वचा, देखने के लिए नेत्र, स्वाद के लिए जीभ, गन्ध के लिए नाक, संकल्प–विकल्प के लिए मन, निश्चय करने के लिए बुद्धि, स्मरण करने के लिए चित्त, अहंकार के लिए रूप आदि की अपनी स्वशक्ति से जीवात्मा मुक्ति में संकल्प रूपी शरीर से सब काम ले लेता है और आनन्द भोगता है।

प्रश्न : उसकी शक्ति कितनी प्रकार की और कितनी है?

उत्तर : मुख्य शक्ति तो एक है लेकिन उसके 24 भाग हैं। बल, पराक्रम, आकषर्ण, प्रेरणा, गति, भीषण, विवेचन, क्रिया, उत्साह, स्मरण, निश्चय, इच्छा, प्रेम, द्वेष, संयोग, विभाग, संयोजक, विभाजक, श्रवण, स्पर्श, दर्शन, स्वाद, गन्ध

thearyasamaj.org

लेना और ज्ञान ये 24 प्रकार के सामर्थ्य जीव में हैं। इसी सामर्थ्य से जीव मुक्ति में सुख को भोगता है। यदि जीव का नाश हो जाता तो मुक्ति का सुख कौन भोगता। इसीलिए मुक्ति का अर्थ नाश नहीं बल्कि दुःखों से छूटकर आनन्दरूप, सर्वव्यापक, अनन्त परमेश्वर में जीवों का आनन्द में रहना है।

कुछ विद्वान मानते हैं कि मुक्ति में जीव के साथ मन भी रहता है, कुछ जीव के साथ मन, सूक्ष्म इन्द्रियों और प्राण का रहना मानते हैं, कुछ बुद्धि का भी साथ होना मानते हैं। कुछ विद्वान मुक्ति में भाव और अभाव दोनों का होना मानते हैं अर्थात् शुद्ध और पवित्र जीव मुक्ति में बना रहता है और वहां पाप, अज्ञान और अपवित्रता का अभाव होता है।

परन्तु छान्दोग्य उपनिषद् में कहा गया है कि जीव को उस सत्यकाम, सत्यसंकल्प परमात्मा की खोज और जानने की इच्छा करनी चाहिए जो सब प्रकार के पाप, जरा (बुढ़ापा), मृत्यु, शोक, भूख–प्यास और सुख–दुख से रहित है। जिस परमात्मा के सम्बन्ध से मुक्त जीव लोकों और सब कामों (सुखों) को प्राप्त होता है, जो परमात्मा को जानकर मोक्ष के साधन और अपने को शुद्ध करना जानता है, वह मुक्ति को प्राप्त जीव शुद्ध दिव्य नेत्र और मन से कामों को देखता, प्राप्त होता हुआ रमण करता है। विद्वान लोग मुक्ति पाने के लिए उस परमात्मा की उपासना करते हैं जो सबका अन्तर्यामी आत्मा है और उसी परमात्मा में स्थित होकर मोक्ष के सुख को भोगते हैं। मुक्त जीव स्थूल शरीर छोड़कर संकल्पमय शरीर से आकाश में परमेश्वर में विचरते हैं क्योंकि जो शरीरवाले होते हैं वे सांसारिक दुःखों से रहित नहीं हो सकते। जीवात्मा का निवासस्थान यह स्थूल शरीर नाशवान है। इसकी स्थिति ठीक उसी प्रकार है जैसे शेर के मुख में बकरी क्योंकि वह मृत्यु के मुख में रहता है। शरीर–रहित मुक्त जीव भी ब्रह्म में रहता है। उसे सांसारिक सुख–दुःख छू भी नहीं पाते इसलिए सदा आनन्द से रहता है।

प्रश्न : जीव मुक्ति को प्राप्त होकर पुनः जन्म–मरण रूप दुःख में कभी आते हैं या नहीं? उपनिषदों और गीता के वचनों से ऐसा जान पड़ता है कि मुक्ति वही है जिसमें जीव बन्धन से छूटने के बाद संसार में नहीं आता?

उत्तर : वेद इस बात को नहीं मानता है। ऋग्वेद में प्रश्न–उत्तर रूप में इसे इस प्रकार स्पष्ट किया गया है।

(1) हम लोग किसका नाम पवित्र जानें?

हम उस स्व–प्रकाश, अनादि, सदा मुक्त परमात्मा को पवित्र जानें।

(2) कौन नाशरहित पदार्थों के मध्य में विद्यमान देव सदा प्रकाश–रूप है?

वह प्रकाशस्वरूप परमात्मा ही इन सब पदार्थों में विद्यमान रहता है और सारे संसार को प्रकाशित करता है।

(3) कौन हमको मुक्ति का सुख भोगने को देता है और फिर इस संसार में जन्म देकर माता–पिता के दर्शन कराता है?

ईश्वर ही हमको मुक्ति का आनन्द देता है और उस आनन्द को भोगने के बाद पृथ्वी में पुनः माता–पिता के यहां जन्म देकर उनके दर्शन कराता है।

(ऋक् मं 1 सू 24, मं 1 और 2)

वही परमात्मा मुक्ति की व्यवस्था करता है और सबका स्वामी है। बंध और मुक्ति तो हमेशा रहती है, पूरी तरह एक दूसरे से अलग नहीं होती लेकिन एक ही अवस्था सदा बनी नहीं रहती। बन्ध–मुक्त जीव जैसे इस समय हैं, पहले भी थे और आगे भी होंगे।

प्रश्न : जब दुःख पूरी तरह से समाप्त हो जाए तो वही मुक्ति कहाती है। क्योंकि जब मिथ्याज्ञान, अविद्या, लोभादि दुर्गुण, विषय–वासनाओं में प्रवृत्ति, जन्म और दुःख के फल बार–बार भोगकर दुःखों से छुटकारा हो जाए तो जो मोक्ष मिलता है क्या वह सदा बना रहता है?

उत्तर : यह आवश्यक नहीं है कि अत्यन्त शब्द का अर्थ पूरी तरह न होना ही हो। आमतौर पर इस शब्द का प्रयोग बहुत के लिए किया जाता है। यहां भी दुःख का अत्यन्त विच्छेद का अर्थ बहुत ही जानें।

प्रश्न : जीव मुक्ति की अवस्था में कितने समय तक रहने के बाद फिर जन्म लेता है?

उत्तर : मुंडक उपनिषद में कहा गया है कि मुक्त जीव महाकल्प तक ब्रह्म के आनन्द को भोगकर फिर संसार में आते हैं। महाकल्प तो बहुत लम्बा समय होता है अतः जीव लम्बे समय तक मुक्ति का सुख भोगने के बाद संसार में दोबारा जन्म लेता है।

thearyasamaj.org

प्रश्न : संसार के सभी विद्वान् मुक्ति पाने का अर्थ जन्म–मरण के चक्कर से सदा के लिए छूटना ही मानते हैं।

उत्तर : यह बात कभी नहीं हो सकती क्योंकि परिवर्तन सृष्टि का अटल नियम है। जीव का शरीर और उसके साधन सीमित होते हैं इसलिए उनका फल अनन्त नहीं हो सकता। अनन्त आनन्द को भोगने के लिए जीव में असीम सामर्थ्य, कर्म और साधन होने चाहिए, जो जीव में नहीं हैं। जीवों के शरीर, कर्म और साधन नाशवान होते हैं तो उनका फल भी हमेशा बना रहने वाला नहीं हो सकता। अगर कोई भी जीव मुक्ति पाने के बाद, दोबारा लौटकर इस संसार में न आए तब तो इस संसार में जीव अब तक समाप्त हो जाते।

प्रश्न : जितने जीव मुक्त होते हैं, ईश्वर उतने नए उत्पन्न कर देता है इसलिए संसार में जीव कभी समाप्त नहीं होते?

उत्तर : सृष्टि का यह अटल नियम है कि जो उत्पन्न होता है वह मरता भी अवश्य है। यदि तुम्हारी बात मान ली जाए तब तो सभी जीव मुक्ति पाकर एक स्थान पर इकट्ठे हो जायेंगे और उनकी भीड़ जमा हो जायेगी। जब सब आते जायें और कोई जाये न, तो उस भीड़ में मुक्ति का सुख कहां मिलेगा।

सुख का अनुभव दुःख के बिना नहीं होता। जब सुख ही सुख हो तो जीव उस सुख से भी ऊब जाता है और उसे सुख भी दुःख लगने लगता है। यदि ईश्वर अंत वाले कर्मों का अनन्त फल दे तो उसका न्याय नष्ट हो जायेगा। ईश्वर अल्पज्ञ और अल्प सामर्थ्य वाले जीव पर अनन्त सुख का भार डालकर अन्याय नहीं करता। वह जीव को उतना ही सुख देता है जितना भोगने की उसमें सामर्थ्य होती है। अगर मुक्त जीव लौटकर न आये और ईश्वर नए जीव बनाता जाये तब तो उन साधनों का भंडार ही समाप्त हो जाता जिनसे ईश्वर जीवों की रचना और पालन करता है। व्यय के साथ आय का होना भी जरूरी है, यही प्रकृति का नियम है। जैसे दिन के बाद रात का होना निश्चित है वैसे ही जन्म के बाद मृत्यु और मोक्ष के बाद बंध भी अनिवार्य है।

प्रश्न : जैसे परमेश्वर नित्यमुक्त और पूर्णसुखी है, अगर जीव भी उसी प्रकार नित्यमुक्त और सुखी रहे तो इसमें क्या दोष है?

उत्तर : परमेश्वर की शक्तियां असीमित हैं, जीव की सीमित। परमेश्वर अनन्त स्वरूप, सर्वज्ञ, सामर्थ्य, गुण कर्म और स्वभाव होने से अविद्या और दुःख के

बन्धन में नहीं गिर सकता लेकिन जीव शुद्ध स्वरूप, अल्पज्ञ और सीमित गुण–कर्म–स्वभाव वाला होने के कारण परमेश्वर के समान कभी नहीं हो सकता।

प्रश्न : अगर ऐसी बात है तब तो मुक्ति भी जन्म–मरण के समान ही है?

उत्तर : मुक्ति जन्म–मरण के समान नहीं है। मुक्ति का आनन्द भोगने का समय इतना अधिक होता है जिसमें 36000 बार सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय हो जाता है। इतने लम्बे समय तक दुःख न होकर केवल सुख ही मिले तो क्या यह मामूली बात है? यदि हम आज खाना खाकर कल की चिन्ता करते हैं तो फिर जीव यह जन्म पाकर अगले जन्म में सुख पाने का प्रबन्ध क्यों न करे। जैसे यह जानते हुए भी कि मरना अवश्य है, तो भी मनुष्य जीने का प्रबन्ध करता है वैसे ही जन्म पाकर मुक्ति पाने और मुक्ति पाकर जन्म में लौटकर आना है तो उसे पाने का उपाय भी करना चाहिए।

प्रश्न : मुक्ति के साधन क्या–क्या हैं?

उत्तर : मुक्ति का सुख पाने के लिए मनुष्य को सत्य और धर्म के अनुसार आचरण करना, शुद्ध व्यवहार करना, विद्या ग्रहण करना, पक्षपात रहित न्याय करना, परोपकार करना, परमेश्वर की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करना, विद्या और धर्म की उन्नति में लगे रहना चाहिए। इसके विपरीत पाप का आचरण करने और अधर्म पर चलने से दुःख ही होता है।

मुक्ति पाने के साधन

जीव को स्वयं अपना ज्ञान प्राप्त होना चाहिए। सत्पुरुषों के संग से सत्य–असत्य, धर्म–अधर्म, कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य में भेद करने का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। शरीर की रचना और इसमें पाए जाने वाले पांचकोशों का ज्ञान होना चाहिए।

(1) अन्नमय कोश जिसमें त्वचा से लेकर अस्थि पिंजर सब आ जाते हैं। यह मनुष्य का बाहरी शरीर है जिसका पोषण हमारे खाए हुए भोजन से होता है।

(2) प्राणमय कोश में पांच प्रकार के प्राण आते हैं। श्वास छोड़ते समय भीतर से बाहर आने वाली वायु प्राण कहलाती है। श्वास लेते समय

भीतर जाने वाली वायु अपान कहलाती है। जो वायु नाभि में स्थित होकर सारे शरीर में रस पहुँचाती है वह समान, जो वायु कंठ से अन्न जल खींच कर शरीर को बल देती है वह उदान और जो वायु सारे शरीर को कार्य में लगाती है वह व्यान कहलाती है।

(3) मनोमय कोश है जिसमें मन के साथ अहंकार और हाथ–पांव आदि पांच कर्मेन्द्रियां होती हैं।

(4) विज्ञानमय कोश है जिसमें बुद्धि, चित्त और कान, नाक आंखें आदि पांच ज्ञानेन्द्रियां होती हैं जिनके द्वारा जीव व्यवहार करता है।

(5) आनन्दमय कोश है जिसमें प्रीति, प्रसन्नता, आनन्द के कारण, आनन्द की कमी और अधिकता आदि आते हैं जिनका आधार कारण–रूप प्रकृति है। इन पांच कोशों के द्वारा ही जीव सब प्रकार के कर्म और उपासना आदि व्यवहार करता है।

मनुष्य का शरीर तीन अवस्थाओं में रहता है : जागृत, स्वप्न और सुषुप्ति (नींद)।

मनुष्य के शरीर को हम तीन भागों में बाँटकर जान सकते हैं।

(1) स्थूल शरीर, जो हमें दिखाई देता है (2) सूक्ष्म शरीर, इसमें 5 प्राण, 5 ज्ञानेन्द्रियां, 5 कर्मेन्द्रियां, मन और बुद्धि 17 तत्व होते हैं। (3) कारण शरीर जिसे जीव कहते हैं जो मुक्ति का सुख भोगता है। स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर तो जन्म–मृत्यु तक रहते हैं परन्तु कारण शरीर मरने के बाद भी रहता है जिसे 'जीव निकल गया' कहा जाता है। जीव शरीर के रूपों और अवस्थाओं से अलग होता है यही कारण है कि मृत्यु के समय जीव निकल जाता है और शरीर रह जाता है। इससे स्पष्ट हो जाता है कि जीव ही इस शरीर को धारण करता है, कर्म करने की प्रेरणा देता है और कर्मों के फल भोगता है। बिना जीव के शरीर के जड़–पदार्थ सुख–दुःख का भोग और पाप–पुण्य के कर्म कर ही नहीं सकते। जब जीव को शरीर की इन्द्रियां, मन और बुद्धि अच्छे–बुरे कर्मों में लगा देती हैं तो उसका झुकाव सांसारिक कामों की ओर हो जाता है और वह बंध का दुःख भोगता है। लेकिन जब जीव इन्द्रियों के वश में न होकर उस परमात्मा की शिक्षा के अनुसार चलता है तो उसे बुरे कर्मों से भय, सन्देह और लज्जा अनुभव होती है और अच्छे कर्म करने पर भी अपने भीतर से ही आनन्द, उत्साह

thearyasamaj.org

और निर्भयता का अनुभव होता है। ऐसी अवस्था में जीव बाहर से विमुख होकर परमात्मा की ओर झुक जाता है ओर मुक्ति को भोगता है।

वैराग्य : विवेक के द्वारा सत्य और असत्य को जानना, परमेश्वर की आज्ञा का पालन और उपासना करते हुए सत्य–आचरण करना और असत्य–आचरण से दूर रहना।

इन्द्रिय संयम : शम, दम, उपरति, तितिक्षा, श्रद्धा और समाधान ये छः प्रकार के कर्म करना। अपनी आत्मा और अन्तःकरण को अधर्म से हटाकर धर्म में लगाना शम कहलाता है। इन्द्रियों को बुरे कामों से हटाकर काबू में रखना दम कहलाता है। बुरे कर्म करने वालों से दूर रहना उपरति कहलाता है। निन्दा–स्तुति, हानि–लाभ में समान रहते हुए मुक्ति साधनों में लगे रहना तितिक्षा कहलाता है। वेद आदि सत्यशास्त्रों और आप्तविद्वानों (कुशल) के उपदेशों पर विश्वास रखना श्रद्धा कहलाती है। चित्त की एकाग्रता समाधान कहलाती है।

मोक्ष प्राप्त करने की चाह : जैसे प्यासे को जल के सिवाय कुछ अच्छा नहीं लगता, वैसे ही मुक्ति चाहने वाले को मुक्ति के साधनों को छोड़कर कोई दूसरा कर्म अच्छा नहीं लगना चाहिए। जो मनुष्य इन चारों साधनों को करता है वहीं मोक्ष का अधिकारी हो जाता है। वह ब्रह्म की प्राप्ति के लिए वेद आदि शास्त्रों के विषय को भली प्रकार समझ कर कार्य और कारण में संबंध की जानकारी प्राप्त करता है। अनेक शास्त्रों में ब्रह्म के विषय में जो कहा गया है, जीव उसमें मेल बनाकर ब्रह्म को जानने और सब दुःखों को दूर करने का प्रयत्न करता है तभी जीव दुःखों से छूटकर परमानन्द को प्राप्त होकर मुक्ति–सुख को पाता है। मुक्ति चाहने वाले को विद्वानों के ब्रह्म–विद्या संबंधी उपदेश शांत चित्त से, ध्यान देकर सुनने चाहिए और उन पर एकान्त में बैठकर मनन (विचार) करना चाहिए। यदि कहीं कुछ शंका हो तो दोबारा पूछकर उसे दूर करना चाहिए। समझ आ जाने के बाद समाधि या ध्यान में बैठकर सोचना चाहिए कि जो सुना है, वैसा है या नहीं। ध्यानयोग के बाद जैसा पदार्थ गुण–कर्म–स्वभाव हो उसे वैसा जान लेना अर्थात् साक्षात्कार करना है।

मुक्ति चाहने वाले जीव को क्रोध, आलस्य, मलीनता आदि तमोगुणों, ईर्ष्या–द्वेष, काम, अभिमान आदि रजोगुणों को त्याग कर शांत–स्वभाव, पवित्रता, विद्या–विचार आदि सतोगुणों को धारण करना चाहिए। सुखी जनों से मित्रता, दुःखी जनों पर दया, पुण्यात्माओं से मिलकर प्रसन्नता ओर दुष्टात्माओं से अलग

रहने का व्यवहार करना चाहिए। मुक्ति चाहने वाले को प्रतिदिन कम से कम दो घंटे ध्यान में बैठना चाहिए जिससे भीतर के मन आदि पदार्थों का साक्षात् हो। ईश्वर चेतन और ज्ञान–स्वरूप होने के कारण मन की जैसी अवस्था होती है, उसे वैसा ही देखता है। उसे इन्द्रियों प्राणों आदि का ज्ञान होने के कारण जो कुछ पहले देखा हो, याद रहता है। वह एक ही समय में अनेक पदार्थों को जानता, धारण–कर्त्ता, आकर्षणकर्त्ता और सबसे अलग है। इसीलिए तो वह स्वतन्त्र रहकर कार्य करने वाले जीवों को प्रेरणा देने वाला अध्यक्ष या प्रधान है। बुद्धि को आत्मा से भिन्न न समझना, सुख में प्रीति, राग–द्वेष, दुःख में अप्रीति, सदैव जीवित रहने की इच्छा, मृत्यु से भय आदि अविद्या को योगाभ्यास, विज्ञान, विज्ञान से छुड़ाकर ही जीव ब्रह्म के आनन्द या मुक्ति को पा सकता है।

प्रश्न : जैसी मुक्ति आप मानते हैं, वैसी कोई नहीं मानता। जैनी शिवपुर जा के चुप बैठे रहना, ईसाई चौथे और मुसलमान सातवें आसमान में हरकर आनन्द भोगना, कोई गोलोक, कैलाश या बैकुण्ठ जाके सुन्दर स्त्री और भोजन वस्त्र आदि का आनन्द भोगना, पौराणिक लोक सालोक्य (ईश्वर के लोक में रहना) सानुज्य (छोटे भाई के समान ईश्वर के साथ रहना) सारूप्य (ईश्वर के समान बन जाना), सामीप्य (सेवक के समान ईश्वर के पास रहना) और सायुज्य (ईश्वर से जुड़ जाना) आदि मुक्ति के भिन्न–भिन्न प्रकार मानते हैं। वेदान्ती लोग ब्रह्म में लीन हो जाने को मोक्ष मानते हैं इस बारे में आप क्या कहते हैं?

उत्तर : यदि मुक्ति के बाद यहां की तरह भोजन–वस्त्र, स्त्री आदि का सुख ही भोगना है, वह तो इस संसार में मिल ही रहा है फिर उसके लिए प्रयत्न करने की क्या आवश्यकता है? गोलोक, कैलाश या बैकुण्ठ जाने को मुक्ति मानने वाले भी, इन्हीं सुखों को भोगना चाहते हैं क्योंकि उनके उपास्य देव लक्ष्मी–पार्वती आदि के साथ सुख भोगते हैं। जहां भोग होते हैं, वहां रोग भी होते होंगे और बुढ़ापा भी होता होगा क्योंकि सदा जवानी तो रह ही नहीं सकती। पौराणिकों के विचार भी ठीक दिखाई नहीं देते। सालोक्य इसलिए ठीक नहीं है क्योंकि जब सभी लोक उस ईश्वर के ही हैं तो फिर जीव एक लोक को छोड़कर दूसरे लोक में जाने का प्रयत्न क्यों करे। सानुज्य भी ठीक नहीं क्योंकि ईश्वर सब जीवों से बड़ा है इसलिए सभी जीव उससे छोटे ही तो हैं। जहां तक सारूप्य होने का संबंध है, ईश्वर निराकार है, उसका कोई

thearyasamaj.org

रूप ही नहीं है, जीव के गुण—कर्म—स्वभाव कुछ—कुछ ईश्वर से मिलते हैं परन्तु ईश्वर सर्वशक्तिमान् है लेकिन जीव की शक्तियां सीमित हैं। सामीप्य और सायुज्य भी ठीक नहीं है क्योंकि ईश्वर तो कण—कण में समाया हुआ है फिर जीव उससे अलग कैसे हो सकता है। इसलिए ईश्वर से जुड़ने और उसके समीप बने रहने के लिए भी प्रयत्न करने की क्या आवश्यकता है? जहां तक नाश होकर ब्रह्म में मिलने की बात है तो नष्ट तो यह शरीर होता है, जीव नहीं। अगर जीव मुक्ति का सुख पाने के लिए एक लोह में रहता है तो क्या यह बंध नहीं है क्योंकि वह अपनी इच्छा से कहीं आ जा नहीं सकता। वेद में मुक्ति का अर्थ इस प्रकार किया गया है कि मुक्त जीव अपनी इच्छा से जहां चाहे विचरे उसे कोई बाधा, भय, शंका और दुःख न सताए।

प्रश्न : जन्म एक है या अनेक?

उत्तर : अनेक।

प्रश्न : अगर अनेक जन्म हैं तो फिर पूर्व जन्म और मृत्यु की बातों का स्मरण क्यों नहीं रहता?

उत्तर : जीव अल्पज्ञ है, ईश्वर की तरह सर्वज्ञ नहीं। इसलिए अल्पज्ञ होने के कारण उसे बीते हुए समय की बातें याद नहीं रहती। जीव जिस मन से ज्ञान करता है, वह भी एक समय में दो ज्ञान नहीं कर सकता। जीव को तो इसी जन्म की सभी बातें याद नहीं रहती फिर पूर्वजन्म की कैसे याद रह सकती हैं। पूर्वजन्म की बातें भूल जाना ही ठीक है, नहीं तो जीव उस जन्म के दुःखों को याद करके दुःखी होता रहता। फिर भी कहीं—कहीं पूर्वजन्मों की बातें याद रहने के उदाहरण आजकल भी सुनने को मिलते ही रहते हैं जो अनेक जन्मों का होना सिद्ध करते हैं।

प्रश्न : जब जीव को पूर्व जन्म का ज्ञान ही नहीं होता तो ईश्वर जो दंड उसे देता है उससे जीव का सुधार नहीं हो सकता। जिस कर्म का दंड मिल रहा है उसका ज्ञान होने पर ही उस पापकर्म से बचा जा सकता है?

उत्तर : तुम ज्ञान के प्रकारों को मानते हो?

प्रश्न : हां, प्रत्यक्ष आदि प्रमाणों से आठ प्रकार का होता है तो फिर?

उत्तर : तुम जन्म से लेकर समय—समय पर राज, धन, बुद्धि, विद्या, दरिद्रता,

thearyasamaj.org

निर्बुद्धि आदि सुख–दुःख संसार में देखकर, पुनर्जन्म होता है, यह क्यों नहीं जान लेते। एक डाक्टर ही रोगी के गंभीर रोग को जान सकता हे, साधारण व्यक्ति नहीं लेकिन फिर भी जुकाम–बुखार का पता तो साधारण व्यक्ति को भी चल जाता है और वह समझ लेता है कि कहीं न कहीं उससे खान–पान आदि में लापरवाही जरूर हुई है जिससे रोग हुआ है।

शिशुओं के जन्मों को देखकर ही पूर्वजन्म का अनुमान लग जाता है। कुछ धनी परिवारों में जन्म लेकर सुख भोगते हें।, कुछ मध्यवर्ग के परिवारों में जन्म लेकर सुख–दुःख दोनों भोगते हैं और कुछ अत्यंत निर्धन परिवारों में जन्म लेकर दुःख ही दुःख भोगते हैं। जन्म लेते ही शिशु तो अच्छा–बुरा कोई कर्म नहीं करता तो फिर उनके सुख–दुःख का ये अन्तर उनके पूर्वजन्मों के कर्मों के फल से ही तो हो सकता है। परमेश्वर न्यायकारी है, इसलिए वह स्वयं तो किसी के साथ अन्याय नहीं करता।

प्रश्न : एक जन्म होने या पुर्नजन्म न होने से भी तो ईश्वर न्यायकारी हो सकता है। जैसे माली उपवन में छोटे–बड़े वृक्ष लगाता है, किसी को काटता है, किसी को उखाड़ता है और किसी की रक्षा करके बढ़ाता है, वैसे ही जिसकी जो वस्तु हो वह उसे जैसा चाहे रखे फिर ईश्वर से बड़ा न्याय करने वाला तो कोई है ही नहीं जिसका ईश्वर को डर हो?

उत्तर : परमात्मा न्यायविरुद्ध कोई कार्य नहीं करता इसीलिए वह बड़ा और पूजनीय है। जैसे माली अपने लगाए पौधे को बिना कारण के हानि नहीं पहुंचाता है, वैसे ही ईश्वर भी सृष्टि के किसी पदार्थ को बिना कारण कष्ट नहीं देता। अयोग्य को बढ़ाना और योग्य को न बढ़ने देना तो अन्याय है इसीलिए ईश्वर सृष्टि को नियम में रखकर चलाने के लिए अयोग्य को हटाता और योग्य को बढ़ाता है। बिना दुष्ट कर्म किए ईश्वर किसी को दंड नहीं देता इसीलिए तो वह पवित्र और न्यायकारी है। ईश्वर अन्याय ही नहीं करता तो फिर डर कैसा?

प्रश्न : परमात्मा ने पहले से निश्चय कर लिया होता है कि किसे कितना देना है, उतना दे देता है। जितना काम किसी से करवाना होता है, उतना करवा लेता है?

उत्तर : ईश्वर जो भी विचार करता है, जीव के कर्मों के अनुसार करता है उसके विपरीत नहीं। अगर ऐसा न करे तब तो ईश्वर स्वयं अपराधी और अन्यायी हो जाए।

प्रश्न : बड़ों और छोटों का सुख–दुःख एक सा है, बड़ों की चिन्ता बड़ी और छोटों की छोटी होती है। जैसे गर्मी में सेठ पालकी में बैठकर कचहरी जाता है और कहार उसकी पालकी उठाए, नंगे पांव तपती जमीन पर उसका बोझ उठाए चलते हैं तब लगता है कि सेठ सुखी है और कहार दुःखी। जब सेठ कचहरी में पहुंच जाता है तो वह इस चिन्ता में डूब जाता है कि मुकद्दमें में उसकी जीत होगी या हार और दूसरी ओर कहार किसी घने वृक्ष की छाया में सो जाते हैं। तब लगता है कि कहार सुखी हैं और सेठ दुःखी। अमीर को नरम बिस्तर पर भी नींद नहीं आती जबकि गरीब जमीन पर भी गहरी नींद सो जाता है। ऐसा क्यों होता है?

उत्तर : सबका सुख–दुःख एक सा होता है यह कहना अज्ञानियों की बात है। यदि किसी सेठ को कहार बनने को कहो तो वह कभी नहीं मानेगा लेकिन कहार को सेठ बनने को कहो तो वह झट मान लेगा। अगर दोनों का सुख–दुःख बराबर होता तो कहार भी कभी अपनी अवस्था बदलने को तैयार न होता। जन्म से ही अमीर या गरीब घर में आकर जीव का सुख–दुःख भोगना उसके अपने पाप–पुण्यों के अनुसार ही होता है। किसी को दूध में मिश्री–बादाम डालकर पीने को दूध मिलता है तो किसी को दूध मांगने पर पीटा जाता है। ईश्वर जो दयालु और न्यायकारी है वह अकारण ही इतना बड़ा पक्षपात कभी नहीं कर सकता। अगर कर्म किए बिना स्वर्ग–नरक मिलते तब तो ईश्वर जिसे चाहे स्वर्ग भेज देता और जिसे चाहे नरक में भेज देता। इस तरह तो कोई भी धर्म के अनुसार नहीं चलेगा और सभी अधर्मी बन जायेंगे, जिससे संसार में पाप बढ़ जायेगा और धर्म का नाश हो जायेगा। इसीलिए ईश्वर ने कर्मों के अनुसार फल देने का विधान बना रखा है।

प्रश्न : मनुष्य और पशु आदि शरीरों में जीव एक सा है या भिन्न–भिन्न?

उत्तर : जीव एक से हैं, पाप–पुण्य के योग से मनुष्य या पशु का शरीर मिलता है।

प्रश्न : मनुष्य का जीव पशु में, पशु का मनुष्य में, स्त्री का पुरुष में और पुरुष का स्त्री के शरीर में आता है या नहीं?

उत्तर : हां, जाता–आता है।

प्रश्न : किस प्रकार जाता–आता है?

उत्तर : जब पाप बढ़ जाता है तब मनुष्य का जीव पशु में ओर जब पुण्य बढ़ जाता है तब पशु का जीव मनुष्य का शरीर धारण करता है। जब धर्म अधिक और अधर्म कम हो जाता है तब विद्वानों का और जब पाप–पुण्य बराबर हों तो मनुष्य का जन्म होता है। इतना ही नहीं पाप–पुण्य के उत्तम, मध्यम और घटिया होने से मनुष्यों में भी उत्तम, मध्यम और नीच जन्म मिलते हैं। इसी तरह जब पशु भी अपने पाप का फल भोग लेता है और उसके पाप–पुण्य बराबर हो जाते हैं तो उसका जीव भी मनुष्य शरीर धारण करता है। जीव का शरीर धारण करना जन्म और शरीर छोड़ना मृत्यु कहलाता है। जीव जब शरीर छोड़ता है तो वायु में रहता है उसके बाद परमेश्वर उसे उसके कर्मों के अनुसार जन्म दे देता है। वह वायु, अन्न–जल या शरीर के किसी छेद द्वारा, ईश्वर की प्रेरणा से, दूसरे के शरीर में प्रविष्ट होकर वीर्य द्वारा गर्भ में स्थित होकर शरीर रूप में जन्म लेकर फिर से संसार में आता है। इसी तरह अगर कर्म स्त्री का शरीर धारण करने योग्य हों तो स्त्री का और पुरुष बनने के योग्य हों तो पुरुष का शरीर मिलता है, और यदि संभोग के समय स्त्री–पुरुष का रज–वीर्य बराबर हो तो नपुंसक संतान होती है। जब तक जीव उत्तम कर्म करके और उपासना से मुक्ति नहीं पा लेता तब तक जन्म–मरण के चक्कर में फंसा रहता है। मुक्ति में जीव महाकल्प (लंबे समय तक) जन्म–मरण के दुःखों से छूटकर आनन्द में रहता है।

प्रश्न : मुक्ति एक जन्म में होती है या अनेक जन्मों में?

उत्तर : अनेक जन्मों मे। क्योंकि जब जीव के हृदय की अविद्या और अज्ञान दूर हो जाता है, उसके भ्रम मिट जाते हैं और दुष्ट कर्मों का नाश हो जाता है तभी जीव, उस परमात्मा जो कि अपने आत्मा के भीतर और बाहर व्याप रहा है, उसमें निवास करता है।

प्रश्न : मुक्ति में जीव परमेश्वर में मिल जाता है या पृथक रहता है?

उत्तर : पृथक रहता है। अगर जीव परमात्मा में मिल जाये तो मुक्ति का सुख कौन भोगेगा क्योंकि परमात्मा तो निराकार और सर्वव्यापक होने के कारण सुख–दुःख से ऊपर है। जब जीव परमेश्वर की आज्ञा का पालन, उत्तम कर्म, सत्संग, योगाभ्यास आदि सब साधन करता है, तभी मुक्ति को पाता है। जो

जीवात्मा अपनी बुद्धि और आत्मा में स्थित सत्यज्ञान और अनन्त आनन्द स्वरूप परमात्मा को जानता है, वह उस ब्रह्म में स्थित होकर जिस–जिस आनन्द की कामना करता है उस–उस आनन्द को प्राप्त करता है यही मुक्ति कहलाती है।

प्रश्न : जैसे शरीर के बिना कोई सांसारिक सुख नहीं भोग सकता, वैसे ही मुक्ति में बिना शरीर के आनन्द कैसे भोग सकेगा?

उत्तर : जैसे जीव संसार के सुख शरीर के आधार से भोगता है वैसे ही मुक्ति का सुख परमेश्वर के आधार से भोगता है। मुक्त जीव, उस अनन्त व्यापक ब्रह्म में स्वच्छन्द घूमता, शुद्ध–ज्ञान से सारी सृष्टि को देखता, दूसरे मुक्त जीवों से मिलता और सृष्टि–विद्या के क्रम को देखता हुआ सब लोकों में (दृश्य–अदृश्य लोकों में) घूमता है। वह सब पदार्थों को अपने ज्ञान के अनुसार देखता है। जिसका ज्ञान अधिक होता है उसको उतना ही अधिक आनन्द मिलता है। मुक्ति में जीवात्मा निर्मल होता है इसलिए पूर्ण ज्ञानी होकर उसको सब पदार्थों का ठीक–ठीक ज्ञान होता है। यही सुख विशेष स्वर्ग कहलाता है और विषय भोगों के विशेष दुःखों में फंसना नरक कहलाता हैं यदि सांसारिक सुख स्वर्ग है तो परमात्मा की प्राप्ति का आनन्द विशेष स्वर्ग है। जब तक जीव धर्म नहीं करता, पाप नहीं छोड़ता, तब तक चाहते हुए भी दुःखों से छूट नहीं सकता। पाप ही दुःख का मूल है।

मनुस्मृति में पाप–पुण्य की व्याख्या इस प्रकार की गई है :

(1) मनुष्य अपने स्वभाव के उत्तम, मध्यम और नीच गुणों को जानकर उत्तम स्वभाव को ग्रहण करे, मध्यम और नीच स्वभाव को त्याग दे। जीव मन से जो शुभ–अशुभ करता है उसको मन भोगता है इसी तरह वाणी से किए हुए को वाणी और शरीर से किए हुए को शरीर भोगता है।

(2) अगर मनुष्य शरीर से चोरी, व्यभिचार, श्रेष्ठों को मारने जैसे कर्म करता है तो उसे वृक्ष आदि का, वाणी से पाप करता है तो पक्षी मृगादि का और यदि मन से पाप करता है तो चांडाल आदि का शरीर मिलता है।

(3) जो गुण जिस जीव में अधिक होता है वह उस जीव को अपने सम्मान बना लेता है।

(4) जब आत्मा में ज्ञान हो तो सतोगुण, राग–द्वेष हो तो रजोगुण और यदि अज्ञान हो तो तमोगुण की प्रधानता होती है। ये तीन गुण संसार के सब पदार्थों में पाए जाते हैं।

(5) इन गुणों को इस प्रकार जानना चाहिए। जब आत्मा में प्रसन्नता और मन शान्त हो तो सतोगुण प्रधान है, रजोगुण और तमोगुण दबे हुए हैं।

(6) जब आत्मा और मन अप्रसन्न और भटकता हो तो रजोगुण प्रधान है, सतोगुण और तमोगुण दबे हुए हैं।

(7) जब आत्मा और मन सांसारिक पदार्थों में इतना आसक्त हो जाए कि भले–बुरे का ज्ञान न रहे तब तमोगुण प्रधान है, सतोगुण और रजोगुण अप्रधान हैं।

(8) इन तीनों गुणों का जो उत्तम, मध्यम और निकृष्ट फल उदय होता है, उसको पूर्णभाव कहते हैं।

(9) वेदों का अभ्यास करना, धार्मिक कार्य करना, ज्ञान की वृद्धि, पवित्रता की इच्छा, इन्द्रियों का दमन, आत्म–चिन्तन हो तो यह सतोगुण के लक्षण हैं।

(10) अनुराग, धैर्य खोना, अशुभ कर्मों का ग्रहण, विषयों में प्रीति बढ़ना ये रजोगुण के लक्षण हैं।

(11) सब पापों के मूल लोभ का बढ़ना, आलस्य, निद्रा, धैर्य का नाश, क्रूरता, वेद और ईश्वर में श्रद्धा न होना, एकाग्रता न होना, मन की चंचलता, हर किसी से याचना करना या मांगना, मद्यपान आदि दुर्व्यसनों में फँसना आदि तमोगुण के लक्षण हैं।

(12) जब आत्मा को किसी काम को करते हुए, करके या करने की इच्छा से लज्जा, शंका और भय हो तो यह समझ लेना चाहिए कि मुझमें तमोगुण जाग गया है।

(13) जिस काम से जीव इस लोक में अधिक प्रसिद्धि पाना चाहता है और दरिद्र होते हुए भी दान देना नहीं छोड़ता तो समझो कि रजोगुण जाग गया है।

(14) जब आत्मा सब कुछ जानना चाहे, गुण ग्रहण करता जाए, अच्छे कर्म

करने में लज्जा न करे, धर्म के आचरण में रुचि हो जाये तो समझो सतोगुण जाग गया है।

(15) तमोगुण का मुख्य लक्षण काम, रजोगुण का मुख्य लक्षण धन संग्रह की इच्छा, सतोगुण का लक्षण धर्म व सेवा करना है।

तमोगुण से रजोगुण श्रेष्ठ है और रजोगुण से सतोगुण श्रेष्ठ है।

गुणों के अनुसार जीव को जो–जो गति प्राप्त होती है वह इस प्रकार हैः–

(1) जो सतोगुणी मनुष्य है वह विद्वान् होता है, जो रजोगुणी है वह साधारण मनुष्य होता है और जो तमोगुणी होता है वह नीच स्वभाव वाला मनुष्य होता है।

(2) तमोगुणी :

(क) जो अत्यधिक तमोगुणी होता है उसे वृक्षादि, कृमि, कीट, मछली, सर्प, कछुआ और मृग का जन्म मिलता है।

(ख) जो मध्यम तमोगुणी होता है उसे हाथी, घोड़ा, शूद्र, मलेच्छ, सिंह, व्याघ्र, सूअर आदि का जन्म मिलता है।

(ग) जो उत्तम तमोगुणी होता है उसे चारण (भाट) सुन्दर पक्षी, दंभी पुरुष (अपने मुंह मियां–मिट्‌ठू), राक्षस, पिशाच और नशा करने वाले मनुष्य का जन्म मिलता है।

(3) रजोगुणी :

(क) जो अत्यधिक रजोगुणी होता है उसे तलवार से मारने या कुदाल से खोदने वाले, मल्लाह, नट, शस्त्रधारी सेवक और शराबी का जन्म मिलता है।

(ख) जो मध्यम रजोगुणी होता है उसे राजा, राज–पुरोहित, वाद–विवाद करने वाले, दूत, वकील, सेनापति आदि का जन्म मिलता है।

(ग) जो उत्तम राजेगुणी होता है उसे गंधर्व (गाने वाले) वादक (साज बनाने वाले) धनी, विद्वानों के सहायक और अप्सरा आदि का जन्म मिलता है।

(4) (क) जो सबसे कम सतोगुणी होता है उसे तपस्वी, यति, संन्यासी, वेदपाठी, विमान–चालक, ज्योतिषी आदि का जन्म मिलता है।

thearyasamaj.org

(ख) जो मध्यम सतोगुणी होता है उसे यज्ञकर्ता, वेदों के अर्थ कहने वाले, विद्वान, वेद–विद्युत और काल–विद्या के जानने वाले, रक्षक, ज्ञानी अध्यापक आदि का जन्म मिलता है।

(ग) जो उत्तम सतोगुणी होता है उसे ब्रह्मा (सब वेदों का ज्ञाता) सब सृष्टिक्रम विद्या को जानकर विविध विमान आदि बनाने वाला इंजीनियर, सर्वोत्तम धार्मिक बुद्धियुक्त मनुष्य, ईश्वर–प्रकृति आदि ज्ञान को जानने में दक्ष विद्वान् का जन्म मिलता है।

(5) जो इन्द्रियों के वश में होकर विषयी, धर्म को छोड़कर अधर्मी, मूर्ख बन जाते हैं वे मनुष्यों में नीच जन्म पाकर दुःख उठाते हैं।

जीव को तीन प्रकार के ताप मन और इन्द्रियों की चंचलता के कारण ही सताते हैं। आध्यात्मिक (शरीर सम्बन्धी) अधिभौतिक (दूसरे प्राणियों के कारण दुःख होना) अधिदैविक (अति वृष्टि, ताप, शीत, भूकम्प) आदि। इसलिए मुक्त जीव को सब गुणों के स्वभावों में न फँसकर महायोगी बनकर मुक्ति पाने का यत्न करना चाहिए अर्थात् मन को सभी गुणों के कर्मों से रोककर, शुद्ध सतोगुणी होकर, योग के द्वारा मन की वृत्तियों को रोककर उस ईश्वर के ध्यान में चित्त ठहराना चाहिए। जब चित्त एकाग्र होता है और मन की वृत्तियां रुक जाती हैं तब सबको देखने वाले उस ईश्वर के स्वरूप में जीवात्मा स्थित हो जाता है अर्थात् मुक्ति प्राप्त हो जाता है।

●●●

thearyasamaj.org

आचार-अनाचार और भक्ष्य-अभक्ष्य व्याख्या 10

धर्मयुक्त कामों का आचरण सुशीलता, सत्पुरुषों का संग, सत्यविद्या के ग्रहण में रुचि आदि सदाचार कहे जाते हैं, इसके विपरीत व्यवहार अनाचार कहलाता है।

मनुस्मृति में आचार–अनाचार का वर्णन इस प्रकार किया गया है:

(1) राग–द्वेष रहित रहते हुए विद्वान् लोग नित्य जो व्यवहार करते हैं और जिसको हृदय या आत्मा से सत्य कर्त्तव्य जाने वहीं धर्म मानने और करने योग्य है।

(2) इस संसार में रहते हुए अत्यधिक कामनाएँ करना और कामना रहित होना श्रेष्ठ नहीं है क्योंकि कामना से ही वेदोक्त ज्ञान और कर्म सिद्ध होते हैं।

(3) अगर कोई यह कहे कि मैं इच्छारहित और निष्काम हूं या हो जाऊं तो ऐसा कभी नहीं हो सकता क्योंकि यज्ञ, सत्य बोलना, व्रत, यम–नियम रूपी धर्म आदि कर्म संकल्प करने से ही होते हैं।

(4) इच्छा होने पर ही ज्ञानेन्द्रियां और कर्मेन्द्रियां कार्य करती हैं। यदि इच्छा न हो तो आंखें खोलने या बन्द करने जैसे कार्य भी नहीं हो सकते।

(5) वेदों और ऋषियों द्वारा रचे गए शास्त्रों के अनुसार और सत्पुरुषों के आचार के अनुसार मनुष्यों को वे कर्म करने चाहिए जिनके करने से उनकी अपनी आत्मा प्रसन्न रहे। जिन कर्मों को करने में भय, शंका, लज्जा हो, वे कर्म नहीं करने चाहिए, जैसे चोरी, व्यभिचार और झूठ बोलना आदि।

(6) मनुष्य सम्पूर्ण शास्त्र, वेद, सत्पुरुषों का आचार और अपनी आत्मा के अनुकूल कर्म भली प्रकार सोच विचार कर और श्रुति प्रमाण से करे।

(7) जो लोग वेदों में निश्चित किए गए धर्म के अनुसार कर्म करते हैं और वेदविरुद्ध आचरण नहीं करते वे लोक और परलोक दोनों में सुख को प्राप्त होते हैं।

(8) श्रुति वेद और स्मृति धर्मशास्त्र को कहते हैं। मनुष्य को कर्म करते समय धर्म और अधर्म का निर्णय इन्हीं के अनुसार करना चाहिए।

(9) जो कोई मनुष्य वेद और वेदानुकूल पवित्र ग्रन्थों का अपमान करता है उसको श्रेष्ठ लोग नास्तिक मानकर जाति से बाहर कर दें।

(10) वेद, स्मृति, सत्पुरुषों का आचार और आत्मज्ञान के अनुकूल चलना, धर्म के ये चार लक्षण हैं।

(11) जो धन और द्रव्यों के लोभ और विषयों में फंसा हुआ नहीं होता उसी को धर्म का ज्ञान होता है। जो धर्म को जानने की इच्छा रखता है उसके लिए वेद ही प्रमाण हैं।

(12) सब मनुष्यों को उचित है कि वेदों में कहे गए पुण्य रूप कर्मों से ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अपने सन्तानों के गर्भाधान संस्कार करें, जो इस जन्म या परजन्म में पवित्र करने वाला है।

(13) ब्राह्मण का 16वें, क्षत्रिय का 21वें और वैश्य का 24वें वर्ष में मुंडन हो जाना चाहिए। इसके बाद शिखा को छोड़कर बाल कभी न रखें। शीतप्रधान देशों में केश जितने चाहें रखें लेकिन उष्णप्रधान देशों में नहीं रखने चाहिए। दाढ़ी–मूंछ भी नहीं रखनी चाहिए क्योंकि इससे खानपान में कठिनाई होती है और जूठन बालों में फंसी रह जाती है।

मनुस्मृति में ही आगे कहा गया है :

(1) मनुष्य को उन इन्द्रियों को रोकना चाहिए जो चित्त को विषयों की ओर आकर्षित करती हैं। जैसे सारथि घोड़ों की लगाम खींचकर उन्हें इधर–उधर जाने से रोकता है, वैसे ही मनुष्य को अपनी इन्द्रियों को वश में रखकर अधर्म मार्ग से रोककर धर्म मार्ग पर चलाना चाहिए।

(2) जब मनुष्य इन्द्रियों के विषयों में आसक्त होकर अधर्म–मार्ग पर चलता है तो वह पाप में प्रवृत हो जाता है लेकिन इन्द्रियों को जीतकर धर्ममार्ग पर चलता है तो उसे अनचाही सिद्धियां प्राप्त हो जाती हैं।

(3) जैसे आग में ईंधन और घी डालने से आग बढ़ती है वैसे की कामवासना

की पूर्ति करने से काम बढ़ता है, शान्त नहीं होता। इसलिए मनुष्यों को विषयासक्त नहीं होना चाहिए।

(4) जो मनुष्य अपनी इन्द्रियों को नहीं जीत सकता, वह वेदों का ज्ञान, त्याग, यज्ञ, नियमपालन और धर्माचरण जैसे कार्य सिद्ध नहीं कर सकता। ये सब कार्य इन्द्रियों को वश में करने वाले धार्मिक जन ही कर सकते हैं।

(5) इसीलिए 5 कर्मेन्द्रियों, 5 ज्ञानेन्द्रियों और ग्याहरवें मन को अपने वश में करके उचित आहार–विहार से शरीर की रक्षा करते हुए सब अर्थों को सिद्ध करें।

(6) जितेन्द्रिय उसको कहते हैं जो निन्दा सुनकर दुःखी और प्रशंसा सुनकर प्रसन्न न हो, अच्छे स्पर्श में सुख और कठोर स्पर्श में दुःख अनुभव न करे, उत्तम भोजन और सुगंध में रुचि, घटिया भोजन और दुर्गंध में अरुचि न रखता हो।

(7) कभी बिना पूछे और पूछे जाने पर अन्याय और कपट से उत्तर नहीं देना चाहिए, ऐसे अवसर पर मौन रहना उचित होता है लेकिन जो निष्कपट और जिज्ञासु हों उनको बिना पूछे भी उपदेश देना चाहिए।

(8) धन, उत्तम बंधु या कुल, आयु, उत्तम कर्म और श्रेष्ठ विद्या ये पांच सम्मान योग्य हैं परन्तु धन से कुल, कुल से अवस्था या आयु, आयु से श्रेष्ठ कर्म और श्रेष्ठ कर्म से पवित्र विद्या अधिक माननीय है।

(9) व्यक्ति चाहे 100 वर्ष का हो लेकिन यदि वह विद्या और ज्ञान से रहित है उसे बालक समान जानो। लेकिन जिस बालक के पास विद्या और ज्ञान हो उसे वृद्ध के समान आदर योग्य मानना चाहिए क्योंकि सब शास्त्र और श्रेष्ठ विद्वान अज्ञानी को बालक और ज्ञानी को पिता समान मानते हैं।

(10) कोई बाल सफेद होने, अधिक धन होने या ऊंचे कुल से संबंध रखने के कारण पूज्य नहीं हो जाता। ऋषि–मुनियों का यही निश्चय है कि जो हमारे बीच विद्या–विज्ञान में अधिक है वही वृद्ध या पूज्य है।

(11) ब्राह्मण ज्ञान से, क्षत्रिय बल से, वैश्य धन–धान्य से और शूद्र आयु से वृद्ध या पूज्य होता है।

(12) विद्वान लोग विद्या पढ़े हुए युवा व्यक्ति को ही अज्ञानी वृद्ध से बड़ा मानते हैं।

(13) जैसे लकड़ी का हाथी या चमड़े से मढ़ा हुआ मृग नाममात्र को ही होता है वास्तविक नहीं, वैसे ही अनपढ़ मूर्ख मनुष्य संसार में नाममात्र ही मनुष्य कहलाता है।

(14) जो विद्या पढ़कर, धर्मात्मा विद्वान होकर बिना वैर–भाव के सब प्राणियों के कल्याण के लिए मधुर और कोमल वाणी में उपदेश करते हैं, सत्य उपदेशों से धर्म की वृद्धि और अधर्म का नाश करते हैं, वे पुरुष धन्य हैं।

नित्य स्नान करें, वस्त्र, खानपान–स्थान सब शुद्ध रखें क्योंकि इनके शुद्ध होने से चित्त की शुद्धि और शरीर निरोग रहता है, जिससे पुरुषार्थ बढ़ता है लेकिन पवित्रता उतनी ही करनी उचित है जिससे मल–दुर्गन्ध दूर हो जाये।

वेद और स्मृति में सत्य–भाषण आदि कर्मों का करना आचरण कहा गया है। माता–पिता, आचार्य और अतिथि की सेवा करना देव पूजा कहलाती है। जिस–जिस कर्म के करने से जगत का उपकार हो वह करना चाहिए और जिनसे हानि होती हो उन्हें छोड़ देना ही मनुष्य का मुख्य कर्त्तव्य है। नास्तिक, चरित्र हीन, विश्वासघाती, चोर, झूठे, स्वार्थी, कपटी, छली आदि दुष्ट मनुष्यों का संग नहीं करना चाहिए। ऋषि मुनियों, विद्वानों, धर्मात्मा, सत्यवादी और परोपकारी मनुष्यों का संग करना ही श्रेष्ठ आचार है।

प्रश्न : आर्यावर्त देशवासियों का अपने देश से बाहर दूसरे देशों में जाने से आचार नष्ट हो जाता है या नहीं?

उत्तर : नहीं। यह बात झूठ है, क्योंकि बाहर–भीतर की पवित्रता रखना, सत्य बोलना आदि कार्य तो देश–विदेश कहीं भी रहकर किए जा सकते हैं। इनका पालन करते रहने पर धर्म और आचार कभी भ्रष्ट नहीं हो सकता। जो देश में रहकर भी दुष्ट आचार करेगा वह अवश्य धर्मभ्रष्ट और आचार–भ्रष्ट कहलायेगा। महाभारत के शान्तिपर्व में मोक्षधर्म वर्णन में व्यास के शुक्र के साथ संवाद में पाताल देश का वर्णन आता है जिसे आजकल अमेरिका कहते हैं। शुक्राचार्य आत्मविद्या संबंधी प्रश्न का उत्तर जानने के लिए जब पातालपुरी से मिथिला आ रहे थे तो राह में हिमालय पर्वत से उत्तर–पश्चिम की ओर हरिवर्ष

thearyasamaj.org

पहुंचे थे जो वर्तमान यूरोप है। यहां के निवासी वानर के समान लाल मुख और भूरे नेत्रों वाले थे इसीलिए यह प्रदेश हरि (वानर) वर्ष कहलाता था। वहां से हूणों के देश को देखते हुए चीन आए और हिमालय से होते हुए मिथिला–पुरी पहुंचे थे। यदि धर्मभ्रष्ट हो जाता तो लोग दूसरे देशों में क्यों जाते?

इतना ही नहीं श्रीकृष्ण और अर्जुन अश्वतरी (अग्नियान नौका) में बैठकर पाताल लोक से उद्दालक ऋषि को युधिष्ठिर के यज्ञ में लाए थे। धृतराष्ट्र का विवाह गांधार (कंधार) की और पांडु का ईरान की राजकन्या (माद्री) से हुआ था। अर्जुन का विवाह पाताललोक की राजकन्या उलोपी से हुआ था। महाभारत के युद्ध में भाग लेने वाले देश–देशान्तरों के राजा आए थे। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ का निमन्त्रण देने पांडव चारों दिशाओं में गए थे, क्या वे सभी भ्रष्ट हो गये थे? यदि देश–देशान्तरों से मेलजोल न रखा जाए तब न तो अपना राज्य और न ही व्यापार बढ़ सकता है और सभ्यता–संस्कृति का विकास भी रुक जाता है। आचार भ्रष्ट और धर्मभ्रष्ट विदेशों में जाने या विदेशियों को छूने से नहीं होता अपितु उनकी बुराइयां (मांस भक्षण, नशा सेवन) अपनाने से होता है। यदि छूने से धर्मभ्रष्ट हो जाता तब तो भारत का विदेशों से व्यापार, युद्ध आदि भी नहीं हो सकता। व्यक्ति सज्जन लोगों से रागद्वेष न रखे, अन्याय और झूठ से दूर रहे, परोपकार में लगा रहे यही उत्तम आचार है। भारतीयों की विदेशियों के हाथों युद्ध में पराजय का मुख्य कारण उनका ऊंच–नीच के आधार पर अलग–अलग रसोई बनाना ही रहा। उनकी इस कमजोरी का आक्रमणकारियों ने पूरा लाभ उठाया था। भोजन बनाने वाला स्वच्छ हो और बनाने का स्थान पवित्र हो तो किसी के हाथ से बनने वाला भोजन कभी अशुद्ध नहीं होता।

प्रश्न : सखरी–निखरी या कच्चा–पक्का भोजन क्या है?

उत्तर : अग्नि से पकाया गया कोई भोजन कच्चा या पक्का नहीं होता। जो भोजन जल आदि में अन्न को पकाकर बने उसे सखरी या कच्चा और जो दूध घी आदि में पकाकर बनाया जाये उसे निखरी या पक्का कहा जाता है। स्वार्थी लोगों ने अपने जीभ के स्वाद के लिए ये भेद बना दिए जिससे उन्हें अधिक पौष्टिक भोजन खाने को मिले। चने आदि तो कच्चे भी खाए जाते हैं।

प्रश्न : ब्राह्मण को अपने हाथ से रसोई बनाकर खानी चाहिए या शूद्र के हाथ की बनाई हुई खा ले?

उत्तर : अपने घर में शूद्र के हाथ की बनी हुई खावें जिससे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, आदि अपना समय विद्याध्ययन, राज्यपालन, व्यापार और खेती की उन्नति में लगा सकें। शूद्र के बर्तनों और उसके घर में पका हुआ अन्न आपातकाल के सिवाय न खाएं। धर्मसूत्र में लिखा है "आर्यों के घरों में शूद्रों द्वारा भोजन बनाए जाने के समय शरीर और वस्त्रों की सफाई, नाखून कटे होना, मुंह बांधकर भोजन बनाना, आर्यों को खिलाकर स्वयं भोजन खाना आदि नियमों का पालन किया जाए"।

प्रश्न : शूद्र के छुए हुए पके अन्न को खाने में जब दोष मानते हैं तो उसके हाथ का बनाया हुआ कैसे खा सकते हैं?

उत्तर : यह बात झूठी और मनघढ़न्त है। गुड़, चीनी, घी, दूध, अन्न की पिसाई, शाक–भाजी आदि सभी चीजें हाथ लगाने से ही बनती हैं, जो लोग यह चीजें खाते हैं वे यह कैसे कह सकते हैं कि शूद्र के हाथ का छुआ खाने में दोष लगता है। जो लोग दूध दुहते या खेतों में गन्ना काटने, रस निकालकर गुड़ बनाने का काम करते हैं उनमें मुसलमान, ईसाई, भंगी, चमार आदि सभी लोग होते हैं। जो हाथों और बर्तनों की सफाई का कुछ भी ध्यान नहीं रखते। जब ये चीजें खा लीं तो समझो सबके हाथ का बना हुआ खा लिया।

प्रश्न : फल, कंद–मूल और रस इत्यादि अदृष्ट वस्तुओं में दोष नहीं मानते?

उत्तर : अगर अदृष्ट में दोष नहीं होता, तब तो दूर से कोई कुछ भी बनाकर ले आए उसे खा लेने में कोई दोष नहीं होना चाहिए। अगर आप इस बात को नहीं मानते हो तो फिर अदृष्ट में भी दोष का न होना क्यों मानते हो? सच बात तो यह है कि जब तक आर्यों में एक मत, एक हानि–लाभ, एक सुख–दुःख और एक खान–पान नहीं होगा, तब तक उनका उन्नति करना बहुत कठिन होगा। जब भाई–भाई लड़ते हैं तो बाहर का तीसरा व्यक्ति पंच बन बैठता है। हमारी आपसी फूट, मतभेद, ब्रह्मचर्य का पालन न करना, विद्या का पढ़ना–पढ़ाना छोड़ देना, विषयासक्ति, अनमेल विवाह, वेदों में श्रद्धा न रखना और वेद विद्या का प्रचार न करना आदि कमजोरियों का विदेशियों ने लाभ उठाया जिससे भारत सदियों तक पराधीन रहा और हमारा इतना पतन हुआ। हमारा दुर्भाग्य है कि अब भी हमने भूतकाल की गलतियों से कुछ नहीं सीखा है इसलिए आज भी हम संकट में फंसे हुए हैं

thearyasamaj.org

भक्ष्य–अभक्ष्य

भक्ष्याभक्ष्य दो प्रकार का होता है (1) धर्मशास्त्रों के अनुसार (2) वैद्यक शास्त्र के अनुसार। धर्मशास्त्रों के अनुसार :– सभी मनुष्यों को मल–मूत्र की खाद में उत्पन्न हुए सब्जी–फल आदि नहीं खाने चाहिए। मदिरा, गांजा, भांग, अफीम, चरस आदि बुद्धि का नाश करने वाले पदार्थों, सड़े–गले अन्न और दुर्गन्ध आदि से दूषित पदार्थों का सेवन नहीं करना चाहिए। मलेच्छ और मांसाहारी लोगों के हाथ से बना हुआ नहीं खाना चाहिए।

गाय आदि पशु जिनसे दूध, घी, नये गाय–बैल आदि उत्पन्न होने से एक पीढ़ी में 4,75,600 मनुष्यों को सुख पहुंचता है, उन्हें न मारें और न मारने दें। गाय–बैल हमें दूध–घी देकर और अन्न उपजा कर तथा बोझ ढोकर मानव जाति पर अनगिनत उपकार करते हैं, उन्हें पालकर उनकी सेवा करनी चाहिए।

एक गाय अपने जीवन में अपने दूध से 24960 लोगों को तृप्त करती है, उसके 6 बछड़े और 6 बछड़ियों में से यदि 5–5 भी जीवति रहें तो उन 5 बछड़ियों के दूध से 1,24,800 मनुष्य तृप्त होते हैं और 5 बछड़े बैल बनकर 5000 मन अनाज उत्पन्न कर सकते हैं जिससे अढाई लाख मनुष्य तृप्त होते हैं। एक गाय की एक पीढ़ी में दूध और अन्न से कुल मिलाकर 4,75,60,000 मनुष्यों का पालन होता है। इसी तरह भेड़–बकरी, ऊंट, घोड़े, गधे और हाथी आदि पशुओं से बड़े उपकार होते हैं। इन्हें मारना मनुष्यों की हत्या के बराबर पाप जानें। जब हमारे देश में गाय आदि पशु नहीं मारे जाते थे तो देश दूध, घी, अन्न आदि से खुशहाल था। पशुओं को मारने वालों के आ जाने से दुःख और दरिद्रता बढ़ती चली जा रही है। जब वृक्ष की जड़ ही काट दोगे तो फल कहां से होंगे?

प्रश्न : अगर सभी अहिंसक हो जायें तो शेर–चीते आदि इतने बढ़ जायेंगे कि सब पशुओं को मारकर खा जायेंगे तो आपके गाय आदि न मारने से क्या लाभ?

उत्तर : हानिकारक और हिसंक पशुओं या मनुष्यों को दंड देना राज्यकर्मचारियों का काम है वह चाहे उन्हें दंड दें या मार दें।

प्रश्न : यदि राज्यकर्मचारी किसी पशु को मारें तो क्या उसका मांस फेंक दें?

thearyasamaj.org

उत्तर : वह उसको कुत्तों आदि को खिला दें, इससे कोई हानि नहीं होती लेकिन मांस खाने से मनुष्य का स्वभाव हिंसक हो सकता है। हिंसा, चोरी, छल–कपट, विश्वासघात आदि से प्राप्त पदार्थों का खाना भी बुरा प्रभाव डालता है इसलिए इन्हें अभक्ष्य माना जाता है। अहिंसा धर्म आदि से प्राप्त किया गया भोजन ही खाने योग्य, स्वास्थ्य–वर्द्धक, रोगनाशक, बुद्धि–बल–पराक्रम और आयु को बढ़ाने वाला होता है। गेहूं, चावल, दालें, फल, शाक, कन्दमूल, दूध, घी, मिष्ठान आदि पदार्थों का मेल करके यथोचित समय पर भूख के अनुसार भोजन करना ही भक्ष्य कहलाता है। भोजन भूख से कुछ कम ही खाना चाहिए, अधिक नहीं।

जितने पदार्थ अपनी प्रकृति (स्वभाव या तासीर) से विरुद्ध विकार करने वाले हैं। जिनको वैद्यशास्त्र में वर्जित किया गया है, उन्हें पूरी तरह त्याग देना चाहिए। जो जिसके लिए उचित बताए गये हैं उनका ग्रहण करना चाहिए।

प्रश्न : एक साथ खाने में कुछ दोष है या नहीं?

उत्तर : दोष है। कई बार एक साथ खाने से एक व्यक्ति के रोगणु दूसरे के शरीर में पहुंच जाते हैं, जिससे हानि होती है। इसीलिए हमारे धर्मशास्त्रों में किसी को झूठा भोजन देना, जूठे बर्तन में देना, किसी के बीच में खाना, अधिक भोजन करना और भोजन करने के बाद हाथ–मुंह धोए बगैर इधर–उधर जाना मना किया गया है।

प्रश्न : गुरु द्वारा छोड़ा गया भोजन खाएं, इसका क्या अर्थ होगा?

उत्तर : गुरु को खिलौने के बाद जो अलग रखा हुआ शुद्ध भोजन है उसे खाएं अर्थात् गुरु को पहले खिलायें और स्वयं बाद में खायें।

प्रश्न : अगर छोड़ा हुआ जूठा खाने को मना ही है तो मक्खियों का छोड़ा हुआ शहद, बछड़े का छोड़ा झूठा दूध और एक ग्रास खाने के बाद अपना छोड़ा हुआ भोजन भी नहीं खाना चाहिए क्या?

उत्तर : शहद तो बहुत सी औषधियों का सार है, जो कहने के लिए ही झूठा है, बछड़ा बाहर का दूध पीता है, अन्दर का नहीं पी सकता और फिर बछड़े के पीने के बाद थन धोकर दूध निकाला जाना चाहिए। अपना छोड़ा हुआ भोजन झूठा नहीं होता। जैसे अपने मुख, आंख, नाक–कान से निकले मैल और मल–मूत्र आदि से घृणा नहीं होती है लेकिन दूसरे के मल–मूत्र से होती है, वैसे ही दूसरे की झूठन से भी घृणा होती है।

प्रश्न : क्या स्त्री–पुरुष (पति–पत्नी) भी परस्पर एक दूसरे का झूठा न खाएं?

उत्तर : नहीं! क्योंकि उनके भी शरीरों का स्वभाव अलग–अलग है।

प्रश्न : जब सब मनुष्यों का शरीर हाड–मांस और चमड़े का बना होता होता है और सबके शरीर में खून होता है तो फिर चांडाल के हाथ का बना खाना खाने में दोष क्यों, दूसरों के हाथ का खाने में दोष क्यों नहीं?

उत्तर : दोष है, क्योंकि जो लोग उत्तम पदार्थ खाते हैं उनके शरीर में दुर्गन्धादि दोष रहित रज–वीर्य उत्पन्न होता है। चांडाल लोग जैसा दुर्गन्धयुक्त भोजन करते हैं उनके शरीर में दुर्गन्धयुक्त रज–वीर्य उत्पन्न होता है। उनके हाथ के बने हुए भोजन पर न केवल उनके शरीर का बल्कि उनके विचारों और भावों का भी प्रभाव पड़ता है इसलिए उनके हाथ का बना हुआ भोजन नहीं खाना चाहिए। उदाहरण के लिए सभी स्त्रियों का शरीर एक जैसा ही बना होता है फिर भी तुम स्त्रियों से माता बहिन के समान व्यवहार करते हो, अपनी पत्नी के समान नहीं या जैसे उत्तम अन्न हाथ–मुंह से खाया जाता है वैसे मल आदि नहीं खाया जाता।

प्रश्न : गाय के गोबर से चौका लगाना शुद्ध मानते हो तो अपने मल से क्यों नहीं?

उत्तर : गाय के गोबर में मनुष्य के मल जैसी दुर्गन्ध नहीं होती। यह चिकना होने के कारण शीघ्र नहीं उखड़ता, कपड़ों को भी गन्दा नहीं करता, कीटाणुनाशक होता है। मिट्टी गोबर से लीपा हुआ स्थान सुन्दर और साफ–सुथरा लगता है। रसोई में भोजन पकाते समय और खाते समय कुछ न कुछ गिर जाता है इसलिए उसे साफ रखना जरूरी होता है क्योंकि मैले स्थान पर मक्खी–कीड़े आदि जीव आ जाते है। आजकल पक्के मकान होने के कारण पानी से धोकर ही जगह साफ कर लेते हैं। तुम गाय के गोबर से चौका लगाने में दोष गिनते हो लेकिन उसी के उपले चूल्हे में जलाते हो, उन्हीं की आग से तम्बाकू पीते हो, उससे परहेज क्यों नहीं करते?

प्रश्न : भोजन चौके में बैठकर खाना चाहिए या बाहर बैठकर?

उत्तर : जहां स्थान साफ हो वहां बैठकर भोजन करना चाहिए। युद्ध के

thearyasamaj.org

समय घोड़े की पीठ पर बैठकर या खड़े–खड़े भी भोजन किया जा सकता है।

प्रश्न : क्या अपने हाथ से ही बना भोजन खाना चाहिए, दूसरों के हाथ का नहीं?

उत्तर : शुद्ध रीति से बना भोजन दूसरों के हाथ से बना हुआ भी खाया जा सकता है। जैसे बड़े–बड़े यज्ञों या उत्सवों में एक ही जगह पर बना हुआ भोजन सभी लोग खाते हैं। युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय संसार के सभी देशों के राजा एक ही जगह बना हुआ भोजन खाया करते थे। यह मतभेद उस समय पैदा हुए जब मुसलमान–ईसाई आदि, जो मांसाहार और मद्यपान करने वाले हैं, समाज में आ गए। महाभारत काल तक तो विदेशियों से विवाह संबंध भी होते थे और इकट्ठे बैठकर खान–पान भी होता था। जब संसार में लोग समान भाव रखते थे, एक दूसरे के सुख–दुःख को अपना सुख–दुख समझते थे, तब तक चारों ओर सुख ही सुख था। लेकिन आजकल मतभेद और स्वार्थ बढ़ जाने से दुःख ही दुःख बढ़ गया है। इससे यही पता चलता है कि सच्चा सुख परमात्मा के प्रति श्रद्धा और प्राणीमात्र के कल्याण की भावना में ही है इसके विपरीत आचरण में नहीं है। जो लोग सत्य और असत्य को पहचान कर सत्य का ग्रहण और असत्य का त्याग करते हैं, उन्हें ही परमानन्द की प्राप्ति होती है और वे धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष रूपी फलों को प्राप्त कर प्रसन्न रहते हैं।

●●●

thearyasamaj.org

आर्यावर्त के विभिन्न मतों का विधिपूर्वक खंडन 11

आर्यावर्त के समान संसार में कोई दूसरा देश नहीं है। स्वर्ण आदि रत्नों को उत्पन्न करने के कारण इसका नाम स्वर्णभूमि भी है। आर्य नाम उत्तम पुरुषों का है, इससे भिन्न दस्यु कहलाते हैं। आर्यावर्त की प्रशंसा सभी देशों ने की है। यह देश सच्चा पारसमणि ही है जिसको छूकर लोहे के समान दूसरे देश भी धनी बन जाते हैं। यह देश प्राकृतिक संपदा और ज्ञान से समृद्ध है।

महाभारत काल में ही आपसी फूट, ईर्ष्या–द्वेष, विषयासक्ति और प्रमाद बढ़ता जा रहा था जिसका परिणाम महाभारत युद्ध के विनाश के रूप में सामने आया। इसके बाद तो विद्या और सुशिक्षा नष्ट होती चली गई, दुर्गुण और दुर्व्यसन बढ़ते चले गए जिससे देश छोटे–छोटे टुकड़ों में बंटकर कमजोर हो गया और मुसलमानों ने इस देश पर अपना अधिकार कर लिया। उसके बाद सदियों तक यह देश विदेशियों के अधीन रहा। छत्रपति शिवाजी, गुरु गोबिन्द सिंह जैसे महान देशभक्तों ने मुसलमानों के छक्के तो छुड़ा दिए परन्तु फिर भी देशवासी संगठित नहीं हो पाए और स्वतन्त्रता पाने में हजारों वर्ष लग गये। भारत का दुर्भाग्य है कि यहां के लोगों ने अभी तक वेदमत का अनुसरण नहीं किया है। आज भी लोग राजनैतिक, धार्मिक और आर्थिक स्वार्थों के आधार पर ही एक दूसरे से झगड़ रहे हैं जिससे देश में चारों ओर अशान्ति का वातावरण छाया हुआ है। भगवान से यही प्रार्थना है कि संसार के सब लोग सबकी भलाई में अपनी भलाई के वेदों के उपदेश को अपने जीवन में अपनाएं। जिससे विश्व में भाईचारे ओर शांति की भावना बढ़े और सुख का वातावरण बन जाए।

इस बीच के समय में हमारे देश में कई मत–मतान्तर उभर आए जिनके कारण लोग भ्रमित और दिशाहीन हो गए। यहां तक कि वेदज्ञान को लेकर संदेह प्रकट करने लगे और प्रश्न उठाने लगे। इन प्रश्नों के उत्तर ऋषि दयानंद ने सत्यार्थ–प्रकाश में इस प्रकार दिए हैं :–

प्रश्न : जिन आग्नेयास्त्रों आदि का वेदों में वर्णन आता है, वे सत्य हैं या नहीं, क्योंकि तोप–बन्दूक आदि तो उस समय थीं नहीं।

उत्तर : ये सब बातें सच्ची हैं। वेदों में पदार्थविद्या का ज्ञान दिया गया है जिससे इन सब अस्त्र–शस्त्रों का होना संभव है।

प्रश्न : क्या ये शस्त्र देवताओं के अग्नि से सिद्ध होते थे?

उत्तर : नहीं। ये सब अग्नि आदि पदार्थों से सिद्ध होते थे। मंत्र से यदि अग्नि उत्पन्न होती तब तो उसका उच्चारण करते समय सबसे पहले जीभ जल जाती। वास्तव में मंत्रों का उच्चारण अपने लक्ष्य की सफलता के लिए ईश्वर से प्रार्थना के रूप में किया जाता था। मंत्रों के द्वारा सृष्टि के सब पदार्थों का ज्ञान होने के बाद उनके प्रयोग द्वारा अनेक प्रकार के पदार्थ और क्रिया–कौशल उत्पन्न होते हैं। लोहे के बाण या गोला बनाकर उनमें ऐसा पदार्थ रखते थे जिसमें आग लगाने से वायुमंडल में धुंआ फैल जाता या सूर्य की किरणों या वायु के छूने से आग जल जाती थी, ऐसे अस्त्रों को आग्नेयास्त्र कहते थे। इन अस्त्रों में ऐसे पदार्थ भी लगाए जाते थे जिनके हवा को छूते ही बादल बनकर बरसने लगते और आग बुझ जाती, इन्हें वरुणास्त्र कहते थे। इसी तरह मोहनास्त्र होते थे जिनके छोड़ने से हवा में नशीला पदार्थ मिल जाता था और शत्रु सेना मूर्च्छित हो जाती थी। ऐसे शस्त्र भी बनते थे जिनसे बिजली उत्पन्न करके शत्रु सेना का नाश किया जाता था। उस समय तोप को 'शतघ्नी' और बन्दूक को भुशुण्डी कहा जाता था। संस्कृत भाषा का ज्ञान न होने के कारण ही लोगों ने यह समझ लिया कि इस देश में तोप–बन्दूक आदि शस्त्र नहीं होते थे। 'फ्रांसीसी विद्वान गोल्ड स्टकर' ने अपनी पुस्तक 'बाइबिल इन इंडिया' में लिखा है कि सब विद्या और भलाइयों का भंडार आर्यावर्त देश है और सब विद्या और मत इसी देश से फैले"। दाराशिकोह ने भी उपनिषदों का अरबी भाषा में अनुवाद करवाया और कहा था 'जैसी पूरी विद्या संस्कृत में है वैसी किसी भाषा में नहीं। संस्कृत को देख–सुनकर ही मेरे मन का संदेह छूट गया और आनन्द हुआ? आज भी काशी के मानमन्दिर का शिशुमार चक्र भारत के ज्योतिष, नक्षत्र और भूगोल विज्ञान की उन्नति का जीता जागता प्रमाण है। महाभारत युद्ध के बाद आए विनाशकाल के कारण ही यहां के लोगों ने विपरीत बुद्धि को अपनाया जिससे हमारा राजनैतिक, आर्थिक और सामाजिक पतन तो हुआ ही, पाखंडियों ने हमारी धार्मिक मान्यताओं को भी भारी चोट पहुंचाई

है। स्वार्थी ब्राह्मणों ने यह कहना शुरू कर दिया कि उनके मुख से निकला हुआ शब्द ही ब्रह्मवाक्य है, और वे मुक्ति दिलाने के ठेकेदार बन बैठे। इस भय से कि कहीं ब्रह्महत्या का दोष न लग जाए, उन्हें अपराध करने पर भी दंड नहीं दिया जाता था। लेकिन वेद में उन्हीं लोगों को ब्राह्मण माना गया है और उन्हीं की सेवा करने का आदेश दिया गया है जो पूर्ण वेद और परमात्मा को जानने वाला, धर्मात्मा और परोपकार करने वाला हो, ढोंगी ब्राह्मणों को नहीं।

प्रश्न : तो हम कौन हैं?

उत्तर : तुम ढोंगी पोप हो।

प्रश्न : तुम पोप किसे कहते हो?

उत्तर : वैसे तो पोप का अर्थ बड़ा या पिता होता है लेकिन आजकल जो दूसरों को ठगकर अपना स्वार्थसिद्ध करता है, वही पोप कहलाता है।

प्रश्न : हमारे माता–पिता ब्राह्मण थे और हम 'अमुक– साधु के चेले हैं तो क्या हम ब्राह्मण नहीं हैं?

उत्तर : ब्राह्मण के यहां पैदा होने या किसी साधु का शिष्य होने से कोई ब्राह्मण नहीं हो जाता। ब्राह्मण बनने के लिए उत्तम गुण, कर्म, स्वभाव वाला और परोपकारी विद्वान होना आवश्यक है। रोम में पोप अपने चेलों से कहते थे 'तुम अपने पाप हमारे सामने कहो, हम ईश्वर से कहकर तुम्हारे पाप क्षमा करवा देंगे। तुम जितने रुपये हमारे पास जमा करवाओगे, उतने की ही सामग्री तुम्हें स्वर्ग में मिल जायेगी। वे अपने हाथों से हुण्डी लिखकर दे देते और मरते समय उसे अपने सिरहाने रखवा लेने को कह देते। इस तरह उनकी ठगविद्या चलती थी और वे स्वर्ग के ठेकेदार बने बैठे थे। आर्यावर्त में भी कई छली–कपटी ब्राह्मणों और साधुओं ने ऐसी ही ठगविद्या चला रखी थी। धर्मात्मा, उच्च चरित्र, उत्तम विद्वान और परोपकारी ब्राह्मणों ने ही वेद आदि सत्यशास्त्रों के पठन–पाठन द्वारा उन्हें बौद्ध, जैन, मुसलमानों और ईसाइयों से बचाकर सुरक्षित रखा। ढोंगी ब्राह्मणों और साधुओं ने तो अपने यजमानों की अज्ञानता का लाभ उठाकर अपनी पूजा करवानी शुरू कर दी। जब सच्चा उपदेश न रहा, तब अविद्या फैली और लड़ाई–झगड़े बढ़ने से देश का पतन हुआ। अविद्या से विद्या, बल, बुद्धि, वीरता आदि सब गुण नष्ट हो जाते हैं। जब अज्ञानी, विषयासक्त, प्रमादी और पाखंडी लोग गुरु बन बैठे तो उन्होंने शिव उवाच, भैरव उवाच आदि नामों से मंत्र तंत्र बनाकर वाममार्ग खड़ा कर लिया और समाज को चरित्रहीनता के गड्ढे में धकेल

दिया। इनका वर्णन आगे विस्तार से किया जाएगा। इन वाममार्गियों ने वेदों में दिए गए शब्दों के अर्थ बिगाड़ दिए जिससे यज्ञों में पशुबलि का आरंभ हुआ। इनमें से कुछ शब्दों के अर्थ इस प्रकार हैं।

प्रश्न : अवश्वमेध, गोमेध और नरमेध आदि शब्दों के क्या अर्थ हैं?

उत्तर : राजा का न्यायधर्म से प्रजा का पालन करना, विद्या को देने वाले और यजमानों का मिलकर अग्नि में घी आदि डालकर यज्ञ करना अश्वमेध कहा जाता था, घोड़े की यज्ञ में बलि देना नहीं। गोमेध का अर्थ है अन्न, इन्द्रियों, किरणों और पृथ्वी आदि को पवित्र रखना, गाय की बलि देना नहीं। नरमेध का अर्थ है मरने पर मनुष्य का विधिपूर्वक दाह–संस्कार करना, मनुष्य की बलि देना नहीं।

प्रश्न : यज्ञकर्त्ता कहते हैं कि यज्ञ में पशुबलि देने से यजमान और पशु स्वर्गगामी होते थे तथा होम करके फिर पशु को जीवित करते थे, क्या यह सत्य है?

उत्तर : नहीं। यदि इसी तरह स्वर्ग में पहुंच सकते तो सबसे पहले उन्हें अपने परिवार के सदस्यों को मारकर होम करके स्वर्ग पहुंचाना चाहिए था और फिर उन्हें जीवित कर लेते। लेकिन वे ऐसा नहीं करते क्योंकि ऐसा हो नहीं सकता।

प्रश्न : जब यज्ञ करते हैं, तब वेदमंत्र पढ़ते हैं। अगर वेदों में न होता तो कहां से पढ़ते?

उत्तर : मंत्र तो शब्द होता है, वह किसी को पढ़ने से नहीं रोक सकता। लेकिन मंत्र का अर्थ पशु को मारकर होम करना नहीं है। जैसे अग्नये स्वाहा का अर्थ है अग्नि में घी आदि उत्तम पदार्थों का होम करो जिनसे वायु, वर्षा, जल आदि शुद्ध होकर सुखदायी हों, दुर्गन्ध फैलाने वाले पदार्थों का होम करना नहीं। जब पशुबलि की अधिकता हो गई, तो जैनमत का उदय हुआ। जैनियों ने वेदों का अध्ययन किए बिना ही ईश्वर, वेद और संस्कृत भाषा का विरोध करना शुरु कर दिया। उन्होंने बहुत सा वैदिक साहित्य नष्ट कर दिया और वे वैदिक साधुओं और विद्वानों का निरादर करने लगे। धीरे–धीरे जैनियों ने अपने 24 तीर्थंकरों की मूर्तियां बनाकर उनकी पूजा करनी आरंभ कर दी। जैनमत के बढ़ते प्रभाव को रोकने के लिए दक्षिण से स्वामी शंकराचार्य आए। उन्होंने जैनियों को शास्त्रार्थों में हराकर उनके मत का खंडन यिका। शंकराचार्य का

thearyasamaj.org

मत था कि 'अनादि सिद्ध परमात्मा ही जगत का कर्त्ता है, यह जगत और जीव झूठा है। उस ईश्वर ने अपनी माया से जगत बनाया है। वही इसका धारणकर्त्ता और प्रलयकर्त्ता है। परमेश्वर आप ही सब रूप होकर लीला कर रहा है।" शंकराचार्य वेदमत की स्थापना और प्रचार कर ही रहे थे कि दो कट्टर जैनी उनके शिष्यों में आ मिले और उनका विश्वास प्राप्त करके उन्हें विषाक्त पदार्थ खिला दिया। विष के प्रभाव से शंकराचार्य की मृत्यु हो गई और उनके शिष्यों ने नवीन वेदान्त मत–स्थापित कर लिया। दक्षिण में श्रृंगेरी, पूर्व में भूगोवर्धन, उत्तर में जोशी और द्वारका (पश्चिम में) में सरदा मठ बनाकर आनन्द करने लगे। इन नवीन वेदान्तियों ने कुछ भ्रम पैदा कर दिए जिन्हें दूर करने के लिए उनके प्रश्नों के उत्तर दिए गए हैं :

(नवीन वेदान्ती यहां प्रश्नकर्ता और ऋषि दयानंद उत्तरदाता हैं।)

प्रश्न : जगत स्वप्न के समान है। रस्सी में सांप, सीप में चांदी, मृगतृष्णा में जल, गंधर्वनगर इन्द्रजाल के समान यह संसार झूठा है। एक ब्रह्म ही सच्चा है?

उत्तर : तुम झूठा किसे कहते हो?

प्रश्न : जो वस्तु जैसी न हो परन्तु वैसी दिखाई देती हो।

उत्तर : जो वस्तु है ही नहीं फिर उसकी प्रतीति या विश्वास कैसे हो सकता है?

प्रश्न : अध्यारोप से?

उत्तर : अध्यारोप किसे कहते हो?

प्रश्न : पदार्थ तो कुछ और हो लेकिन मिथ्याज्ञान या धोखे से कुछ और मान लिया जाये। किसी दूसरी युक्ति से उसका खंडन करना दोष माना जाता है। इन दोनों से प्रपंचरहित ब्रह्म में प्रपंच रूप जगत का विस्तार होता है।

उत्तर : तुम जैसे रस्सी को वस्तु और सांप को मिथ्याज्ञान मानते हो वैसे ही स्थिर या अचल वस्तु में पुरुष और सीप में चांदी की व्यवस्था (होना) समझ रहे हो। स्वप्न में जिसका आभास होता है वह वस्तु कहीं न कहीं होती है और उसके संस्कार आत्मा में होते हैं, इसलिए वह स्वप्न भी वस्तु में अवस्तु के आरोपण के समान नहीं है जैसा तुम मानते हो।

thearyasamaj.org

प्रश्न : कई बार जो कभी देखा या सुना नहीं होता, वह स्वप्न में दिखाई देता है जैसे कि अपना सिर कटा देखकर आप रोता है या जल की धारा ऊपर चली जाती है, ऐसा देखा हुआ सत्य तो नहीं हो सकता?

उत्तर : यह दृष्टांत भी तुम्हारे पक्ष को सिद्ध नहीं करता। क्योंकि बिना देखे–सुने संस्कार नहीं होता। संस्कार के बिना याद, याद के बिना जागते या सोते हुए भी साक्षात् अनुभव नहीं होता। जब किसी ने युद्ध में किसी का सिर कटा देखा हो और उसके बाप–भाई को रोते देखा हो या फव्वारे का जल ऊपर चढ़ता देखा हो तो उसका संस्कार उसकी आत्मा में होता है। जो कुछ उसने जागते हुए देखा है वही कुछ उसे अपनी आत्मा में अपने देखे हुए रूप से कुछ अलग रूप में दिखाई देता है। जैसे बहुत देर पहले देखी हुई घटना बिलकुल उसी रूप में याद नहीं रहती वैसे ही जागते हुए जो कुछ देखा होता है, स्वप्न में बिलकुल वैसा ही दिखाई नहीं देता। अतः तुम्हारा रस्सी को सांप समझने का भ्रम और ब्रह्म में जगत का आभास होना भी ठीक नहीं है।

प्रश्न : आधार के बिना मिथ्याज्ञान नहीं होता। जैसे रस्सी होने से ही धुँधले प्रकाश में साँप होने का भ्रम होता है, लेकिन प्रकाश होते ही यह भ्रम दूर हो जाता है। वैसे ही ब्रह्म में जगत होने का भ्रम होता है परन्तु जैसे ही ब्रह्म का साक्षात्कार या ज्ञान हो जाता है उसमें जगत होने का भ्रम दूर हो जाता है।

उत्तर : ब्रह्म में जगत होने का भ्रम किसे होता है?

प्रश्न : जीव को।

उत्तर : जीव कहां से हुआ?

प्रश्न : अज्ञान से।

उत्तर : अज्ञान कहां से हुआ और कहां रहता है?

प्रश्न : अज्ञान अनादि है और ब्रह्म में रहता है।

उत्तर : ब्रह्म में ब्रह्म का अज्ञान हुआ या किसी और का? वह अज्ञान किसको हुआ?

प्रश्न : चिदाभास को।

उत्तर : चिदाभास का स्वरूप क्या है?

प्रश्न : ब्रह्म।

उत्तर : ब्रह्म को ब्रह्म का अज्ञान अर्थात ब्रह्म का स्वयं अपने स्वरूप को ही भूल जाना। तो फिर इस भूलने का कारण क्या है?

प्रश्न : अविद्या।

उत्तर : अविद्या सर्वव्यापी सर्वज्ञ ब्रह्म का गुण है या अल्पज्ञ का?

प्रश्न : अल्पज्ञ का।

उत्तर : तुम्हारे अद्वैत मत में एक अनन्त सर्वज्ञ चेतन के सिवाय कोई दूसरा चेतन है या नहीं? अगर नहीं है तो फिर यह अल्पज्ञ कहां से आया? हां, अगर अल्पज्ञ चेतन को ब्रह्म से अलग दूसरा चेतन मानो, तब तो ठीक है। यदि ब्रह्म को अपने स्वरूप का अज्ञान हो तब तो सब जगह अज्ञान ही फैल जाये। जैसे शरीर के एक भाग में होने वाले फोड़े की पीड़ा सारे शरीर को निकम्मा कर देती है वैसे ही एक स्थान का ब्रह्म यदि अज्ञानी और पीड़ित हो तो सब ब्रह्म अज्ञानी और पीड़ित हो जायेंगे।

प्रश्न : यह सब उपाधि (छल, उपद्रव) का धर्म है, ब्रह्म का नहीं।

उत्तर : उपाधि जड़ है या चेतन, सत्य है या असत्य?

प्रश्न : उसे जड़ या चेतन, सत्य या असत्य कुछ भी नहीं कह सकते।

उत्तर : तुम अविद्या को जड़–चेतन या सत्य–असत्य नहीं कह सकते। इसका मतलब तो यह हुआ कि अविद्या में सत्य–असत्य दोनों मिले हुए हैं, क्या?

प्रश्न : जैसे घटाकाश, मठाकाश, मेधाकाश और महदाकाश अर्थात् घड़ा, घर, मेघ और बड़ा आकाश होने से अलग–अलग जान पडते हैं लेकिन वास्तव में महदाकाश (बड़ा आकाश) ही है, इसी तरह अज्ञानियों को माया, अविद्या, सामूहिक, व्यष्टि (एक–एक) और अंतःकरण की उपाधियों (उपद्रवों) से ब्रह्म अलग–अलग जान पड़ता है लेकिन वास्तव में एक ही है। जैसे अग्नि जिस आकार वाले पदार्थ में होती है उसी के समान दिखाई देते हुए भी उससे अलग होती है, वैसे ही सर्वव्यापक परमात्मा अंतःकरण में होने के कारण उसी के आकार का हो रहा है, लेकिन वास्तव में उससे अलग है। जैसे अग्नि जिस आकार वाले पदार्थ में होती है उसी के समान दिखाई देते हुए भी उससे अलग होती है,

वैसे ही सर्वव्यापक परमात्मा अंतःकरण में होने के कारण उसी के आकार का हो रहा है, लेकिन वास्तव में उससे अलग है।

उत्तर : तुम्हारा यह कहना भी ठीक नहीं है क्योंकि जैसे घड़ा, घर, मेघ और आकाश को भिन्न–भिन्न मानते हो वैसे ही कारण रूप ब्रह्म से कार्यरूप जगत को भिन्न मान लो।

प्रश्न : जैसे अग्नि जिसमें प्रवेश करे उसी के आकार की दिखाई देती है वैसे ही परमात्मा जड़ और चेतन में व्यापक होकर अज्ञानियों को आकार वाला ही दिखाई देता है। वास्वत में ब्रह्म न जड़ है और न ही चेतन है। जैसे जल से भरे जितने बर्तन रख दो, सबमें सूर्य का प्रतिबिंब जिसे 'चिदाभास' कहते हैं, पड़ा है। जब तक अंतःकरण है तभी तक जीव है। जब ज्ञान से अंतःकरण का नाश होता है तब जीव ब्रह्मस्वरूप होता है। इस चिदाभास को अपने ब्रह्मस्वरूप का अज्ञान ही कर्त्ता, भोक्ता, सुखी–दुःखी, पापी–पुण्यात्मा, जन्म–मरण के बंधन आदि में बाँध रखता है और जीव संसार के बंधनों से न हीं छूटता।

उत्तर : सूर्य का आकार है और जल के बर्तनों का भी अलग आकार है, इसलिए सूर्य का प्रतिबिंब दिखाई पड़ता है। लेकिन ब्रह्म निराकार और सर्वव्यापक है उसका न तो कोई आकार है और न ही वह किसी वस्तु से अलग है, फिर उसका प्रतिबिंब कैसे पड़ सकता है क्योंकि बिना आकार के प्रतिबिंब पड़ना या आभास होना असंभव है। यदि छलकपट से या भ्रमवश ब्रह्म को जीव मानते हो तो यह भी ठीक नहीं है क्योंकि यदि ब्रह्म और जीव को अलग–अलग नहीं मानोगे तो जहां–जहां से अंतःकरण चला जायेगा, वहां–वहां के ब्रह्म को अज्ञानी और जहां–जहां जायेगा वहां के ब्रह्म को ज्ञानी करता जायेगा। जैसे प्रकाश में छाता लेकर चलें तो जहां–जहां छाता जाता है वहां–वहां के प्रकाश को ढक देता है और जहां से हटता है वहां फिर से प्रकाश हो जाता है और छाया हट जाती है, वैसे ही अंतःकरण ब्रह्म को क्षण–क्षण में अज्ञानी और ज्ञानी या बंध और मुक्त करता जायेगा। यदि यह कहते हो कि ब्रह्म ही जीव है और ब्रह्म जीव से अलग नहीं है तब तो जीव को सर्वज्ञ होना चाहिए, लेकिन सभी जानते हैं कि जीव सर्वज्ञ नहीं है। यदि जीव और ब्रह्म एक होता तो एक जगह अज्ञान व दुःख होने से, वही अज्ञान और दुःख सभी जगह हो जाना चाहिए। ऐसे उदाहरणों से तो आपने अखंड ब्रह्म को अशुद्ध, अज्ञानी, बंधनयुक्त बनाकर खंड–खंड कर दिया।

प्रश्न : निराकार का भी आभास या प्रतिबिंब दिखाई पड़ता है। जैसे आकाश का प्रतिबिंब दर्पण या जल में पड़ता है वैसे ब्रह्म का भी सब अंतःकरणों पर आभास (प्रतिबिंब) पड़ता है?

उत्तर : जिस आकाश का कोई रूप ही नहीं है, वह आंख से दिखाई कैसे देगा। जो दिखाई नहीं देता उसका प्रतिबिंब कैसे पड़ेगा। प्रतिबिंब तो साकार वस्तु का होता है, निराकार का नहीं।

प्रश्न : तो फिर जो यह ऊपर नीला सा दिखता है, जिसका प्रतिबिंब दर्पण में दिखाई देता है, वह क्या है?

उत्तर : वह पृथ्वी से उड़े हुए जलकण, धूलिकण और अग्नि के सूक्ष्म कण हैं। जहां से वर्षा होती है, वहां जल न हो वर्षा कैसे हो कसती है। इसलिए जो दूर–दूर तक तम्बू के समान दिखाई देता है वह जल का चक्र है। जैसे कोहरा दूर से घना दिखाई देता है वैसे ही आकाश में जल दिखाई देता है।

प्रश्न : क्या हमारे रस्सी, सांप और स्वप्न आदि के दृष्टान्त झूठे हैं?

उत्तर : नहीं! तुम्हारी समझ मिथ्या है। यह बताओ कि सबसे पहले अज्ञान किसको हुआ?

प्रश्न : ब्रह्म को।

उत्तर : ब्रह्म को अल्पज्ञ मानते हो या सर्वज्ञ?

प्रश्न : न सर्वज्ञ, न अल्पज्ञ। क्योंकि सर्वज्ञता या अल्पज्ञता उपाधि सहित (छल–कपट या उपद्रव) में होती है। ब्रह्म उपाधि सहित है।

उत्तर : तो ब्रह्म ही सर्वज्ञ और अल्पज्ञ हुआ। तो तुमने यह क्यों कहा था कि न सर्वज्ञ है और न अल्पज्ञ। अगर तुम उपाधि को कल्पना और झूठ मानते हो तो फिर कल्पना करने वाला कौन है?

प्रश्न : जीव ब्रह्म है या कुछ अलग है?

उत्तर : जीव ब्रह्म से अलग चेतन है। झूठी कल्पना करने वाला ब्रह्म हो ही नहीं सकता क्योंकि जिसकी कल्पना झूठी है वह स्वयं सच्चा कैसे हो सकता है।

प्रश्न : हम सत्य और झूठ को मानते हैं और वाणी से बोलना भी मिथ्या है।

उत्तर : जब तुम झूठ कहने और मानने वाले हो तो झूठे क्यों नहीं हो?

प्रश्न : झूठ–सच हमारे में ही कल्पित हैं, इसलिए हम दोनों के साक्षी आधार (रहने के स्थान) हैं।

उत्तर : जब तुम सत्य और झूठ दोनों के आधार हो, तब तुम्हें प्रामाणिक नहीं माना जा सकता। प्रामाणिक उसे माना जाता है जो सदा सत्य माने, सत्य कहे और सत्य करे, झूठ को न माने, न कहे, न करे। तुम स्वयं अपनी बात झुठला देते हो इसलिए अज्ञानी और झूठे हो।

प्रश्न : अनादि माया जो कि ब्रह्म के आश्रय में है और ब्रह्म को ही ढँक लेती है, उसे मानते हो या नहीं?

उत्तर : नहीं! तुम माया उसे मानते हो जो वस्तु है ही नहीं, लेकिन फिर भी उसका आभास होता है, ऐसा कोई महामूर्ख ही मान सकता है। जो वस्तु होती नहीं उसका आभास भी कभी संभव नहीं हो सकता।

प्रश्न : क्या तुम वशिष्ठ, शंकराचार्य और निश्चलदास जैसे विद्वान् पंडितों का मत नहीं मानते हो? हम तो उनके मत को मानते हैं।

उत्तर : तुम विद्वान् हो या अविद्वान्?

प्रश्न : हम भी कुछ विद्वान हैं?

उत्तर : हम भी तो उनके मत का खंडन करते हैं। तुम उनके मत की सच्चाई हमारे सामने सिद्ध करो। जिसकी बात ठीक सिद्ध हो जायेगी उसी को सत्य मान लिया जायेगा। यदि शंकराचार्य ने केवल जैनमत का खंडन करने के लिए अद्वैतवाद (जीव और ईश्वर की एकता) का सिद्धान्त अपनाया हो तब तो अलग बात है, यदि वास्तव में वह ऐसा मानते थे, तो यह सिद्धान्त गलत है। तुम्हारे विद्वानों ने जीव और ब्रह्म की एकता का अनुमान केवल इस बात से लगा लिया कि जीव और ब्रह्म दोनों चेतन होने के कारण एक ही हैं। लेकिन यह साधारण सी बात उनकी समझ में नहीं आई कि केवल धर्म समान होने से ही एकता नहीं होती। जैसे पृथ्वी और जल दोनों जड़ हैं लेकिन दोनों एक न होकर अलग–अलग हैं। जीव अल्पज्ञ और ब्रह्म सर्वज्ञ होने से दोनों एक दूसरे से भिन्न हैं। जीव और ब्रह्म न कभी एक थे, न हैं और न होंगे। बाल्मीकि और वशिष्ठ दोनों वेद को मानने वाले थे वे वेद विरुद्ध कोई बात न कह सकते थे और न सुन सकते थे।

प्रश्न : क्या व्यास जी ने जो ये शारीरिक सूत्र बनाए हैं, वे गलत हैं? क्योंकि उनमें भी जीव और ब्रह्म की एकता दिखाई देती है? जीव

जो पहले ब्रह्मस्वरूप था अपने स्वरूप को पाकर प्रकट होता है यहां 'स्व' शब्द ब्रह्म के स्वरूप को ही प्रकट करता है।।1।।

आचार्य जैमिनी के मत के अनुसार ऐश्वर्य प्राप्ति आदि कारणों से जीव ब्रह्म के साथ स्थित होता है।।2।।

वृहदारण्यक के अनुसार केवल चेतन होने से जीव मुक्ति में स्थित रहता है।।3।।

व्यास जी ऐश्वर्य प्राप्ति हेतु जीव के ब्रह्म में स्थित होने में कोई विरोध नहीं मानते ।।4।।

योगी ऐश्वर्य सहित अपने ब्रह्मस्वरूप को प्राप्त होकर आप अपने और सबके स्वामी ब्रह्म स्वरूप से मुक्ति में स्थित रहता है।। 5।।

उत्तर : इन सूत्रों के ठीक अर्थ इस प्रकार हैं : जब तक जीव अपने निजी शुद्ध स्वरूप को प्राप्त नहीं कर लेता और सब मलों से रहित होकर पवित्र नहीं हो जाता तब तक योग से ऐश्वर्य को प्राप्त करने पर भी अपने अन्तर्यामी ब्रह्म को प्राप्त होकर आनन्द में स्थित नहीं हो सकता।।1।।

जैमिनी के मत के अनुसार ऐश्वर्यप्राप्ति आदि कारणों से जीव ब्रह्म के साथ स्थित होता है।।2।।

बृहदारण्यक के अनुसार केवल चेतन होने से जीव मुक्ति में स्थित रहता है ।।3।।

व्यास जी ऐश्वर्य प्राप्ति हेतु जीव के ब्रह्म में स्थित होने में कोई विरोध नहीं मानते।।4।।

योगी ऐश्वर्य सहित अपने ब्रह्मस्वरूप को प्राप्त होकर आप अपने और सबके स्वामी ब्रह्मस्वरूप से मुक्ति में स्थित रहता है।। 5।।

उत्तर : इन सूत्रों के ठीक अर्थ इस प्रकार है : जब तक जीव अपने निजी शुद्ध–स्वरूप को प्राप्त नहीं कर लेता और सब मलों से रहित होकर पवित्र नहीं हो जाता तब तक योग से ऐश्वर्य को प्राप्त करने पर भी अपने अन्तर्यामी ब्रह्म को प्राप्त होकर आनन्द में स्थित नहीं हो सकता।1। जैमिनी के मत के अनुसार जब जीव पाप आदि रहित ऐश्वर्ययुक्त योगी होता है तभी जीव ब्रह्म के साथ मुक्ति के आनन्द को भोग सकता है।।2।। जब अविद्या आदि दोषों से छूटकर जीव शुद्ध चेतन स्वरूप में स्थित होता है तभी ब्रह्म

thearyasamaj.org

के साथ सम्बन्ध को प्राप्त होता है।।3।। जब जीव ऐश्वर्य और शुद्ध विज्ञान को जीतकर जीवन मुक्त होता है तब अपने निर्मलस्वरूप को प्राप्त होकर ब्रह्म के साथ आनन्दित होता है।।4।। जब योगी का संकल्प सत्य होता है तब स्वयं परमेश्वर को प्राप्त होकर मुक्ति सुख को पाता है। मुक्ति में सब एक समान स्वतन्त्र रहते हैं।।5।। इसी बात को व्यास जी ने अपने सूत्रों में इस प्रकार स्पष्ट किया है :

(1) ब्रह्म के सिवाय कोई जीव सृष्टि की रचना नहीं कर सकता, इसलिए अल्पज्ञ जीव ब्रह्म नहीं हो सकता।

(2) जीव और ब्रह्म अलग–अलग हैं तभी तो जीव आनन्द–स्वरूप ब्रह्म को प्राप्त कर आनन्दस्वरूप होता है। अतः जीव और ब्रह्म एक नहीं हैं।

(3) जीव सूक्ष्म है तो ब्रह्म अतिसूक्ष्म अर्थात् सूक्ष्म जीव से भी सूक्ष्म है। ब्रह्म का जीव की भांति शरीर और मन से संबंध नहीं होता, न ही वह शरीर धारण करता है और न ही जन्म–मरण के बंधन में बंधता है। वह तो सब में पूर्ण, बाहर–भीतर निरंतर व्यापक है और नाशवान प्रकृति से परे है।

(4) योग भिन्न–भिन्न पदार्थों का होता है तभी तो ब्रह्म में जीव का या जीव में ब्रह्म का योग होने की बात होती है। इसलिए जीव और ब्रह्म अलग–अलग हैं।

(5) ब्रह्म को अन्तर्यामी कहते हैं। जीव के भीतर व्यापक होने वाला ब्रह्म जीव से भिन्न है, तभी तो वह जीव में बसता है।

(6) जैसे परमात्मा जीव से भिन्न है वैसे ही परमात्मा इन्द्रिय, अंतःकरण, सूर्य, पृथ्वी, वायु आदि पदार्थों, जिन्हें विद्वान लोग दिव्य गुणों के कारण देवता कहते हैं, से भी अलग है।

(7) शरीर धारी जीव ब्रह्म नहीं हैं क्योंकि वह ब्रह्म के गुण–कर्म–स्वभाव की कसौटी पर खरा नहीं उतरता।

(8) दिव्य मन, इन्द्रिय और पृथ्वी आदि सब पदार्थों में परमात्मा अंतर्यामी रूप से स्थित है।

(9) जीव शरीधारी है, ब्रह्म नहीं। इसी से दोनों का अलग–अलग होना सिद्ध होता है।

thearyasamaj.org

(10) शारीरिक सूत्रों से भी ब्रह्म और जीव का भेद सिद्ध होता है।

नवीन वेदान्ती सृष्टि का आरंभ और अंत (प्रलय) ब्रह्म में ही मानते हैं। यदि प्रलय में सब कुछ नष्ट हो जाता है तब तो ब्रह्म भी नष्ट हो जाता होगा। वेद में ईश्वर, जीव और प्रकृति तीनों को अनादि कहा गया है, जिनका न कभी आरंभ होता है, न अंत। ब्रह्म में विकार, उत्पत्ति और अज्ञान आदि का होना कभी संभव नहीं हो सकता।

जैनमत का खंडन तो शंकराचार्य ने किया था परन्तु उनकी मृत्यु के पश्चात् वाममार्गी, शैव और वैष्णव मत प्रचलित हो गए। वाममार्गी वेद विरोधी और शिव के उपासक हैं, वे रुद्राक्ष पहनने और भस्म रमाने को महत्व देते हैं। शैवमत वालों ने जलाधरी (लिंग और योनि) की पूजा को अपना कर इसी में मोक्षसिद्धि को मान लिया। इन लोगों ने व्यास जी के नाम से मार्कण्डेय और शिवपुराण जैसे ग्रन्थ बना लिए जिन्हें भ्रमवश ऋषियों द्वारा रचित मान लिया गया। इसीलिए राजा भोज को अपने राज्यकाल में यह आदेश जारी करना पड़ा, "जो कोई काव्यादि ग्रंथ बनावे वह अपने नाम से बनाये, ऋषि मुनियों के नाम से नहीं।" ऋषियों के नाम से अपने ग्रंथ रचकर भ्रम फैलाने वाले के लिए हाथ काट देने का दंड निश्चित किया गया था। इसका प्रमाण ग्वालियर के भिंड क्षेत्र के तिवारी ब्राह्मणों के घर भोजरचित 'संजीवनी' पुस्तक में मिलता है। इसमें लिखा है कि व्यास जी ने महाभारत में 4400 और उनके शिष्यों ने 5600 श्लोक लिखे, इस प्रकार महाभारत में कुल 10000 श्लोक होने चाहिए लेकिन भोज के समय तक ही इनकी संख्या बढ़कर 30000 हो चुकी थी। भोज के समय में ऐसे शिल्पकार थे जिन्होंने एक घंटे में साढे 27 कोस जाने वाला घोड़े के आकार का विमान बनाया था जो भूमि और आकाश दोनों में चलता था। इसी तरह स्वचालित मशीन की सहायता से चलने वाला पंखा बनाया था जो पर्याप्त हवा देता था। यदि इन पदार्थों को सुरक्षित रखा जाता तो भारत विज्ञान के क्षेत्र में विश्व–शिरोमणी कहलाता और यूरोप के देश इन खोजों का श्रेय न ले पाते।

जब जैनियों ने अपने तीर्थंकरों की मूर्तियां बनाकर पूजा करनी शुरू कर दी और उनकी कथाओं की पुस्तकें बना लीं तो उनकी देखा–देखी वैष्णवों ने भगवान विष्णु की पूजा आरंभ कर दी और विष्णु पुराण रच डाला। शाक्तों ने देवी भागवत की रचना कर ली, जिसके अनुसार श्रीपुर की रहने वाली स्वामिनी

thearyasamaj.org

देवी नामक स्त्री से अपने हाथ के छाले से ब्रह्म को उत्पन्न किया और उसके सामने विवाह का प्रस्ताव रखा जिसे न मानने पर उसे मार डाला। अंत में महादेव को उत्पन्न कर विवाह का प्रस्ताव रखा तो उन्होंने कहा कि यदि आप किसी अन्य स्त्री का रूप धारण कर लें तभी विवाह हो सकता है। इसपर उस देवी ने ब्रह्मा और विष्णु को जीवित कर दिया और तीन स्त्रियां बनाकर उन तीनों का विवाह कर दिया। अब यदि इस कथा को सत्य माना जाये तो इनकी देवी का ही चरित्र गिरा हुआ था जो अपने ही उत्पन्न किए हुए पुत्रों से विवाह करना चाहती थी और फिर उसने स्वयं जो तीन स्त्रियां उत्पन्न की वे भी तो स्वमाता से उत्पन्न होने के कारण उनकी बहनें ही हुईं। इस प्रकार के मत किसी को ब्रह्म या मुक्ति की ओर नहीं ले जा सकते। यदि शैवों की तरह भस्म रमाने से भगवान मिल जाते तब तो सबसे पहले गधे, सूअर, कुत्ते आदि राख में लोटने वाले पशुओं की मुक्ति हो जाती।

प्रश्न : कालाग्नि रुद्र उपनिषिद में भस्म लगाने का विधान है, क्या वह झूठा है? वेदों में भी भस्मधारण का विधान है। पुराणों में रुद्र की आंख से गिरे आँसू से रुद्राक्ष वृक्ष उत्पन्न हुआ बताया गया है, जिसके बीज धारण करने से सब पापों से छूटकर जीव स्वर्ग को जाता है, मृत्यु और नरक का डर नहीं रहता।

उत्तर : कालाग्निरूद्रोपनिषद किसी राख धारण करने वाले ने ही लिखा होगा क्योंकि भस्म रमाना, रुद्राक्ष धारण करना, तुलसी, चंदन, घास आदि को गले में बांधना अज्ञानी लोगों के काम हैं। आंख के आंसू से वृक्ष उत्पन्न हो ही नहीं सकता। ईश्वर जिस बीज को उत्पन्न करता है उससे वैसा ही वृक्ष उत्पन्न होता है। श्रेष्ठ पुरुष इन बातों पर विश्वास न करके शुभकर्म करते हैं। यदि रुद्राक्ष पहनने से यम डरकर भाग जाता तब तो सब लोग रुद्राक्ष पहन कर अमर हो जाते। रुद्राक्ष धारण करने वाले से तो जीव–जन्तु भी नहीं डरते तो न्यायाधीश या यम क्यों डरेंगे।

प्रश्न : वाममार्गी और शैव तो अच्छे नहीं हैं, पर वैष्णव तो अच्छे हैं?

उत्तर : नहीं वे भी वेदविरोधी होने के कारण उनसे भी बुरे हैं।

प्रश्न : 'नमस्ते रुद्र मन्यवे, शिवाय च शिवतराय च, वैष्णव मसि, गणनां त्वां गणपति हवामहे, भगवती, भूया, सूर्य आत्मा जगतस्त

स्थुषश्च' आदि वेद प्रमाणों से शैव–वैष्णव मत सिद्ध होते हैं फिर आप इनका खंडन कैसे करते हैं?

उत्तर : रुद्र, शिव, विष्णु, गणपति, सूर्य आदि एक ही ईश्वर के नाम हैं और भगवती सत्य बोलने वाली वाणी का नाम है। जो ईश्वर दुष्टों को रुलाता, सबका कल्याण करने वाला है, उस ईश्वर को नमस्कार करना ही इन सबका अर्थ है। वास्तविक अर्थ न जानने के कारण परमेश्वर के अलग–अलग नामों को लेकर व्यर्थ झगड़े खड़े कर रखे हैं। एक गुरु के दो चेले अपने गुरु को सुख पहुंचाने के लिए उसकी एक–एक की टांग दबाया करते थे। एक दिन करवट लेने पर गुरु जी की टांग दूसरी टांग पर आ गई। तब जिस चेले की सेवा वाली टांग दब रही थी, उसने दूसरी टांग की इतनी पिटाई कर दी कि टांग सूज गई। अब दूसरे चेले ने जब टांग सूजी हुई देखी तो उसने दूसरे चेले वाली टांग की खूब पिटाई कर दी। अज्ञान के कारण वे समझ ही न पाये कि दोनों टांगे उसी गुरु की हैं जिसे वे सुख पहुंचाना चाहते थे। यही हाल उन अज्ञानियों का है जो एक ईश्वर की पूजा अलग–अलग नामों से करके झगड़ते हैं। जहां तक चक्रांकित वैष्णवों का संबंध है, इनका भक्तमाल नामक ग्रंथ 'नाभा' डूम ने बनाया है। इनमें यह प्रथा है कि वे शरीर पर शंख, चक्र, गदा आदि के धातु के चिन्हों को आग में तपाकर उसे बाजू में दाग देकर दूध में बुझाकर उस दूध को पी लेते हैं। इससे स्पष्ट है कि वे मनुष्य के माँस का स्वाद भी दूध में चखते हैं। ऐसे पाखंडों से न तो किसी का भला होता है और न ही परमेश्वर प्रसन्न हो सकता है। इसी प्रकार जप, माला, छापा, तिलक ये सब पाखंडी लोगों के ढोंग हैं, तप नहीं।

ऋग्वेद (मं 6, सू 83 मंत्र 1–2) में स्पष्ट रूप में बताया गया है कि जो ब्रह्मांड का रचने वाला, वेदज्ञान का रक्षक, सर्वशक्तिमान, प्रभु सृष्टि के कण–कण में समाया हुआ है, उस प्रभु का जो व्यापक पवित्र स्वरूप है उसको ब्रह्मचर्य, सत्यभाषण, शम, दम, तप, योग, सत्संग द्वारा इन्द्रियों को जीतकर शुद्ध आचरण और शुद्ध अन्तःकरण द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।।1।।

जो प्रकाशस्वरूप परमेश्वर की सृष्टि में विस्तृत पवित्र आचरण रूपी तप करते हैं वे ही परमात्मा को पाने के योग्य होते हैं।।2।।

वेद के अनुसार यथार्थ शुद्ध भाव, सत्य मानना, सत्य करना, सत्य बोलना, मन को अधर्म में न लगाना, शरीर–इन्द्रिय और मन से शुभ कर्मों का आचरण

करना, वेद आदि सत्य विद्याओं का पढ़ना–पढ़ाना और उनके अनुसार आचरण करना आदि उत्तम धर्मयुक्त कामों का नाम तप है।

प्रश्न : मूर्तिपूजा किसने चलाई और क्यों?

उत्तर : मूर्तिपूजा जैनियों ने चलाई। उनका विचार है कि शान्त ध्यान मुद्रा में बैठी हुई मूर्ति को देखकर जीव पर भी उसका शुभ प्रभाव पड़ता है।

प्रश्न : क्या मूर्ति देखकर शुभ प्रभाव पड़ता है?

उत्तर : जीव चेतन है मूर्ति जड़ है। क्या जीव मूर्ति के समान जड़ हो जायेगा।

प्रश्न : शाक्त और वैष्णवों ने जैनियों की मूर्तियों की नकल क्यों नहीं की?

उत्तर : यदि वे जैनियों की तरह मूर्तियां बनाते तो उनमें ही मिल जाते, इसलिए वैष्णवों ने जैनियों की तरह नंगी और ध्यानमुद्रा में बैठी मूर्तियां न बनवाकर श्रृंगार की हुई स्त्री–सहित राग–रंग, भोग और विषयासक्ति की मुद्रा में खड़ी और बैठी हुई मूर्तियां बनाई हैं। जैनी लोग अधिक घंटे घड़ियाल नहीं बजाते लेकिन वैष्णव ढोल बाजे आदि बजाते हैं। इसी तरह स्वार्थी लोगों ने स्वप्न में भगवान के दर्शन देने की कथाएं बनाकर सीताराम, राधाकृष्ण, लक्ष्मीनारायण, शिवपार्वती आदि की मूर्तियां बनाकर पूजा करनी आरंभ कर दी। लोगों ने भी मनवांछित फल पाने के लिए अंधाधुंध उनकी नकल करनी शुरु कर दी।

प्रश्न : परमेश्वर निराकार है, वह ध्यान में नहीं आ सकता, इसलिए मूर्ति के सामने हाथ जोड़कर परमेश्वर का ध्यान लगाने में क्या बुराई है?

उत्तर : जब परमेश्वर सर्वव्यापक और निराकार है तो उसकी मूर्ति बन ही नहीं सकती। यदि मनुष्य के हाथ की बनी मूर्ति के दर्शनमात्र से ही ईश्वर का स्मरण हो जाता है तो फिर स्वयं ईश्वर के बनाए हुए पृथ्वी, पहाड़, जल, अग्नि, वायु, फूलों–फलों, सुन्दर पशु–पक्षियों को देखकर उसका स्मरण क्यों नहीं हो सकता। मूर्ति को देखकर ही अगर परमात्मा की याद आती है तब तो मूर्ति के सामने न होने पर ऐसा लगता होगा कि हमें कोई नहीं देख रहा है। ऐसी अवस्था में एकान्त में मनुष्य जितने चाहे कुकर्म करेगा। परन्तु जो लोग ईश्वर को निराकार, सर्वज्ञ, सर्वव्यापक और न्यायकारी मानते हैं उन्हें हर

thearyasamaj.org

समय ईश्वर के अपने आसपास होने का ज्ञान बना रहता है और वे एकान्त में भी कोई गलत काम नहीं करते हैं और न ही मन में कोई बुरा विचार लाते हैं। क्योंकि उन्हें इस बात का ज्ञान होता है कि यदि वे मन वचन कर्म से कुछ भी बुरा करेंगे तो उसके दंड से कभी नहीं बच पायेंगे। मिश्री–मिश्री या नीम–नीम कहने से मुंह मीठा या कड़वा नहीं हो जाता, उसके लिए स्वाद चखना ही पड़ता है। इसी तरह केवल मूर्ति को देख लेने से ईश्वर का दर्शन नहीं हो जाता।

प्रश्न : पुराणों में तो नाम–स्मरण का बड़ा महत्व लिखा है, क्या ये सब मिथ्या और व्यर्थ हैं?

उत्तर : नामस्मरण का महत्व तो है लेकिन तुम्हारी नाम–स्मरण की रीति झूठी और व्यर्थ है।

प्रश्न : वेदों में नामस्मरण की क्या रीति बतलाई गई है?

उत्तर : नाम स्मरण में जिस नाम का स्मरण करते हैं वैसा ही व्यवहार करें। जैसे यदि आप ईश्वर के 'न्यायकारी' नाम का स्मरण करते हैं तो जैसे परमात्मा पक्षपात छोड़कर सबका उचित न्याय करता है वैसे ही आप भी सदा न्याययुक्त व्यवहार करें, कभी अन्याय न करें यही रीति वेद में बताई गई है। इस तरह ईश्वर का केवल एक नाम भी मनुष्य का कल्याण कर सकता है।

प्रश्न : हम भी जानते हैं कि परमेश्वर निराकार है परन्तु उसने शिव, विष्णु गणेश आदि जो अवतार लिये हैं, उनकी मूर्तियां तो बनाई जा सकती हैं?

उत्तर : ईश्वर निराकार, सर्वव्यापक अजर अमर है, वह जन्म मरण से रहित होने के कारण शरीर धारण नहीं करता। इसलिए वह कभी अवतार नहीं लेता। वह आकाश से भी विशाल है फिर एक छोटे से वीर्यकण और गर्भ में कैसे आ सकता है। अतः उसके अवतार लेने की बात वैसे ही गप्प है जैसे एक बांझ स्त्री के विवाह या पौत्र उत्पन्न होने की बात।

प्रश्न : जब ईश्वर सर्वत्र व्यापक है तो मूर्ति में भी है। फिर मूर्ति में भावना करके पूजा करने में क्या बुराई है? परमात्मा लकड़ी–पत्थर आदि किसी पदार्थ में नहीं बल्कि भाव में विद्यमान है। इस तरह जहां भाव करें वहीं परमेश्वर सिद्ध होता है?

उत्तर : जब परमेश्वर सर्वत्र व्यापक है तो किसी एक वस्तु में उसका भाव

thearyasamaj.org

करना उसी प्रकार है जैसे एक चक्रवर्ती राजा को एक छोटी सी झोंपड़ी का स्वामी मान लेना। इस तरह तुम परमेश्वर को छोटा बनाकर उसका कितना अपमान करते हो। मूर्ति पर फूल चढ़ाते हो, उसे स्नान करवाते हो, भोग लगाते हो, घंटे घड़ियाल बजाते हो, सिर नवाते और हाथ जोड़ते हो जबकि फूलों में, जल में, नैवेद्य में, घंटे घड़ियाल में, सिर और हाथों में भगवान है और ये सब पदार्थ उसी के दिए हुए हैं तो फिर भगवान के दिए हुए पदार्थ उसी को देकर उसका अपमान क्यों करते हो? तुम मान क्यों नहीं लेते कि तुम पत्थर की पूजा करते हो, परमेश्वर की नहीं। जहां तक भाव का संबंध है अगर उसे सच्चा मानें तब तो परमेश्वर बंधन में बंध जायेगा। यदि भाव से ही बात बनती तब तो हम मिट्टी में सोना, जल में दूध और मिट्टी में शक्कर की भावना करके उसको वैसा क्यों नहीं बना लेते। मनुष्य सदा सुख की भावना करता है लेकिन फिर भी दुःख आता है। जो जैसा है उसको वैसा समझना ही सच्ची भावना है, इसके विपरीत समझना अभावना है। जैसे अग्नि को अग्नि समझना भावना और अग्नि को जल समझना अभावना है। वैसे ही तुम अभावना को भावना और भावना को अभावना कहते हो।

प्रश्न : जब तक वेदमन्त्रों से आवाहन नहीं करते, तब तक देवता नहीं आता, आवाहन करने से झट आ जाता है और विसर्जन करने से चला जाता है? क्यों?

उत्तर : अगर मंत्र पढ़कर बुलाने से देवता आ जाता तो मूर्ति चेतन हो जाती। यह तो बताओ कि परमेश्वर बुलाने पर कहां से आता है और फिर कहां चला जाता है। अगर मंत्रबल द्वारा बुलाने से परमात्मा आ जाता है तब तो हमें अपने मरे हुए प्रियजनों को भी बुला लेना चाहिए और विसर्जन के द्वारा शत्रु को मार देना चाहिए। वेदों में परमेश्वर के आवाहन और विसर्जन करने का एक अक्षर भी नहीं लिखा है।

प्रश्न : तंत्रग्रंथों में तो ऐसे मंत्र लिखे हैं। क्या तंत्र झूठा है?

उत्तर : हां, तंत्रग्रन्थों की रचना वाममार्गियों ने वेदविरुद्ध वचन लिखकर की है। वेद में आवाहन, विसर्जन, प्राण–प्रतिष्ठा, मूर्ति की चन्दन आदि से पूजा आदि का कोई वर्णन नहीं है।

प्रश्न : वेदों में लिखा नहीं गया, तो उसका खंडन भी तो नहीं किया गया?

उत्तर : वेदों और उपनिषदों में परमेश्वर के स्थान पर किसी अन्य पदार्थ को पूजनीय न मानने का आदेश है और कहा गया है कि जो उत्पन्न न होने वाली अनादि प्रकृति की ब्रह्म के स्थान पर उपासना करते हैं वे अज्ञान और दुःखसागर में डूबते हैं और जो जड़—प्रकृति से उत्पन्न पदार्थों, पत्थर, ब्रह्म, मनुष्य आदि की ब्रह्म के स्थान पर उपासना करते हैं वे उससे भी अधिक अंधकार और चिरकाल घोर दुःख—रूप नरक में गिरकर महाक्लेश भोगते हैं।

जो सब जगत में व्यापक है उस निराकार परमात्मा की कोई मूर्ति नहीं बन सकती। जिसके धारण करने और सत्ता से वाणी का प्रवाह उसकी ओर हो जाता है, उसी को ब्रह्म जानकर उसकी उपासना करो, उसके अतिरिक्त किसी की नहीं।

(1) जो स्वयं मन की सीमा में नहीं आता और मन को जानता है, उसी को ब्रह्म जानकर उसकी उपासना करो। उससे भिन्न जो जीव और अंतःकरण है, ब्रह्म के स्थान पर उसकी उपासना मत करो।

(2) जो आंख से दिखाई नहीं देता लेकिन जिसके प्रकाश से सब आंखे देखती हैं, उसी को तू ब्रह्म जान और उसी की उपासना कर। उससे भिन्न सूर्य, विद्युत, अग्नि आदि जड़ पदार्थों की उपासना मत कर।

(3) जो कानों से नहीं सुना जाता लेकिन जिससे कान सुनता है उसी को तू ब्रह्म जानकर उसकी उपासना कर, उससे भिन्न किसी शब्द आदि की उपासना मत कर।

(4) जो प्राणों से चलायामान नहीं होता, जिससे प्राणों को गति प्राप्त होती है उसी ब्रह्म को तू जान और उसी की उपासना कर।

(5) इतना ही नहीं वेद में अनेक प्रकार के निषेध हैं जिनमें पत्थर आदि मूर्तिपूजा का भी निषेध है।

प्रश्न : मूर्तिपूजा में पुण्य नहीं तो पाप भी तो नहीं हैं?

उत्तर : कर्म दो प्रकार के होते हैं, उचित और अनुचित। वेद में सत्यभाषण आदि कर्मों का करना कर्त्तव्य बताया गया है जो धर्म होने के कारण पुण्य—कर्म हैं। लेकिन झूठ बोलने का निषेध होने के कारण यह पापकर्म है। मूर्तिपूजा यदि पुण्य नहीं है तो फिर पापकर्म ही है।

प्रश्न : देखो! वेद अनादि हैं, उस समय मूर्तिपूजा की आवश्यकता

ही न थी क्योंकि देवता प्रत्यक्ष थे लेकिन जब मनुष्य का ज्ञान और शक्ति घट गई और परमेश्वर को ध्यान में नहीं ला सका। तो उसने मूर्ति का सहारा लिया। मूर्ति ईश्वर तक पहुंचने की पहली सीढ़ी है जैसे गुड़ियों का खेल लड़कियां तब तक खेलती हैं जब तक वे सच्चे पति को प्राप्त नहीं कर लेतीं। इसी तरह साधक मूर्ति पूजा का सहारा तब तक लेता है जब तक ईश्वर का साक्षात्कार नहीं हो जाता। अतः मूर्तिपूजा में कोई बुराई नहीं है?

उत्तर : जब वेद के अनुकूल आचरण धर्म और वेद के विरुद्ध आचरण अधर्म कहलाता है, तो मूर्तिपूजा अधर्म ही है। वेद के विरुद्ध ग्रंथों को प्रमाण मानना नास्तिक होना ही है। मनु–स्मृति में लिखा है 'जो वेदों की निन्दा, त्याग करते हैं और विरुद्ध आचरणर करते हैं वे नास्तिक कहाते हैं

(1) जो ग्रंथ वेदों के विरुद्ध लोगों द्वारा बनाए गए हैं वे सब संसार को दुःख –सागर में डुबोने वाले हैं, वे सब निष्फल, असत्य, अंधकाररूप, इस लोक और परलोक में दुःख देने वाले हैं।

(2) जो वेदों के विरुद्ध ग्रंथ उत्पन्न होते हैं वे आधुनिक होने के कारण शीघ्र नष्ट हो जाते हैं

(3) इस तरह ब्रह्मा से लेकर जैमिनी तक सबका यही मत है कि वेद विरुद्ध को न मानकर वेदों के अनुकूल आचरण करना ही धर्म है। जड़ की पूजा से न तो परमेश्वर में ध्यान लगाया जा सकता है और न ही ज्ञान बढ़ता है। मूर्तिपूजा एक सीढ़ी नहीं खाई है जिसमें अज्ञानी मनुष्य गिरकर चकनाचूर हो जाता है, उससे निकल नहीं सकता। सत्यभाषण और विद्वानों के संग से सत्य–विद्या को जानना आदि ऐसे छोटे–छोटे धार्मिक कार्य हैं, जिनके करने से मनुष्य अपने ज्ञान को बढ़ाता हुआ उस ब्रह्म को भी प्राप्त कर लेता है और मनुष्य जन्म में ही धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष आदि फल प्राप्त कर लेता है। मूर्तिपूजा और गुड़ियों के खेल में कोई समानता नहीं है। मूर्तिपूजा अज्ञान को बढ़ाती है जबकि गुड़ियों का खेल सुशिक्षा प्राप्त करवाता है। जब व्यक्ति अच्छी शिक्षा प्राप्त करेगा तब ही सच्चे पिता परमात्मा को प्राप्त करने में सफल होगा।

प्रश्न : साकार में मन स्थिर हो जाता है, निराकार में स्थिर होना कठिन होता है, इसलिए मूर्ति–पूजा रहनी चाहिए?

उत्तर : साकार में मन कभी स्थिर नहीं हो सकता क्योंकि उसको मन झट

thearyasamaj.org

ग्रहण करके उसी के एक अंग से दूसरे अंग की ओर दौड़ जाता है। लेकिन निराकार अनंत परमात्मा को पाने के लिए मन अपनी शक्ति के अनुसार जितना चाहे दौड़े तो भी उसका अंत नहीं पाता और अंत में उस प्रभु के गुण कर्म स्वभाव का विचार करता हुआ, उसी के आनन्द में मग्न होकर स्थिर हो जाता है–

(1) इसलिए मूर्तिपूजा करना अधर्म है। मन्दिर बनवाने में करोड़ों रुपए खर्च हो जाते हैं और लोग भगवान ही सब कुछ करेगा, ऐसा सोचकर पुरुषार्थ न करके आलसी हो जाते हैं

(2) मन्दिरों में स्त्री–पुरुषों की भीड़ होने से व्यभिचार, झगड़े–बखेड़े और रोगादि उत्पन्न हो जाते हैं।

(3) मूर्ति रूप भगवान को ही धर्म अर्थ काम मोक्ष का साधन मानकर लोग पुरुषार्थ करना छोड़ देते हैं और मनुष्य जन्म व्यर्थ गंवा देते हैं।

(4) अलग–अलग देवी'–देवताओं की मूर्तियां बन जाने और पुजारियों के एकमत न होने के कारण देश में फूट बढ़ जाती है, जिससे राष्ट्रीय एकता को हानि होती है और देश का नाश होता है।

(5) इतिहास में ऐसे प्रमाण मिलते हैं कि शत्रुओं के आक्रमण करने पर भी भगवान की मूर्तियों के भरोसे बैठे रहने और शत्रु का मुकाबला न करने के कारण देश पराधीन हो गया और देशवासियों को अनेक प्रकार के दुःख उठाने पड़े।

(6) मनुष्यों ने परमेश्वर के उपासना–स्थान हृदय में प्रभु के नाम के स्थान पर पत्थर की मूर्तियों का ध्यान धारण कर लिया, इस दुष्ट बुद्धि के कारण विनाश को प्राप्त हुए।

(7) जितना समय लोग अपनी कामनाओं की पूर्ति के लिए अनेक स्थानों पर बने मन्दिरों में भटकते हैं और चोर ठगों से ठगे जाते हैं उतना समय यदि निर्मल हृदय से ईश्वर का ध्यान करें तो उनकी कामनाएं पूर्ण हो जायें।

(8) दुष्ट पुजारी मन्दिरों से प्राप्त धन का प्रयोग वेश्यागमन, मांसाहार और नशे आदि के लिए करते हैं इसलिए धन दान देने वाले को उसका कोई सुफल प्राप्त नहीं होता, पाप ही लगता है।

(9) लोग मूर्तियों की पूजा में फंसकर जीवित माता–पिता की सेवा और सम्मान करना ही भूल जाते हैं

(10) यदि कोई मूर्तियों को तोड़ देता है तो लोग दुःखी होते हैं और इससे झगड़े पैदा हो जाते हैं।

(11) पुजारी मन्दिरों में व्यभिचार फैलाते हैं, देवदासी प्रथा इसका जीता–जागता उदाहरण है।

(12) मूर्तियां जड़ होती हैं, वे कोई आज्ञा नहीं देतीं इस तरह परमेश्वर से स्वामी और सेवक का परस्पर सद्भावपूर्ण संबंध नहीं रहता।

(13) जड़ का ध्यान करने से आत्मा भी जड़–बुद्धि हो जाता है।

(14) फूल आदि परमात्मा ने सुगन्ध फैलाने और दुर्गन्ध भगाने के लिए बनाए हैं, जब ये फूल तोड़कर मन्दिरों में चढ़ाये जाते हैं तो जल में सड़कर वायु में दुर्गन्ध फैलाते हैं। इस तरह मूर्तिपूजा से वातावरण शुद्ध न होकर अशुद्ध होता है।

(15) फूल, चन्दन, चावल, मिट्टी, दूध आदि बहकर जब कुंड में इकट्ठा होता है तो उसमें से हानिकारक दुर्गन्ध उठती है और अनेक कीड़े पतंगे उस पानी में गिरकर मरते और सड़ते हैं।

प्रश्न : हमारे आर्यावर्त में पंचदेव पूजा शब्द प्राचीन परम्परा से चला आ रहा है उसका भाव शिव, विष्णु, अंबा, गणेश और सूर्य की मूर्ति बनाकर पूजना है या नहीं?

उत्तर : किसी प्रकार की मूर्तिपूजा नहीं करनी चाहिए, पंचदेवों की भी नहीं। वेदों में जिन पंचदेवों की पूजा का वर्णन हैं वे इस प्रकार हैंः– पहला पूज्य देवता माता है। संतानों का धर्म है कि तन–मन–धन से माता की सेवा कर उसे प्रसन्न करें, उसके प्रति क्रोध या हिंसा का भाव न रखें। दूसरा पूज्य देवता पिता है उसकी भी माता के समान ही सेवा करनी चाहिए। तीसरा देवता आचार्य या गुरु है उसकी सेवा भी तन–मन–धन से करनी चाहिए। चौथा देवता वह अतिथि होता है जो विद्वान, धार्मिक, कपट–रहित और सबकी उन्नति करने वाला है। जो स्थान–स्थान पर घूमता हुआ अपने उपदेशों से सबको सुखी करता हो, उसकी सेवा करें। पांचवां देवता स्त्री के लिए पति और पुरुष के लिए पत्नी होती है। इन पांचों देवताओं के द्वारा मनुष्य जाति की उत्पत्ति, पालन, सत्य–शिक्षा, विद्या और सत्य उपदेश की प्राप्ति होती है, जो परमात्मा तक

thearyasamaj.org

पहुंचने के साधन हैं। इनकी पूजा न करके पत्थर की मूर्तियों की पूजा करना अधर्म ही है।

प्रश्न : यदि माता–पिता की सेवा और मूर्तिपूजा भी करें, तब तो कोई दोष नहीं?

उत्तर : माता–पिता की सेवा करने में ही कल्याण है, उनके होते हुए पत्थरों की पूजा करना अनर्थ ही है। सच्ची बात तो यह है कि माता–पिता के आगे जो भेंट रखी जायेगी, उसे वे ले लेंगे लेकिन मूर्ति तो कुछ लेगी नहीं, उसे तो तुम भगवान का प्रसाद कहकर स्वयं ले लोगे, इसलिए लोग मूर्ति के आगे चढ़ावा रखकर ही माता–पिता की सेवा के कर्त्तव्य भाव से अपने को मुक्त मान लेते हैं। आजकल तो पुजारी भी जनता को तरह–तरह की मूर्तियां बनाकर और कथाएं सुनाकर खूब लूट रहे हैं।

प्रश्न : यदि स्त्री की मूर्ति देखने से कामवासना उत्पन्न होती है तो शांत वैरागी की मूर्ति देखने से वैराग्य और शांति की प्राप्ति क्यों नहीं होती?

उत्तर : नहीं हो सकती। विवेक के बिना वैराग्य, वैराग्य के बिना विज्ञान और विज्ञान के बिना शांति नहीं होती। किसी की मूर्ति देखने से प्रीति नहीं होती बल्कि जिससे प्रीति करनी हो उसके गुण–दोष देखकर प्रीति होती है। जड़ मूर्ति की पूजा करने से विचारशक्ति और पुरुषार्थ की सामर्थ्य घट जाती है इसीलिए मनुष्य गिरावट की ओर जल्दी बढ़ जाता है।

प्रश्न : औरंगजेब को लाट भैरव आदि ने बड़े–बड़े चमत्कार दिखाए थे। औरंगजेब की तोप–गोले चलाने वाली सेना को बड़े–बड़े भंवरों (भ्रमरों) ने व्याकुल कर भगा दिया था?

उत्तर : यह कोई चमत्कार नहीं था। कहीं भौरों का छत्ता लगा होगा जिस पर गोले से निकली कोई वस्तु लगी होगी। उससे क्रोधित होकर भौंरे अपने स्वभाव के अनुसार सेना पर टूट पड़े होंगे। जो दूध की धारा निकलती दिखाते थे ये पुजारियों की ही लीला या छल था।

प्रश्न : महादेव मलेच्छ को दर्शन न दने के लिए कूप में और ब्राह्मण वेणी माधव के घर में जा छिपे थे, क्या ये भी चमत्कार नहीं है?

उत्तर : नहीं! पुराणों में अनेक कथाएं आती हैं कि महादेव ने त्रिपुरासुर जैसे भयंकर राक्षसों को भस्म कर दिया फिर उसी महादेव ने मुसलमानों को

thearyasamaj.org

भस्म क्यों नहीं किया? पुजारियों ने ही मुसलमानों से बचाने के लिए शिवलिंग को कुएं में डाल दिया होगा और वेणीमाधव के घर छिपा दिया होगा। कहा जाता है कि काशी में काल भैरव के डर से यमराज नहीं जाते और प्रलय में भी काशी का नाश नहीं होने देते तो फिर मुसलमानों के द्वारा वहां के मन्दिरों का नाश क्यों होने दिया। यह सब पोप–माया ही तो है।

प्रश्न : गया में श्राद्ध करने से पितरों का पाप छूट जाता है और स्वर्ग में चले जाते हैं और वहां पितर अपना हाथ निकालकर पिंड लेते हैं क्या यह बात झूठी है?

उत्तर : हां, बिलकुल झूठ। किसी पंडे ने धरती में गुफा खोदकर हाथ निकाल कर पिंड लेकर लोगों को मूर्ख बनाया होगा। आजकल ऐसा कोई हाथ नहीं निकलता, पंडे ही पितरों के नाम पर सब कुछ ले लेते हैं और जनता से लूटा हुआ धन विलासता में खर्च करते हैं।

प्रश्न : कलकत्ते की काली और कामाक्षा देवी को लाखों लोग मानते हैं, क्या यह चमत्कार नहीं है?

उत्तर : नहीं, ये अन्धे लोग भेड़ के समान एक के पीछे दूसरा चलते हुए अज्ञान के कुएं में गिरते जाते हैं और दुःख उठाते हैं।

प्रश्न : जगन्नाथपुरी में कलेवर बदलने के समय समुद्र में से चंदन की लकड़ी का आना, चूल्हे पर सात हंडों में ऊपर के हंडे के चावल पहले पकना, प्रसाद न खाने पर कोढ़ी हो जाना, रथ का अपने आप चलना, पापी को दर्शन न होना, इन्द्रदमन के राज्यकाल में देवताओं द्वारा मन्दिर बनाया जाना और कलेवर बदलने के समय राजा, एक पंडा और एक बढ़ई का मर जाना, क्या चे चमत्कार नहीं है?

उत्तर : नहीं! 12 वर्ष तक मन्दिर में पूजा, करने वाले एक पुजारी के कथन के अनुसार कलेवर बदलने के समय चंदन की लकड़ी नौका में डालकर स्वयं समुद्र में छोड़ दी जाती है जो लहरों के साथ तैरकर किनारे पर आ जाती है, उसी को लेकर बढ़ई मूर्तियां बनाते हैं। चूल्हे में पकते चावल किसी को देखने नहीं देते। जमीन में चक्राकार 6 चूल्हों पर पेंदों में मिट्टी आदि का लेप लगाकर चावल पका लेते हैं फिर पैंदे साफ कर उन्हें बीच वाले बड़े बरतन में कच्चे चावल डालकर उसके ऊपर रख देते हैं। अब एक धनी व्यक्ति को चावल दिखाकर हंडों के नाम पर धन रखवा लेते हैं।

thearyasamaj.org

मन्दिर का प्रसाद नीच व्यक्ति झूठा कर देता है, वहीं झूठा भोजन सभी को खिलाते हैं, जो झूठा नहीं खाना चाहते वे अपना बनाकर खा लेते हैं किसी को कोढ़ नहीं होता। सच बात तो यह है कि वहां वर्षों से जूठा भोजन खाने वाले कोढ़ियों का कोढ़ ठीक नहीं हुआ। सुभद्रा, कृष्ण, बलराम की बहिन थी, उसकी मूर्ति दोनों भाइयों के बीच में रखना वाममार्गियों द्वारा चलाई हुई प्रथा ही होगी क्योंकि सभ्य लोग ऐसा कभी न करते। रथ के पहियों के साथ कला बनाई हुई होती है जो सीधी रखने पर रथ चलता है, उलटी घुमा देने पर रथ के पहिए नहीं चलते। बस इसी ढोंग से लोगों से धन लूटा जाता है कि 'दक्षिणा दो तो भगवान प्रसन्न होकर रथ चलने दें।"

जब दक्षिणा इकट्ठी हो जाती है तो एक व्यक्ति को प्रार्थना करने के लिए खड़ा कर देते हैं। जैसे ही वह प्रार्थना समाप्त करता है, कला फिर सीधी घुमा देते हैं और रथ चलने लगता है। मन्दिर में पहुंच जाने पर दर्शन करवाने के लिए रस्सी की सहायता से एक पर्दा खींच देते हैं और लोगों से कहा जाता है कि 'भेंट धरो, पाप छूट जायेंगे तो दर्शन होगा' फिर दूसरी रस्सी खींचकर पर्दा हटा देते हैं और दर्शन हो जाते हैं।

जहां तक मन्दिर में कलेवर बदलने के समय राजा, पंडा और बढ़ई के मरने का संबंध है, किसी विरोधी ने मूर्ति के हृदय के पोले स्थान मं रखे शालिग्राम को कोई विषैला पदार्थ लगा लगा दिया होगा जिसका चरणामृत पीने से तीनों मर गये होंगे, उनके शवों को ठिकाने लगाकर प्रसिद्ध कर दिया होगा कि कलेवर बदलते समय भगवान जगन्नाथ उन तीनों भक्तों को भी अपने साथ ले गए।

प्रश्न : रामेश्वरम् में गंगोत्री का जल चढ़ाते समय शिवलिंग बढ़ने की बात भी झूठी है?

उत्तर : हां, मन्दिर में अन्धेरा होता है तब दीपक के प्रकाश में जल चढ़ाया जाता है तो पानी में उसकी परछाई झलकती है। पत्थर न बढ़ता है और न घटता है।

प्रश्न : बाल्मीकि ने लिखा है कि रामेश्वरम् में रामचन्द्र जी ने शिवलिंग की स्थापना की। यदि वेदविरुद्ध होती तो रामचन्द्र मूर्ति स्थापित क्यों करते?

उत्तर : रामचन्द्र के समय में वहां मन्दिर का चिन्ह भी नहीं था। यह मन्दिर दक्षिण के ही किसी राम नामक राजा ने बनवाकर लिंग का नाम रामेश्वरम् रख

thearyasamaj.org

दिया है। बाल्मीकि रामायण में केवल इतना ही लिखा है राम ने सीता से कहा कि तुम्हारे वियोग में व्याकुल होकर घूमते हुए हमने इसी स्थान पर चर्तुमास किया था और यही परमेश्वर की उपासना करते थे। जो देवों का महादेव परमात्मा है, उसी की कृपा से हमें यहां सब सामग्री मिलती थी और पुल बांधकर लंका में जाकर रावण को मारकर हम तुम्हें ले आये' किसी मूर्ति स्थापना का वर्णन नहीं किया गया।

प्रश्न : दक्षिण में एक कालियकंत की हुक्का पीने वाली मूर्ति की पूजा भी झूठी है?

उत्तर : हां, झूठी है। मूर्ति का मुंह पोला होगा और उसके छेद का मुंह दीवार के दूसरी तरफ नली द्वारा जुड़ा होगा। संकेत पाते ही कोई व्यक्ति हुक्का गुडगुड़ाता होगा तो मूर्ति में से उसकी आवाज आती होगी और जब वह धुंआ छोड़ता होगा तो मूर्ति के मुंह और नाक से धुंआ निकलता होगा। यह सब मूर्खों को लूटने का ढंग ही है।

प्रश्न : डाकोर जी की मूर्ति द्वारिका से भगत के साथ चली आई ओर सवा रत्ती सोने में कई मन की मूर्ति तुल गई, क्या यह भी चमत्कार नहीं है?

उत्तर : मूर्ति कोई चुराकर लाया होगा और सवा रत्ती सोने में तोलने की गप्प उड़ा दी होगी।

प्रश्न : सोमनाथ मंदिर की मूर्ति का पृथ्वी के ऊपर रहना चमत्कार नहीं था?

उत्तर : नहीं था। ऊपर नीचे चुम्बक पत्थर लगाकार मूर्ति को बीच में लटका रखा था। जब महमूद गजनी ने आक्रमण किया तो पुजारी और ज्योतिषी यही कहते रहे कि अभी चढ़ाई का मुहूर्त नहीं है, चन्द्रमा या योगिनी विपरीत बताते रहे। भगवान स्वयं रक्षा करेंगे यही कहते रहे। यदि समय रहते आक्रमण किया जाता तो इतनी तबाही न होती। महमूद गजनी ने छत तुड़वा दी तो मूर्ति नीचे आ गिरी। मूर्ति में से निकले करोड़ो रुपयों के हीरे मोती और अन्य संपत्ति महमूद गजनी ले गया और अनेकों हिन्दुओं को दास बनाकर ले गया और उनसे घृणित काम करवाए। मूर्तिपूजा से ही हिन्दुओं और देश की यह दुर्दशा हुई।

प्रश्न : क्या द्वारिका जी के रणछोड़ जी के नरसी मेहता के ऋण चुकाने की बात भी झूठी है?

उत्तर : हां, किसी साहूकार या दानी व्यक्ति ने श्रीकृष्ण के नाम से धन भेजकर ऋण चुका दिया होगा। जब अरिंगों ने संवत 1914 में तोपों से मन्दिर की मूर्तियां उड़ा दी तो बाघेर लोगों ने तो वीरता से मुकाबला किया परन्तु मूर्तियों ने न तो कोई चमत्कार दिखाया और न ही रक्षा की।

प्रश्न : ज्वालामुखी तो प्रत्यक्ष देवी है, सबको खा जाती है। प्रसाद आधा खा जाती है, आधा छोड़ देती है। मुसलमानों ने नहर छुड़वाई, लोहे के तवे जड़वाये तो भी ज्वाला नहीं बुझी। हिंगलाज भी आधी रात को सवारी कर पहाड़ पर दिखाई देती है और पहाड़ की गर्जना कराती है। चन्द्रकूप बोलता है और योनियन्त्र से निकलने पर पुनर्जन्म नहीं होता। जब तक हिंगलाज न हो आए तब तक आधा महापुरुष कहाता है आदि बातें क्या मानने योग्य नहीं हैं?

उत्तर : नहीं। ज्वालामुखी पहाड़ से आग निकलती है। जैसे बघार के लिए आग पर रखे घी के चम्मच में आग की लपट आ जाती है, कुछ घी जल जाता है और कुछ रह जाता है वैसे ही मन्दिर में निकलने वाली आग की लपट कुछ प्रसाद ले जाती है, बाकी छोड़ जाती है बाकी सब बातें ढोंगी पुजारियों की लीला हैं।

प्रश्न : अमृतसर का तालाब अमृतरूप, एक मुरेठी का फल आधा मीठा होना, एक दीवार नमती है पर गिरती नहीं, रेवालसर में बेड़े तैरना, अमरनाथ में अपने आप लिंग बन जाना और हिमालय से कबूतरों के जोड़े का सबको दर्शन देकर चले जाना, क्या ये सब बातें मानने योग्य नहीं हैं?

उत्तर : नहीं। अमृतसर में जब जंगल होगा तब उस तालाब का जल अच्छा होगा इसलिए उसका नाम अमृतसर रखा गया होगा। यदि वास्तव में अमृत होता तब तो उस जल को पीने वाला कभी न मरता। रीठे कलम के पैबन्दी (ग्राफ्टिंग) होंगे, दीवार की बनावट ऐसी होगी कि नमती है, गिरती नहीं। रेवालसर में बेड़ा तरने में भी कोई न कोई कारीगरी होगी। अमरनाथ में बर्फ के पहाड़ बनते हैं इसलिए वहां जल जम के छोटे लिंग का बन जाना कोई आश्चर्य की बात नहीं है। कबूतर का जोड़ा पालतू होगा जिसे पहाड़ की आड़ में से मनुष्य छोड़तें होंगे ताकि भक्त लोग अधिक धन चढ़ायें।

प्रश्न : हरिद्वार में हर की पैडी मे स्नान करने से पाप छूट जाते

हैं, तपोवन में रहने से तपस्वी होना, देवप्रयाग, गंगोत्री में गोमुख, उत्तरकाशी में गुप्तकाशी, त्रियुगी नारायण के दर्शन होते हैं। केदारनाथ और बद्रीनाथ में छः महीने देवता और छः महीने मनुष्य पूजा करते हैं। हरिद्वार स्वर्ग का द्वार है। महादेव का मुख नेपाल में पशुपति, चूतड़ केदारनाथ में, घुटने तुंगनाथ में और पैर अमरनाथ में हैं, इनके दर्शन से मुक्ति मिल जाती है। बद्रीनाथ–केदारनाथ से जो स्वर्ग जाना चाहे जा सकता है, आदि बातें कैसी हैं?

उत्तर : हरिद्वार उत्तर से पहाडों की ओर जाने का एक मार्ग है। हर की पैडी असल में हाडपैडी है क्योंकि यहां मृतकों की अस्थियां डाली जाती हैं। पाप तो बिना भोगे नहीं मिटते। तप तो करने से होता है, तपोवन में रहने से नहीं। वहां तो झूठ बोलने वाले दुकानदार भी रहते हैं। पहाड़ के ऊपर जहां से जल गिरता है, वहां गोमुख का आकार किसी धन ऐंठने वाले ने बना दिया होगा। देवप्रयाग में देवता रहते हैं, उत्तरकाशी में ध्यानी रहते हैं, गुप्तकाशी में तीन युगों की धूनी दिखती है, यह सब बातें झूठी हैं। हां, दस–बीस पीढ़ियों से धूनी जरूर जल रही होगी। पहाड़ों के भीतर की गर्मी से तप्तकुंड में गर्म जल निकलता है और जहां गर्मी नहीं है वहां ठंडा जल निकलता है। केदारनाथ और बद्रीनाथ के मन्दिर पहाड़ी चट्टान पर पुजारियों द्वारा बनवा दिये गए हैं। यहां छः महीने बर्फ जमी रहने के कारण मन्दिर बंद रहते हैं इसलिए कह दिया जाता है कि छः कहीने देवता पूजा करते हैं। नेपाल का पशुपति मन्दिर, केदारनाथ, तुंगनाथ और अमरनाथ आदि मन्दिरों की कथाओं को महादेव से जोड़ना, सब पाखंडियों का काम है। इन स्थानों की भूमि रमणीय और पवित्र है।

प्रश्न : विंध्याचल में विन्ध्येश्वरी, काली, अष्टभुजा तीन समय में तीन रूप बदलती है, उसके बाड़े में एक मक्खी तक नहीं होती। प्रयाग में सिर मुंडाने, गंगा–यमुना के संगम में नहाने से सिद्धि होती है, अयोध्या नगरी अपने वासियों सहित कई बार स्वर्ग चली गई, मथुरा सब तीर्थों से बड़ा तीर्थ और ब्रजयात्रा बड़े भाग्य से होती है, सूर्यग्रहण में कुरुक्षेत्र स्नान से पुण्य मिलता है। क्या ये सब बातें भी झूठ हैं?

उत्तर : हां, विन्ध्याचल में प्रत्यक्ष तो तीन मूर्तियां दिखाई देती हैं, तीन बार रूप बदलना तो श्रृंगार करने की कला का परिणाम है। वहां हजारों की संख्या

में मक्खियां पाई जाती है। प्रयाग में नहाने से स्वर्ग मिलता तब तो वहां नहाने वाला कोई जीवित लौटकर ही न आता, लेकिन सब लौटकर घर आते हैं। वहां सिर मुंडाने से लोगों को धन मिल जाता है। अयोध्या तो जहां थी आज भी वहीं है। मथुरा तीन लोक से न्यायी है ही, क्योंकि वहां पंडे धरती पर स्नान करने वालों से धन वसूलते हैं, नीचे जल में कछुओं के मारे स्नान करना कठिन होता है और ऊपर आकाश में बन्दर जूते कपड़े तक नहीं छोड़ते। वृन्दावन तो अब वेश्यावन बना हुआ है, गोवर्द्धन, ब्रजयात्रा और कुरुक्षेत्र में स्नान भी सब पाखंडियों की पोप लीला ही है।

प्रश्न : यह मूर्तिपूजा और तीर्थस्नान सनातन काल से चले आ रहे हैं फिर झूठे कैसे है?

उत्तर : सनातन तो उसे कहते हैं जो सदा से चला आता है। यदि ये सनातन होते तो वेद और ब्राह्मण आदि ऋषियों—मुनियों के ग्रन्थों में इनका वर्णन होता। लेकिन यहां मूर्तिपूजा और तीर्थयात्रा लगभग 3000 वर्ष पूर्व वाममार्गियों और जैनियों से शुरू हुई, उससे पहले न तीर्थ थे, न मूर्ति पूजा। तीर्थों में पंडों के पास जो लेख मिलते हैं वे सब 500 से 1000 वर्ष के बीच के हैं इसलिए वे सनातन नहीं हैं।

प्रश्न : तीर्थों के नाम का महात्म्य सच्चा है या नहीं?

उत्तर : नहीं। अगर तीर्थों से पाप छूट जाते तब तो निर्धन को धन, राज्य मिल जाता, अन्धों को आंखें मिल जाती और कोढ़ी निरोग हो जाता। कर्मफल तो बिना भोगे कभी समाप्त नहीं होता।

प्रश्न : पुराणों में तो नाम का बड़ा महात्म्य कहा गया है। सैंकड़ों हजारों कोस दूर से गंगा—गंगा कहें तो सब पाप नष्ट होकर प्राणी बैकुण्ठ लोक को जाता है (1) राम, कृष्ण शिव आदि नामों का उच्चारण सब पापों को हर लेता है (2) जो व्यक्ति प्रातः समय में शिवलिंग या शिव की मूर्ति का दर्शन करे तो रात में किया हुआ और अगर दोपहर में दर्शन करे तो जन्म भर का और अगर शाम को दर्शन करे तो सात जन्मों का पाप छूट जाता है, क्या यह झूठ है?

उत्तर : इसके झूठ होने में कोई सन्देह नहीं। यदि नामस्मरण से पाप और दुःख छूट जाते तो संसार में कोई दुःखी न रहता और न ही कोई पाप करने से डरता।

thearyasamaj.org

प्रश्न : कोई तीर्थ नाम स्मरण सत्य है या नहीं?

उत्तर : है। वेद आदि सत्य–शास्त्रों का पढ़ना–पढ़ाना, धार्मिक विद्वानों का संग, परोपकार, धार्मिक कार्य करना, योगाभ्यास, वैर और कपट रहित होना, सत्य–भाषण, सत्य मानना, सत्य करना, आचार्य–अतिथि और माता–पिता की सेवा करना, परमेश्वर की स्तुति, उपासना और प्रार्थना करना, इन्द्रियों को वश में करना, पुरुषार्थ, सुशीलता, ज्ञान विज्ञान आदि शुभ गुण कर्म दुःखों से छुड़ाने वाले तीर्थ हैं। जल और धरती पर बने तीर्थ दुःखों से नहीं छुड़ा सकते। नौका को तो तीर्थ कह सकते हो क्योंकि वह सागर से पार ले जाती है।

एक आचार्य से एक शास्त्र को साथ–साथ पढ़ने वाले सभी विद्यार्थी समान तीर्थ सेवी होते हैं। सच्चे साधु को अन्न आदि देकर विद्या लेना भी तीर्थ है। परमात्मा का नाम लेना, उसके गुण–कर्म–स्वभाव का गुणगान करना ही नाम–स्मरण है, जैसे ईश्वर सर्वशक्तिमान, न्यायकारी, दयालु, सबसे महान्, देवों का देव, सृष्टि का रचयिता, पालनकर्त्ता और प्रलय करने वाला, सज्जनों का रक्षक और दुष्टों का दमन करने वाला है।

प्रश्न : गुरु–महात्मय तो सच्चा है? गुरु के पांव धो के पीना, उसकी आज्ञा का पालन करना, गुरु चाहे लोभी, क्रोधी, मोह में फंसा या कामी हो तो भी उसे राम और कृष्ण के समान जानना चाहिए। गुरु पाप भी करे तो भी उसमे अश्रद्धा न करें। गुरु के दर्शन के लिए जाने में पग–पग अश्वमेध यज्ञ का फल मिलता है, क्या यह सब ठीक नहीं है?

उत्तर : ठीक नहीं है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश और परब्रह्म सब परमेश्वर के नाम हैं। कोई शरीरधारी गुरु कभी परमेश्वर के समान नहीं हो सकता। गुरु तो माता–पिता आचार्य और विद्वान अतिथि होते हैं। उनसे विद्या और ज्ञान लेना चाहिए। कामी–क्रोधी और लोभी गुरु को छोड़ देना ही उचित है। वेद विरुद्ध उपदेश देने वाले गुरु स्वार्थी और ढोंगी ही होते हैं। वे अपने चेले–चेलियों के द्वारा प्रचार करवाकर लोगों का धन ठगते हैं। ऐसे लोगों की शरण में जाकर कभी उद्धार नहीं हो सकता।

प्रश्न : अठारह पुराणों के कर्त्ता व्यास के वचन प्रमाण जानो (1) इतिहास, महाभारत और पुराण वेदों के अर्थ के अनुकूल ही हैं (2) पितृकर्म में पुराण और हरिवंश की कथा सुनें (3) इतिहास और पुराण पांचवें वेद हैं (4) पुराण वेदविद्या का ज्ञान करवाने के कारण वेद ही

thearyasamaj.org

माने जाते हैं (5) इनमें मूर्तिपूजा और तीर्थों का भी विधान होने से यह ठीक ही हैं?

उत्तर : शारीरिक सूत्र, योगशास्त्र भाष्य आदि ग्रंथ देखने से पता चलता है कि व्यास जी बड़े विद्वान्, सत्यवादी और धार्मिक योगी थे। पुराणों में पाई जाने वाली मन–गढंत बातें व्यास जी द्वारा लिखी हुई हो ही नहीं सकती। ये सब किसी स्वार्थी व्यक्ति ने उनके नाम से लिखी होंगी। ऐतरेय, शतपथ, साम और गोपथ ब्राह्मण ग्रंथों के ही इतिहास, पुराण, कल्प, गाथा और नाराशंसी पांच नाम हैं। इतिहास जैसे जनक और याज्ञवल्क्य संवाद, पुराण–संसार की उत्पत्ति का वर्णन, कल्प–वेद के शब्दों का व्याकरण की दृष्टि से पारस्परिक संबंध और उनके अर्थों का निश्चित करना, गाथा–दृष्टांत रूप में कोई कथा कहना, नाराशंसी–मनुष्यों के प्रशंसायोग्य या निन्दायोग्य कर्मों का वर्णन करना। इनसे ही वेदों के अर्थों का ज्ञान होता है। पितृकर्म का अर्थ ज्ञानियों की प्रशंसा में कुछ सुनना है, अश्वमेध के अंत में भी इन्हीं का सुनना लिखा है। ब्राह्मण ग्रंथ व्यास जी के जन्म से पहले लिखे गए थे फिर उनमें पुराणों के सुनने की बात लिखी ही नहीं जा सकती थी। व्यास जी ने चारों वेद पढ़े और पढ़ाए इसीलिए उनका नाम वेदव्यास हो गया। व्यास जी के पूर्वजों और ब्रह्मा जी ने भी चारों वेद पढ़े थे, फिर ये पांचवां वेद कहां से आ गया। ये सब झूठ है।

प्रश्न : पुराणों में सब बातें झूठी हैं या कोई सच्ची भी है?

उत्तर : जो बातें वेद शास्त्रों के अनुकूल हैं वे सच्ची हैं, शेष बहुत सी बातें झूठी ही हैं। शिवपुराण में शिव को परमेश्वर और ब्रह्मा, विष्णु, इन्द्र आदि को उनका दास कहा गया है। विष्णु पुराण में विष्णु को परमेश्वर और ब्रह्मा, शिव, इन्द्र आदि को उनका दास कहा गया है, इसी तरह देवी भागवत में देवी को परमेश्वरी मानकर शिव, ब्रह्म विष्णु को उसका दास बताया गया है। इस तरह सब पुराणों में एक दूसरे के विरुद्ध बातें लिखी होने से एक भी सच्ची नहीं हो सकती। सब पुराणों में सृष्टि की उत्पत्ति और प्रलय का कर्त्ता भी कहीं शिव, कहीं विष्णु, वायु, सूर्य और गणेश आदि को बताया गया है। यदि सच कहा जाये तो जो स्वयं उत्पन्न होता है वह सृष्टि कर्त्ता हो ही नहीं सकता। शिवपुराण में सृष्टि की उत्पत्ति की कथा इस प्रकार है :– शिव ने सृष्टि निर्माण की इच्छा की तो एक नारायण जलाशय बनाया। उसकी नाभि में से निकले

कमल से ब्रह्मा उत्पन्न हुए। ब्रह्मा जी ने एक चुल्लू जल उठाकर जलाशय में पटका तो उसमें से एक पुरुष उत्पन्न हुआ। जिसने ब्रह्म जी से कहा 'पुत्र सृष्टि उत्पन्न कर, दोनों में पिता कौन है और पुत्र कौन है इस बात पर झगड़ा हो ही रहा था कि एक तेजोमय लिंग उत्पन्न होकर आकाश की ओर चला गया। तब दोनों ने तय किया कि जो इस लिंग के आदि–अंत का पता पहले ले आयेगा वह पिता और दूसरा पुत्र होगा। विष्णु कछुए का रूप धारण कर नीचे और ब्रह्मा हंस बनकर ऊपर की ओर गए। हजारों वर्षों तक चलते रहने पर भी किसी को थाह न मिली तो विष्णु लौट आए। ब्रह्मा ने वापस लौटते हुए सोचा कि अगर विष्णु पहले पहुंच गये तो मुझे उनका पुत्र बनना पड़ेगा। इतने में उन्हें ऊपर से आते हुए एक गाय और केतकी का वृक्ष मिले। उनहोंने ब्रह्मा जी के पूछने पर बताया कि इस लिंग का कोई अन्त नहीं है। ब्रह्मा जी ने उन्हें भस्म कर देने का डर दिखाकर झूठी गवाही देने के लिए तैयार कर लिया। जब वे तीनों वापस पहुंचे तो विष्णु जी ने कह दिया कि उन्हें थाह नहीं मिली। ब्रह्मा जी ने कहा कि मैंने तो इसका ऊपरी सिरा पा लिया है, ये गाय उसके ऊपर दूध की धारा बहाती थी और ये वृक्ष उस पर फूल बरसाता था। गाय और केतकी के वृक्ष दोनों ने इस बात की गवाही दे दी। तब लिंग में से आवाज आई 'ब्रह्मा ने झूठ बोला है इसलिए कोई इनकी पूजा नहीं करेगा, गाय ने जिस मुख से झूठ बोला है, उसी से विष्ठा खाया करेगी और केतकी का फूल किसी देवी–देवता पर नहीं चढ़ाया जायेगा।' फिर महादेव ने अपनी जटा में से भस्म का एक गोला निकालकर उन्हें दिया और सृष्टि बनाने को कहा। अब यह बताओ कि जिन पांच तत्वों से सृष्टि बनी है जब वे ही नहीं थे तो पुरुष, जल, कमल, गाय, केतकी का वृक्ष और भस्म का गोला कहां से आ गए?

इसी तरह भागवत पुराण में विष्णु की नाभि से कमल, कमल से ब्रह्मा, ब्रह्मा के अंगूठों से स्वायंभु मनु और शतरूपा रानी, माथे से रूद्र और मरीचि आदि दस पुत्र हुए जिनके विवाह दक्ष प्रजापति की पुत्रियों से हुए बताये गए हैं। जिनकी देव, दानव, आदित्य, पक्षी, सर्प, सियार, हाथी, कांटेदार वृक्ष आदि सन्तानें उत्पन्न हुई। प्रत्येक वर्ग के पशु–पक्षी, मनुष्य आदि की सन्तान की उत्पत्ति अपने–अपने वर्ग के नर–मादा के मेल से होती है, आज तक कहीं नहीं सुना कि स्त्रियों ने सर्प, सिंह, हाथी और वृक्ष आदि उत्पन्न किए हों।

thearyasamaj.org

उस युग में भी यदि मनुष्यों के यहां सिंह—सर्प आदि उत्पन्न हुए होते तो उन्होंने अपने माता—पिता को ही खा लिया होता। ऐसी—ऐसी असंभव जो बातें पुराणों में लिखी हैं इन्हें कोई मूर्ख ही सत्य मान सकता है। इन पुराणों के लिखने वालों ने ही अज्ञान फैलाकर देश को इतनी हानि पहुंचाई है।

प्रश्न : यह तो ठीक है कि सबने अपने—अपने इष्टदेव को बड़ा बताकर दूसरों को उनका दास बता दिया। परन्तु परमेश्वर अपनी माया से मनुष्य से पशु और पशु से मनुष्य की उत्पत्ति कर सकता है। उसके लिए तो कुछ भी असंभव नहीं है वह जो चाहे कर सकता है?

उत्तर : यह तो ठीक है कि सब अपने—अपने इष्ट को बड़ा मानते हैं परन्तु दूसरों को उनका नौकर और उसको सबका बाप तो नहीं बना देना चाहिए। जिनको अपने स्वार्थ से काम होता है वे सच और धर्म के बारे में नहीं सोचते। परमेश्वर में छल—कपट आदि दोष होते तो उसे मायावी कह सकते थे, लेकिन उसमें ये दोष नहीं है, वह अपने नियम के विरुद्ध कभी कोई काम नहीं करता। उसके जो नियम पहले थे, वही आज भी हैं और भविष्य में भी रहेंगे। सृष्टिकर्त्ता परमात्मा का नाम 'पश्यक' अर्थात् जो निर्भय होकर चराचर जगत, सब जीवों और उनके कर्मों, सब विद्याओं को यथावत देखता है उसी नाम का पहला और अन्तिम अक्षर बदल जाने से 'कश्यप' बन गया जिसकी कथा पुराणों में लिख दी गई है।

इसी तरह मार्कण्डेय पुराण में लिखा है कि देवताओं के शरीर से निकलने वाले तेल से देवी बनी, उसने महिषासुर को मारा, रक्तबीज से युद्ध किया, उसके खून की बूंदें गिरने से इतने रक्तबीज पैदा हो गए जिनसे सारा जगत भर गया, खून की नदियां बहने लगी। यदि यह सच है तो फिर मनुष्य, दूसरे जीव—जन्तु और पेड़—पौधे कहां रहे होंगे? ऐसी गप्पें मूर्ख ही हांक सकते हैं। भागवत पुराण के शुरू में ही एक श्लोक में लिखा है कि नारायण जी ने ब्रह्मा जी को भागवत का उपदेश देते हुए कहा 'हे ब्रह्मा! तू मेरा परमगुह्य (रहस्यपूर्ण) ज्ञान जो रहस्यमय विज्ञान और धर्म, अर्थ, काम मोक्ष का अंग है। उसी को मुझसे ग्रहण कर।" जब विज्ञानयुक्त ज्ञान कहा तो फिर रहस्य कैसा? क्योंकि विज्ञान तो तर्क की कसौटी पर परखा जाता है। जिस भागवत का मूल ही झूठा है, उसका वृक्ष (वर्णन, वृत्तान्त) भी तो झूठा ही होगा। इसी में आगे लिखा है कि ब्रह्मा जी को वर दिया कि तुम कल्प सृष्टि (14 मनवन्तर अर्थात

4320000000 वर्षों तक) और विकल्प प्रलय में भी कभी मोह को प्राप्त न होंगे लेकिन इसी भागवत के दसवें स्कन्ध में उन्हीं ब्रह्मा जी ने मोहित होकर वत्स–हरण किया। इसी तरह बैकुण्ठ में जहां राग–द्वेष, क्रोध–ईर्ष्या आदि नहीं होते वहाँ सनकादिकों को क्रोध आ गया और उन्होंने अपने स्वामी की आज्ञा पालन करने वाले जय–विजय नामक द्वारपालों को पृथ्वी पर गिर जाने का शाप दे दिया। अब पहली बात तो यह है कि स्वामी की आज्ञा का पालन करना धर्म है इसलिए जय–विजय को दंड से बचाना उनके स्वामी का कर्त्तव्य था। नारायण को अपने द्वारपालों का सत्कार और सनकादिकों को दंड देना चाहिए था। दूसरी बात यह है कि धरती पर गिरने का शाप देने का मतलब था कि वहां धरती थी ही नहीं। तो उनका बैकुण्ठ जल, अग्नि, वायु और आकाश में से किसके आधार पर था? आगे लिखा है कि नारायण के कहने पर जब जय–विजय ने सनकादिकों से क्षमायाचना की तो उन्होंने कहा कि अगर तुम प्रेम से भक्ति करोगे तो सात जन्मों में और यदि विरोध से भक्ति करोगे तो तीसरे जन्म में बैकुण्ठ को प्राप्त हो जाओगे, कैसी उलटी बात कही गई है। यही जय–विजय तीसरे जनम में हिरण्याक्ष और हिरण्यकश्यप हुए। हिरण्याक्ष जब पृथ्वी को लपेट कर सिरहाने रखकर सो गया तो विष्णु ने वराह रूप धरकर उससे युद्ध किया और उसे मार डाला। यहां भी कितनी गलत बात कही गई है, जब धरती को लपेटकर सिरहाने रखा तो वह सोया किस पर और वराह से उसका युद्ध कहां हुआ था? हिरण्यकश्यप का पुत्र प्रहलाद् ईश्वर भक्त था। जब उसने अपने पिता की बात न मानकर, ईश्वर भक्ति नहीं छोड़ी तो उसे पहाड़ से गिराया गया, कुंए में डाला गया, जलते हुए खंभे को पकड़ने को कहा गया तो विष्णु ने नरसिंह रूप धारण कर उसे मार डाला। यहाँ भी कई बातें गलत हैं (1) हिरण्याक्ष और हिरण्यकश्यप चौथी पीढ़ी में हुए, तीसरी पीढ़ी में नहीं। (2) प्रह्लाद को पढ़ने भेजने में कोई दोष न था (3) यदि प्रह्लाद पढ़ना नहीं चाहता था तो यह ठीक नहीं कहा जा सकता। (4) पहाड़ से गिरकर बच जाना, आग से न जलना ये सब बातें ठीक सिद्ध नहीं की जा सकतीं।

भागवत पुराण में लिखा है कि कंस ने अक्रूर को वायु के वेग के समान दौड़ने वाले घोड़ों के रथ पर मथुरा से 4 मील दूर गोकुल भेजा जो सूर्योदय के समय चलकर सूर्यास्त के समय वहां पहुंचा। लगता है कि भागवत बनाने वाले के घोड़े रास्ता भूल गए होंगे। (1) पूतना का शरीर 6 कोस चौड़ा और

बहुत लम्बा लिखा है जिसे श्री कृष्ण ने मारकर मथुरा और गोकुल के बीच डाल दिया, यदि यह सच है तब तो मथुरा और गोकुल के बीच डाल दिया, यदि यह सच है तब तो मथुरा और गोकुल दोनों उसके नीचे दब गए होंगे। (2) अजामिल का नारद जी के कहने पर अपने पुत्र का नाम नारायण रखना और मरते समय अपने पुत्र नारायण को पुकारने से मुक्ति प्राप्त कर लेना। (3) सुमेरु पर्वत का परिमाण (नाप) ज्योतिष शास्त्र के विरुद्ध है। (4) प्रियव्रत राजा के रथ के पहिए से समुद्र बने (5) 49 करोड़ योजन पृथ्वी आदि सभी बातें कोरी गप्पें ही हैं। (6)

गीतगोविन्द के लेखक जयदेव के भाई बोवदेव ने अपने हिमाद्रि ग्रंथ में लिखा है कि श्रीमद् भागवतपुराण मैंने बनाया है। उसने जब राजा के सचिव को सुनाना चाहा तो उसने कहा कि पूरा भागवतपुराण सुनने का मेरे पास समय नहीं है इसलिए विषय–सूची बना दो। जिससे देखकर मैं पूरी भागवत जान लूं। बारह स्कन्धों का सूचीपत्र हिमादि ग्रन्थ में है, इसे देखकर ही दूसरे पुराणों की लीला भी समझ आ जायेगी। महाभारत में श्रीकृष्ण उत्तम गुण कर्म स्वभाव और ऊंचे चरित्र वाले धार्मिक विद्वान महापुरुष हैं परन्तु हमारा कितना बड़ा दुर्भाग्य है कि भागवत पुराण में उसी श्रीकृष्ण को माखनचोर, चीर–हरण करने वाला, पराई–स्त्रियों से प्रेम करने वाला बताकर उसका चरित्र बिगाड़ दिया है। शिवपुराण में 12 ज्योर्तिलिंगों का वर्णन है जो पत्थर के बने हुए हैं जिनमें प्रकाश का नाम तक नहीं है। ये सब झूठे पाखंड ही हैं।

प्रश्न : जब वेद पढ़ने की सामर्थ्य नहीं रही तब स्मृति, शास्त्र और फिर पुराण केवल स्त्रियों और शूद्रों के लिए बनाए गए क्योंकि इन्हें वेद पढ़ने व सुनने का अधिकार नहीं है?

उत्तर : यर्जुवेद के 26वें अध्याय के दूसरे मन्त्र में स्पष्ट लिखा है कि वेद पढ़ने और सुनने का अधिकार मनुष्य मात्र को है। गार्गी आदि स्त्रियों और शूद्रों द्वारा वेद पढ़ने के अनेक प्रमाण मिलते हैं, अतः तुम्हारा यह कथन झूठ है। वेद मन्त्रों का सहारा लेकर पाखंडियों ने अज्ञानी लोगों को लूटने के लिए ग्रहों का चक्कर चलाकर नवग्रह पूजा शुरू कर दी। वास्तव में इनका अर्थ इस प्रकार है (1) सूर्य– यह सूर्य और पृथ्वी का आकर्षण है। (2) चन्द्र– यह राजगुण विधायक है (3) अग्नि–मंगल (4) बुध–यजमान (5) बृहस्पति–विद्वान (6) शुक्र–अन्न और वीर्य (7) शनि–जल, प्राण और परमेश्वर (8) राहु–मित्र (9)

thearyasamaj.org

केतु—ज्ञान ग्रहण का विधायक मंत्र है। ठीक अर्थ न जानने के कारण ग्रहों का भ्रम फैला दिया है।

प्रश्न : ग्रहों का फल होता है या नहीं?

उत्तर : सूर्य, चन्द्रमा आदि की किरणों द्वारा गर्मी—सर्दी अथवा ऋतु—कालचक्र से अपनी प्रकृति (स्वभाव) के अनुकूल—प्रतिकूल से सुख—दुःख के कारण होते हैं। लेकिन जैसा पंडित क्रूर ग्रहों के प्रभाव से दुःख बताकर दान—जप—पूजापाठ बता देते हैं वे सब ठगी हैं। पाखंडी ब्राह्मण कहते हैं 'देवताओं के अधीन जगत, मंत्रों के अधीन देवता और मंत्र ब्राह्मणों के अधीन हैं। इसलिए मंत्र पढ़कर देवताओं को बुलाकर कामनाएं सिद्ध करवाने का अधिकार केवल हमारा ही है। इसका मतलब तो यह हुआ कि ब्राह्मण मंत्रों द्वारा देवताओं को बुलाकर चोरों ठगों से दुष्टकर्म करवाते होंगे। यदि उनमें इतनी शक्ति है तो वे राजाओं के कोष उठवा कर घरों में बैठकर आनन्द क्यों नहीं भोगते। शनि का तेल लेने वाले द्वार—द्वार पर क्यों भटकते हैं वे मंत्रों द्वारा सुख प्राप्त क्यों नहीं कर लेते। यदि ग्रह किसी पर प्रसन्न या अप्रसन्न होते तो सूर्य की गर्मी से तपी हुई धरती पर नंगे पांव चलने पर उसके पांव न जलते जिस पर सूर्य प्रसन्न होता और जिस पर अप्रसन्न होता उसके पांव जलते, लेकिन ऐसा नहीं होता है। यदि किसी में मन्त्रशक्ति हो तब हो वह सारे विश्व का धन ऐश्वर्य प्राप्त कर ले, अपने शत्रुओं का नाश कर डाले, अतः यह सब पाखंड लीला है। सूर्य आदि लोक जड़ हैं, जड़ वस्तु न किसी को दुःख दे सकती है न सुख। वास्तव में जिन्हें ये लोग ग्रह कहते हैं उनसे तो हम कुछ न कुछ ग्रहण कर लेते हैं। इससे यह सिद्ध होता है कि जिन नास्तिक लोगों पर ईश्वर कृपा नहीं होती वहीं लोग किसी न किसी रूप में उसकी शक्तियों की निन्दा करते रहते हैं।

प्रश्न : ज्योतिषी लोग आकाश में रहने वाले सूर्य चन्द्र राहू केतु आदि के संयोग से होने वाले ग्रहण को पहले से बता देते हैं। देखने में भी ग्रहों का फल दिखाई देता है क्योंकि मनुष्य धनी—निर्धन, सुखी—दुःखी ग्रहों के प्रभाव से ही होते हैं?

उत्तर : जहां तक ज्योतिष का संबंध है इसमें गणित विद्या सच्ची है। सूर्य व चन्द्र ग्रहण गणित विद्या से जाने जाते हैं क्योंकि सूर्य पृथ्वी चन्द्र आदि सभी घूमते हैं इनकी गति के हिसाब से यह पता चलता है कि कब सूर्य और पृथ्वी के बीच चांद आएगा और कब सूर्य और चांद के बीच में पृथ्वी आयेगी, इसी

से सूर्य और चन्द्र ग्रहण होते हैं। जहां तक ज्योतिष की फलित विद्या का संबंध है वह ठीक नहीं है क्योंकि सब मनुष्य अपने कर्मों के फल के अनुसार ही धनी–निर्धन, सुखी–दुःखी होते हैं और जन्म–मृत्यु को प्राप्त होते हैं। एक ही समय में जन्म लेने वाले जीव कोई धनी के यहां उत्पन्न होता है तो कोई निर्धन के यहां। यदि ग्रहों का प्रभाव होता तब तो सब लोग पूजा–पाठ से ग्रहों को अपने अनुकूल बनाकर सुखी हो जाते, संसार में कोई दुःखी न रहता। यह सब ज्योतिषियों और पुजारियों की पेट–भरने की लीला है।

प्रश्न : क्या गरुड़ पुराण भी झूठा है? मरे हुए जीव की क्या गति होती है? यम के दूत पाप–पुण्य के अनुसार जीव को स्वर्ग–नरक में भेज देते हैं? दान–पुण्य, श्राद्ध–तर्पण, गोदान और वैतरणी आदि क्या सब झूठ हैं?

उत्तर : हां, झूठ हैं। जीव की गति उसके कर्मों के अनुसार होती है। गरुड़ पुराण में लिखा है कि यमराज के पर्वत के समान शरीर वाले दूत जीव को पकड़ कर ले जाते हैं तब तो जहां कहीं दुर्घटना में इकट्ठे 10–20 लोग मरते होंगे या जंगल में आग लगने से बहुत से जीवों के शरीर छूटते होंगे वहां तो दूतों के आने से अन्धेरा हो जाना चाहिए। श्राद्ध–तर्पण पिंडदान आदि मरे हुए जीवों को नहीं पहुंचता परन्तु पाखंडी ब्राह्मणों के घर अवश्य पहुंच जाता है। वैतरणी पार कराने के लिए जो गोदान करवाते हैं वह या तो उनके घर पहुंच जाता है या बेच देने पर कसाईखाने पहुंच जाता है। एक कहानी सुनाई जाती है कि एक जाट के घर में एक स्वस्थ दुधारु गाय थी। जब उसका पिता मरने लगा तो ब्राह्मण ने उस जाट को उसके मित्रों के सामने यह कह कर कि तू कैसा बेटा है, जो गाय दान न करवा कर अपने बाप को वैतरणी नदी में डुबाकर दुःख देना चाहता है, गाय बछड़ा और दूध की बालटी सहित दान करवा कर ले ली। तेरह दिन तो जाट ने किसी तरह काम चलाया। चौदहवें दिन ब्राह्मण के घर जाकर पूछा कि गाय तुमने वैतरणी नदी पर न भेजकर अपने घर में क्यों रख ली है?

ब्राह्मण ने कहा–इस दान के पुण्य के प्रभाव से वहां दूसरी गाय ने उन्हें पार उतार दिया होगा।

जाट ने फिर पूछा–वैतरणी कहां और कितनी दूर है?

ब्राह्मण : अनुमान से कोई तीस करोड कोस दूर है और दक्षिण में नैॠत दिशा में वैतरणी नदी है।

thearyasamaj.org

जाट : इतनी दूर से तुम्हें कोई सन्देश तो आया होगा जिससे पता चले कि मेरे पिता को दूसरी गाय ने पार उतार दिया।

ब्राह्मण : गरुड़ पुराण में लिखा हुआ ही तो प्रमाण है।

जाट : पुस्तक तो तुम्हारे पूर्वजों ने तुम्हारी जीविका के लिए बना दी है। मेरा पिता जब संदेश भेजेगा तब मैं यह गाय वहां पहुंचा दूंगा।

यह कहकर जाट अपनी गाय वापस ले आया, ब्राह्मण उसे कोसता रह गया। सच तो यह है कि जीव तो अत्यन्त सूक्ष्म होता है, जब वह शरीर छोड़ता है तो उसे लेने इतने बड़े–बड़े यमदूतों का आना व्यर्थ है। मनुष्य जीवन में जो कर्म करता है उसी का फल उसे मिलता है, दूसरों का दिया हुआ दान नहीं।

प्रश्न : स्वर्ग में वही मिलता है जो मनुष्य यहां दान करता है?

उत्तर : अगर स्वर्ग में कुछ नहीं मिलता तब तो यही लोक अच्छा है, स्वर्ग में कौन जाना चाहेगा।

प्रश्न : तुम्हारे कहने के अनुसार कोई यमलोक या यम नहीं है, तो मरकर जीव कहां जायेगा, इसका न्याय कौन करता है?

उत्तर : तुम्हारा गरुड़ पुराण तो झूठा सिद्ध हो गया है। वेद में 'यम' नाम वायु का है। शरीर छोड़कर जीव अंतरिक्ष में रहता है और पक्षपात रहित न्यायकारी परमात्मा उसे उसके कर्मों के अनुसार नया शरीर दे देता है।

प्रश्न : क्या गोदान या कुछ अन्य अन्य दान–पुण्य नहीं करना चाहिए?

उत्तर : जरूर करना चाहिए। परोपकार के लिए सुपात्र को सोना, चांदी, अन्न, जल, वस्त्र, गाय आदि दान करना उचित है किन्तु कुपात्र को नहीं।

प्रश्न : कुपात्र और सुपात्र की पहचान क्या है?

उत्तर : जो छली, कपटी, स्वार्थी, विषयी, काम–क्रोध–लोभ और मोह से युक्त हो, दूसरों की हानि करने वाला, झूठा, अविद्वान, कुसंगी, आलसी, ढीठ बनकर बार–बार मांगने वाला, जो न दे उसकी निन्दा करने, शाप देने या गालियां देने वाला, असंतोषी, साधु वेष बनाकर दूसरों को ठगने वाला, मादक पदार्थों का सेवन करने वाला, सत्य का विरोध करके असत्य पर चलने वाला, सत्यविद्या

के विरुद्ध व्यवहार करने वाला, माता–पिता, संतान, मित्र और राजा, प्रजा आदि को ये संसार मिथ्या है, ऐसा उपदेश देने वाला कुपात्र होता है।

जो ब्रह्मचारी, जितेन्द्रिय, वेदविद्या को पढ़ने–पढ़ाने वाला, सुशील, सत्यवादी, परोपकारी, पुरुषार्थी, उदार, विद्या और धर्म की उन्नति चाहने वाला, धर्मात्मा, शान्त, निन्दा–स्तुति में हर्ष–शोक रहित, निडर, उत्साही, योगी, ज्ञानी, ईश्वर के गुण–कर्म–स्वभाव के अनुसार चलने वाला, दूसरों के सुख दुःख, हानि लाभ को अपना समझने वाला, संतोषी, जितना मिल जाये उतने से ही प्रसन्न रहने वाला, किसी से कुछ मांगने पर यदि न मिले तो भी उसकी निन्दा न करने वाला, सुखी लोगों का मित्र, दुखियों पर दया करने वाला, राग–द्वेष रहित, निष्कपट, सदाचारी और तन मन धन से दूसरों की सहायता करने वाला व्यक्ति सुपात्र होता है।

अकाल, भूकम्प आदि आपदाओं में बिना किसी भेदभाव के अन्न, जल, वस्त्र, औषधि आदि से सबकी सहायता की जा सकती है।

प्रश्न : दाता कितने प्रकार के होते हैं?

उत्तर : दाता तीन प्रकार के होते हैं? (1) उत्तम दाता वह है जो देश, काल और पात्र को जानकर सत्यविद्या, धर्म की उन्नति और परोपकार के लिए दान दे (2) मध्यम दाता वह है जो कीर्ति और स्वार्थ के लिए दान दे। (3) नीच वह है जो वेश्या, भांड आदि को तिरस्कारपूर्वक दे और पात्र–कुपात्र का भेद न जाने। जो धर्मात्माओं का सत्कार करे वह उत्तम, जो अपनी प्रशंसा के लिए दे वह मध्यम और जो बिना विचारे कुपात्र को दान देने वह नीच दाता कहलाता है।

प्रश्न : दान का फल इस लोक में मिलता है या परलोक में? फल अपने आप मिलता है या कोई देन वाला है?

उत्तर : दान का फल सब जगह मिलता है और ईश्वर देता है जैसे राजा चोर–डाकुओं को जेल में डालकर प्रजा को सुखी करता है वैसे ही ईश्वर धर्मात्माओं की रक्षा करता और पापियों को दंड देता है। ईश्वर सबको उनके पाप–पुण्यों के फल देता है।

प्रश्न : गरुड़ पुराण आदि ग्रंथ वेदार्थ या वेदज्ञान की पुष्टि करते हैं या नहीं?

उत्तर : नहीं! यह सब वेद विरोधी हैं। हर एक पुराण में अलग–अलग दिन

व्रत रखने और देवताओं की पूजा करने का उपदेश देते हुए कहा गया है कि जो उनके बताये नियम अनुसार नहीं चलेगा वह नरक में जाएगा। यदि इस बात को माना जाये तब तो मनुष्य को महीने के तीस दिन व्रत ही रखने होंगे और ढोंगी ब्राह्मणों के ही पेट भरने होंगे। एकादशी के दिन सारे दोष अन्न में बसते हैं, अन्न खाने से तो प्राणों की रक्षा होती है, कष्ट और पाप तो भूखे रहने से होता है। एक कथा प्रचलित है कि स्वर्ग की एक वेश्या को किसी अपराध के कारण पृथ्वी पर गिरने का शाप मिला। जब उसने पूछा कि वह फिर से स्वर्ग में कैसे आ सकती है तो यह कह दिया कि जब कोई अपने एकादशी के व्रत का फल तुझे देगा, तब तुम स्वर्ग में आ सकोगी।

वह वेश्या विमान सहित जिस राजा के राज्य में गिरी, उसने वहां के राजा से प्रार्थना की कि उसे किसी से एकादशी के व्रत का फल दिलवा दे। राजा ने घोषणा करवा दी कि जिस किसी ने एकादशी का व्रत रखा हो वह उस का फल उस वेश्या को दे दे। एक स्त्री अपने पति से झगड़ने के कारण एकादशी के दिन क्रोध में भूखी रही थी, उसे राजा के पास ले गए। राजा के कहने पर उसने विमान को छू दिया और वह वेश्या उसी विमान में स्वर्ग पहुंच गई। कैसी असंभव बात है कि व्रत रखने वाली तो स्वर्ग में नहीं गई परन्तु उसके व्रत के प्रभाव से वेश्या स्वर्ग में चली गई। लोगों को लूटने के लिए इन पाखंडियों ने वर्ष में आने वाली 24 एकादशियों के अलग–अलग नाम रख दिये हैं और उनमें किए जाने वाले दान भी निश्चित कर दिए हैं।

जिस गर्मी में घड़ी भर भी जल न मिलने पर मनुष्य व्याकुल हो जाता है उसे निर्जला एकादशी का नाम दे दिया, इससे तो लोगों को दुःख ही मिलता है। बिना भूख के भोजन खाना और भूख होने पर न खाना दोनों से ही रोग और दुःख होते हैं।

प्रश्न : मूर्तिपूजकों का कहना है कि वेद अनंत हैं पर उनकी शाखायें हैं। ऋग्वेद की 21, यजुर्वेद की 101, सामवेद की 1000 और अथर्ववेद की 9 शाखाएं हैं। इनमें से कुछ शाखाएं मिलती हैं, शेष लोप हो गई हैं उन्हीं में मूर्तिपूजा, तीर्थ आदि का वर्णन होगा, नहीं तो, पुराणों में यह वर्णन कहां से आया। कार्य देखकर कारण का अनुमान होता है तो पुराणों को देखकर मूर्तिपूजा में क्या शंका है?

उत्तर : जैसा वृक्ष होता है, उसकी शाखा वैसी ही होती है, उसके विरुद्ध

नहीं। चार वेद पूर्ण मिलते हैं इसलिए उनकी कोई शाखा उनके विरुद्ध हो ही नहीं सकती। पुराण वेदों की शाखा नहीं हैं। वेद ईश्वरीय ग्रंथ हैं, फिर आश्वालायन आदि ऋषि–मुनियों के लिखे ग्रंथ वेद कैसे हो सकते हैं? डाली–पत्तों को देखने से वृक्ष की पहचान हो जाती है तब तो तुम्हें ऋषि मुनियों द्वारा रचे गये वेदांग, चारों ब्राह्मण ग्रंथों, आरण्यकों आदि से प्रमाण ढूंढने चाहिए, पुराणों से नहीं। यह कल्पना करना कि लुप्त हुई शाखाओं में वेद विरुद्ध मूर्तिपूजा का वर्णन होगा, तब तो इन शाखाओं में ब्राह्मण को शूद्र और शूद्र को ब्राह्मण भी कहा गया होगा, ऐसा भी हो सकता है। पातंजलि से जैमिनी तक छः दर्शन शास्त्रों, जिनमें वैदिक उपासना और कर्मकांडों का वर्णन है, में कहीं भी मूर्तिपूजा का वर्णन न होना, इस बात को सिद्ध करता है कि मूर्तिपूजा और तीर्थ वेद–विरुद्ध हैं।

ये सब ढोंगी मनुष्यों ने अपने स्वार्थ के लिए रचे हैं। सच तो यह है कि इस मूर्तिपूजा से श्री राम, श्रीकृष्ण और शिव आदि की मूर्तियां बनाकर उनके नाम से मन्दिरों में चढ़ावे के रूप में भीख मांगी जाती है। भगवान के वस्त्र पुराने हो गये हैं, देवी की मूर्ति पर आभूषण नहीं हैं आदि के लिए लोगों को ठगा जाता है। भला जो भगवान सारे संसार का पालन करता है, ऐश्वर्य प्रदान करता है उसे अपने लिए दूसरों से वस्त्र–आभूषण लेने की क्या आवश्यकता है। मन्दिरों में रामलीला और रासलीलाओं के नाम पर भगवान नचाए जाते हैं। गरमी में मूर्तियों को ताले में बंद कमरे में रखा जाता है।

जब मूर्ति को कोई तोड़ देता है तो झट से दूसरी स्थापित कर देते हैं। इतना ही नहीं छोटे–छोटे लड़के–लड़कियों को राधा–कृष्ण, सीताराम का स्वांग बनाकर रास्ते में बिठाकर भी भीख मंगवाते हैं, इससे बड़ी हमारे महापुरुषों की निन्दा और क्या होगी? मूर्तिपूजा के कारण जो अज्ञान और पाप बढ़ रहा है उसका फल दुःख रूप में ही मिल रहा है। वाममार्गियों ने तो मारण, मोहन, उच्चाटन, वशीकरण आदि मन्त्र बना लिए हैं। जब किसी को मारने का प्रयोग करते हैं तो कराने वाले से धन लेकर मिट्टी या आटे का पुतला बनाकर उसमें छुरा मार देते हैं या कील ठोंक देते हैं।

भैरव के चेले इसी तरह काली देवी के सामने मनुष्य की बलि देकर उसका मांस खा जाते हैं। चोलीमार्ग और बीजमार्ग वाले तो इनसे भी बढ़कर नीच हैं जो व्यभिचार को मुक्ति का साधन बताते हैं।

thearyasamaj.org

प्रश्न : शैवमत वाले तो अच्छे हैं न?

उत्तर : वे अच्छे कहां हैं? वे भी तो ओं नमः शिवाय मंत्र का जाप करने का उपदेश करते हैं, रुद्राक्ष और भस्म धारण करने, बम–बम और हर–हर शब्द बोलकर ताली बजाने तथा शिवरात्रि को प्रदोष व्रत करने को मुक्ति का साधन मानते हैं।

प्रश्न : वैष्णव तो अच्छें हैं? वे माथे पर नारायण के चरण–कमल का तिलक लगाते हैं जिसके बीच में पीली रेखा 'श्री' होती है। वे न तो लिंग के दर्शन करते हैं और न ही मांस मदिरा का प्रयोग करते हैं?

उत्तर : वे खाक अच्छे हैं। वैसे तो अपने को विष्णु का दास कहते हैं लेकिन माथे पर तिलक लगाकर अपने को ही श्रेष्ठ मानते हैं। उनके माथे का तिलक तो उनके अपने हाथ की कारीगरी है। बैकुंठ से लगकर तो नहीं आया, यह तो वैसा ही है जैसे कोई हाथी के माथे पर चित्रकारी करके सजा दे, फिर वे श्रेष्ठ कैसे हो गये। यदि कोई तुमसे पूछे कि श्री जड़ है या चेतन? तो तुम चेतन कहोगे। फिर पीली रेखा जो जड़ है उसे श्री कैसे माना जा सकता है। यदि रेखा ही श्री है तो कितने ही तिलकधारी वैष्णवों का मुख शोभा (श्री) रहित क्यों दिखाई देता है? ललाट में श्री होते हुए भी घर–घर जाकर भीख मांगने का काम करते हैं, जो महादरिद्री का काम है।

एक वैष्णव भक्त परिकाल नामक डाकू था। एक दिन उसे लूट में कुछ न मिला तो नारायण जी एक सेठ के वेष में वहां जा पहुंचे। परिकाल ने उसके सारे आभूषण छीन लिए, एक अंगूठी जो उंगली से नहीं निकल रही थी उसे लेने के लिए उसने वह उंगली काट डाली, तो नारायण ने प्रसन्न होकर उसे साक्षात् दर्शन देकर अपना प्रिय भक्त बना लिया। एक बार किसी साहूकार ने परिकाल को अपने जहाज पर नौकर रख लिया और एक देश से सुपारी खरीद कर अपने जहाज में भर ली। परिकाल ने एक सुपारी ली, उसे तोड़ और साहूकार को आधी सुपारी अपने जहाज में रखने को दे दी और उससे लिखवा लिया कि आधी सुपारी उसकी है। अपने देश पहुंचकर जब साहूकार ने उसके मांगने पर वह आधी सुपारी उसे दी तो वह कहने लगा कि जहाज में लदी आधी सुपारी उसकी है। झगड़ा जब राजा के पास पहुंचा तो उस लेख के आधार पर राजा ने जहाज में लदी आधी सुपारी परिकाल को दिला दी।

ऐसे होते हैं वैष्णव भक्त जो उसकी मूर्ति भी मन्दिर में रखते हैं और ठगी भी करते हैं। भक्तमाल में लिखा है कि एक मनुष्य वृक्ष के नीचे सोया था, उसके माथे पर कौए ने बीट कर दी जो तिलक के आकार की बन गई। वहीं उसे यमलोक ले जाने के लिए यमदूत पहुंच गए। इतने में विष्णु जी के दूत भी वहां पहुंच गए और दोनों में उसे ले जाने के लिए झगड़ा हो गया। तब नारायण जी वहां स्वयं आए और उसका वैष्णवी तिलक (बीट का) दिखाकर उसे विष्णु लोक ले गये। यदि एक छोटे से तिलक के लगाने से स्वर्ग मिलता है तो सभी लोग स्वर्ग में क्यों नहीं पहुंच गये। अब तो वैष्णवों की भी कई शाखायें बन गई हैं।

कुछ खाखी लड़के लंगोट पहने, धूनी तापते, जटा बढ़ाकर सिद्ध बन बैठते हैं और गांजा चरस पीकर आंखें लाल किए मांगते भी दिखाई देते हैं। ये महाअज्ञानी तो इतना भी नहीं जानते कि स्रीगनेसाजन्नमे और श्रीगणेशाय नमः में से ठीक कौन सा है। वे विद्या के नाम से ही डरते हैं और बिना पढ़े गुरु बन जाते हैं। उनके सब लक्षण असाधु, मूर्ख और घमंडी व्यक्ति के होते हैं, साधु के नहीं। वे अपनी बात को ही ठीक कहते हैं किसी दूसरे की बात नहीं सुनते। ऐसे विद्या के शत्रुओं को तो पंडित भी ज्ञान नहीं दे सकते।

प्रश्न : कबीर पंथी तो अच्छे हैं। वे तो मूर्तिपूजा को नहीं मानते हैं। कबीर जी फूलों से उत्पन्न हुए और अंत में भी फूल हो गए। वे तो ब्रह्मा विष्णु से भी पहले हुए थे और इतने बड़े सिद्ध थे कि जो बातें वेद–पुराण नहीं जान सके, उन्हें कबीर जानते थे?

उत्तर : नहीं। वे मूर्ति को छोड़कर पलंग, गद्दे, तकिए और खडाऊं की पूजा करते हैं तो दोनों में क्या फर्क रह गया। फूलों से न कोई पैदा होता है और न ही मरने पर फूल बनता है, ये सब झूठी गप्प है। कबीर को तो किसी विधवा स्त्री ने जन्म देकर समाज के भय से फूलों की टोकरी में रखकर फैंक दिया था। एक जुलाहे ने उन्हें उठाकर उनका पालन किया था। वे पढ़े–लिखे तो थे नहीं, जो मन में आता था, गाया करते थे। उनके मरने पर शूद्र लोगों ने उन्हें सिद्ध बना दिया। कान बंद करने पर सुनाई देने वाले शब्द को अनहद नाद और मन की वृत्ति को सुरति कहकर ध्यान करना बताने लगे। ये वर्छी के समान तिलक लगाते हैं और चंदन की लकड़ी की कंठी पहनते हैं। ज्ञान के अभाव में इनकी आत्मा की उन्नति हो ही नहीं सकती।

thearyasamaj.org

प्रश्न : एक सच्चे कर्त्तापुरुष जो निरवैर, जन्म–मरण रहित, निडर और प्रकाशमान है उसी का जाप गुरु की कृपा से कर। वह परमात्मा सच था, सच है और आगे भी सच रहेगा, इसी तरह नानमकत तो ठीक है?

उत्तर : गुरु नानक का आशय अच्छा था लेकिन उनमें भी विद्या का अभाव था। उन्हें वेद–शास्त्र और संस्कृत का ज्ञान न था। उन्होंने अनपढ़ ग्रामीणों के सामने अपने जो विचार रखे उन्हीं के आधार पर उनके शिष्यों ने उन्हें गुरु बना दिया। प्राचीन धर्म–ग्रन्थों का ज्ञान न होने के कारण उन्होंने कहीं वेदों की निन्दा की और कहीं प्रशंसा की है। वेद पढ़ने वाले मर गए उनका यह कथन उनकी अज्ञानता ही प्रकट करता है क्योंकि सृष्टि का यह नियम है कि जो पैदा हुआ है वह मरेगा अवश्य। उनकी मृत्यु के बाद उनके पुत्रों ने उदासी संप्रदाय चलाया और उनके शिष्यों ने उनके चलाए हुए मत का प्रचार किया। बाद में गुरु गोबिन्द सिंह ने खालसा पंथ की स्थापना की और केश, कड़ा, कंघा, कच्छ और किरपाण धारण करने का नियम लागू करके सिखों को अलग पहचान दी। सिख मूर्तिपूजा तो नहीं करते परन्तु ग्रन्थ की पूजा करते हैं, यह भी जड़ पूजा ही है। ये लोग ग्रन्थ के आगे माथा टेकते, भेंट चढ़ाते और धूप आदि जलाते हैं। हां, इन्होंने लंगर प्रथा से भोजन की छुआछूत का भेद मिटाने का अच्छा काम किया है।

प्रश्न : दादूपंथी तो अच्छे हैं?

उत्तर : इस मत का संस्थापक दादूराम एक तेली था। इस मत के लोगों ने अज्ञानवश दादूराम में ही मुक्ति मान ली है। ये राम–राम के जाप में ही ज्ञान ध्यान मुक्ति मानते हैं। राम–राम कहने से यदि पापकर्म छूट जाते तब तो सबको मुक्ति मिल जाती। दादू की ही पूजा में लग जाने के कारण उन्हें सच्चे परमात्मा का ज्ञान ही नहीं है। इन्हीं के चेले कामड़िए कहलाते हैं। ये भी गुरु को परमेश्वर से बड़ा मानते हैं। ये भक्ति और संतों के साथ–साथ अवतारवाद को भी मानते हैं। इसलिए इनमें अज्ञानता ही है।

प्रश्न : गोलोकीय गुसाई मत तो अच्छा है। ये लोग कितना ऐश्वर्य भोगते हैं?

उत्तर : ये मत भी अच्छा नहीं है। तेलंगाना के लक्ष्मणभट्ट के माता–पिता और पत्नी ने जब काशी में उसके संन्यास लेने के झूठ की पोल खोल दी,

तब वह फिर गृहस्थी बन गया। उसने काशी के जंगल में मिले एक अनाथ बालक को पालकर पुत्र की तरह पढ़ाया लिखाया। उसकी मृत्यु के पश्चात् उसके पुत्र ने भी अपनी पत्नी को छोड़कर संन्यास ले लिया। वहां से लोगों द्वारा निकाल दिए जाने पर वह काशी चला गया और किसी जाति से निकाले गए ब्राह्मण की पुत्री से विवाह करके विष्णुस्वामी के मन्दिर में चला गया। लोगों ने उसे दोबारा वहां से निकाल दिया, तब उसने ब्रज प्रदेश में, जहाँ अविद्या ने घर कर रखा था, जाकर झूठा प्रचार कर दिया कि श्रीकृष्ण ने मुझे कहा है कि 'जाओ, जो लोग गोलोक स्वर्ग से इस धरती पर आए हैं उनको ब्रह्म का दर्शन कराके फिर से स्वर्ग में भेजो'। अज्ञानी लोग स्वर्ग में जाने के लालच के कारण उसके जाल में फंस गये। ये गोसाई या वल्लभ संप्रदाय वाले लोग स्त्री का संग करते हैं। इन्होंने श्रीकृष्ण और गोपियों की कथाएँ बनाकर ब्रज में फैला दीं। भला बताओ, योगीराज कृष्ण का भोगों से क्या काम? इस मत में कितने ही दोष हैं :

(1) श्रीकृष्ण का देहान्त हुए 5000 वर्ष से अधिक हो गये हैं, ये लोग कहते हैं कि श्रावण मास की आधी रात को वल्लभ (श्रीकृष्ण) उनसे मिलते हैं।

(2) गोसाई का जो चेला अपना सब कुछ उसे समर्पित कर देता है उसके शरीर और जीव के सब दोष छूट जाते हैं। यदि यह सच होता तो उसका कोई चेला गरीबी से क्यों दुःखी होता।

(3) ये लोग काम क्रोध आदि से उत्पन्न होने वाले स्वाभाविक दोष, देशकाल में किए जाने वाले पापकर्म, भक्ष्य, अभक्ष्य, झूठ बोलना आदि दोष, चोरी, व्यभिचार, माता, बहिन, बेटी, बहू, गुरु–पत्नी आदि से दुष्कर्म करना, अछूतों को छूना आदि दोषों को बुरा नहीं मानते इसलिए इनका व्यवहार उचित नहीं है।

(4) इनके चेलों को आदेश है कि वे अपनी सब वस्तुएं पहले गुरु को समर्पित करें और उनके भोग लेने के बाद वे उसे भोगें, इसका मतलब तो यह हुआ कि ये अपनी विवाहित पत्नी को भी तब तक न छुएं जब तक गोसांई उसका भोग न कर ले।

(5) इनके अनुसार तो स्त्री भी धन के समान एक वस्तु ही मानी जाती है।

thearyasamaj.org

(6) अपने मत से भिन्न किसी दूसरे मत की बात न सुनें।

(7) सब वस्तुओं का समर्पण करके उनमें ब्रह्मबुद्धि करें अर्थात जैसे गंगा में मिलने वाला हर प्रकार का जल गंगाजल बन जाता है वैसे ही गोसांई द्वारा स्वीकार कर ली गई हर वस्तु पवित्र हो जाती है।

ये सब बुराइयां नहीं हैं तो और क्या हैं? इसलिए ऋषि ने इन बुराइयों को छोड़कर वेदमार्ग अपनाने और धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष को प्राप्त करके आनन्द भोगने का उपदेश दिया है। गोसांई अपने मत को पुष्टिमार्ग कहते हैं, जबकि सच तो यह है कि इसे कुष्टिमार्ग कहा जाना चाहिए क्योंकि ये भोग–विलास में फंसे लोग तरह–तरह के दुःखदायी रोगों के शिकार होते हैं और इनका शरीर कोढ़ी की भांति गल–गलकर समाप्त होता है।

ये गोसांई अपने आप को कृष्ण मानकर सबके स्वामी बनते हैं और उनका उद्धार करने का ढोंग करते हैं। जहां मनुष्य भोगविलास में फंसा रहेगा, वहां मुक्ति किस प्रकार होगी?

प्रश्न : इस संसार में लीलावतार धारण करने में रोग–दोष होता है, गोलोक में नहीं?

उत्तर : जहां भोग हैं वहां रोग अवश्य होगा चाहे यह लोक हो या गोलोक हो या कोई और लोक हो। आपका गोलोक तो व्यभिचार का स्थान है क्योंकि वहां एक ही पुरुष (श्रीकृष्ण) होगा, यदि उसकी इतनी अधिक स्त्रियां होंगी तो उनकी सन्तानें कितनी होंगी। पति–पत्नी एक–दूसरे के प्रति मन से समर्पित होते हैं, जहां मन से समर्पण नहीं होता, उसे व्यभिचार ही कहा जाता है। इस तरह धर्म की आड़ में नीच कर्म करना उचित नहीं कहा जा सकता।

प्रश्न : गोसांई जी रोटी–दाल–भात शाक भाजी आदि हाट में बैठकर तो नहीं बेचते, ये तो उनके शिष्य बेचते हैं?

उत्तर : गोसोई अपने शिष्यों को वेतन नहीं देते इसलिए उन्हें जो दाल–चावल आदि मिलते हैं उसे धन प्राप्त करने के लिए बेच देते हैं। अगर गोसांई स्वयं बेच देता तो उनके इतने ब्राह्मण चेले इस पाप कर्म से बच जाते।

ये लोग मदिरा बेचने जैसा नीच कर्म भी करते हैं। ये लोग गोसांई के गीले वस्त्रों से जल निचोड़ कर उसका चरणामृत पीते हैं, उसी झूठे बर्तन में से सभी थोड़ा–थोड़ा पीते जाते हैं इसे 'खास प्रसादी' कहते हैं। ऐसे पाखंडी लोगों ने ही लोगों के अज्ञान में और वृद्धि करके धर्म का नाश कर दिया है।

thearyasamaj.org

प्रश्न : स्वामी नारायण का मत कैसा है?

उत्तर : अयोध्या में जन्मा हुआ एक व्यक्ति सहजानन्द घूमता हुआ गुरजात काठियावाड़ चला गया और दो–चार शिष्यों के द्वारा अपने को नारायण अवतार प्रसिद्ध करा दिया। उन शिष्यों ने वहां के एक बड़े जमींदार दादाखाचर को कहा कि सहजानन्द के पास जाओ, वे तुम्हें साक्षात् नारायण के दर्शन करवा देंगे। वह उनकी बात मानकर सहजानन्द के पास चला गया। उन्होंने एक अन्धेरे कमरे में सहजानन्द के पीछे एक व्यक्ति को खड़ा कर दिया जिसने अपनी बाहें फैला दी, इस तरह चार भुजाएं हो गई। अब उसके चेलों ने दीपक का प्रकाश नारायण समझ लिया। उसके बाद दीपक के प्रकाश को हटा लिया और सहजानन्द वस्त्र बदलकर अपनी गद्दी पर आ बैठा। इस छल से उसने लोगों को लूटना शुरू कर दिया। ये बिल्कुल 'नाक–कटे' संप्रदाय वालों की तरह हैं। कहा जाता है कि एक व्यक्ति चोरी करते हुए पकड़ा गया। राजा ने उसे नाक काटने का दंड दिया। जब उसकी नाक काट दी गई तो वह बाहर आकर नाचने लगा कि उसे भगवान के दर्शन हो गए। उसकी देखा–देखी किसी और मूर्ख ने अपनी नाक कटवा दी तो उसने उससे कहा कि तू भी मेरी तरह नाच और यही कह। बस इसी तरह नाककटों का एक संप्रदाय बन गया और एक मूर्ख राजा भी उनकी बातों में आकर नाक कटवाने को तैयार हो गया।

मुहूर्त निकालकर समय तय हो गया, तब राजा के एक बूढ़े दीवान ने कहा कि पहले मुझे परीक्षा कर लेने दो। निश्चित दिन सैनिकों सहित राजा और दीवान वहां पहुंचे। उन्होंने दीवान की नाक काटकर उसके कान में भी वैसा ही कहने को कहा। तब दीवान ने राजा के कान में सारी सच्चाई बता दी और राजा के आदेश पर उन नाककटों को मार दिया गया। इस तरह इस संप्रदाय का अंत हो गया। ये स्वामी नारायण मत वाले मरते हुए व्यक्ति को कहते हैं कि सहजानन्द सफेद घोड़े पर बैठकर रोज इस मन्दिर में आते हैं और जीव को मुक्ति के लिए ले जाते हैं। जब मेला होता है तो मंदिर के पीछे बनी दुकान में एक छेद रख लेते हैं और पुजारी लोगों के चढ़ाये हुए नारियल पीछे फेंकता जाता है इस तरह वही चढ़ाये हुए नारियल दिन में न जाने कितनी बार बिकते हैं।

इतना ही नहीं जिस–जिस धंधे से व्यक्ति जुड़ा होता है उससे वैसा ही

काम सेवा के नाम पर करवा लेते हैं। इन्होंने अपने चेलों से धन वसूल करने का नियम बना रखा है। वैसे तो इन्होंने प्रसिद्ध कर रखा है कि इनके साधु स्त्री का मुख नहीं देखते परन्तु गुप्त रूप से सब लीला चलती है। ये अपने साधुओं के मरने पर उन्हें रात को कुंए में फैंक देते हैं और कह देते हैं कि हमने सहजानन्द जी को उसे विमान में ले जाते हुए देखा है। उसकी बैकुण्ठ में बहुत आवश्यकता है यह कहकर सहजानंद उसे अपने साथ ले गये हैं। यह पाखंड लीला नहीं तो क्या है? सर्वशक्तिमान ईश्वर को एक व्यक्ति की सहायता की आवश्यकता पड़ जाती है, है न कितनी विचित्र बात?

प्रश्न : माधवमत तो अच्छा है? लिंगाकित मत कैसा है?

उत्तर : ये दोनों मत शरीर पर चक्र अंकित (जलाकर दागना) करवाते हैं। माधवमत वाले विष्णु का चिन्ह हर वर्ष अंकित करवाते हैं और माथे पर पीली रेखाओं के बीच काली रेखा वाला तिलक लगाते हैं। इनका मानना है कि श्रीकृष्ण का रंग काला था इसलिए काला तिलक लगाने से ये बैकुण्ठ चले जायेंगे। यदि तिलक लगाने से बैकुण्ठ मिल जाता है तो पूरा मुंह काला कर लेने पर तो बैकुण्ठ के भी पार पहुंच जाना चाहिए। लिंगाकित मत वाले केवल एक बार शरीर पर लिंग का चिन्ह अंकित करवाते हैं और महादेव को मानते हैं। पत्थर के लिंग को सोने या चांदी में मढ़वाकर गले में डालते हैं और पानी तक भी उसे दिखाकर पीते हैं। ये सब बातें वेद विरुद्ध होने के कारण ठीक नहीं हैं।

ब्रह्म समाज और प्रार्थना समाज

प्रश्न : ब्रह्म समाज और प्रार्थना समाज अच्छे हैं या नहीं?

उत्तर : इनकी कुछ बातें अच्छी हैं, लेकिन बहुत सी बातें बुरी हैं।

प्रश्न : ब्रह्म समाज और प्रार्थना समाज के नियम तो बहुत अच्छे हैं?

उत्तर : जिन्होंने वेद विद्या नहीं पढ़ी है उनके बनाए नियम पूरी तरह सत्य नहीं हो सकते। इन्होंने मूर्तिपूजा हटाकर और झूठे ग्रन्थों के जाल से बचाकर कुछ लोगों को ईसाई बनने से अवश्य रोका है, यह तो अच्छी बातें हैं। लेकिन इनमें देशभक्ति की भावना बहुत थोड़ी है। इन्होंने ईसाइयों के प्रभाव में आकर खान–पान, विवाह आदि के नियम बदलकर भारतीय संस्कृति को हानि पहुंचाई

thearyasamaj.org

है। इन्होंने अपने देश, अपनी सभ्यता संस्कृति और पूर्वजों की प्रशंसा करना तो दूर रहा, उनकी दिल खोलकर जो निन्दा की है, उसे जानकर तो ऐसा लगता है, सृष्टि में अंग्रेजों के सिवाय कोई विद्वान है ही नहीं, भारत मूर्खों का ही देश था, यहां कोई महापुरुष हुआ ही नहीं था, यही सिद्ध करना इनका उद्देश्य था। इन्होंने संस्कृत भाषा और वेदज्ञान को छोड़कर अंग्रेजी के पंडित बनकर एकमत चलाने का प्रयत्न किया। ब्रह्म समाज की 'उद्देश्य' पुस्तक में साधुओं में ईसा, मूसा, मुहम्मद और चैतन्य के नाम तो हैं किसी ऋषि–महर्षि का नाम तक नहीं है। इन्होंने अंग्रेजों, मुसलमानों आदि से खाने–पीने का परहेज नहीं रखा। ऐसी बातों से सुधार तो नहीं, हां बिगाड़ जरूर हुआ है।

प्रश्न : जातिभेद ईश्वरकृत है या मनुष्यकृत?

उत्तर : ईश्वरकृत भी है और मनुष्यकृत भी। मनुष्य, पशु, पक्षी, वृक्ष, जलजन्तु आदि जातियां ईश्वरकृत हैं। जैसे गाय, घोड़ा, हाथी आदि पशु, हंस, कौआ आदि पक्षी, मछली, मगर जैसे जलजन्तु, पीपल, आम आदि वृक्ष अलग–अलग जाति के हैं वैसे ही मनुष्यों में ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य और शूद्र आदि जाति भेद ईश्वरकृत हैं क्योंकि वर्णव्यवस्था ईश्वर के दिए हुए गुण–कर्म–स्वभाव के आधार पर निश्चित की जाती थी, जन्म के आधार पर नहीं। राजा और विद्वान मनुष्य के गुण–कर्म–स्वभाव की परीक्षा करने के बाद ही उनका वर्ण निश्चित करते थे। लेकिन आजकल की वर्ण–व्यवस्था मनुष्य द्वारा जन्म के आधार पर बनाई गई है। इसी तरह भोजन के आधार पर भेद भी ईश्वरकृत तथा मनुष्यकृत हैं। सिंह मांसाहारी है, हाथी और गैंडा शाकाहारी हैं। इसी तरह मनुष्यों में मांसाहारी लोगों को अपवित्र और शाकाहारी को पवित्र मानना मनुष्यकृत भेद है।

प्रश्न : यूरोपियन लोग जूते, कोट–पतलून आदि पहनकर होटलों में सभी के हाथ का खाते हैं, इसीलिए उनकी उन्नति हो रही है?

उत्तर : तुम्हारा यह कहना गलत है, मुसलमान भी तो सबके हाथ का खाते हैं फिर उनकी उन्नति क्यों नहीं होती। यूरोपियन लोग इसलिए उन्नति कर रहे हैं क्योंकि वे बाल–विवाह नहीं करते, अपने बच्चों को अच्छी विद्या देते हैं, उनके बच्चे योग्य जीवन–साथी से विवाह करते हैं। सब काम सभा में अच्छी तरह विचारकर करते हैं, अपनी जाति की उन्नति में तन–मन–धन लगाने को हमेशा तैयार रहते हैं, आलस्य को छोड़कर उद्योग–धंधों को बढ़ाते हैं, बेकार के पाखंडों में नहीं फंसते हैं, स्वदेशी वस्तुओं का प्रयोग करते हैं और दूसरे

देशों में जाकर भी अपना चाल–चलन नहीं बदलते, ये सब कारण हैं जिनसे उनकी उन्नति होती है। उनमें भी जाति भेद हैं, वह भी किसी दूसरे मतवालों से अपने लड़के–लड़की का विवाह करने वालों से मेलजोल बंद कर देते हैं। केवल दूसरे लोगों को धोखा देने के लिए कह देते हैं कि उनमें जाति भेद नहीं है।

वैद्य और दवा की जरूरत रोगी को होती है, स्वस्थ व्यक्ति को नहीं। अज्ञान और अविद्या में फंसे व्यक्ति को सत्यविद्या और सत्यउपदेश देना जरूरी होता है। जब भी हम किसी को खान–पान या व्यवहार में कोई अनाचार करते देखें तो उसे अपने से अलग कर देने की बजाय उसे सही मार्ग दिखाना चाहिए। विद्या का लाभ तभी होता है जब वह स्वार्थ के लिए न होकर परमार्थ के लिए हो व विद्वान लोग यदि अपनी विद्या का प्रयोग परोपकार के लिए करें तो अनेक लोग इस दुःखसागर से छूट जायेंगे और देश व जाति की उन्नति होगी।

प्रश्न : हम किसी पुस्तक को ईश्वरीय या पूर्णतया सत्य नहीं मानते क्योंकि मनुष्य की बुद्धि भ्रमित होती है और उनके बनाये हुए ग्रंथों में सत्य और असत्य दोनों होते हैं। इसीलिए हम वेद, कुरान, बाईबल और दूसरे ग्रंथों की सत्य बातें मानते हैं, असत्य नहीं?

उत्तर : जब सब मनुष्य भ्रान्ति रहित नहीं हो सकते, इसका मतलब तो यह है कि तुम भी भ्रान्त हो। फिर तुम अपनी भ्रान्त बुद्धि से कैसे पता लगा सकते हो कि सत्य क्या है और असत्य क्या है। तब तो तुम्हारी कही हुई या लिखी हुई बातों पर भी विश्वास नहीं करना चाहिए। ईश्वर को छोड़कर और कोई भी सर्वज्ञ नहीं है। इसीलिए सर्वज्ञ परमात्मा के जो वचन वेद में लिखे हैं, अल्पज्ञ मनुष्यों को उन्हीं को सत्य मानना चाहिए। वेद में अब तक कोई ऐसी बात नहीं पाई गई जो असत्य हो, लोगों को हानि पहुंचाती हो या भ्रष्ट करती हो। वेद आदि शास्त्रों को मानकर ही हम किसी बात को सत्य और असत्य की कसौटी पर जांच सकते हैं, और उन्नति कर सकते हैं। हमारे देश में अविद्या और अज्ञान का जो रोग फैला हुआ है इसका इलाज भी हमें ही करना है, यूरोप वाले हमारी सहायता करने नहीं आयेंगे।

जब तुम यह मानते हो कि सब सत्य ईश्वर से प्रकट होता है तब तो तुम्हें ऋषियों की आत्माओं में प्रकाशित हुए सत्यज्ञान वेद को मान लेना चाहिए।

(1) जगत को बनाने वाले के बिना तो जगत उत्पन्न नहीं हो सकता,

thearyasamaj.org

क्योंकि हर एक काम का करने वाला कोई न कोई अवश्य होता है। उस ईश्वर के बनाए बिना तो कोई जीव भी शरीर धारण नहीं कर सकता।

(2) पश्चाताप और प्रार्थना से पापों का नाश नहीं होता। मंत्र तंत्र, जप–तप, तीर्थव्रत आदि से, ईसा में विश्वास, हजयात्रा या तोबा करने से पाप दूर नहीं होते बल्कि बढ़ते हैं। जब लोग यह समझते हैं कि प्रायश्चित करके पाप दूर हो ही जायेंगे तब वे निडर होकर पाप करते हैं। यदि उन्हें यह ज्ञान हो जाये कि न्यायकारी ईश्वर हर व्यक्ति को उसके कर्मों का फल अवश्य देगा, तभी वे पाप करने से डरेंगे।

(3) ईश्वर अनन्त है, जीव की शक्तियां सीमित होने के कारण उसके गुण–कर्म–स्वभाव भी सीमित ही हैं।

प्रश्न : परमेश्वर दयालु है वह सीमा में बंधे हुए कर्मों का भी अनन्त फल दे देगा?

उत्तर : ईश्वर कभी ऐसा नहीं करता। इस तरह करने से ईश्वर न्यायी नहीं हो सकता। अगर जीवों को उनके कर्मों के अनुसार फल नहीं मिलेगा तो इसका मतलब यह होगा कि ईश्वर एक पर दया करके दूसरे पर अन्याय करे।

प्रश्न : हम स्वाभाविक ज्ञान को वेद से बड़ा मानते हैं, नैमित्तिक ज्ञान को नहीं? यदि परमेश्वर ने हमें स्वाभाविक ज्ञान न दिया होता तो हम वेदों को कैसे पढ, समझ और समझा सकते?

उत्तर : तुम्हारी बात ठीक नहीं है। स्वाभाविक ज्ञान सहज ज्ञान होता है जो न बढ़ता है, न घटता है, उससे कोई उन्नति नहीं कर सकता। जंगली मनुष्यों में स्वाभाविक ज्ञान होते हुए भी वे उन्नति नहीं कर पाते। जो ज्ञान किसी दूसरे द्वारा दिया जाता है वह नैमित्तिक ज्ञान होता है, वही उन्नति का कारण है। जब हम विद्वानों से शिक्षा पाते हैं, तभी हमें कर्त्तव्य–अकर्त्तव्य, धर्म–अधर्म का भेद समझ आता है, इसलिए स्वाभाविक ज्ञान को वेद से बड़ा मानना ठीक नहीं है।

(1) पुनर्जन्म की व्याख्या से यह समझ लेना चाहिए कि जीव शाश्वत् अर्थात् नित्य है और उसका कर्मप्रवाह भी नित्य है। जीव कर्म करता है और उन कर्मों का फल भोगने के लिए बार–बार जन्म लेता रहता है। जीव

ने किसी को सुखःदुख या हानि–लाभ पहुंचाया होता है तभी उसे अपने कर्मों के अनुसार जन्म मिलता है। यदि ईश्वर जीव को पूर्व जन्म के पाप–पुण्यों के अनुसार इस जन्म में सुख–दुःख न देता तो वह अन्यायकारी हो जाता।

(2) ईश्वर को छोड़कर दिव्यगुण वाले पदार्थों और विद्वानों को देव न मानना भी ठीक नहीं है क्योंकि देव होंगे तभी तो ईश्वर सब देवों का देव और महादेव कहलायेगा।

(3) अग्निहोत्र–आदि परोपकारक कर्मों को कर्त्तव्य न समझना अच्छा नहीं क्योंकि इससे जल–वायु शुद्ध होता है और पर्याप्त वर्षा होती है।

(4) ऋषि–महर्षियों के उपकारों को न मानकर, किसी को भगवान मानना ठीक नहीं।

(5) ईश्वर ही वेदविद्या का देने वाला है, दूसरी कार्यविद्याएं वेदों की उत्पत्ति का कारण हो ही नहीं सकती। क्योंकि उनमें वेदों के समान पूर्णज्ञान नहीं है।

(6) यज्ञोपवीत और शिखा विद्या का चिन्ह हैं, इनका त्याग कदापि नहीं करना चाहिए।

(7) ब्रह्मा से लेकर अब तक आर्यावर्त्त (भारत) में अनगिनत विद्वान् हुए हैं, उन्हें छोड़कर यूरोपियनों की स्तुति–प्रशंसा करना, पक्षपात और चापलूसी के सिवाय कुछ नहीं हो सकता।

(8) बीज के अंकुर के समान जड़–चेतन के संयोग से ही जीव की उत्पत्ति होती है। लेकिन उत्पत्ति से पहले जीव नहीं होता या जो उत्पन्न होता है उसका नाश नहीं होता, ये ठीक नहीं है। यदि उत्पत्ति से पहले जड़ और चेतन दोनों नहीं थे तो जीव कहां से आया और संयोग किसका हुआ? ईश्वर, जीव और प्रकृति (जड़) ये तीन अनादि हैं। ईश्वर ही जड़–चेतन के संयोग से सब रचना करता है।

केवल आर्यसमाज ही है जो वेदों के ज्ञान द्वारा अज्ञान को मिटाकर लोगों को ठीक मार्ग दिखा सकता है। इसके लिए जरूरी है कि हम सब परस्पर प्रीति से रहें और तन–मन–धन से इस समाज को उन्नति की ओर ले जायें तभी पूरे आर्यावर्त्त की उन्नति हो सकती है और भारत फिर से विश्व का गुरु होने का अपना खोया हुआ सम्मान प्राप्त कर सकता है।

thearyasamaj.org

प्रश्न : सब धर्म अच्छे हैं, आपको दूसरे धर्मों का खंडन नहीं करना चाहिए। आपके धर्म में ऐसा क्या है जिस पर आप इतना घमंड करते हो? परमात्मा की सृष्टि में एक से एक बढ़कर, समान और कम बहुत हैं इसलिए किसी को घमंड नहीं करना चाहिए?

उत्तर : अब प्रश्न यह उठता है कि धर्म सबका एक होता है या अनेक? अगर अनेक हैं तो वे एक दूसरे के विरुद्ध हैं या नहीं? अगर तुम सब धर्मों को एक दूसरे के विरुद्ध मानते हो तो यह गलत है क्योंकि जब परमेश्वर एक है तो उस एक के बिना दूसरा धर्म हो ही नहीं सकता। यदि एक दूसरे के विरुद्ध नहीं मानते हो तो अनेक धर्मों का होना व्यर्थ है। इसलिए धर्म और अधर्म एक ही हैं अनेक नहीं। यदि आप सब धर्मों के विद्वानों को इकट्ठा करें और उनसे कहें कि मैंने अभी तक कोई धर्म नहीं अपनाया है, अब आप ही बताएं कौन सा धर्म सबसे अच्छा है जिसे मैं ग्रहण करूं? तो सब अपने–अपने धर्म को अच्छा कहेंगे। वाममार्गी कहेंगे हमारा धर्म है 'भगवती को मानना' हमारे धर्म में भोग और मोक्ष दोनों हैं इसलिए हमारा धर्म अच्छा है, इसे अपना लो। शैव कहेंगे बिना शिव और शिवलिंग की पूजा किए, रुद्राक्ष और भस्म धारण किए मुक्ति नहीं मिल सकती।

नवीन वेदान्ती (शंकराचार्य के चेले) कहेंगे, हम धर्म–अधर्म कुछ नहीं मानते, हम तो ब्रह्म का अंश होने के कारण साक्षात् ब्रह्म हैं, यह जगत मिथ्या है, अगर तुम शुद्ध ज्ञानी होना चाहते हो तो जीव भाव छोड़कर अपने को ब्रह्म मान लो, मुक्त हो जाओगे। अगर कोई उनसे पूछे कि तुम साक्षात ब्रह्म हो तो तुममें ब्रह्म के गुण–कर्म–स्वभाव क्यों नहीं हैं? तुम शरीर में बंधे क्यों हो? तो वे उत्तर देते हैं कि देखने वाला हमारा शरीर देखकर भ्रम में पड़ जाता है लेकिन हम तो केवल ब्रह्म को देखते हैं, हमें उसके सिवाय कुछ दिखाई नहीं देता। हम देखने वाले ब्रह्म हैं और ब्रह्म को ब्रह्म देखता है अर्थात ब्रह्म दो नहीं हैं, हम अपने आपको देखते हैं। अब आप विचार कीजिए कि क्या कोई अपने कंधे पर अपने आप चढ़ सकता है? उनका यह कथन पागलपन के सिवाय कुछ नहीं है।

जैनी कहेंगे इस जगत का कर्त्ता कोई अनादि ईश्वर नहीं है। यह जगत जैसा पहले था, वैसा ही बना रहेगा इसलिए हमारा धर्म सबसे अच्छा है।

ईसाई कहेंगे सब मनुष्य पापी हैं और उन्हें ईसा की शरण में आने से ही अपने पापों से मुक्ति मिलेगी। मुसलमान कहेंगे कि हजरत मुहम्मद और कुरानशरीफ को माने बिना किसी को मुक्ति नहीं मिल सकती।

thearyasamaj.org

वैष्णव कहेंगे, हमारे छापे–तिलक देखकर यमराज भी डरता है इसलिए हमारा धर्म अच्छा है। इसी तरह कबीरपंथी, दादूपंथी, नानकपंथी और बल्लभ आदि सभी संप्रदायों का ऐसा ही कहना है।

मुण्डक उपनिषद् में कहा गया है कि सत्य के विज्ञान को जानने के लिए हाथ जोड़कर श्रद्धापूर्वक वेद को जानने वाले, ब्रह्मनिष्ठ, परमात्मा को जानने वाले गुरु के पास जावें, पाखंडियों के पास नहीं। जब जिज्ञासु (जानने की इच्छा रखने वाला) ऐसे विद्वान् के पास जाए तो वह शान्तचित्त, जितेन्द्रिय विद्वान् अपने पास आए हुए जिज्ञासु को यथार्थ ब्रह्मविद्या, परमात्मा के गुण–कर्म–स्वभाव का उपदेश करे और जिस–जिस साधन से वह धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की प्राप्ति और परमात्मा को जान सके उसे वैसी शिक्षा दे।

इससे यह पता चलता है कि ये वेदविद्या विरोधी जितने भी मत हैं, यह सब स्वार्थी लोगों द्वारा अपने स्वार्थ सिद्ध करने के लिए चलाए गए हैं। इनको अपनाकर मनुष्य अपना जन्म व्यर्थ गंवा देता है और मुक्ति पाने का सच्चा प्रयत्न नहीं कर पाता। केवल वेदमत ही ऐसा है जिसके बारे में बहुत से विद्वान एक मत हैं इसलिए यही ग्रहण करने योग्य है।

जिज्ञासु : इसकी परीक्षा कैसे हो?

पाखंडी : आप सबसे ये प्रश्न करें कि सत्य बोलना धर्म है या अधर्म? सबका उत्तर एक ही होगा। सब कहेंगे सत्य बोलना धर्म है, झूठ बोलना अधर्म है। इसी तरह सत्संग करना, पुरुषार्थ करना, सत्य–व्यवहार आदि में धर्म और अविद्या, व्यभिचार, कुसंग, आलस्य, असत्य–व्यवहार, छलकपट और हिंसा के व्यवहार में अधर्म है या नहीं? तो इससे भी सब सहमत होंगे। आप सब लोग एकमत होकर सत्यधर्म की उन्नति और अधर्म को मिटाने का प्रयत्न क्यों नहीं करते? यह पूछने पर सबका उत्तर यही था कि फिर हमें कोई नहीं पूछेगा, जो आनन्द हम कर रहे हैं वह नहीं रहेगा और हमारी जीविका नष्ट हो जायेगी।

जिज्ञासु : जो तुम ऐसा पाखंड चलाकर लोगों को बहकाकर ठगते हो तो तुम्हें राजा दंड देगा और परमेश्वर को क्या उत्तर दोगे, घोर नरक में पड़ोगे। अपराध करना छोड़ क्यों नहीं देते?

पाखंडी : राजा को तो हमने अपना चेला बना लिया है। रही बात परमेश्वर

thearyasamaj.org

की, सो अभी तो आनन्द करने दो। नरक ओर परमेश्वर का दंड जब मिलेगा तब देख लेंगे।

जिज्ञासु : जो तुम पाखंड से व्यर्थ माल ठगते हो, यदि विद्या पढ़कर गृहस्थियों के बच्चों को पढ़ाओ तो तुम्हारा और उन गृहस्थियों का कल्याण हो जायेगा।

पाखंडी : पहले तो बचपन से लेकर मरने तक मिलने वाले सुख को छोड़े। युवावस्था तक स्वयं विद्या पढ़ें और फिर पढ़ाने और उपदेश करने का परिश्रम करें तो भी हमको वे लाखों रुपये नहीं मिलेंगे जो हमें बैठे बिठाए मिल जाते हैं।

जिज्ञासु : इसका परिणाम तो बुद्धिमानों में निंदा रोग और शीघ्र मृत्यु ही होगा, यह क्यों नहीं समझते?

पाखंडी : तू अभी बच्चा है, संसार की बातें नहीं जानता। धन के बिना धर्म, कर्म और मुक्ति कुछ नहीं मिलता। जिसके पास धन नहीं उसे कोई सुख नहीं मिलता। सब लोग जिस भगवान को खोजते हैं वह तो दिखाई नहीं देता, इसलिए सब धन की खोज में ही लगे रहते हैं।

जिज्ञासु : ठीक है, तुम्हारी सच्चाई सामने आ गई है। तुमने यह सारा पाखंड अपने सुख के लिए खड़ा किया है, जिससे जगत का नाश होता है। सत्य उपदेश से संसार को जितना लाभ पहुंचता है, तो ऐसे असत्य उपदेश से उतनी ही हानि भी होती है। अगर धन ही कमाना है तो नौकरी या व्यापार क्यों नहीं कर लेते?

पाखंडी : नौकरी और व्यापार में परिश्रम अधिक होता है और हानि होने का डर भी बना रहता है। हमारे इस कार्य में परिश्रम कम और लाभ अधिक होता है, हानि कभी नहीं होती।

जिज्ञासु : ये लोग तुमको बहुत सा धन किसलिए देते हैं?

पाखंडी : धर्म, स्वर्ग और मुक्ति पाने के लिए।

जिज्ञासु : जब तुम स्वयं ही मुक्त नहीं हो और न ही मुक्ति का साधन जानते हो तो तुम्हारी सेवा करने वालों को क्या मिलेगा?

theaaryasamaj.org

पाखंडी : जितना ये लोग हमें देते हैं, इस लोक में तो नहीं परन्तु परलोक में इन्हें उतना मिल जायेगा।

जिज्ञासु : इन्हें तो इनका दिया हुआ मिल जायेगा, तुम लेने वालों को क्या मिलेगा? नरक या कुछ और?

पाखंडी : हम प्रभु भजन करते हैं, उसका सुख तो हमें मिलेगा।

जिज्ञासु : तुम्हारा भजन तो धन के लिए है। जिस शरीर को पाल रहे हो वह तो यहीं भस्म हो जायेगा। अगर तुम परमात्मा को पाने के लिए भजन करते तो तुम्हारी मैली आत्मा अवश्य पवित्र हो जाती।

पाखंडी : तुमने कैसे जाना कि हमारी आत्मा मैली है?

जिज्ञासु : तुम्हारे चालचलन और व्यवहार से।

पाखंडी : महात्माओं का व्यवहार हाथी के दांत के समान होता है जो खाने के और, दिखाने के और होते हैं। हम भी भीतर से पवित्र हैं और बाहर से ही ये लीलाएं करते हैं।

जिज्ञासु : अगर तुम भीतर से शुद्ध होते तो तुम्हारा बाहरी व्यवहार भी शुद्ध होता। जैसे तुम हो, तुम्हारे चेले भी वैसे ही होंगे।

पाखंडी : मनुष्यों के गुण–कर्म–स्वभाव अलग–अलग होने से वे कभी एक मत नहीं हो सकते।

जिज्ञासु : यदि बचपन से ही सबको सत्यभाषण और धर्म को ग्रहण करने, झूठ बोलने और अधर्म को त्याग करने की शिक्षा दी जाये तो एकमत अवश्य हो सकता है। धर्मात्मा और पापी तो सदा रहते हैं, वे तो रहें लेकिन अगर धर्मात्मा अधिक होंगे तो संसार में सुख बढ़ेगा और यदि पापी अधिक होंगे तो दुःख बढ़ेगा। यदि सभी विद्वान एक सा उपदेश करें तो एकमत होने में कोई देर नहीं लगेगी।

पाखंडी : तुम सतयुग की बातें करते हो, आजकल कलियुग है।

जिज्ञासु : कलियुग नाम तो काल या समय का है। समय न तो धर्म–अधर्म के करने में सहायता करता है और न ही बाधा पहुंचाता है। मनुष्य का सतयुगी या कलियुगी होना संग का दोष है, स्वाभाविक नहीं।

thearyasamaj.org

इस प्रकार खोज करने के बाद जिज्ञासु उसी विद्वान के पास लौट आया, जिसने उसे प्रश्न पूछने भेजा था। तब उस विद्वान ने कहा –विद्वानों, संन्यासियों और सब मनुष्यों का यही काम है कि वे सत्य का प्रचार करें, झूठ का खंडन करें और सत्य उपदेश को लोगों तक पहुंचाकर उनका उपकार करें।

जिज्ञासु : जो ब्रह्मचारी संन्यासी हैं वे तो सच्चे हैं?

विद्वान : सच्चा संन्यासी वही है, जो वेदविद्या जानता हो, घूम–घूम कर उसका प्रचार करता हो और सारे संसार का भला चाहता हो। केवल जटा–जूट बढ़ाकर, ब्रह्मचारी नाम रखकर, भगवे वस्त्र पहनकर, भिक्षा पात्र हाथ में लेकर घूमने वाला, वेदविद्या से रहित ब्रह्मचारी और संन्यासी संसार का कोई भला नहीं करता। ऐसे लोग छोटी आयु में संन्यासी बनकर विद्या से मुंह मोड़ लेते हैं। एकान्त में खा–पीकर पड़े रहते हैं, इनका जीवन व्यर्थ है। इनमें से कुछ लोग भोजन के लिए ही मंडलियां बनाकर रहते हैं और अपने अध्यक्ष या मुखिया की सेवा करते रहते हैं। कई गृहस्थी होकर भी संन्यासी होने का ढोंग रचते हैं, नवीन वेदान्ती और वैष्णव आदि ऐसे ही संन्यासियों की श्रेणी में आते हैं। ऐसे लोग संसार में, भार–रूप ही होते हैं। इन्हें अपने खाने–पीने की चिन्ता रहती है और निन्दा से बहुत डरते हैं। ऐसे लोग संसार में यश पाने, धन बढ़ाने और अपने शिष्यों से पुत्र के समान प्रेम करने, तीन प्रकार की लालसा में फंसे होते हैं, फिर भला ये संन्यासी कैसे हो सकते हैं?

संन्यासी का मुख्य काम है : जगत के कल्याण के लिए रात–दिन पक्षपात रहित होकर सबको वेदमार्ग का उपदेश देने में लगा रहे, गृहस्थी जितना परिश्रम अपने और अपने परिवार के लिए करता है उससे भी अधिक परिश्रम परोपकार के लिए करे। तभी समाज उन्नति कर सकता है। जब तक वर्तमान संन्यासी और भविष्य में होने वाले संन्यासी उन्नतिशील नहीं होते तब तक मनुष्यों की बुद्धि उन्नत नहीं हो सकती। वेदविद्या का पढ़ना–पढ़ाना, आश्रम–व्यवस्था का पालना करना और सत्य–उपदेश देने की दिशा में ठोस कार्य करने से ही देश की उन्नति हो सकती है, अन्यथा नहीं।

कुछ पाखंडी साधु अपने को सिद्ध बताकर लोगों को धन, पुत्र आदि प्राप्त

thearyasamaj.org

होने का वरदान देते हैं। उनके पास लोगों की भीड़ जमा रहती है। जिसके यहां पुत्र उत्पन्न हो जाता है, वह समझता है कि साधु बाबा के आशीर्वाद से पुत्र हुआ है। कोई उनसे पूछे कि जिन मनुष्यों, पशु–पक्षियों ने बाबा जी का आशीर्वाद नहीं लिया उनके यहां सन्तान और पुत्र कैसे पैदा हुए, तो इसका उनके पास कोई उत्तर नहीं होता। जो व्यक्ति दूसरों को जीवित करने की शक्ति रखता है, वह स्वयं कैसे मर जाता है? कई पढ़े–लिखे लोग भी इनसे धोखा खाकर इनके चंगुल में फंस जाते हैं। ऐसे लोग अपने कुछ चेले बनाकर उनके द्वारा प्रचार करवा देते हैं कि अमुक (इस नाम का) सिद्ध महात्मा उनके सब कष्टों को दूर कर देगा। चेले नगर के लोगों से सुने हुए दुःख और उनकी इच्छायें पहले से ही महात्मा को बता देते हैं। महात्मा वही बातें उन्हें बताकर अपनी धाक जमा लेता है। इस तरह उनका धंधा चल निकलता है और वे लोगों से खूब धन लूटकर ऐश्वर्य का जीवन बिताते हैं।

विद्या ही मनुष्य का वह नेत्र है जिससे व्यक्ति ऐसे लोगों की पहचान कर सकता है। जो जैसा है उसे वैसा जानना और मानना ही ज्ञान है। विद्या और ज्ञान ही मनुष्य को सुमार्ग पर चलाकर अधर्म से बचाता है। जो मनुष्य विद्वान्, ज्ञानी, योगी, सत्पुरुषों का संगी, पुरुषार्थी, जितेन्द्रिय और सुशील होता है, वही धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष को प्राप्त होकर इस लोक और परलोक में सदा आनन्द से रहता है।

●●●

thearyasamaj.org

चार्वाक, बौद्ध और जैन आदि नास्तिक मतों का खंडन

12

चार्वाक मत वाले पुनर्जन्म के सिद्धान्त को नहीं मानते। वे जीव को भी शरीर से अलग नहीं मानते हैं। उनका कहना है कि जीवन में अधिक से अधिक सुख भोग लेना चाहिए। मरने पर यह शरीर भस्म हो जाता है इसलिए बाद में सुख भोगा नहीं जा सकता। ये परलोक के झमेले में न पड़कर इसी लोक में आनन्द भोगने के पक्ष में हैं।

चार्वाक : यह शरीर, पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु इन चार भूतों के संयोग से बनता है। जैसे मादक पदार्थ सेवन से नशा उत्पन्न होता है, वैसे ही शरीर के साथ जीवात्मा भी उत्पन्न होता है और शरीर के साथ ही नष्ट हो जाता है। शरीर से अलग जीव नहीं होता फिर पाप–पुण्य का फल किसको मिलेगा। हम प्रत्यक्ष को मानते हैं, प्रत्यक्ष के सामने अनुमान आदि का कोई महत्व नहीं होता। हम लोग सुन्दर स्त्री के आलिंगन से प्राप्त आनंद को पुरुषार्थ का फल मानते हैं।

उत्तर : ये जो पृथ्वी आदि जड़ पदार्थ हैं उनसे चेतन जीवात्मा की उत्पत्ति कभी नहीं हो सकती। मद (नशे) के समान चेतन की उत्पत्ति और विनाश नहीं होता। जैसे माता–पिता के बिना सन्तान उत्पन्न नहीं होती वैसे ही ईश्वर के बिना यह जगत भी नहीं बनता। पदार्थ नष्ट या अदृश्य होते हैं, उनका अभाव नहीं होता। इसी तरह जीव जब शरीर धारण करता है तब प्रकट होता है और जब शरीर छोड़ता है तब अदृश्य हो जाता है, उसका अभाव नहीं होता। वह जीव अपने कर्मों के अनुसार फिर कोई दूसरा शरीर धारण कर लेता है।

याज्ञवल्क्य ने मैत्रेयी से कहा–'मैं मोह से बात नहीं करता, किन्तु आत्मा अविनाशी है, जिसके योग से शरीर चेष्टा (कर्म) करता है। आत्मा के अलग हो जाने पर शरीर कोई चेष्टा नहीं करता'। इससे पता चलता है कि जीवात्मा शरीर से अलग है। देखने वाला, दृश्य नहीं होता और जो आधार है, वह ढांचा नहीं होता, जो कर्त्ता है वह कारण नहीं हो सकता, इसी तरह जो जीव है वह

thearyasamaj.org

शरीर नहीं हो सकता। जैसे कर्त्ता के बिना कर्म नहीं हो सकते, वैसे ही कर्त्ता के बिना यह जगत कैसे प्रकट हो सकता है। मनुष्य जो भी पुरुषार्थ या कर्म करता है, उसका फल उसे सुख–दुःख के रूप में मिलता है। यदि हम सांसारिक सुख बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं तो मुक्ति के सुख की हानि हो जाती है इसलिए यह पुरुषार्थ का फल नहीं है।

चार्वाक : जो दुःख मिश्रित सुख का त्याग करते हैं वे मूर्ख हैं। जैसे मनुष्य धान लेकर उसमें से चावल निकाल लेते हैं, भूसा छोड़ देते हैं वैसे ही इस संसार में बुद्धिमान मनुष्य सुख का ग्रहण और दुःख का त्याग करें। इस लोक में मिलने वाले सुख को छोड़कर, स्वर्ग के सुख की कल्पना करते हुए ज्ञान, यज्ञ, कर्म, उपासना में जीवन बिताने वाले अज्ञानी हैं। जब परलोक है ही नहीं तो उसके सुख की आशा करना मूर्खता ही है। हमारा गुरु बृहस्पति कहता है कि यज्ञ करना, वेद पढ़ना, भस्म लगाना आदि कार्य बुद्धि और पुरुषार्थ–रहित लोगों ने अपनी जीविका कमाने के लिए बता दिए हैं। जैसे कांटा लगने से पीड़ा होती है वैसे ही इन कामों से देह का नाश ही होता है, मोक्ष नहीं मिलता।

उत्तर : विषयों से उत्पन्न सुखों को पुरुषार्थ का फल मानकर उनसे उत्पन्न दुःखों को दूर करने में लगे रहने को स्वर्ग मान लेना मूर्खता है। यज्ञों से वर्षा, वायु और जल की शुद्धि द्वारा निरोगता होती है। स्वस्थ शरीर से ही धर्म–अर्थ–काम–मोक्ष की सिद्धि होती है। उसको न जानकर ईश्वर, वेद और वेदों के धर्म की निन्दा करना धूर्तों का काम है।

जैसे ऐश्वर्यशाली प्रजापालक राजा को श्रेष्ठ मानें तो ठीक है लेकिन यदि पापी और अन्यायी राजा को परमेश्वर के समान मानें तो इससे बढ़कर मूर्खता क्या होगी। यदि शरीर छोड़ने को ही मोक्ष मान लिया जाये तो फिर मनुष्य और पशु में भेद ही क्या रहा क्योंकि शरीर तो वे भी छोड़ते हैं? इसलिए शरीर छोड़ना मोक्ष नहीं है, मोक्ष पाने के लिए तो प्रयत्न करना ही पड़ता है।

प्रश्न : जगत की उत्पत्ति स्वभाव से होती है। अपने स्वाभाविक गुणों के कारण पदार्थ संयुक्त हो जाते हैं। जगत का कर्त्ता कोई नहीं है?

उत्तर : चेतन परमेश्वर के संयुक्त किए बिना जड़ पदार्थ स्वयं स्वभाव से नियम–पूर्वक मिलकर कोई वस्तु नहीं बना सकते, इसलिए सृष्टि का कर्त्ता अवश्य होना चाहिए। अगर स्वभाव से ही संयुक्त होकर पदार्थ बनते तब तो दूसरे सूर्य, चांद, पृथ्वी भी अब तक बन जानी चाहिए थी।

thearyasamaj.org

प्रश्न : न कोई स्वर्ग है न नरक, न कोई परलोक है न उसमें जाने वाला जीवात्मा और न ही वर्ण–व्यवस्था का कोई फल है?

उत्तर : सुखभोग का नाम स्वर्ग और दुःखभोग का नाम नरक है। इस जन्म में भी सुख–दुःख का भोगने वाला जीव ही है वैसे ही परलोक में भी जीव ही सुख–दुःख को भोगता है। वर्ण–आश्रम व्यवस्था मनुष्य के जीवन को नियम में रखकर चलाने में सहायक है, सत्यभाषण और परोपकारादि कर्म कभी निष्फल नहीं होते।

प्रश्न : यज्ञों में बलि, श्राद्ध–तर्पण और मरे हुए के लिए दान करके उसका फल स्वर्ग में पहुंचाना ढोंग है?

उत्तर : वेद में पशु बलि, श्राद्ध–तर्पण आदि का विधान नहीं है। यज्ञों में पशु बलि नहीं दी जानी चाहिए। यज्ञ में केवल सुगन्धित पदार्थ ही होम किए जाते हैं, दुर्गन्ध फैलाने वाले नहीं। जीते–जी माता–पिता और बड़ों की श्रद्धा से सेवा करना और उन्हें उनके उपभोग की वस्तुएं देकर तृप्त करना ही श्राद्ध और तर्पण है, मरे हुए के नाम से देना पौराणिकों की चलाई हुई प्रथा है।

प्रश्न : जीवन में मौजमस्ती के लिए साधन न हों तो ऋण लेकर भी आनन्द ले लेना चाहिए क्योंकि मरने के बाद ऋण तो लौटाना ही नहीं पड़ेगा?

उत्तर : शरीर में जो जीव है वह शरीर के साथ भस्म नहीं होता। इसलिए उसे इस जन्म में किए पापों का दुःखरूप फल दूसरे जन्म में अवश्य भोगना पड़ता है।

प्रश्न : मृत्यु के समय जीव शरीर से निकलकर परलोक को जाता है यह बात सत्य नहीं है। यदि ऐसा होता तो जीव अपने कुटुम्ब के मोह में फिर घर लौट आता?

उत्तर : देह से निकलकर जीव जब दूसरे स्थान और शरीर में चला जाता है तो उसे अपने पहले जन्म के संबंधों का ज्ञान नहीं रहता इसलिए वह लौटकर नहीं आता।

प्रश्न : मृतक क्रिया आदि क्या ब्राह्मणों ने अपनी जीविका के लिए नहीं बनाई है?

उत्तर : हां, इसीलिए वेद में प्रेतकर्म का कोई विधान नहीं है। हम इसका खंडन करते हैं।

प्रश्न : वेद भांड, धूर्त और राक्षसों द्वारा बनाए गए हैं, इसीलिए इनमें धूर्ततायुक्त वचन हैं?

उत्तर : जिन लोगों ने वेद पढ़े–सुनें ही नहीं वे ऐसा कहते हैं। इसलिए ही चार्वाक, बौद्ध और जैन धर्म वाले वेदों की निन्दा करते हैं क्योंकि उन्होंने मूल वेद तो पढ़े ही नहीं, न जाने किन पुस्तकों के आधार पर वे अविद्या के अंधकार में जा फंसे हैं।

प्रश्न : घोडे से स्त्री का समागम कराना और कन्या से हंसी–ठट्‌ठा करना धूर्तो का काम नहीं है क्या?

उत्तर : ये सब बातें वाममार्गियों द्वारा कही गई हैं। किसी भी सभ्य समाज में इसे ठीक नहीं माना जा सकता। वेद ज्ञान को छोड़ देने से ही इतना पतन हुआ है। वेदों को पढ़े–बिना इन सब बातों को वेदों के साथ जोड़कर उनकी निन्दा करना उचित नहीं है।

प्रश्न : वेद में मांस खाना उचित माना गया है?

उत्तर : वेद में मांस खाने का निषेध है, अज्ञानी लोगों ने अपनी इच्छानुसार अर्थ बताकर लोगों को पथभ्रष्ट कर दिया है। वेद हिंसा का विरोध करता है फिर मांस खाने को उचित कैसे मान सकता है।

वाममार्गियों ने अपने स्वार्थ के लिए जितने भी कुकर्म किए उन सबको वेदों का नाम लेकर उचित बताकर समाज को बहुत हानि पहुंचाई है। समाज में पाई जाने वाली कुरीतियों को देखकर ही चार्वाक, बौद्ध और जैनधर्म वालों ने ईश्वर और वेद की निन्दा करके नास्तिक मत फैला दिया। ये तीनों ईश्वर और वेद को नहीं मानते हैं। चार्वाक शरीर के साथ जीव का उत्पन्न होना और उसके नाश के साथ जीव का नाश होना मानते हैं। इसलिए ये परलोक ओर पुर्नजन्म को नहीं मानते। बौद्ध और जैनधर्म वाले परलोक, पुर्नजन्म और मुक्ति को तो मानते हैं परन्तु वेद, ईश्वर की निंदा, दूसरे धर्म से द्वेष, जगत का कर्त्ता ईश्वर को न मानना आदि बातों में तीनों एकमत हैं।

बौद्धमत

प्रश्न : बौद्धमत वाले कार्य को देखकर कारण का अनुमान और कारण को देखकर कार्य का अनुमान होना मानते हैं क्योंकि कारण और कार्य बिना प्राणियों के सारे व्यवहार पूरे नहीं हो सकते। अनुमान को आधार मानकर बौद्धों के चार भेद हैं–

(1) **माध्यमिक** : इनका मानना है कि जितने पदार्थ हैं वे शून्य से उत्पन्न होकर शून्य में ही विलीन हो जाते हैं। थोड़े समय के लिए ही दिखाई देने के कारण क्षणिक हैं, जो इस क्षण है वह दूसरे क्षण नहीं रहता।

(2) **योगाचार** : बाहर से जो पदार्थ हमें जैसा दिखाई पड़ता है उसका ज्ञान हमारी आत्मा के भीतर होता है। जो वस्तु प्राप्त होती है उससे कोई संतुष्ट नहीं होता और प्राप्त करने की इच्छा ही दुःखों का कारण है।

(3) **सौत्रान्तिक** : किसी एक प्रत्यक्ष वस्तु को देखकर शेष में अनुमान लगा लेना। जैसे गाय के चिन्ह से गाय और घोड़े के चिन्ह से घोड़े की पहचान हो जाना। लक्ष्य में लक्षण सदा साथ रहते हैं।

(4) **वैभाषिक** : इनका मानना है कि पदार्थ बाहर प्रत्यक्ष होता है भीतर नहीं। एक ही समय में हर एक प्राणी अपनी–अपनी बुद्धि के अनुसार कार्य करता है जैसे सूर्यास्त होने पर कामी व्यक्ति व्यभिचार करता है और विद्वान श्रेष्ठ कर्म करता है ये भी शून्य को ही एक पदार्थ मानते हैं।

उत्तर : अगर सब शून्य होता तो शून्य को कोई न जान सकता, इसलिए सब शून्य नहीं है। शून्य का ज्ञान और उस ज्ञान को जानने वाला दो पदार्थ सिद्ध होते हैं। योगाचार वाले कहते हैं कि बाहर शून्य होता है, वस्तु का ज्ञान भीतर होता है। अगर बाहर शून्य है तो पदार्थ हृदय या आत्मा में होना चाहिए लेकिन उसके लिए हृदय में स्थान कहां है? इससे सिद्ध होता है कि वस्तु बाहर होती है उसका ज्ञान आत्मा में होता है। सौत्रान्तिक मानते हैं कि कोई पदार्थ पूरी तरह बाहर नहीं होता उसके लक्षणों से लक्ष्य का अनुमान हो जाता है। तब तो वह आप स्वयं भी और उनका वचन भी अनुमान से ही होना चाहिए, प्रत्यक्ष नहीं। वैभाषिक बाहर पदार्थ को प्रत्यक्ष मानते हैं, भीतर नहीं। वे सब पदार्थों को क्षणिक मानते हैं। उनका यह विचार भी ठीक नहीं क्योंकि जहां ज्ञाता और ज्ञान होता है वहीं प्रत्यक्ष होता है यद्यपि प्रत्यक्ष का विषय बाहर होता है परन्तु जैसा वह पदार्थ होता है उसका वैसा ही ज्ञान आत्मा को होता है, अगर पदार्थ क्षणिक होता तो उसका ज्ञान भी क्षणिक ही होना चाहिए लेकिन पहले देखी हुई वस्तुएं और सुनी हुई बातें भी याद रहती हैं इसलिए इनका क्षणिक होने का सिद्धान्त ठीक नहीं है। जैसे रात के बाद दिन और दिन के

thearyasamaj.org

बाद रात आती है वैसे ही सुख होने से दुःख और दुःख होने से सुख का अनुभव होता है। इसलिए इस जगत को दुःखों का घर मानना ठीक नहीं।

बौद्ध और जैनमत वाले सब वासनाओं की निवृत्ति (छुटकारा) को ही मुक्ति मानते हैं और अपने शिष्यों को योग और आचार का उपदेश देते हैं। ये अपने तीर्थंकरों के वचनों को प्रमाण मानते हैं। इनका मानना है कि अनादि बुद्धि में वासना होने से ये अनेक प्रकार की दिखाई देती हैं और चित्त के साथ बुद्धि की एकता को पांच प्रकार का मानते हैं।

(1) इन्द्रियों से जब विषयों को ग्रहण किया जाये तो रूप स्कंध (2) पदार्थ की उत्पत्ति और व्यवहार को जानना विज्ञान स्कंध (3) रूप स्कंध और विज्ञान स्कंध से उत्पन्न सुख–दुःख आदि के अनुभव को वेदना स्कंध (4) नामों से पदार्थ के संबंध को संज्ञास्कंध (5) वेदना स्कंध से राग–द्वेष, क्लेश, भूख–प्यास, मद, प्रमाद, अभिमान, धर्म, अधर्म रूप व्यवहार को संस्कार स्कंध कहते हैं।

प्रश्न : बौद्धों का कहना है कि ज्ञानी, विरक्त, जीवन मुक्त बुद्ध आदि तीर्थंकरों के बड़े गंभीर और गुप्त भेदों को प्रकट करने वाले उपदेशों को मानना चाहिए ये द्वादशा–यतन पूजा (5 ज्ञानेन्द्रियां, 5 कर्मेन्द्रियां, मन और बुद्धि को आनंद में प्रवृत रखना) को ही मोक्ष का साधन मानते हैं। क्या यह ठीक है?

उत्तर : यदि यह संसार दुःखों का घर होता तो कोई भी इसमें रहना न चाहता। सत्य तो यह है कि संसार में सुख भी है और दुःख भी। बौद्ध लोग भी तो खान–पान से शरीर का पोषण और बीमार होने पर औषधि और परहेज आदि से शरीर की रक्षा करने में सुख मानते हैं। यदि वे यह कहें कि वे इसको दुःख मानते हैं तो इसे ठीक नहीं माना जा सकता क्योंकि कोई भी जीव जानबूझ कर दुःख नहीं पाना चाहता, बल्कि दुःख से छूटने का ही प्रयत्न करता है। संसार में धर्म–कर्म, विद्या, सत्संग आदि श्रेष्ठ कर्म ही सुख देने वाले हैं। इनके पांच स्कंध भी पूरी तरह अधूरे हैं क्योंकि यदि इन पर विचार किया जाए तो इनके कई भेद हो सकते हैं। ये नाथों के नाथ परमात्मा को न मानकर अपने तीर्थंकरों को उपदेशक और लोकनाथ मानते हैं, भला कोई इनसे पूछे कि इनके तीर्थंकरों ने ज्ञान किससे प्राप्त किया। कोई भी कार्य कारण के बिना नहीं हो सकता इसलिए इन तीर्थंकरों को बिना किसी के दिए स्वयं तो ज्ञान प्राप्त हो नहीं सकता। यदि बिना पढ़े–पढ़ाये, सुने–सुनाये और सत्संग के बिना ज्ञान

thearyasamaj.org

प्राप्त हो जाता तब तो सभी ज्ञानी बन जाते और कोई अज्ञानी नहीं रहता इसलिए उनका यह कथन बिलकुल निराधार है। जहां तक शून्य रूप अद्वैत के उपदेश का संबंध है, तो विद्यमान वस्तु सूक्ष्म कारण–रूप तो हो सकती है, शून्य कभी नहीं हो सकती। ये द्वादशायतन पूजा को मोक्ष का साधन मानते हैं। इनके अनुसार 5 ज्ञानेन्द्रियां, 5 कर्मेन्द्रियों, मन और बुद्धि ये 12 धर्म के स्थान हैं। ये इन्द्रियों की तो पूजा करते हैं परन्तु जीवात्मा की नहीं करते। जब इन्द्रियों और मन की पूजा ही मोक्ष देने वाली है तो फिर इनमें और विषयासक्त लोगों में कोई भेद नहीं रह जाता। जहां विषयसुख होते हैं वहां मुक्ति नहीं रहती। अपने इन सिद्धान्तों से इन्होंने अविद्या को ही बढ़ाया है। वेद और ईश्वर का विरोध करके मुक्ति पाना तो इस प्रकार ही है जैसे कोई आंख बन्द करके रत्न ढूंढना चाहता हो।

प्रश्न : विवेकविलास ग्रंथ में बौद्ध धर्म की मुख्य बातें इस प्रकार बताई गई हैं–

(1) बौद्धों के पूजनीय देव सुगतबुद्ध देव, जगत क्षणभंगुर, आर्य स्त्री–पुरुष और पदार्थों के नाम ये चार बातें बौद्धों को मानने योग्य हैं।

(2) ये संसार दुःखों का घर जानकर ही उन्नति होती है।

(3) संसार दुःखों का घर है इसे पंच स्कंध से जानना।

(4) द्वादशायतन पूजा।

(5) मनुष्यों के हृदय में जो रागद्वेष आदि होते हैं, आत्मा और आत्मा के स्वभाव से मिलकर उनका उदय हो जाता है।

(6) सब संसार क्षणिक है, जब वासना स्थिर हो जाती है तब वही शून्य रूप हो जाना मोक्ष है।

(7) प्रत्यक्ष और अनुमान दो प्रमाण मानते हैं और इनमें चार प्रकार के भेद हैं।

(8) माध्यमिक केवल अपने में ही पदार्थों का ज्ञान मानता है, पदार्थो को नहीं मानता, और योगाचार विज्ञान–बुद्धि को मानता है।

(9) वैभाषिक ज्ञान में जो अर्थ है उसको विद्यमान मानते हैं, जो ज्ञान में नहीं है उसका होना नहीं मानते, सौत्रान्तिक भीतर को प्रत्यक्ष पदार्थ मानते हैं, बाहर नहीं।

(10) राग आदि ज्ञान के प्रवाह की वासना के नाश से उत्पन्न हुई मुक्ति चारों बौद्धों की है।

(11) मृगचर्म, कमंडल, वल्कलवस्त्र धारण करना, सिर मुंडाना, प्रातः 9 बजे से पूर्व भोजन करना, अकेला न रहना, लाल रंग का वस्त्र धारण करना बौद्ध साधुओं का यह वेश है। क्या ये सब बातें ठीक हैं?

उत्तर : यदि सुगत देव बुद्ध ही बौद्धों के गुरु हैं तो उनका गुरु भी तो कोई होना चाहिए। यदि यह जगत क्षण–भंगुर है और कोई पदार्थ नहीं रहता तो फिर उसकी याद भी नहीं होनी चाहिए और इनकी मुक्ति भी क्षणभंगुर ही होनी चाहिए। यदि पदार्थ ज्ञान से युक्त होते तब तो जड़ पदार्थ में भी ज्ञान होना चाहिए इसलिए ज्ञान में अर्थ का प्रतिबिंब सा रहता है। अगर भीतर के ज्ञान में पदार्थ होता तब पदार्थ बाहर नहीं होना चाहिए। लेकिन जो बाहर दिखाई देता है वह झूठ नहीं हो सकता। अगर अपने आकार के साथ पदार्थ का ज्ञान होता है तब तो वह पदार्थ दिखाई भी देना चाहिए जब तक जानने योग्य पदार्थ बाहर न हो तब तक उसका ज्ञान भीतर कैसे हो सकता है। अगर वासना का नाश ही मुक्ति है तब तो गहरी नींद की अवस्था में भी मुक्ति माननी चाहिए। बाहरी आडंबरों का मुक्ति की प्राप्ति से कोई संबंध नहीं होता।

प्रश्न : बौद्ध और जैन लोग नवीनपन से क्रमशः चार और छः द्रव्य मानते हैं क्या यह ठीक है?

उत्तर : बौद्धों ने समय–समय पर नवीनपन से जो चार द्रव्य बतायें हैं, वे गलत हैं क्योंकि आकाश, काल, जीव और परमाणु ये अनादि होने के कारण नष्ट ही नहीं होते तो फिर नए पुराने कैसे हो सकते हैं। जैनमत वालों ने धर्म और अधर्म ये दो द्रव्य और जोड़ दिए हैं, लेकिन धर्म और अधर्म तो गुण हैं, द्रव्य नहीं। वास्तव में द्रव्य नौं हैं जो वैशेषिक दर्शन में बताये गए हैंः– पृथ्वी, आकाश, जल, अग्नि, वायु, काल, दिशा, आत्मा और मन ये ही ठीक हैं। एक जीव को चेतन मानकर ईश्वर को न मानना ये बौद्ध और जैन धर्म वालों की अज्ञानता को प्रकट करता है।

जैन धर्म

महावीर के समर्थक जैन कहलाते हैं। बौद्ध और जैन धर्म में थोड़ा सा ही अन्तर है, दोनों धर्म लगभग एक से हैं। जैन लोग 'चित्त और अचित्त अर्थात

चेतन और जड़ या जीव और प्रकृति केवल दो ही तत्व मानते हैं, परमात्मा या ब्रह्म का होना नहीं मानते। इनके अनुसार इस जगत में केवल दो ही पदार्थ हैं एक चेतन जीव और दूसरा जड़ प्रकृति। इनका कहना है कि जो जीव अपनी बुद्धि से अर्थात् विवेक से ग्रहण करने योग्य को ग्रहण कर लेते हैं वे विवेकी होते हैं।

प्रश्न : जैनमत वालों का मानना है कि जीव ही मुक्ति पाकर परमेश्वर हो जाता है। इसलिए ये अपने तीर्थंकरों को मुक्ति प्राप्त परमेश्वर मानते हैं, अनादि ब्रह्म को नहीं। रागादि दोषों से रहित, तीनों लोकों में पूज्य, पदार्थों का यथावत ज्ञान देने वाला, सर्वज्ञ 'अर्हन–देव' अर्थात जैन महावीर ही परमेश्वर है। ईश्वर प्रत्यक्ष नहीं है, प्रत्यक्ष के बिना अनुमान, प्रत्यक्ष और अनुमान के बिना शब्द प्रमाण (नित्य, सर्वज्ञ, अनादि शब्दों से ईश्वर का होना सिद्ध करना), तथा प्रत्यक्ष, अनुमान और शब्द प्रमाण के बिना बाकी प्रमाण भी नहीं हो सकते। इस तरह आठों प्रमाणों के बिना ईश्वर का होना सिद्ध नहीं हो सकता। ईश्वर के उपदेशों को सुने बिना उनका अनुवाद नहीं हो सकता अर्थात ये ईश्वर और वेद दोनों को नहीं मानते?

उत्तर : यदि अनादि ईश्वर नहीं है तो 'अर्हनदेव' के माता–पिता को किसने बनाया और सन्तान उत्पन्न करने की शक्ति किसने दी। जिन जड़ पदार्थों से यह शरीर बना है, वे स्वयं तो इस सुन्दर शरीर की रचना कर नहीं सकते। जो जीव पहले शरीरधारी ओर रागद्वेष वाला है और बाद में रागद्वेष से रहित होकर मुक्ति पाता है वह कभी ईश्वर नहीं हो सकता और उसकी मुक्ति भी तो अनित्य ही होगी। शरीरधारी जीव की शक्तियां सीमित और अल्प होती हैं। इसलिए जीव सर्वव्यापक, सर्वशक्तिमान और सर्वज्ञ नहीं हो सकता। उसका ज्ञान सीमित होने के कारण उसे सब विद्याओं का यथार्थ ज्ञान हो ही नहीं सकता, इसलिए तुम्हारे तीर्थंकर परमेश्वर नहीं हो सकते।

जैसे हम आंख से वस्तु को देखते हैं, कान से शब्द सुनते हैं, वैसे ही शुद्ध अंतःकरण से विद्या और योग के अभ्यास द्वारा हम उस पवित्रात्मा परमात्मा को प्रत्यक्ष देख सकते हैं। जैसे भूमि के रूप आदि गुणों को देख–जान के उन्हीं गुणों से जुड़ी हुई पृथ्वी प्रत्यक्ष होती है। वैसे ही इस सृष्टि की अद्भुत रचना को देखकर परमात्मा प्रत्यक्ष होता है। कोई बुरा कर्म करते समय जो

भय, शंका और लज्जा उत्पन्न होती है, वह उस परमात्मा की ओर से ही होती है। क्या अब भी प्रत्यक्ष और अनुमान होने में कोई संदेह रह जाता है? प्रत्यक्ष और अनुमान के सिद्ध हो जाने से नित्य अनादि सर्वज्ञ आदि शब्द–प्रमाण और बाकी सभी प्रमाण अपने आप सिद्ध हो जाते हैं। ईश्वर और उसके गुण–कर्म–स्वभाव नित्य हैं। इसलिए उसके गुणों की प्रशंसा, स्तुति करना भी यथार्थ और उचित है। कर्त्ता के बिना कोई कर्म नहीं होता, फिर सृष्टि की उत्पत्ति, स्थिति ओर प्रलय जैसे महान कार्य ईश्वर के बिना कौन कर सकता है। इस पर भी जो ईश्वर को नहीं मानता वह अज्ञानी ही होगा।

प्रश्न : वेद में सर्वज्ञ, अनादि आदि शब्दों का प्रयोग करके वेद के उदाहरण देकर इसे सत्य सिद्ध करना उचित नहीं है। इस तरह इसमें एक दूसरे पर आश्रित होने का दोष आ जाता है। इसलिए ईश्वर को अनादि और सर्वज्ञ सिद्ध करने के लिए कोई तीसरा प्रमाण होना चाहिए, वेद वचन नहीं?

उत्तर : हम लोग परमेश्वर के गुणकर्म स्वभाव को अनादि मानते हैं इसलिए परमेश्वर और वेदवचन को एक–दूसरे पर आश्रित होने का दोष नहीं आता। जैसे कारण से कार्य का ज्ञान और कार्य से कारण का ज्ञान हो जाता है, वैसे ही परमेश्वर से वेदज्ञान और वेदज्ञान से परमेश्वर का नित्य होना सिद्ध हो जाता है। तुम तीर्थंकरों को परमेश्वर मानते हो, जो कभी नहीं हो सकता। क्योंकि बिना माता–पिता के शरीर नहीं होता और यदि उन्हें शरीर न मिलता तो वे तप, ज्ञान और मुक्ति कैसे पाते? इसलिए इस संसार में संयोग–वियोग के क्रम को अनादि काल से चलाने वाले परमात्मा को मानो।

आज तक कोई भी विद्वान शरीर आदि की रचना को पूरी तरह से नहीं जान पाया है। सिद्ध जीव जब सुषुप्ति दशा में जाता है तब उसे कुछ भी ज्ञान नहीं रहता, जब जीव को दुःख प्राप्त होता है, तो उसका ज्ञान भी कम हो जाता है।

कोई तुमसे यह पूछे कि तुम्हारे तीर्थंकर तो अपने माता–पिता से उत्पन्न हुए, तो उनके माता–पिता किससे उत्पन्न हुए? उनका उत्पन्न करने वाला भी तो कोई होगा, तो क्या उत्तर दोगे? ऐसे सीमित ज्ञान और सामर्थ्य वाले व्यक्ति परमेश्वर हो ही नहीं सकते। अतः तीर्थंकरों को परमेश्वर मानना उचित नहीं।

thearyasamaj.org

नोट : चार्वाक, बौद्ध और जैन तीनों मतों वाले ईश्वर और वेद–विरुद्ध होने के कारण नास्तिक हैं। इसलिए उनके अज्ञानपूर्ण विचारों का खंडन 'आस्तिक–नास्तिक संवाद के माध्यम से किया गया है।

नास्तिक और आस्तिक संवाद

नास्तिक : ईश्वर की इच्छा से कुछ नहीं होता है, जो कुछ होता है वह कर्म से होता है?

आस्तिक : यदि सब कुछ कर्म से होता है, तो कर्म किससे होता है। यदि तुम यह मानते हो कि अनादि काल से कर्म स्वभाव से ही होते हैं, तब तो कर्म कभी छूट ही नहीं सकते और मुक्ति मिल नहीं सकती। यदि अनादि का अंत होता है तो सब कर्म बिना प्रयत्न के ही छूट जाते होंगे। तब तुम्हारे तीर्थंकरों को तप–ज्ञान से मुक्ति पाने की क्या आवश्यकता थी? अब यह बताओ यदि ईश्वर न हो तो जीव को पाप–पुण्य का फल कौन देगा? कोई भी जीव अपने पाप–कर्मों का फल अपनी इच्छा से भोगना नहीं चाहेगा, इससे तो कोई नियम व्यवस्था रहेगी ही नहीं। इसीलिए ईश्वर ही सब जीवों को उनके कर्मों के अनुसार पाप–पुण्य के फल देकर सृष्टि के नियम में रखकर उसी प्रकार चलाता है जैसे राजा चोरों को दंड देकर राज्य व्यवस्था को चलाता है।

नास्तिक : ईश्वर कर्म नहीं करता, यदि वह कर्म करता है तो उसे भी अपने कर्मों का फल भोगना पड़ता। इसलिए जैसे हम मुक्ति प्राप्त जीवों को अक्रिय मानते हैं वैसे ही तुम ईश्वर को अक्रिय मानो।

आस्तिक : ईश्वर अक्रिय नहीं, सक्रिय है। वह चेतन और कर्त्ता है। इसलिए कर्म से पृथक नहीं हो सकता। तुम्हारे तीर्थंकरों की तरह ईश्वर किसी निमित्त से नहीं बना है, इसीलिए वह नित्य और बंधनमुक्त है। वह अपने चेतन स्वभाव को कभी नहीं छोड़ सकता, इसलिए इस अनादि स्वतःसिद्ध ईश्वर को मानना उचित है। ईश्वर यदि

सक्रिय न होता तो यह जगत कैसे बनता? ईश्वर स्वयं नियम में रहता है इसलिए वह कभी कोई ऐसा कर्म नहीं करता जिससे उसकी न्याय व्यवस्था में दोष आ जाये। अगर तुम मुक्ति में क्रिया का न होना मानते हो तब तो मुक्त जीव जड़ हो जायेंगे और फिर मुक्ति का सुख जीव कैसे भोगेगा? ईश्वर और जीव दोनों चेतन होने के कारण स्वभाव से सक्रिय ही हैं।

नास्तिक : ईश्वर व्यापक नहीं है, अगर ईश्वर व्यापक होता तो सभी वस्तुएं चेतन होतीं। अगर ईश्वर सबमें व्याप्त होता तो कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र अर्थात ऊंचा–नीचा न होता।

आस्तिक : व्यापक और व्याप्य एक नहीं होता। व्याप्य एक स्थान पर होता है, व्यापक सब जगह होता है। जैसे आकाश व्यापक है, पृथ्वी व्याप्य है, अर्थात आकाश और पृथ्वी एक नहीं हैं। वैसे ही ईश्वर और जगत एक नहीं हैं। परमेश्वर सब जड़ चेतन में व्यापक है लेकिन जीव चेतन होते हुए भी अपने शरीर में ही रहता है। ईश्वर तो सबमें समान रूप से व्यापक है परन्तु मनुष्य अपनी विद्या, सत्यभाषण, सुशील स्वभाव आदि के कारण ऊंचे–नीचे होते हैं। ध्यान रहे वेद में जाति प्रथा कर्म से मानी गई है, जन्म से नहीं।

नास्तिक :

ईश्वर ने जगत का स्वामी बनना और जगत का ऐश्वर्य किसलिए स्वीकार किया?

आस्तिक : यह जगत स्वयं ईश्वर ने रचा है और जगत का समस्त ऐश्वर्य अनादि काल से ईश्वर में ही है, वह उससे अलग है ही नहीं, तो ग्रहण क्या करेगा? कोई अपने को अपने से अलग कैसे कर सकता है? ग्रहण करना या त्याग करना जीवों का कार्य है, ईश्वर का नहीं।

नास्तिक : अगर ईश्वर की रचना से ही सृष्टि बनती तो माता–पिता का क्या काम है?

आस्तिक : ईश्वरीय सृष्टि का कर्त्ता ईश्वर है, जीवों की सृष्टि का नहीं। ईश्वर ने एक बार सृष्टि के जिन जीवों का निर्माण किया, उन्हें

thearyasamaj.org

अपने–अपने वंश की वृद्धि या उत्पत्ति का कार्य सौंप दिया। इसलिए जीवों के कर्त्तव्य जीव ही करते हैं ईश्वर नहीं। जैसे ईश्वर ने अन्न–फल और औषधियां आदि जो एक बार बना दीं उन्हें भविष्य में समय पर उगाने और उन्हें भोजन में प्रयोग करने योग्य बनाने का कार्य जीव पर छोड़ दिया है।

नास्तिक : यदि परमात्मा शाश्वत्, अनादि सच्चिदानंद और ज्ञान स्वरूप है तो वह साधारण जीवों की भांति जगत के झमेलों और दुःख में क्यों पड़ा है?

आस्तिक : परमात्मा सुख–दुःख, हानि–लाभ से ऊपर हैं तभी तो उसे निर्लेप कहा जाता है। जगत बनाने की सामर्थ्य जीव में नहीं और न ही जड़ में अपने आप कुछ बनाने की सामर्थ्य होती है, इसलिए परमात्मा ही जगत को बनाता है और आनन्द में रहता है। सुख–दुःख का अनुभव जीव को होता है ईश्वर को नहीं। जैसे परमात्मा परमाणुओं से जगत बनाता है वैसे ही माता–पिता रूपी निमित्त कारण से जीव का उत्पत्ति का नियम भी उसी ने बनाया है।

नास्तिक : ईश्वर मुक्ति रूप सुख को छोड़कर जगत की उत्पत्ति, धारण और प्रलय के बखेड़े में क्यों पड़ा है?

आस्तिक : ईश्वर तुम्हारे तीर्थंकरों के समान एक शरीर में रहकर बंधन मुक्त होने वाला जीव नहीं है, वह अनन्त स्वरूप गुण–कर्म स्वभाव युक्त परमात्मा है। वह इस स्थूल जगत को बनाता, धारण करता और प्रलय करता हुआ भी बंधन में नहीं पड़ता। क्योंकि जब बंधन होता है तभी मोक्ष होता है। ईश्वर जब कभी बंधन में था ही नहीं तो मुक्ति किससे होगी? ईश्वर सदा मुक्त कहाता है वह तुम्हारे तीर्थंकरों की तरह न तो बंधन में पड़ता है और न मुक्त होता है।

नास्तिक : जीव कर्मों का फल ऐसे भोगता है जैसे भांग पीने वाला उसका नशा भोगता है, फिर कर्मों का फल देने के लिए ईश्वर की क्या आवश्यकता है?

आस्तिक : जैसे कोई चोर डाकू स्वयं फांसी पर चढ़ना या जेल जाना

नहीं चाहेगा उसे दंड देने का काम राजा ही करता है, वैसे ही कोई भी जीव अपने बुरे कर्मों का फल भोगना नहीं चाहेगा तब उसे उसके कर्मों के अनुसार दंड देने के लिए ईश्वर और उसकी न्याय–व्यवस्था का होना आवश्यक है।

नास्तिक : जगत का कर्त्ता कोई नहीं, जगत स्वयं बना है?

आस्तिक : बिना कर्त्ता के कोई कर्म और कर्म के बिना कोई कार्य जगत में होता हुआ दिखाई नहीं देता। क्या गेहूं खेत में स्वयं उगकर, साफ होकर, पिसकर और रोटी बनकर आपके पेट में चला जाता है या कपास से स्वयं सूत और कपड़ा बनकर तुम्हारे धोती, अंगरखा आदि बन जाते हैं। यदि ये छोटे–छोटे काम कर्त्ता के बिना नहीं होते तो ईश्वर के बिना जगत के नाना प्रकार के पदार्थ और जगत कैसे बन सकता है।

नास्तिक : ईश्वर विरक्त है या मोहित? जो विरक्त है तो जगत बनाने के झंझट में क्यों पड़ा और अगर मोहित है तो जगत को बनाने में समर्थ नहीं हो सकता?

आस्तिक : परमेश्वर सर्वव्यापक है, वह सबमें समान रूप से व्याप्त है इसलिए वह न किसी को ग्रहण करता है और न छोड़ता है। मोह उत्तम या अप्राप्त वस्तु से होता है, ईश्वर सबसे उत्तम है और कोई वस्तु ऐसी नहीं जो उसे प्राप्त न हो, इसलिए उसे मोह नहीं होता। मोह और वैराग्य जीव को होता है, ईश्वर को नहीं।

नास्तिक : जो ईश्वर को जगत का कर्त्ता और जीवों के कर्मों का फलदाता मानोगे, तो ईश्वर प्रपंची होकर दुःखी हो जायेगा?

आस्तिक : ईश्वर अनेक प्रकार के कर्मों का कर्त्ता और प्राणियों के कर्मफलों का दाता, धार्मिक न्यायधीश विद्वान है जो कर्मों में नहीं फंसता और न ही प्रपंची होता है। वह अनन्त सामर्थ्य वाला होने के कारण दुःखी नहीं होता। तुम अपनी अविद्या के कारण परमेश्वर को तीर्थंकरों के समान मानकर भ्रम में पड़े हो। यदि अविद्या से छूटना चाहते हो तो वेद आदि सत्य शास्त्रों का आश्रय लो।

नास्तिक : प्रकरण रत्नाकर (भाग 2) में संसार को अनादि और अनन्त

बताया गया है, जो न कभी उत्पन्न होता है, न ही कभी इसका विनाश होता है अर्थात ये जगत किसी का बनाया हुआ नहीं है?

आस्तिक : जो संयोग से उत्पन्न होता है वह अनादि और अनन्त हो ही नहीं सकता। जगत के सभी पदार्थों की उत्पत्ति और विनाश होता है तो केवल जगत की उत्पत्ति और विनाश नहीं होता, यह माना ही नहीं जा सकता। जैनियों को पदार्थ विद्या का ज्ञान न होने के कारण ही उनकी पुस्तकों में ऐसी बहुत सी व्यर्थ बातें लिखी गई हैं। जैसे रत्नसार (भाग 1) में लिखा है पृथ्वी भी जीव का शरीर है और जल भी, जिसे माना नहीं जा सकता। इनके समय की गणना भी मानने योग्य नहीं है। इनका समय का सबसे छोटा माप 'आवलि' है। 1,67,70,216 आवलियों का एक मुहूर्त, 30 मुहूर्तों का एक दिन, 30 दिनों का एक मास, 12 मासों का एक वर्ष, 70,56000 करोड़ वर्षों का एक पूर्व, अनगिनत पूर्वों का एक पल्योपल, 10 करोड़ पल्योपलों का एक सागरोपम, 10 करोड़ सागरोपमों का एक उत्सर्पिणी और 10 करोड़ उत्सर्पिणी का एक अवसर्पिणी काल बीत जाने पर एक कालचक्र होता है और कई काल चक्र बीत जाने पर एक परमाणु काल पलटता है। जीव ऐसे अनन्त परमाणु कालों से भ्रमित हो रहा है। (2) जीवों का शरीर उंगली का असंख्यातवां भाग अर्थात अतिसूक्ष्म होना (3) जीवों की आयु अधिक से अधिक 22 हजार वर्ष होना (4) वनस्पति के एक शरीर में अनंत जीवों का होना (5) शरीर की स्पर्श इन्द्रिय में एक जीव रहता है जिसे वनस्पति कहते हैं जिसका फैलाव 10000 कोस और आयु भी 10000 वर्ष होती है (6) दो इन्द्रिय वाले जीव (शरीर और मुख) जो शंख कौड़ी और जूं आदि है। उनकी देह 48 कोस और आयु अधिक से अधिक 12 वर्ष होती है। (7) बिच्छू मक्खी का शरीर 10000 कोस और आयु 6 मास, मछली का शरीर एक करोड़ कोस का और आयु भी एक करोड़ वर्ष, हाथी का शरीर 2 से 9 कोस और आयु 84000 वर्ष, जलचर और गर्भ से उत्पन्न

thearyasamaj.org

होने वाले जीवों का शरीर एक करोड़ कोस का और आयु भी एक करोड़ वर्ष होना (8) पृथ्वी में जम्बू द्वीप 4 लाख कोस, उसके चारों ओर 16 कोस का घातकी खंड, फिर 32 कोस का कालोदधि समुद्र, फिर 16 कोस का पुष्करावर्त द्वीप है जिसके आधे भाग में मनुष्य बसते हैं और बाकी भाग में असंख्य द्वीपसमूह हैं। जम्बूद्वीप में 6 क्षेत्र हैं, हिमवन्त, ऐरण्यवंत, हरिवर्ष, रम्यक, देवकुरु और उत्तर कुरु।

समीक्षा : इन सब बातों को पढ़कर ऐसा लगता है कि जैनियों को भूगोल, गणित विद्या आदि का कुछ भी ज्ञान न था। यदि उन्हें इन विद्याओं का थोड़ा भी ज्ञान होता तो इतनी बड़ी–बड़ी गप्पें न हांकते। इसी झूठ के कारण तो वे अपनी पुस्तकें किसी को देखने नहीं देते। जगत को अनादि मानने के कारण ही उन्होंने ये सब झूठी बातें लिखी हैं। जगत तो नहीं लेकिन जगत का अनादि कारण परमाणु है जिसमें नियमपूर्वक बनने और बिगड़ने की कोई शक्ति नहीं है। परमाणु स्वभाव से जड़ है इसलिए इस जगत को बनाने वाला चेतन वह ज्ञानस्वरूप ईश्वर ही है। संयोग से जिस स्थूल जगत की रचना हुई है वह कभी अनादि नहीं हो सकता। परमात्मा ही चेतन होने के कारण सूर्य आदि लोकों को अनादि और अनंतकाल से नियम में रखकर चला रहा है। अगर तुम कार्य जगत को नित्य मानोगे तो उसका कोई कारण न होगा अर्थात् जगत स्वयं ही कार्य भी होगा और कारण भी। अपना कार्य और कारण होने से तो ऐसा होगा जैसे अपने कंधों पर आप चढ़ना और स्वयं ही अपना पिता और पुत्र होना। इसलिए जगत के कर्त्ता ईश्वर को मानना ही होगा।

नास्तिक : यदि तुम ईश्वर को जगत का कर्त्ता मानते हो, तो ईश्वर का कर्त्ता कौन है?

आस्तिक : कर्त्ता का कर्त्ता और कारण का कारण कोई हो ही नहीं सकता। इसलिए वेद में ईश्वर जीव और प्रकृति तीनों को अनादि (अर्थात पहले से थे) ऐसा बताया गया है। ईश्वर ने प्रकृति की सहायता से जगत रचा और शरीरों में जीवात्मा को प्रवेश कराया। इसीलिए यह सृष्टि संयोग से बनी हुई मानी जाती है और इसकी प्रत्येक वस्तु विनाश को प्राप्त होती है। जैनियों को सृष्टि विद्या का ज्ञान न होने से ही वे सृष्टि को अनादि, अनंत मानते

thearyasamaj.org

हैं और उसके पदार्थों को भी अनादि मानते हैं। लेकिन सृष्टि के सभी पदार्थों के गुण कर्म और शक्तियां सीमित हैं और उनका अंत भी होता है। हर एक पदार्थ की अलग–अलग शक्ति है, पदार्थ या जीव में अनन्त शक्ति मानना केवल अविद्या की बात है।

नास्तिक : जीव चेतन होता है, जड़ पदार्थ में चेतना नहीं होती। सत्यकर्म रूप परमाणु पुण्य और पापकर्म रूप परमाणु पाप करते हैं?

आस्तिक : जीव और जड़ का चेतन और चेतनारहित होना तो ठीक है लेकिन परमाणु जड़ होने के कारण पाप–पुण्य नहीं कर सकते, अतः पाप–पुण्य करने वाला चेतन जीव होता है। तुम जीवों को अनादि मानते हो, वह तो ठीक है परन्तु मुक्ति की दशा में अल्पज्ञ जीव को सर्वज्ञ मानना ठीक नहीं है क्योंकि जीव अल्प और अल्पज्ञ है उसका सामर्थ्य सीमा रहित नहीं हो सकता। जैनी लोग, जीव, जीव के कर्म, बंध और जगत को अनादि मानते हैं लेकिन कार्य कारण के संयोग से बना जगत, जगत में होने वाले पदार्थ, जीव के कर्म और बंध अनादि नहीं हैं, केवल जीव ही अनादि है। यदि जीव के कर्म अनादि मानते हैं तब तो कर्म कभी छूट ही नहीं सकते फिर इनका कर्म–बन्धन से छूटकर मुक्ति पाने का सिद्धान्त गलत हो जाता है। अगर अनादि नित्य है तो बंध भी नित्य ही होगा। अगर कर्मों का छूटना मुक्ति मानते हो तो सब कर्मों का छूटना मुक्ति का कारण होगा और ऐसी मुक्ति सदा बनी नहीं रह सकती।

नास्तिक : जैसे धान का छिलका अलग कर देने पर बीज को भून देने पर वे फिर से नहीं उगते उसी प्रकार मुक्ति में गया जीव फिर संसार में नहीं आता?

आस्तिक : जीव और कर्म का संबंध छिलके और बीज के समान नहीं है। इनका समुदाय संबंध है। अनादि काल से जीव में कर्म करने की शक्ति होने के कारण जीव और कर्म का संबंध है। यदि कर्म करने की शक्ति न मानें तो जीव पत्थर के समान हो जायेगा और मुक्ति का सुख नहीं भोग पायेगा। साधनों से सिद्ध किया

हुआ पदार्थ नित्य कभी नहीं हो सकता और यदि साधन सिद्ध किये बिना मुक्ति मानोगे तो कर्मों के बिना ही बंध प्राप्त हो सकेगा। जैसे वस्त्रों में मैल लगता, धोने से छूटता और फिर लग जाता है, वैसे ही रागद्वेष आदि से जीव को कर्मरूप फल लगता है और मुक्त जीव संसारी और संसारी जीव मुक्त होता रहता है। इसीलिए जीव अनादि काल से बंधन और मोक्ष की अवस्था में आता–जाता रहता है।

नास्तिक : क्या जीव निर्मल कभी नहीं था, किन्तु मल सहित है?

आस्तिक : जीव न कभी निर्मल था ओर न होगा। जैसे वस्त्र का अपना रंग तो रहता है परन्तु उसमें लगा मैल धोने से छूटता है और फिर लग जाता है। वैसे ही जीव मुक्ति को प्राप्त करता है और फिर कर्मों के प्रभाव से बंध में आ जाता है। मुक्ति और बंध का यह क्रम चलता रहता है।

नास्तिक : जीव अपने पूर्वकर्मों के फल से स्वयं शरीर धारण कर लेता है, ईश्वर का मानना व्यर्थ है?

आस्तिक : यदि शरीर धारण करना जीव के हाथ में होता तब तो सदा अच्छे–अच्छे जन्म ही धारण करता। जैसे राजा चोर को फांसी या जेल में डालने की सजा देता है वैसे ही ईश्वर उसको उसके कर्मों के अनुसार शरीर धारण करवाता है। यही उसकी न्यायव्यवस्था है, इसे तुम भी मानो।

नास्तिक : नशे के समान कर्म स्वयं प्राप्त होता है, उसका फल देने के लिए दूसरे की क्या आवश्यकता?

आस्तिक : नशे की आदत वाले व्यक्ति को नशा कम चढ़ता है और जो अभ्यासी नहीं होता उसे अधिक होता है। इस तरह तो नित्य अधिक पाप या पुण्य करने वाले को फल थोड़ा और कभी–कभी पाप–पुण्य करने वाले को अधिक फल मिलेगा जो उचित नहीं।

नास्तिक : जिसका जैसा स्वभाव होता है, उसको वैसा ही फल मिलता है?

आस्तिक : स्वभाव के साथ–साथ जीव के कर्म पर कारणों का भी प्रभाव रहता है, उन कारणों को दूर करने पर कर्मफल से बचा जा सकता है।

thearyasamaj.org

नास्तिक : संयोग के बिना कर्म परिणाम को प्राप्त नहीं होता। जैसे दूध और खटाई के बिना दही नहीं जमता वैसे ही जीव और कर्म के योग से कर्मफल होता है?

आस्तिक : जैसे दूध में खटाई मिलाने वाला कोई होता है वैसे ही जीव को कर्मो के फल के साथ मिलाने वाला ईश्वर होता है क्योंकि जड़ पदार्थ और अल्पज्ञ जीव स्वयं अपने कर्मफल को प्राप्त नहीं होते। ईश्वर के बिना सृष्टि में कर्मफल व्यवस्था नहीं हो सकती।

नास्तिक : जो कर्म से मुक्त होता है, वही ईश्वर कहलाता है?

आस्तिक : अनादि काल से जीव के साथ कर्म लगे हैं, उनसे जीव कभी मुक्त नहीं हो सकता।

नास्तिक : कर्म का बन्ध आदि सहित है?

आस्तिक : यदि कर्म बन्ध का आरंभ है तब तो कर्म का संयोग होने से पहले जीव निष्कर्म होगा। अगर निष्कर्म जीव को कर्म लग गया तो मुक्त जीव को भी लग जायेगा अर्थात जीव और कर्म का संबंध सदा रहता है यह कभी नहीं छूटता। जीव जितना चाहे योग के द्वारा अपने ज्ञान और शक्ति को बढ़ा ले फिर भी उसका ज्ञान और शक्ति सीमित ही रहेगी। वह कभी ईश्वर के समान नहीं हो सकता। जीव एक सूक्ष्म पदार्थ है जिसकी शक्तियां शरीर में प्राण, अग्नि, नाड़ी आदि के साथ जुड़ी रहती है। इसलिए जीव अच्छे संग से अच्छा और बुरे संग से बुरा हो जाता है।

नास्तिक : जैन धर्म वाले अपने धर्म को सुधर्म और जन्म–मरण दुःखों का हरने वाला मानते हैं?

आस्तिक : जैनमत के सुदेव, सुगुरु और सुधर्म कल्याण करने वाले हैं तो क्या दूसरे सभी धर्म कुदेव, कुगुरु और कुधर्म हैं उनसे किसी का कल्याण नहीं हाता। इनकी पुस्तक में लिखे जाने वाले निन्दा के ये वचन ही इनके धर्म के गुण प्रकट कर रहे हैं।

नास्तिक : जैनधर्म ही विनय और दया का मूल होने के कारण सभी प्राणियों का संसार से उद्धार करने वाला है। दया, क्षमा, शुद्धता, ज्ञान, दर्शन और चरित्र ही जैनधर्म की श्रेष्ठ विशेषताएं हैं?

आस्तिक : जब केवल अपने धर्म वालों पर दया की जाये दूसरों को बुरा कहा जाये, ज्ञान के बदले अज्ञान का प्रचार किया जाए और भूखे मरने को चरित्र की महानता बताया जाये तब बताओ जैन धर्म में अच्छा क्या है?

नास्तिक : यदि कोई व्यक्ति तप, ज्ञान, विचार, दान आदि कुछ भी नहीं कर सकता तो जैनमत में और उसके गुरुओं में श्रद्धा रखने के कारण ही उसका उद्धार हो जाता है?

आस्तिक : पक्षपात के बिना की गई दया और क्षमा अच्छी है। किसी जीव को कभी भी दुःख न देना कभी संभव नहीं हो सकता। दुष्टों को दंड देना भी दया ही है क्योंकि इससे एक दुष्ट को दुःख मिलने से हजारों मनुष्यों को सुख मिलता है। यदि दुष्ट पर दया की जाये तो वह दया और क्षमा नहीं कहलायेगी, अदया और अक्षमा हो जायेगी। सब प्राणियों के दुःखनाश और सुख प्राप्ति का उपाय करना दया कहाती है, तो क्या दूसरे धर्म के विद्वानों का सम्मान करना दया नहीं, जिसका ये लोग विरोध करते हैं।

नास्तिक : क्या जैनमत वालों की दया सच्ची नहीं है?

आस्तिक : यदि इनकी दया सच्ची होती तो 'विवेकसार' पुस्तक में छः यतना अर्थात छः प्रकार के कर्म करने से जैनधर्म वालों को रोका न जाता। (1) दूसरे धर्म का गुणगान न करना (2) उनको नमस्कार न करना (3) उनसे कम बोलना अधिक नहीं (4) बार–बार न बोलना (5) उनको अन्न–वस्त्र आदि न देना (6) पूजा के लिए पुष्पगंध आदि न देना। इस तरह जैनधर्म वालों को ये 6 काम कभी न करने का आदेश दिया गया है। इससे जैनधर्म में कितनी अदया, कुदृष्टि और द्वेष है इसका पता चल जाता है। केवल अपने मतवालों की सेवा करना ही धर्म और दया नहीं कहलाता। मथुरा के राजा ने नमुची नामक विद्वान को अपना विरोधी समझकर मार दिया और आलोचना करके शुद्ध हो गये (पृष्ठ 108) इससे यह पता चलता है कि वैर होने पर किसी के प्राण ले लेना भी इनकी दया ही है। ये जैन धर्म

में प्रीति को ही 'शुद्ध श्रद्धा' और 'शुद्ध–दर्शन' मानते हैं। जीव आदि तत्वों के ज्ञान को 'शुद्ध ज्ञान' और दूसरे मतों के त्याग को 'शुद्ध चरित्र' मानते हैं। यही जैन धर्म में बताये गए मोक्ष के चार साधन हैं। इनका अहिंसा का सिद्धांत अच्छा है जिसमें (अहिंसा) किसी प्राणी को न मारना (2) प्रिय वाणी बोलना (3) चोरी न करना (4) ब्रह्मचर्य या इन्द्रिय संयम (5) सब वस्तुओं का त्याग करना परन्तु दूसरे धर्मों की निन्दा करना, दूसरों के ज्ञान से पूर्ण ग्रन्थों को बुरा कहना आदि दोषों ने इनके धर्म की अच्छाइयों को भी दोषपूर्ण बना दिया है। केवल जैनधर्म सच्चा है, इतना कह देने से ही व्यक्ति श्रेष्ठ हो जाता है और उसका उद्धार हो जाता है इन सब बातों से पता चल जाता है कि इनके आचार्य स्वार्थी थे विद्वान नहीं। जैनमत डुबोने वाला और वेदमत सबका उद्धार करने वाला है।

नास्तिक : जैसे विषधर सांप में मणि त्यागने योग्य है वैसे दूसरे धर्म के बड़े से बड़े विद्वान को त्याग देना चाहिए, उसका दर्शन तक नहीं करना चाहिए, जैनधर्म के विरुद्ध दूसरे सभी धर्मो वाले पापी हैं, जैनियों के सुदेव, सुगुरु और सुधर्म ही मानने योग्य हैं, अन्य नहीं?

आस्तिक : यदि इनके चेले और आचार्य विद्वान होते तो विद्वानों से प्रेम करते क्योंकि सोना तो धूल में भी पड़ा हो तो उसे कोई नहीं छोड़ता। जिनका मत सच्चा नहीं होता वे ही दूसरों का सामना करने से डरते हैं कि कहीं उनकी पोल न खुल जाये। दूसरों से वैर, विरोध, ईर्ष्या, निदां आदि दुष्ट कर्मो में फंसाकर डुबोने वाला जैनधर्म ही है। यदि इनमें थोड़ा भी विवेक (ज्ञान) होता तो ये अच्छे को अच्छा और बुरे को बुरा कहते। अपने मत वालों को छोड़कर दूसरों की सेवा करने को पाप कहना या उनकी बुराई करना तो ठीक वैसा ही है जैसे बेर बेचने वाली अपने खट्टे बेरों को भी मीठा बताती है। सच बात तो यह है कि सांप के काटने से व्यक्ति एक बार मरता है लेकिन जैनियों के अज्ञानी गुरुओं के संग से तो सदा के लिए पाप के गड्ढे

में गिरकर नष्ट होता रहता है, क्योंकि विद्वानों का संग न करने से सत्य ज्ञान और धर्म की प्राप्ति कभी नहीं होगी। इसलिए उचित यही है कि जैनी लोग भी वेदों के सत्य मार्ग पर चलें तभी कल्याण होगा।

नास्तिक : दूसरे मतवालों का उपकार करना अपना नाश करना ही है जैसे अंधे सिंह की आंख खोलें तो वह खोलने वाले को ही खा जाता है। जैनधर्म वाले ही अपने अकल्याण से डरते हैं दूसरे नहीं। दूसरे धर्मों वाले चारण भाटों और देवी, देवताओं के भक्त होने के कारण डुबोने वाले हैं और जो वीतराग पुरुषों (तीर्थंकरों) से दूर रहते हैं वे नहीं?

आस्तिक : जैसा जैनी सोचते हैं यदि वैसा ही दूसरे धर्मो वाले भी सोचकर उनका उपकार न करें तो उनकी दुर्दशा हो जाये। जैनधर्म के समान दूसरे किसी धर्म में ईर्ष्या–द्वेष और वैरभाव न होने के कारण ये ही पाप का मूल है। दूसरे धर्म को मानने वाले दंड से भय नहीं करते ये तो किसी तरह भी सत्य सिद्ध नहीं होता, अपना भला–बुरा तो हर प्राणी सोचता है। वेद के अनुसार धर्म में तो यह माना जाता है कि ईश्वर व्यक्ति के अच्छे–बुरे कर्मों का उसे फल देता है इसलिए ईश्वर के दुःख रूप दंड से बचने के लिए व्यक्ति स्वयं बुरे कर्मों से दूर रहने का यत्न करता है। इससे जैनमत वाले यह सिद्ध करना चाहते हैं कि उनका मत साहूकार मत और शेष सब चोरमत हैं। ऐसा मत दुष्टों का ही हो सकता है, अच्छे लोगों का नहीं। जैनी दूसरे धर्म वालों को पापी कहते हैं तो कोई इनसे पूछे कि दूसरों के दुर्गानौमी आदि व्रत बुरे हैं तो तुम्हारे पजूसण आदि कष्टदायक व्रत बुरे नहीं हैं क्या? तुम्हारी मरुतदेवी और शासनदेवी क्या राक्षसी और कालीदेवी के समान नहीं हैं क्योंकि शासनदेवी ने तो केवल रात को भोजन करने के अपराध में ही व्यक्ति की आंखें और बकरे की आंखें निकाली थीं। एक दूसरे के उपवासों की निन्दा–प्रशंसा करना ठीक नहीं है सबसे उत्तम व्रत तो सत्य भाषण आदि धारण करना है जो सभी को करना चाहिए।

thearyasamaj.org

नास्तिक : जैनमत विरोधी झूठे धर्म वाले उत्पन्न क्यों हुए और बढ़ने से पहले नष्ट हो जाते तो अच्छा होता। केवल जैनमत वाले ही मुक्ति को प्राप्त होते हैं बाकी सब नरक को जाते हैं। जैन तीर्थंकरों की आज्ञा मानने वाला ही तत्वज्ञानी होता है। दूसरे धर्म वालों का ऐश्वर्य नरक का हेतु है। जिनेन्द्र की आज्ञा भंग करने वाला वैसा ही दंड पाता है जैसे राजा की आज्ञा का उल्लंघन करने पर मिलता है।

आस्तिक : इनके वीतराग वाले दूसरे धर्म वालों का जीवन भी नहीं चाहते। पशुओं पर तो दया करते हैं, परन्तु मनुष्यों पर नहीं। केवल जैनमत वालों को ही मुक्ति प्राप्त होती है यह बात कोई मूर्ख ही मान सकता है। जैनमत वाले अपने पत्थर की मूर्तियों को तो सार और दूसरों की मूर्तियों को असार बताते हैं, ये अपने मतवालों को तत्वज्ञानी और दूसरों को अतत्वज्ञानी कहते हैं। इसी से पता चलता है कि इनके मत में ज्ञान है ही नहीं। केवल जिनेन्द्र की आज्ञा मानना ही धर्म है, दूसरों की अधर्म। कोई इनसे पूछे कि क्या जिनेन्द्र की जीभ दूसरों की तरह चमड़े की बनी हुई नहीं है जो उसकी आज्ञा श्रेष्ठ मानें। दूसरे धर्म वालों का ऐश्वर्य सहन न करना इनकी ईर्ष्या को ही प्रकट करता है। जैनमत वाले राजाओं के आश्रित थे इसलिए उन्होंने राजाओं की चापलूसी करते हुए राजाज्ञा पालन करने पर बल दिया। तो क्या, यदि राजा गलत आज्ञा दे तो उसे भी मान लेना चाहिए, जबकि यह कदापि उचित नहीं होगा।

नास्तिक : जैनधर्म के साधु, उपदेशक और ग्रन्थकार तीर्थंकरों के तुल्य हैं उनका त्याग करना उचित नहीं है। जो इनके वचनों के अनुसार चलते हैं वे ही पूज्य हैं। कृषि और व्यापार करने से मनुष्य नरक में जाता है। जैन ग्रन्थों के विरुद्ध बोलने वाले और जैन साधुओं को अपने साधुओं के समान बताने वाले नीच जन्म पाते हैं?

आस्तिक : जैनियों का हठ और पक्षपात अविद्या का फल है जिसमें थोड़ी सी भी बुद्धि होगी वह उनके उपदेशों को उसी समय छोड़

thearyasamaj.org

देगा। अपनी प्रशंसा अपने आप करना उचित नहीं होता, सच्ची प्रशंसा तो वह है जब दूसरे विद्वान करें। जैन धर्म ने दूसरे धर्मों से अपने को अच्छा सिद्ध करने के लिए बहुत सी बेतुकी बातें अपने ग्रन्थों में भर ली हैं। यदि लोग कृषि और व्यापार न करें तो शरीर का पालन–पोषण भी न होगा, अन्न व धन के बिना लोग जियेंगे कैसे? इनके अनुसार तो जैनधर्म की झूठी बातों को केवल इसलिए सत्य कह देना चाहिए ताकि नीच जन्म न मिले। ऐसा उन्होंने इसलिए लिख दिया कि लोग अपना कोई प्रयोजन सिद्ध न होते देख जैन धर्म से अलग न हो जायें।

नास्तिक : जैनधर्म का कुछ भी काम न करे, केवल इस धर्म के प्रति सच्ची श्रद्धा रखने से ही व्यक्ति दुःखों से तर जाता है। जैनधर्म के ग्रंथों के सिवाय कोई ग्रंथ न सुनूंगा ऐसा विचार करने से ही मनुष्य दुःखों से तर जाता है, जो जैनधर्म के शुभ व्यवहारों और व्रतों को करते हैं वे सुखों को प्राप्त होते हैं। जो जैनधर्म ग्रहण करते हैं वे भाग्यशाली होते हैं और जो नहीं करते वे भाग्यहीन होते हैं?

आस्तिक : जैनधर्म वालों की गप्प पर कौन विश्वास करेगा। कर्म किए बिना दुःखों से छुटकारा मिल जाता या केवल जैनधर्म के ग्रंथों को सुनने के विचार से दुःखों से छुटकारा मिल जाता तब तो अब तक सब जैनी सुखी हो गये होते, कोई दुःखी न रहता। ये लोग दुःसह व्यवहार सहने को चरित्र कहते हैं। यदि भूखा मरना ही चरित्र है तो अकाल के दिनों में बहुत से लोग भूख से मरते हैं, उन सब को शुभ फल प्राप्त होने चाहिए, लेकिन बहुत से लोग भूखे रहने से पित्त आदि रोगों को प्राप्त हो सुख के बदले दुःख उठाते हैं। न्यायपूर्ण आचरण, सत्यभाषण ब्रह्मचर्य आदि धर्म हैं। झूठ बोलना, अन्यायपूर्ण आचरण करना पाप है। भूखे–प्यासे रहना और झूठे शास्त्रों को मानना न तो धर्म है, न ही शुभ चरित्र। जैनधर्म वाले शायद ये मानते हैं कि उनके धर्म में ही भाग्यवान होते हैं दूसरे धर्मों में नहीं, उनके धर्म में कोई भाग्यहीन नहीं होता जबकि दूसरे धर्मो में सभी भाग्यहीन

thearyasamaj.org

ही होते हैं इनके अनुसार केवल अपने मत वालों से प्रेमपूर्वक व्यवहार करना चाहिए, दूसरे मत वालों से झगड़ने में कोई बुराई नहीं है। सज्जन लोग तो सज्जनों से प्रेम करते हैं और दुष्टों को भी शिक्षा देकर सुधारते हैं। इनकी दया क्षमा केवल दिखावा है क्योंकि ये लोग दूसरों से द्वेष रखने, उनकी निन्दा करने के कारण हिंसा का पाप करते हैं इसलिए घोर अज्ञान में डूबकर दुःख भोग रहे हैं।

नास्तिक : ये मूर्तियों की पूजा, नवकार मंत्र जाप, व्रत आदि को धर्म मानते हैं। धूप, दीप, पुष्प, चंदन आदि से तीर्थंकरों की पूजा करते हैं और इसी में धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष की सिद्धि होना मानते हैं।

आस्तिक : मूर्तिपूजा का झगड़ा जैनियों से ही शुरू हुआ। इनका नवकार मंत्र का जाप करना, अणुव्रत करना, द्रव्यों से मूर्तिपूजा करना, द्वार पूजना, मंदिर बनाने के नियम आदि सब दिखावा और ढोंग हैं इनका मोक्ष प्राप्ति से कोई संबंध नहीं। रत्नसार में लिखा है कि पांच कौड़ी का फूल चढ़ाने से 18 देशों का राज्य मिल जाता है तब तो ऐसे फूल चढ़ाकर सारे भूमंडल का राज्य इन्होंने प्राप्त क्यों नहीं कर लिया? मूर्तिपूजा और नवकार मंत्र से मुक्ति मिलती तब तो अब तक सब जैनी मुक्त हो गए होते। ये सब बहकाने की बातें हैं इनमें कुछ भी सार नहीं है।

नास्तिक : जैन मन्दिर में जाने से सद्गुण आते हैं, शान्ति मिलती है और सब क्लेश छूट जाते हैं?

आस्तिक : अगर मन्दिर में जाने और मूर्तिपूजा करने से पाप आदि बुरे कर्म छूट जायें, मोह न हो, सदगुण आ जायें, स्वर्ग की प्राप्ति हो, भवसागर से तर जावें और धर्म, अर्थ काम मोक्ष मिल जायें तो सब जैनी लोगों ने यह सुख प्राप्त क्यों नहीं कर लिये हैं। वास्तव में मूर्तिपूजा जीविका का एक साधन है और नरक का साधन है क्योंकि व्यक्ति पत्थर की मूर्ति से सुख पाने की चाह में उसी की पूजा में लगा रहता है और परोपकार आदि शुभ

कर्म न करने के कारण नरक भोगता है। जैनी लोग मानते हैं कि इनकी मूर्तियां शान्त मुद्रा में होने के कारण शांति प्रदान करती हैं। जड़ पदार्थ तो स्वभाव से ही निश्चल और शान्त होते हैं। इनकी मूर्तियां तो मन्दिर में रहती हैं जबकि शिवमूर्ति तो बिना छाया के धूप में रहने के कारण अधिक त्यागी है, उसकी पूजा का फल अधिक होना चाहिए। सच तो यह है कि मूर्तिपूजा एक ढकोसला है इससे न तो दुःखों से छुटकारा मिलता है और न मुक्ति ही मिलती है।

नास्तिक : जैन मूर्तियां वस्त्र आभूषण आदि धारण नहीं करतीं, इन मूर्तियों को देखने से शुभ गुण प्राप्त होते हैं जैसे स्त्री की मूर्ति देखने से कामवासना पैदा होती है वैसे ही साधुरूप मूर्तियों को देखने से शांति मिलती है।

आस्तिक : सबके सामने नंगी मूर्तियों का रहना पशुवत आचरण है। अगर मूर्तियों को देखने से गुण आ जाते हैं। तब तो पत्थर की मूर्ति को देखकर जड़ के गुण आ जायेंगे अर्थात् बुद्धि जड़ हो जायेगी। विद्वानों का संग छोड़कर मूर्ति पूजा में लग जाने से अविद्या ही बढ़ेगी और दूसरे बहुत से दोष पैदा हो जायेंगे। 'तत्वसार' में लिखा है कि देवबुद्धि से यदि लकड़ी पत्थर की भी पूजा की जाये तो अच्छे फल प्राप्त होते है। अगर ऐसा होता तब तो सब कोई दर्शन करके सुख रूप फलों को प्राप्त हो जाते। 'रत्नसार' में नवकार मंत्र को परम मंत्र, परमतत्व कहा गया है। जो दुःख रूपी भवसागर से पार उतारने वाली नौका है। इसको छोड़ने वाला भवसागर में डूब जाता है। जैन तीर्थंकरों, साधुओं और आचार्यों को नमस्कार करें, अन्य किसी को नहीं। 'विवेकसार' में लिखा है साधु कोशा वेश्या से भोग करके त्यागी होकर स्वर्ग को गया, अर्णकमुनि चरित्र दोष से कई वर्षों तक दत्त सेठ के घर विषयभोगकर स्वर्ग को गया। श्रीकृष्ण के पुत्र ढंढण मुणि को स्यालिया (साला) उठा ले गया और फिर देवता हुआ। जैनसाधु चरित्रहीन हो तो भी दूसरों से श्रेष्ठ है। चोर भी छः मास में ज्ञान पाकर सिद्ध हो गया।

thearyasamaj.org

श्रीकृष्ण, धन्वन्तरि वैद्य, वासुदेव, प्रह्लाद आदि नरक में गए। इन सब बातों से यह निष्कर्ष निकलता है कि जैन तीर्थंकर, साधु गृहस्थी जिनमें वेश्यागामी, चोर, व्यभिचार आदि ये सब स्वर्ग और मुक्ति को प्राप्त हुए तथा श्रीकृष्ण आदि महाधार्मिक महात्मा सब नरक को गए। कितनी गलत और द्वेषपूर्ण बातें इनकी पुस्तकों में लिखी हैं। जैनियों के तीर्थमुक्ति दिलाने वाले और काशी आदि तीर्थ कुछ भी नहीं। इस तरह जैनियों ने ऐसी बातें कहकर अपनी मूर्खता ही प्रकट की है।

जैनियों का मुक्ति वर्णन

'रत्नसार' में लिखा है कि स्वर्गपुरी के ऊपर (चौहदवें लोक की शिखा पर) 45 लाख योजन लंबी और उतनी ही पोली, 8 योजन मोटी, दूध के समान उजली और सोने के समान चमकीली और निर्मल सिद्धशिला हैं उस पर भी मुक्त पुरुष अधर (आकाश) में रहते हैं। वहां जन्म–मरण न होने के कारण मुक्त जीव दोबारा जन्म–मरण में नहीं आते और सब कर्मों से छूट जाते हैं। यही जैनियों की मुक्ति है, वहां आनन्द ही आनन्द है।

समीक्षा : जैसे दूसरे मतों में बैकुण्ठ, कैलाश, गोलोक, ईसाइयों का चौथा और मुसलमानों का सातवां आसमान स्वर्ग है, वैसे ही जैनियों के सिद्धशिला और शिवपुर हैं। जैनी लोग जो ऊपर रहते हैं उनको ऊंचा और जो नीचे रहते हैं उनको नीचा मानते हैं। वे सिद्धशिला पर रहने से भी बंधन में ही रहते हैं क्योंकि वहां से बाहर निकलने से उनकी मुक्ति छूट जाती होगी, इसलिए वे वहां ही रहना चाहते होंगे वहां से निकलना नहीं चाहेंगे, इस तरह तो उनकी मुक्ति भी बंधन ही है। वेदज्ञान के बिना वे मुक्ति के यथार्थ स्वरूप को जान ही नहीं सकते। विवेकसार में लिखा है कि महावीर को जन्म के समय एक करोड़ 60 लाख कलशों से स्नान कराया गया, 16–17 करोड़ इन्द्र के स्वरूप और लगभग 1337057 अरब इन्द्राणियां उनके दर्शनों को आई, अब भला सोचिए कि इतने लोग उस छोटे से राज्य में कहां ठहरे होंगे? किसी को कुंआ, तालाब आदि नहीं बनवाना चाहिए, यदि सब लोग जैनमत अपना कर कुंआ तालाब न बनवायें तो लोग पानी कहां से पीयें। इनका कहना है कि तालाब आदि में जीव गिरते हैं इसलिए हम ऐसा कोई काम नहीं करते जिससे हमें पाप लगे।

thearyasamaj.org

इन्हें क्षुद्र जीवों के मरने का तो ध्यान है लेकिन जितने मनुष्य, पशु, पक्षी जल पीकर तृप्त होते हैं उस महापुण्य को ये लोग नहीं जानते।

'तत्व विवेक' में लिखा है कि एक सेठ ने बावड़ी बनवाई, इसलिए धर्मभ्रष्ट होकर उसी बावड़ी में मेंढक बन गया, बाद में महावीर के दर्शन और नित्य वंदना करने से महर्द्धिक देवता हुआ, ऐसी विद्याविरुद्ध बातें कहने वाले महावीर को सर्वोत्तम मानना महामूर्खता ही है। इनके साधु मृतकों के वस्त्र ले लेते हैं लेकिन मृतकों के आभूषणों का क्या करते हैं ये नहीं बताते। अन्न कूटने, पीसने, पकाने में पाप लगता है, बगीचा लागने में माली को एक लाख गुणा पाप लगता है। ये केवल पाप लगने की बात बताते हैं, अनेक जीव भोजन, फल, फूल और छाया पाते हैं उस पुण्य को नहीं गिनते। यदि दूसरे लोग भी इन्हें अपना पकाया हुआ भोजन न दें तो बताओ ये कैसे जीवित रहेंगे? एक साधु भूल से वेश्या के घर चला गया और भिक्षा मांगी। वेश्या ने कहा—यहां धर्म का काम नहीं, अर्थ का काम है तो उस भिक्षु ने साढ़े बारह लाख अशर्फियों की वहां वर्षा कर दी, कौन मानेगा, इस बात को? पत्थर की घोड़े पर चढ़ी हुई मूर्ति जहां रक्षा के लिए पुकारो, वहां रक्षा करती है। जैनी लोग अब पुलिस से रक्षा चाहते हैं उस मूर्ति को क्यों नहीं पुकारते, यह कोई क्यों नहीं उनसे पूछता।

जैन साधुओं के लक्षण

(1) **श्वेतांबर** : चमरी (चंवर) रखना, भिक्षा मांग के खाना, सिर के बाल नोचकर उखाड़ देना, सफेद वस्त्र धारण करना, क्षमायुक्त रहना, किसी का संग न करना, इनको ये जती कहते हैं।

(2) **दिगंबर** : नंगे रहना, सिर के बाल उखाड़ डालना, ऊन के सूतों का झाडू बगल में रखना, भिक्षा हाथ में लेकर खा लेना। इनमें से कुछ लोग गृहस्थ के खा चुकने पर भोजन लेते हैं ये जिनर्षि कहलाते हैं।

समीक्षा : जैनी लोग अहिंसा और दया को मानते हैं। हाथों से नोच—नोचकर बालों को उखाड़ने से जो पीड़ा होती है क्या उसे अहिंसा और दया कहा जा सकता है। अतः इनकी दया भी ढोंग ही है।

प्रश्न : जैनी लोग मुंह पर पट्टी बांध कर रखते हैं क्योंकि मुंह से निकलने वाली गर्म हवा से बाहर की वायु में रहने वाले जीव मर जाते हैं। क्या यह अच्छा नहीं है?

उत्तर : जीव अजर अमर है वह मुंह से निकलने वाली भाप से नहीं मर सकते इसलिए पट्‌टी बांधना व्यर्थ है। जैनधर्म में भी तो जीव को अजर अमर माना गया है।

प्रश्न : जीव मरता तो नहीं, परन्तु मुंह से निकलने वाली गर्म हवा से उसे पीड़ा तो पहुंचती है। जहां तक हो सके, अशक्त जीवों को बचाना चाहिए। पट्‌टी बांधने से जीव कम मरते हैं?

उत्तर : कोई भी जीव दूसरों को पीड़ा पहुंचाए बिना नहीं रह सकता। चलने–फिरने, उठने–बैठने आदि से भी तो जीवों को पीड़ा पहुंचती है, इसलिए मुंह पर पट्‌टी बांधना व्यर्थ है। फिर मुंह पर पट्‌टी बांधने या मौन रखने से नाक से निकलने वाली वायु अधिक गर्म होकर और वेग से बाहर निकलती है। जैसे खुले कमरे में हवा उतनी गर्म नहीं होती जिनती बंद कमरे में होती है। इस तरह पट्‌टी बांधने से नाक से निकलने वाली हवा से जीवों को अधिक कष्ट होता होगा। मुंह पर पट्‌टी बांधने से शब्दों का उच्चारण भी ठीक से नहीं हो पाता। शरीर से जो दुर्गन्ध सांस द्वारा निकल जाती है वह भी नहीं निकल पाती और वह दुर्गन्ध रोग फैलाने का कारण बनकर जितने लोगों को दुःख पहुंचायेगी, उसका पाप भी तो तुम्हें ही लगेगा। जो लोग मुंह पर पट्‌टी तो नहीं बांधते लेकिन अपने दांत, मुंह, शरीर और वस्त्र साफ रखते हैं, वे तुमसे कहीं अच्छे हैं क्योंकि वे दुर्गन्ध तो नहीं फैलाते।

प्रश्न : जैसे बन्द कमरे में जली हुई आग की लपटें बाहर के जीवों को दुःख नहीं पहुंचा सकती वैसे ही मुंह पर पट्‌टी बांधने से बाहर के जीवों को कम दुःख पहुंचता है। जैसे सामने जलती हुई आग के आगे तिरछा हाथ कर देने से सेंक कम लगता है उसी तरह पट्‌टी भी गर्मी रोकती है?

उत्तर : पहली बात तो यह है कि जहां हवा न जाये वहां आग जलती ही नहीं क्योंकि बाहर की वायु ही आक्सीजन पहुंचाती है जिससे आग जलती है। इसी तरह मनुष्य आदि प्राणी भी बाहर की वायु के योग के बिना नहीं जी सकते। हाथ तिरछा करने से अग्नि का ताप एक ओर से रुककर दूसरी ओर बढ़ जाता है जैसे मुंह बंद करने से नाक से अधिक गर्म हवा निकलती है, इसलिए तुम्हारा यह तर्क भी ठीक नहीं है।

प्रश्न : मुंह पर पट्‌टी बांधने से न तो दुर्गन्ध दूसरे तक पहुंचती

thearyasamaj.org

है और न ही मुंह से थूक उड़ कर दूसरे पर गिरता है, इसीलिए तो किसी के कान में बात करते समय मुंह पर हाथ रखते हैं?

उत्तर : यह तो तुमने मान लिया कि जीवों की रक्षा के लिए पट्टी बांधना व्यर्थ है। कान में बात करते समय हाथ इसलिए रखा जाता है कि गुप्त बात को कोई दूसरा न सुन ले। जो लोग दांत–मुंह धोकर साफ रखते हैं उनके मुंह से दुर्गन्ध नहीं निकलती। मुंह से थूक गिरने की जो बात है तो हमें बात दूर से करनी चाहिए और अगर हवा के साथ कोई सूक्ष्म कण चला भी जाता है तो उसे उसका दोष गिनना अविद्या ही हैं। अगर मुंह की गर्म वायु से जीवों को पीड़ा पहुंचती है तो वे जीव गर्मी की ऋतु में सूर्य की तेज धूप से नहीं बच सकते। अतः जो जीव गर्मी में नहीं मरते वे मुंह की गर्म हवा से नहीं मर सकते। अगर तुम्हारे तीर्थंकर पूर्ण विद्वान होते तो ऐसी बातें न कहते।

सांख्यशास्त्र में कहा गया है कि जब पांचों इन्द्रियों का पांचों विषयों (रूप, रस, गंध, शब्द और स्पर्श) से संबंध होता है तभी जीव को सुख–दुःख की प्राप्ति होती है। इसीलिए बहरे को गाली, अंधे के आगे सांप फैंकने, बंद नाक करने वाले को दुर्गन्ध या सुगन्ध, शून्य जिह्वा वाले को स्वाद और शून्य त्वचा वाले को स्पर्श, घोर निद्रा या बेसुध अवस्था में पड़े हुए जीव को सुख–दुःख का अनुभव नहीं होता। जैसे डाक्टर रोगी के शरीर को बेसुध करके चीर–फाड़ करते हैं तो उस समय रोगी को कुछ भी दुःख नहीं होता। वैसे ही वायु के सूक्ष्म जीव भी अत्यन्त मूर्च्छित से होते हैं, उन्हें सुख–दुःख प्राप्त नहीं होता, केवल अनुमान के आधार पर उन्हें पीड़ा से बचाने की बात में कोई सार दिखाई नहीं देता।

प्रश्न : जब वे जीव हैं तो उनको सुख–दुःख तो होता होगा इसीलिए तो हम फल–फूल कंद–मूल भी नहीं खाते। जिससे हमें जीव मारने का पाप न हो?

उत्तर : सुख–दुःख तो इन्द्रियों और उनके विषयों से संबंध के कारण होते हैं। यही कारण है नींद में हमें सुख–दुःख का अनुभव नहीं होता और न ही आपरेशन के समय होने वाली चीरफाड़ से दुःख होता है। फल–फूल, शाक, कंदमूल आदि में जब जीव दिखाई ही नहीं देता तो उसकी कल्पना करके और फिर उसे होने वाले दुःख की कल्पना करना अविद्या के सिवाय कुछ भी नहीं है। ये पदार्थ तो यदि हम प्रयोग नहीं भी करेंगे तो भी गिरकर नष्ट हो जायेंगे तब तुम उन जीवों की रक्षा कैसे करोगे, बताओ तो।

thearyasamaj.org

प्रश्न : तुम लोग ठंडा जल पीते तो वह बड़ा पाप है, पानी उबाल कर क्यों नहीं पीते जैसे हम पीते हैं?

उत्तर : हम ठंडा पानी पीते हैं उसके साथ जो जीव हमारे शरीर में जाते होंगे वे हमारे शरीर से निकलने वाली वायु के साथ बाहर भी निकल जाते होंगे, इसलिए हमें कोई पाप नहीं लगता। तुम पानी उबालकर पीते हो तो पानी उबालते समय जीव उसमें पक जाते होंगे, वह पानी पीने के कारण तुम तो हमसे भी बड़े पापी हो।

प्रश्न : जैसे पेट की अग्नि से गर्मी पाकर जीव सांस के साथ निकल जाते हैं वैसे ही पानी उबालते समय भी तो गर्मी से निकल सकते हैं। हम स्वयं तो पानी उबालते ही नहीं फिर हमें पाप कैसे लगेगा?

उत्तर : पेट की अग्नि से गर्म वायु से ही तुम जीवों का मरना मानते हो फिर ईंधन की अग्नि के ताप से जीव कैसे बचेंगे, अगर बचेंगे भी तो अधिक पीड़ा झेलकर निकलेंगे। तुम स्वयं पानी नहीं उबालते हो इसलिए तो गृहस्थ तुम्हारे लिए उबालते हैं। इससे अधिक ईंधन जलने और अधिक पानी उबालने से अधिक जीव मरते होंगे क्योंकि गृहस्थियों को यह पता नहीं होता कि तुम किसके यहां से पानी लोगे। इसलिए सभी लोग पानी उबालते हैं, इसका पाप तो तुम्हीं को लगेगा क्योंकि सब कुछ तुम्हारे लिए ही तो हुआ। यदि तुम स्वयं उबालते तो कम जीव मरते और तुम्हें पाप कम लगता।

ईश्वर ने सृष्टि में वर्षा, नदियों का प्रवाह और इतना जल उत्पन्न किया है और सूर्य को बनाया है जिनको तुम असंख्य जीवों की मृत्यु का कारण मानते हो, तो तीर्थंकरों ने, जिन्हें तुम ईश्वर मानते हो, वर्षा और सूर्य के ताप को रोक क्यों नहीं दिया? इससे मरने वाले जीवों पर दया हो जाती। सच बात तो यह है कि जल, थल और वायु के अचल (जड़) शरीर वाले अत्यन्त मूर्च्छित जीवों को दुःख–सुख कभी नहीं हो सकता। इसलिए दुष्टों को उचित दंड देना और श्रेष्ठों का पालन करना ही दया और धर्म है। तुम लोग उन जैनी लोगों को जो व्यापार–व्यवहार में झूठ बोलते, पराया धन मारते और गरीबों को छलने जैसे कुकर्म करते हैं उन्हें सत्य का उपदेश क्यों नहीं देते। मुंह पर पट्टी बांधकर दया दिखाने का ढोंग क्यों करते हो?

जैन ग्रंथों में लिखी असंभव बातें और उनकी समीक्षा : रत्नसार भाग एक में तीर्थंकरों के शरीर का माप और आयु इस प्रकार दी है। इनका एक

thearyasamaj.org

धनुष साढे तीन हाथ का होता है और वर्ष भी हमारे वर्ष से बहुत बड़ा होता है।

(1) ऋषभदेव का शरीर 500 धनुष अर्थात 875 गज लंबा और आयु 84 लाख पूर्व थी। (एक पूर्व 70 लाख करोड़ और 56 हजार करोड़ वर्षों का होता है)

(2) अजितनाथ का शरीर 450 धनुष का और आयु 72 लाख पूर्व थी।

(3) संभवनाथ का शरीर 400 धनुष का और आयु 60 लाख पूर्व थी। इसी तरह शरीर का परिमाण और आयु धीरे धीरे घटती गई।

(3) पार्श्वनाथ का शरीर नौ हाथ अर्थात साढे 4 गज और आयु 100 वर्ष थी।

(4) महावीर स्वामी का शरीर 9 (नौ) हाथ अर्थात साढे तीन गज और आयु 72 वर्ष थी।

समीक्षा : वेद के अनुसार इस सृष्टि को बने लगभग 2 अरब वर्ष हुए हैं। जबकि इनका तो एक पूर्व ही कई अरब वर्षों का हो जाता है। उस पर इनके तो एक ही तीर्थंकर की आयु 84 लाख पूर्व कही गई है यह गप्प नहीं तो क्या है। इनके इतने लंबे शरीर वाले तीर्थंकर न जाने किस धरती पर इन्होंने खड़े किये होंगे। ये सब बातें विश्वासयोग्य न होकर झूठ हैं।

कल्पभाष्य में लिखा है–(1) महावीर ने अंगूठे से पृथ्वी दबाई तो शेषनाग कांप उठा (2) महावीर को सर्प ने काटा तो शरीर से खून के बदले दूध निकला (3) महावीर के पैर पर खीर पकाई गई पर पैर नहीं जला (4) छोटे से पात्र में ऊंट बुलाया (5) शरीर का मैल न उतारें, न खुजलायें।

विवेकसार भाग (1) में लिखा है कि (1) एक जैन साधु ने क्रोध में आकर एक सूत्र पढ़ा तो पूरा शहर जल गया।, यह साधु महावीर का प्रिय शिष्य था। (2) कोशा वेश्या ने सरसों की ढेरी थाली में लगाकर उसमें फूलों से ढंकी हुई सूई खड़ी करके उस पर नृत्य किया तो भी न सरसों बिखरी और न सूई उसके पांव में चुभी (3) एक स्थूल मुनि 12 वर्ष तक इस कोशा वेश्या के साथ भोग करके मुक्ति को प्राप्त हुआ और वेश्या को भी मुक्ति मिल गई। (4) एक सिद्ध की कथा (गले में पहनी जाने वाली) एक वैश्य को हर रोज 500 अशर्फियां देती रही। (5) राजा की आज्ञा माननी चाहिए (6) बलवान पुरुष व देव की

thearyasamaj.org

आज्ञा, घोर वन में कष्ट से निर्वाह, गुरु के रोकने, माता–पिता कुलगुरु और ज्ञातीय (अपने गोत्र के लोग) लोग और धर्मोपदेशक इन छः को रोकने से धर्म की हानि होती है।

समीक्षा : पृथ्वी तो शेषनाग पर टिकी हुई है ही नहीं तो उसके दबाने पर कौन कांपेगा, क्यों? शरीर में खून ही होता है दूध नहीं। अगर पैर पर खीर पकाते तो पैर जरूर जलता क्योंकि जड़ पदार्थ अपना स्वाभाविक गुण कभी नहीं छोड़ते और आग का स्वाभाविक गुण जलाना है। छोटे से पात्र में ऊंट समा ही नहीं सकता। जादू द्वारा ऐसे भ्रम तो पैदा किए जा सकते होंगे लेकिन वास्तव में ऐसा नहीं हो सकता। अगर शरीर का मैल नहीं उतारते होंगे तो दुर्गन्ध के और चमड़ी के रोगों के कारण नरक भोगते होंगे। महावीर के प्रिय शिष्य को अपने क्रोध पर ही काबू रखना नहीं आया, उसकी आत्मा ही पवित्र नहीं हुई तो वह साधु कहलाने के योग्य नहीं। ऐसे व्यक्ति में इतनी शक्ति हो ही नहीं सकती कि पूरा शहर जला दे। कोशा के पांव में सूई न चुभना और सरसों का न बिखरना कोरा झूठ है। इनके मुनि का वेश्या से भोग करना और दोनों का मुक्ति पाना इनके चरित्र और विचारों की गिरावट को ही प्रकट करता है।

राजा की उचित आज्ञा माननी चाहिए, अनुचित नहीं। कपड़े के कंथे से अशर्फियां मिलना भी कभी संभव नहीं हो सकता। इसी तरह इनके विवेकसार का कथन भी ठीक नहीं क्योंकि अनुचित बात या कार्य का समर्थन करना पाप ही होता है।

प्रकरण सार भाग 4 में सृष्टि का वर्णन इस प्रकार दिया गया है :

(1) जम्बूद्वीप 4 लाख कोस का है और इसके चारों ओर 2–2 लाख अर्थात् 8 लाख कोस का समुद्र है। द्वीप में 2 सूर्य और चांद हैं और समुद्र में 4 सूर्य और 4 चांद हैं।

(2) धातकीखंड 16 लाख कोस का है इसमें 12 सूर्य और चन्द्रमा हैं।

(3) कालोदधि समुद्र 32 लाख कोस का है। इसमें 36 सूर्य और 36 चन्द्रमा हैं।

(4) पुष्करद्वीप 64 लाख कोस का है इसमें 144 सूर्य और चन्द्रमा हैं।

समीक्षा : जैन लोगों को सूर्य सिद्धान्त और ज्योतिष विद्या का कुछ भी ज्ञान न था यदि वेदों ने हमें भूगोल और ज्योतिष विद्याओं का ज्ञान न दिया होता

तो हम भी इनकी तरह अंधकार में रहते। ये पृथ्वी को सूर्य से बड़ी मानते हैं इसीलिए इनका एक सूर्य और एक चांद से काम नहीं चलता और इन्होंने असंख्य सूर्य–चांद मान लिये। इन्होंने जितने सूर्य और चांद गिन दिए वे शायद जैनियों के घरों में तपते होंगे। इस पृथ्वी में तो एक सूर्य और एक चांद का होना ही माना गया है।

प्रकरणसार भाग 4 में चौदह राज्य लोक लिखे गए हैं। इन सबसे ऊपर का लोक सिद्धशिला तथा दिव्य आकाश शिवपुर है जिसमें मुक्ति प्राप्त लोग रहते हैं?

समीक्षा : इनके मुक्तजीव प्रदेश में रहते हैं, जो प्रदेश में रहते हैं वे न तो ईश्वर हो सकते हैं न सर्वज्ञ। जीव ही अल्पज्ञ और एकदेशी होता है। परमात्मा के सर्वव्यापक, अनादि, अनन्त, सर्वज्ञ, पवित्र आदि गुण जीव में नहीं हो सकते।

संग्रहणी में लिखा है कि दो प्रकार के जीव होते हैं (1) गर्भ से उत्पन्न होने वाले (2) जो गर्भ से उत्पन्न नहीं होते। गर्भ से उत्पन्न होने वाले जीवों का शरीर 3 कोस और आयु 3 पल्योपल (कई करोड़ वर्ष) होती है।

समीक्षा : इतने बड़े शरीरों वाले तीन–चार लोग ही कलकत्ता जैसे शहर में समा सकते हैं तो अनुमान लगाइये कि जैनियों के नगर कितने बड़े होंगे जिनमें ऐसे लाखों लोग रह सकते हों। इन लोगों की सन्तानों के शरीर भी तो इनके समान ही बड़े होंगे वे सब लोग कहां समायेंगे।

जैनियों की सिद्धशिला जो 45 लाख योजन लंबी, 45 लाख योजन पोली और 8 लाख योजन मोटी है, उस शिला से ऊपर एक योजन की दूरी पर लोकान्त है जहां सिद्धों की स्थिति है।

समीक्षा : यह ऐसा लोक है जहां मुक्त जीव बंधकर रहते हैं क्योंकि यहां से बाहर निकलते ही उनकी मुक्ति नहीं रहती।

जैनियों का यह मानना है कि एक इन्द्रिय वाले जीवों का शरीर एक हजार योजन, दो इन्द्रियों वालों का 12 योजन, तीन इन्द्रियों वालों का 3 कोसे, चार इन्द्रियों वालों का 4 कोस और पांच इन्द्रियों वालों का शरीर एक हजार योजन होता है।

समीक्षा : इतने बड़े–बड़े शरीर वालों के घर कितने बड़े होंगे और उनकी छतें बनाने के लिए लट्ठे कहां से आयेंगे। यह सब झूठी गप्पें हैं।

जैनी लोग 4 कोस का चौरस और उतना ही गहरा कुंआ बनाकर उसे एक रोम के असंख्य टुकड़े बनाकर भरते हैं। इस कुएं को भरने के लिए कुल 20 लाख 57 हजार एक सौ बावन लोमखंड होते हैं। एक लोमखंड के असंख्यात टुकड़े जो अत्यन्त सूक्ष्म हों कोरी कल्पना ही है।

समीक्षा : एक अंगुल लोम के असंख्य टुकड़े कैसे किये और गिने जा सकते हैं इसलिए यह सब कथन झूठ हैं।

जम्बूद्वीप का परिमाण चार लाख कोस और उसके चारों ओर 8 लाख कोस समुद्र है। सात द्वीप जो जम्बू द्वीप से दुगने बड़े और इसी तरह बड़े सात समुद्र हैं।

समीक्षा : जम्बूद्वीप चार लाख कोस, दूसरा क्षेत्र उससे दुगना, तीसरा तिगुना और चौथा चार गुणा बड़ा होना सब बातें मिथ्या हैं।

कुरुक्षेत्र में 84 हजार नदियां हैं।

समीक्षा : कुरुक्षेत्र तो इतना छोटा है कि उसमें नदियां हो ही नहीं सकतीं।

सिद्धशिला पर उत्तर की ओर रक्त कांबला और दक्षिण की ओर पीत कांबला शिला हैं। उन सिंहासनों पर तीर्थंकर बैठते हैं।

समीक्षा : इनकी जल छानकर पीना, सूक्ष्म जीवों पर दया करना और रात्रि को भोजन न करना छोड़कर बाकी सब बातें अस्पष्ट हैं। ये तीन बातें ही अच्छी हैं।

जैसे चावल का एक दाना देखकर ही सभी चावलों के पकने का पता चल जाता है वैसे ही जैनियों की इन झूठी और बेतुकी बातों को देखकर इनके मत का पता चल जाता है कि इनमें कितनी अविद्या भरी हुई है, जिसने देशवासियों को भटका दिया है और अज्ञान का इतना गहन अंधकार फैला दिया है कि जिसने ज्ञान के सूर्य को ढंक लिया है।

thearyasamaj.org

ईसाई और यहूदी मत खंडन 13

इस समुल्लास् में बाइबिल के विषय में उत्पन्न हुई शंकायें रखी गई हैं। इनका संबंध ईसाई और यहूदी आदि मतों से है। बाइबल को ईसाई ईश्वरकृत मानते हैं यह बात कहां तक सत्य है यही देखने का प्रयत्न किया गया है। सबसे पहले तौरेत का विषय लगा गया है।

ईसाई : आरंभ में ईश्वर ने आकाश और पृथ्वी की रचना की। पृथ्वी बेडौल और सूनी थी। गहरा अंधकार था और ईश्वर का आत्मा जल पर डोल रहा था (पर्व 1 आयत 1–2)

समीक्षक : आरंभ किसे कहते हो?

ईसाई : सृष्टि की प्रथम उत्पत्ति को।

समीक्षक : क्या यही सृष्टि पहले–पहल बनी और इससे पहले कभी नहीं बनी थी?

ईसाई : हम नहीं जानते, ईश्वर जाने।

समीक्षक : जब तुम ईश्वर की सृष्टि के बारे में ही नहीं जानते तो ईश्वर को कैसे जानोगे? जो पुस्तक तुमहारी शंकायें दूर नहीं करती उस पर विश्वास क्यों करते हो, वेदमत क्यों नहीं अपना लेते? आकाश किसको मानते हो?

ईसाई : ऊपर, पोल को।

समीक्षक : ऊपर पोल बना कैसे, क्योंकि ईश्वर तो अति सूक्ष्म और ऊपर–नीचे एक सा है। जब आकाश नहीं रचा गया था तब ऊपर कोई स्थान था या नहीं। यदि नहीं था, तो ईश्वर, प्रकृति और जीव कहां रहते थे? बिना स्थान के तो कोई पदार्थ रह नहीं सकता, इसलिए बाइबल का कथन ठीक नहीं है। ईश्वर, उसका ज्ञान और कर्म डौल वाला है या बेडौल?

thearyasamaj.org

ईसाई : डौलवाला होता है। पृथ्वी ऊंची–नीची थी, समतल नहीं इसलिए उसे बेडौल कहा गया।

समीक्षक : पृथ्वी तो अब भी ऊंची–नीची है। ईश्वर सर्वज्ञ है, उसके किसी काम में दोष नहीं हो सकता। बाइबल ईश्वर की सृष्टि को बेडौल बताती है इसलिए यह ईश्वरकृत नहीं हो सकती। ईश्वर स्वयं अपनी रचना को दोषपूर्ण नहीं कह सकता। ईश्वर का आत्मा क्या पदार्थ है? बताओ?

(1) ईसाई : वह निराकार, चेतन और व्यापक है जो सनाई पर्वत और चौथे आसमान आदि स्थानों में रहता है।

समीक्षक : जब ईश्वर निराकार है तो उसको किसने देखा? जब ईश्वर की आत्मा जल पर डोल रही थी उस समय उसका शरीर कहीं और होगा। अगर ईश्वर सनाई पर्वत या चौथे आसमान पर रहता है तो तुम्हारा ईश्वर एकदेशी है। वह जगत की रचना, धारण पालन और जीवों के कर्मों की व्यवस्था और प्रलय करने वाला ईश्वर नहीं हो सकता, क्योंकि ईश्वर एक देशी नहीं है। वह तो गुण कर्म स्वभाव से सर्वव्यापक, अनन्त गुण–कर्म–स्वभाव वाला, सर्वज्ञ, सच्चिदानन्द, नित्य, शुद्ध, बुद्ध, मुक्त अनादि और अनन्त है इसलिए तुम भी उसी ईश्वर को मानो।

(2–3) ईसाई : ईश्वर ने कहा 'उजाला हो जाये उजाला हो गया, ईश्वर ने देखा कि अच्छा है। ईश्वर ने कहा पानियों के बीच आकाश हो जो पानियों को बांट दे। तब ईश्वर ने आकाश बनाया और पानी को ऊपर नीचे बांट दिया और आकाश को स्वर्ग कहा और सांझ, प्रभात तथा दूसरा दिन हुआ। (पर्व 1 आयत 3 से 8)

समीक्षक : प्रकाश तो जड़ होता है वह कभी किसी की बात नहीं सुन सकता। तुम्हारे ईश्वर ने शायद पहले कभी उजाला नहीं देखा था तभी उसे देखकर अच्छा कहा। यदि उजाला बात सुनता है तो सूर्य व अग्नि का प्रकाश तुम्हारी बात क्यों नहीं सुनता। तुम्हारा ईश्वर सर्वज्ञ नहीं है क्योंकि यदि वह सर्वज्ञ होता, सर्वव्यापक होता तब तो सब जगह स्वर्ग होता। जब पृथ्वी के साथ पहली आयत में आकाश बना दिया तो पानी बांटने के लिए दोबारा क्यों बनाया? यदि पहले आकाश न होता तो जल रहता कहां? जब सूर्य की रचना ही नहीं की तो फिर दिन–रात कैसे बन गए? ये सब असंभव बातें लिखी गई हैं।

thearyasamaj.org

(4) ईश्वर ने कहा हम आदमी को अपने स्वरूप में बनायें इसलिए ईश्वर के स्वरूप में आदमी को बनाया और नर–नारी बनाकर आशीर्वाद दिया। (पर्व 1 आयत 26 से 28)

समीक्षक : ईश्वर ने जब अपने स्वरूप में आदमी को बनाया तो उसमें ईश्वर के समान पवित्रता, ज्ञान और आनंद आदि गुण भी तो होने चाहिए थे, जो नहीं हैं। ईश्वर के समान जीव नित्य नहीं है, वह अनित्य है। अब बताओ, आदमी को उत्पन्न कहां से किया?

ईसाई : अपनी कुदरत या सामर्थ्य से मिट्टी बनाकर उससे आदमी को बनाया।

समीक्षक : ईश्वर का सामर्थ्य अनादि है या नवीन?

ईसाई : अनादि है।

समीक्षक : जब अनादि है तो जगत का कारण सनातन हुआ फिर तुम अभाव से भाव क्यों मानते हो?

ईसाई : सृष्टि के पूर्व ईश्वर के सिवाय कोई वस्तु नहीं थी।

समीक्षक : अगर कोई वस्तु नहीं थी तो जगत कहां से बना? अगर तुम ईश्वर के सामर्थ्य को गुण मानते हो तो गुण से पदार्थ कभी नहीं बन सकता जैसे रूप से अग्नि और रस से जल नहीं बन सकता। अगर तुम द्रव्य मानते हो तो इसका मतलब है कि ईश्वर से अलग दूसरा पदार्थ था। यदि जगत ईश्वर से बना होता तो उसके गुण, कर्म ,स्वभाव ईश्वर जैसे होते। जगत के गुण कर्म स्वभाव ईश्वर से अलग होने से पता चलता है कि जगत का कारण परमाणु आदि जड़ पदार्थ हैं। वेद में सृष्टि की उत्पत्ति के जो कारण बताये गए हैं वही ठीक सिद्ध होते हैं। सृष्टि के आदि में ईश्वर, जीव और प्रकृति तीन तत्व थे। ईश्वर ने इन्हीं तत्वों से सृष्टि बनाई है। अगर आदमी ईश्वर जैसा बना होता तो ईश्वर को आदमी जैसा होना चाहिए था, जो नहीं है।

(5) ईश्वर ने भूमि की धूल से आदमी बनाकर उसके नाक में श्वास फूंका। अदन में पूर्व एक बाग बनाकर उसमें उन्हें रखा। इस बाग के बीच में जीवन का पेड़ और भले–बुरे के ज्ञान का पेड़ उगाया। (पर्व 2 आयत 7 से 9)

thearyasamaj.org

समीक्षक : जब ईश्वर ने धूल से आदमी बनाया तो ईश्वर भी धूल से बना होगा? जो श्वास उसकी नाक में फूंका वह ईश्वर का था या नहीं। अगर ईश्वर धूल से नहीं बना और जो श्वास उसके नाक में फूंका वह अलग था तब तो ईश्वर ने आदमी को अपने स्वरूप में बनाया ही नहीं। अगर ईश्वर और आदमी एक से हैं तब तो ईश्वर में भी जन्म–मरण, भूख–प्यास, वृद्धि–नाश आदि दोष होने चाहिए थे। इन दोनों के न होने से तौरेत का वर्णन ठीक दिखाई नहीं देता। इनका ईश्वर तो इतना भी न जानता था कि आदमी को अदन के बाग से निकालना भी पड़ेगा।

(6) ईश्वर ने आदमी को सुलाकर उसकी एक पसली निकालकर उसमें मांस भरकर नारी बनाई, और उसे आदमी के पास लाया।

(पर्व 2 आयत 21–22)

समीक्षक : यदि ईश्वर ने आदमी को धूल से बनाया तो नारी को क्यों नहीं बनाया, इसी तरह दोनों को हड्डी से ही क्यों नहीं बनाया। अगर दोनों को एक ही तरह बनाता तो दोनों में एक अटूट प्रेम होता। क्या सभी मनुष्यों की एक पसली कम होती है और क्या एक पसली से बनी होने के कारण स्त्री की एक ही पसली होती है। इनकी बाइबल के रचनाकार का पदार्थज्ञान ही सृष्टिक्रम के अनुसार नहीं होने के कारण यह ईश्वरकृत नहीं है।

(7) ईश्वर ने जो सर्प बनाया था वह सब जीवों से धूर्त था। उसने नारी को उकसाया कि ईश्वर ने तुम्हें सब पेडों के फल खाने की आज्ञा दे रखी है केवल भले–बुरे का ज्ञान वाले पेड़ के फल खाने से इसलिए रोका है कि तुम ईश्वर के समान न हो जाओ। उसकी बात मानकर नारी ने स्वयं भी फल खाया और नर को भी खिलाया तब उन्हें अपने नंगे होने का ज्ञान हुआ और उन्होंने गूलर के पत्तों को सीकर अपना शरीर ढंका। इससे क्रोधित होकर ईश्वर ने सांप को धरती पर पेट के बल चलने और धूल खाने का शाप दिया, स्त्री को गर्भधारण का समय बढ़ाने और संतान जन्म के समय पीड़ा होने का और पुरुष को भूमि शापित होने और खेत का सागपात खाने का शाप दिया। पुरुष और स्त्री के वंश एक दूसरे के शत्रु रहेंगे ऐसा करने को कहा।

(तौरेत उत्पत्ति पर्व 3 आयत 1 से 18)

समीक्षक : अगर ईसाइयों का ईश्वर सर्वज्ञ होता तो न वह दुष्ट सर्प को

बनाता और न वह दुष्टता करता। अगर ये लोग पूर्व जन्म नहीं मानते तो ईश्वर ने किस अपराध से उसे पापी बनाया। सच पूछो तो वह सर्प था ही नहीं, मनुष्य था। आप झूठे हो और जो दूसरे को झूठ से बहकाए वह शैतान कहलाता है। इस तरह इनका ईश्वर भी झूठा और स्वार्थी दिखाई देता है। जिसने आदम–हव्वा को ज्ञानदाता और अमर कर देने वाले पेड़ के फल खाने से रोका। क्या वह स्वयं अज्ञानी और मरणधर्मा था जो उसने अपने लिए वह पेड़ उगाया था? आजकल तो ऐसा पेड़ कहीं नहीं मिलता, लगता है ईश्वर ने उसका बीज भी नष्ट कर दिया है। शाप तो ईश्वर को होना चाहिए क्योंकि उसने झूठ बोला और फल खाने से रोका। बिना अपराध आदम–हव्वा को शाप देने से ईश्वर अन्यायी सिद्ध हो जाता है। बिना श्रम के जब कोई काम नहीं होता तो गर्भधारण और बालक का जन्म पीड़ा के बिना कैसे हो सकता है। अगर मनुष्य को ईश्वर ने सागपात खाने का शाप दिया तो बाइबल में मांस खाना जो लिखा है वह झूठा क्यों नहीं है? जब आदम का कोई अपराध सिद्ध ही नहीं होता तो ईसाई लोग सब मनुष्यों को आदम के अपराध से उत्पन्न संतान होने के कारण अपराधी क्यों मानते हैं। ऐसी पुस्तक ईश्वरकृत और मानने योग्य नहीं हो सकती।

(8) ईश्वर ने कहा कि आदमी भले–बुरे का ज्ञान हो जाने से हमारी तरह ही हो गया है। अब कहीं ऐसा न हो कि वह जीवन के पेड़ का फल खाकर अमर हो जाये इसलिए उसने आदम को उस बाग से निकालकर जीवन के पेड़ के मार्ग की रखवाली करने के लिए नंगी तलवारों वाले पहरेदार नियुक्त कर दिए। (पर्व 3 आयत 24–25)

समीक्षक : ईश्वर के समान तो कोई हो ही नहीं सकता। मनुष्य ज्ञान में ईश्वर के समान हो गया यह ईर्ष्या इनके ईश्वर को क्यों हुई? इससे सिद्ध होता है कि वह ईश्वर था ही नहीं। इनका ईश्वर कोई मनुष्य विशेष था। मनुष्य को बाग में रखने से पूर्व उसे निकालना पड़ेगा इस बात का ज्ञान न होना, मनुष्य के ज्ञान को बढ़ते देख दुःखी होना, पेड़ की रक्षा के लिए पहरेदार नियुक्त करना ये सब काम मनुष्यों के ही हैं, ईश्वर के नहीं। इनका ईश्वर सर्वज्ञ नहीं था।

(9–10) एक बार काईन भूमि के फलों में से और उसका भाई हाबिल अपने झुंड में से मोटी सी भेड़ ईश्वर के लिए भेंट लाया। ईश्वर ने हाबिल की भेंट स्वीकार कर उसका स्वागत किया और काईन की भेंट

thearyasamaj.org

का आदर न किया। इस पर दोनों भाइयों में झगड़ा हो गया और हाबिल की मृत्यु का कारण बना। ईश्वर ने काईन से कहा–तेरे भाई के लहू का शब्द भूमि से मुझे पुकारता है, अब तू पृथ्वी से शापित है।

(तौरेत पर्व 4 आयत 3 से 11)

समीक्षक : इनका ईश्वर मांसाहारी और पक्षपाती न होता तो हाबिल की भेंट का सत्कार और काईन का तिरस्कार क्यों करता? दोनो भाइयों में झगड़ा और हाबिल का काईन के द्वारा मारा जाना तो ईश्वर के कारण ही हुआ। ईसाइयों का ईश्वर मनुष्य की तरह बातें करता तथा किसी का सत्कार और किसी का निरादर करता है, मनुष्यों की तरह बाग में आता जाता है, काईन से उसके भाई का पता पूछता है, इन सब बातों से सिद्ध होता है कि बाईबल ईश्वरकृत है ही नहीं, इसे मनुष्यों ने बनाया है तभी तो लहू का शब्द भूमि से पुकारने जैसी बातें लिखी हैं, क्योंकि लहू तो शब्द कर ही नहीं सकता।

(11) सृष्टि की उत्पत्ति के तीन सौ साल बाद तक हनूक मतूसिलह ईश्वर के साथ–साथ चलता था। (तौरेत पर्व 5 आयत 22)

समीक्षक : अगर इनका ईश्वर मनुष्य न होता तो हनूक के साथ क्यों चलता? ईश्वर निराकार और व्यापक है उसके साथ मनुष्य कैसे चल सकता है।

(12) उन दिनों में पृथ्वी पर दानव थे। जब पृथ्वी पर आदमी बढ़े और उनकी पुत्रियां उत्पन्न हुईं तो उन्हें सुन्दर देखकर ईश्वर के पुत्रों ने जिससे चाहा उससे विवाह कर लिया। उनसे उत्पन्न होने वाली सन्तान भी वलवान और प्रसिद्ध हुई। आदमी की बढ़ती हुई दुष्टता को देखकर परमेश्वर पछताया कि उसने आदमी, पशु–पक्षियों को क्यों बनाया और उन्हें पृथ्वी से नष्ट करने का निश्चय किया।

(तौरेत पर्व 6 आयत 1 से 7)

समीक्षक : ईसाइयों के ईश्वर का विवाह किससे हुआ, उसके संबंधी कौन थे? ईश्वर के पुत्र उत्पन्न हुए तभी तो उनके विवाह आदम की पुत्रियों से हुए। इनका ईश्वर मनुष्य था तभी तो मनुष्यों की तरह उसने संतान उत्पन्न की। वह सर्वज्ञ नहीं था तभी तो उसे पता नहीं चला कि आगे चलकर मनुष्य दुष्ट होगा और वह मनुष्यों की भांति सृष्टि के जीवों को बनाने की भूल के लिए पछताया। इससे सिद्ध होता है कि ईसाइयों का ईश्वर पूर्ण–विद्वान, योगी, शोकरहित और शांति–विज्ञानयुक्त, सच्चिदानंद नहीं है। इसलिए उसे ईश्वर

thearyasamaj.org

नहीं माना जा सकता। इतना ही नहीं उसने सृष्टि को नष्ट करने का निश्चय तो कर लिया, पर न जाने क्यों अभी तक नष्ट नहीं की।

(13) ईश्वर ने नूह से कहा कि तू अपनी पत्नी, बेटे–बहुओं के साथ तीन सौ हाथ लंबी, 50 हाथ चौड़ी और तीस हाथ ऊंची नाव में जाना, जिसमें सभी जातियों के दो–दो पशु, पक्षी, कीट जो नर–मादा हों और सबके निर्वाह के लिए भोजन सामग्री साथ ले जाना जिससे सभी जीवित रहें और नूह ने ईश्वर की आज्ञा का पालन किया।

(तौरेत पर्व 6 आयत 15 से 22)

समीक्षक : एक नाव में सारा परिवार, भोजन सामग्री के अतिरिक्त हाथी–हथिनी, ऊंट–ऊंटनी और करोड़ों जातियों के पशु–पक्षी समा गए। ऐसी गप्प कोई अज्ञानी मनुष्य ही हांकेगा, ईश्वर नहीं।

(14) नूह ने परमेश्वर के लिए एक वेदी बनाई जिसमें सारे पवित्र पशुओं और पक्षियों की बलि दे दी। उस सुगन्ध को सूंघकर परमेश्वर ने अपने मन में कहा कि मैं मनुष्यों के व्यवहार का शाप पृथ्वी को न दूंगा और सारे जीवधारियों को फिर कभी न मारूंगा।

(तौ. पर्व 8 आयत 20–21)

समीक्षक : नूह ने वेदी बनाई और होम किया यह बात वेद से ली गई, सिद्ध होती है। इनका ईश्वर नाक से सूंघता भी है, अज्ञानी मनुष्य की तरह कभी शाप देता है, कभी पछताता है, कभी कहता है सबको मार दूंगा, कभी कहता है कि अब कभी नहीं मारूंगा। ये सब बातें न तो ईश्वर की हैं न विद्वान की, क्योंकि एक विद्वान की बात और प्रतिज्ञा स्थिर होती है।

(15) ईश्वर ने नूह को आशीर्वाद दिया कि हर जीता चलता जन्तु तुम्हारे भोजन के लिए होगा लेकिन माँस लोहू समेत मत खाना और हरी तरकारियों के समान सारी वस्तुएं मैंने तुम्हें खाने को दी हैं।

(तौ. पं. 9 आयत 1 से 4)

समीक्षक : ईश्वर के लिए सभी प्राणी पुत्र के समान हैं, इस तरह यदि माता–पिता ही एक पुत्र को मारकर दूसरे को खिलायें तो क्या यह महापाप नहीं होगा। उन्होंने ऐसा लिखकर सब मनुष्यों को हिंसक बना दिया है। इनका ईश्वर कसाई की तरह निर्दयी और पापी है।

thearyasamaj.org

(16) सारी पृथ्वी में एक ही बोली और एक ही भाषा थी। तब लोगों ने एक ऐसा नगर और गुम्मट, जिसकी चोटी स्वर्ग तक पहुँचे, बनाने का निश्चय किया। जब वे नगर बना रहे थे तो ईश्वर देखने उतरा। उसने सोचा यदि इनमें इसी तरह एकता रही तो जिस काम का निश्चय करेंगे उसे पूरा कर लेंगे। इसलिए परमेश्वर ने उन्हें सारी पृथ्वी पर छिन्न–भिन्न करने के लिए उनकी भाषा बिगाड़ दी जिससे उनमें एकता न हो और वे उसे नगर को न बना सकें।

(तौरत पर्व 11 आयत 1 से 8)

समीक्षक : जब लोगों की भाषा एक होगी तो वे प्रेम से रहते होंगे। ईसाइयों के सनाई पहाड़ पर रहने वाले ईश्वर को उनकी उन्नति अच्छी नहीं लगी इसलिए उनकी एकता नष्ट करने के लिए उनकी भाषा बिगाड़ दी। ऐसी बातें मनुष्य की ही हो सकती हैं, ईश्वर की नहीं, इसलिए यह ईश्वरकृत पुस्तक नहीं है। इनका ईश्वर तो शैतान से भी बुरा काम करता है, फिर ईश्वर कैसे हो सकता है।

(17) अब्राहम ने अपनी पत्नी सरी से कहा 'अगर मिस्री तुझे देखे लेंगे तो तेरा पति होने के कारण मुझे मार डालेंगे। इसलिए उनके पूछने पर तू उन्हें मेरी बहिन बता देना जिससे मेरे प्राण बच जायेंगे।

(तौरेत पर्व 12 आयत 11 से 13)

समीक्षक : अब्राहम जो ईसाईयों और मुसलमानों का बड़ा पैगम्बर कहलाता है, अपनी जान बचाने के लिए अपनी पत्नी को कहता है कि उसके शत्रुओं को अपना परिचय उसकी बहिन के रूप में दे। जिनके पैगम्बर ऐसे झूठे होंगे, उनको विद्या या ज्ञान कैसे प्राप्त होगा।

(18) ईश्वर ने अब्राहम से कहा तू और तेरा वंश मेरे नियम को माने। तुम में से हर एक पुरुष का खतना किया जाये और तुम्हारे शरीर की कटी हुई चमड़ी मेरे और तुम्हारे बीच में नियम का चिन्ह होगी। तुम्हारा अपना या किसी से मोल लिया हुआ पुत्र हो उसका भी खतना किया जाये। जो इस नियम को तोड़े उसे अपने लोगों से दूर कर दिया जाये।

(तौरत पर्व 17 आयत 9 से 14)

समीक्षक : यदि गुप्त स्थान पर मांस की परत आवश्यक न होती तो ईश्वर

thearyasamaj.org

उसे बनाता ही नहीं। इससे कोमल स्थान की रक्षा उसी प्रकार होती है जैसे पलक आंख की रक्षा करती है। मूत्र त्याग के बाद कपड़ों में बूंद नहीं लगती, चोट के समय भी रक्षा करती है। इसलिए सदा के लिए खतना प्रथा को जारी रखने की आज्ञा देना गलत है। आठ दिन के कोमल शिशु को इतनी पीड़ा देना हिंसा नहीं तो और क्या है? आजकल ईसाई इस नियम को नहीं मानते हैं।।

(19) तब उससे बात करने से रह गया और अब्राहम के पास से ईश्वर ऊपर चल गया। (प. 17 आ. 22)

समीक्षक : इनका ईश्वर मनुष्य या पक्षी था जो ऊपर से नीचे और नीचे से ऊपर जाता रहता था या कोई जादूगर पुरुष जान पड़ता है।

(20) फिर गर्मी के दिनों में उसने ईश्वर को दो और व्यक्तियों के साथ अपने तंबू के द्वार पर बैठे दिखा। तब वह उनके स्वागत के लिए गया और कहा अब उसे छोड़कर न चले जायें। यदि इच्छा हो तो उसके तंबू में चलकर विश्राम करके भोजन ग्रहण करें। ईश्वर ने उसकी प्रार्थना मान ली। तब अब्राहम ने अपनी पत्नी से थोड़ा अनाज पीसकर रोटी बनाने को कहा और स्वयं जल्दी से एक कोमल बछड़ा लाकर पकाया और उन्हें भोजन करवाया। (प.18 आ 1–8)

समीक्षक : जिनका ईश्वर बछड़े का मांस खाता है उसके उपासक गाय बछड़ों को क्यों छोड़ेंगे। जिसमें दया नहीं, जो जीभ के रस के लिए मांस खाने को आतुर रहे। ऐसा विषयी ईश्वर हो ही नहीं सकता। ईश्वर के साथ दो और व्यक्तियों का होना इस बात को प्रकट करता है कि यह जंगली मनुष्यों की एक मंडली थी जिसके प्रधान का नाम बाइबल में ईश्वर रखा होगा। बुद्धिमान लोग न तो इनकी पुस्तक को ईश्वरकृत मानते हैं और न ऐसे ईश्वर को मानते हैं।

(21) ईश्वर ने अब्राहम से पूछा सरी ये कहकर क्यों मुस्कराई कि मैं जो बुढ़िया हूं, सचमुच बालक जनूंगी। क्या ईश्वर के लिए कोई बात असंभव है। (तौरेत पर्व 18 आयत 13–14)

समीक्षक : ईसाइयों का ईश्वर भी बच्चों और स्त्रियों के समान चिढ़ता और ताना मारता है।

(22) परमेश्वर ने स्वर्ग से समूद और अमूर पर गंधक और आग बरसा

thearyasamaj.org

दी, जिससे नगरों, चरागाहों, नगर के निवासियों और जो कुछ भूमि पर उगता था सबको उलट दिया।

(तौरेत उत्पत्ति पर्व 19 आयत 24–25)

समीक्षक : ईश्वर को बच्चों–बूढ़ों किसी पर भी दया नहीं आई जो सबको दबाकर मार डाला। यह बात दया, न्याय और विवेक के विरुद्ध है। जिनका ईश्वर ऐसा होगा, वे लोग भी कम अन्यायी नहीं होंगे।

(23) लूत की दोनों बेटियों ने अपने पिता को अंगूरों का रस पिलाकर उसके साथ एक–एक रात शयन किया जिससे वे दोनों गर्भवती हो गईं। (तौ. उत्प प. 19 आ. 32 से 36)

समीक्षक : जिस नशे को पीकर पिता–पुत्री भी कुकर्म करने से न बच सके ऐसी मदिरा ईसाई पीते हैं, उनकी बुराई का क्या पारावार है? इसलिए सज्जन लोगों को मद्य–पान का नाम भी नहीं लेना चाहिए।

(24) अपने कहने के समान ईश्वर ने सरी से भेंट की और विषय किया, जिससे सरी गर्भिणी हुई।

(तौरेत उत्पत्ति पर्व 21 आयत 1–2)

समीक्षक : जिनका ईश्वर इस प्रकार सरी से भेंट करता है तो लगता है कि सरी ईश्वर की कृपा से ही गर्भवती हुई।

(25) जब अब्राहम ने तड़के उठ के रोटी, मशक में जल और लड़का देकर हाजिरा को घर से विदा कर दिया तो उसने लड़के को एक झाड़ी के नीचे रखा और उसके सामने बैठकर चिल्ला–चिल्ला कर रोने लगी तो ईश्वर को उसकी आवाज बालक के रोने के समान सुनाई दी।

(तौरेत उत्पत्ति पर्व 21 आयत 14 से 17)

समीक्षक : ईसाइयों के ईश्वर की लीला देखो। पहले तो सरी का पक्ष लेकर हाजिरा को घर से निकलवा दिया और जब वह चिल्ला–चिल्ला कर रोई तो शब्द या आवाज बच्चे की सुनाई दी। भला ऐसी बातें ईश्वर और उसकी रची पुस्तक की हो सकती है? कभी नहीं।

(26) इसके बाद ईश्वर ने अब्राहम से कहा कि तू अपने प्यारे पुत्र को होम के लिए भेंट चढ़ा। इस पर अब्राहम ने अपने पुत्र को बांधकर लकड़ियों पर रख दिया और जैसे ही उसका वध करने लगा तो ईश्वर

thearyasamaj.org

के दूतों ने उसे यह कहकर रोक दिया कि 'मैं जानता हूं कि तू ईश्वर से डरता है' इस तरह ईश्वर ने अब्राहम की परीक्षा ली।

(तौरेत उत्पत्ति पर्व 22 आयत 1 से 12)

समीक्षक : इससे साफ पता चलता है कि ईसाइयों का ईश्वर अल्पज्ञ है, सर्वज्ञ नहीं। क्योंकि यदि वह सर्वज्ञ होता तो अब्राहम की परीक्षा लिए बिना ही वह उसकी श्रद्धा को जान लेता। उनका ईश्वर साधारण मनुष्य ही दिखाई देता है।

(27) आप हमारी कोई समाधि चुनकर अपने मृतक को उसमें गाड़ें। (तौरेय पर्व 33 आ. 6)

समीक्षक : मुर्दों को गाड़ना हानिकारक है, इससे वायु में दुर्गन्ध पैदा हो जाती है और रोग फैलते हैं।

प्रश्न : जिनसे हम प्रीति करते हैं, मर जाने पर उनको जलाना ठीक है?

उत्तर : प्रीति तो जीवात्मा से होती है, शरीर से नहीं। जीवात्मा के निकल जाने पर शरीर को जलाने में कोई हानि नहीं। प्रीति होने पर भी आप मृतक को घर में तो नहीं रख लेते। कब्र में गाड़ते समय भी तो तुम शरीर पर धूल, ईंट, चूना, पत्थर आदि डालते हो, क्या यही प्रीति है। गाड़ने से वायु दूषित होती है और रोग फैलते हैं। एक–एक कब्र के लिए कम से कम 6 हाथ लम्बी और 4 हाथ चौड़ी भूमि चाहिए, इस तरह कितनी धरती कब्रिस्तानों से घिर जाती है वह न रहने, न बाग लगाने और न ही खेती के काम आ सकती है। मुर्दों के संस्कार करने का सबसे अच्छा तरीका जलाना है, दूसरा जंगल में फैंकना, तीसरा जल में डालना, इससे पशु–पक्षी तो खाकर पेट भर लेते हैं लेकिन जल और वायु तो थोड़ी बहुत दूषित होती ही है। सबसे बुरा तरीका गाड़ना है।

प्रश्न : जलाने से भी तो दुर्गन्ध होती है?

उत्तर : यदि ठीक विधि से जलायें तो दुर्गन्ध नहीं होती। वेद में लिखा है–वेदी पांच हाथ लंबी, साढे तीन हाथ चौड़ी और तीन हाथ गहरी खोद कर उसमें लकड़ियों की चिता बनाकर आधा मन चन्दन, शरीर के बराबर घी, कस्तूरी, केसर, सामग्री आदि डालकर घी की आहुतियां देते हुए संस्कार करें। बीस

सेर घी तो कम से कम डालना चाहिए, गरीब व्यक्ति के लिए यह राज्य या धनी व्यक्तियों या अपनी जाति वालों द्वारा दिया जाना चाहिए। इसी को वेद में अंत्येष्टि, अश्वमेध या नरमेध यज्ञ कहा गया है। इस तरह थोड़ी सी भूमि में अनगिनत लोगों का संस्कार हो जाता है और भूमि भी नहीं बिगड़ती। कब्रिस्तान को तो देखने से भी भय होता है।

(28) मेरे स्वामी अब्राहम का ईश्वर धन्य है। जिसने मेरे स्वामी को अपनी दया और अपनी सच्चाई के बिना न छोड़ा। मार्ग में परमेश्वर ने मेरे स्वामी के भाइयों के घर की ओर मेरी अगुआई की।

(तौरेत उत्पत्ति पर्व 24 आयत 27)

समीक्षक : क्या वह अब्राहम का ईश्वर था या मनुष्य, जो मार्ग दिखलाने का काम करता था, फिर वह आजकल मार्ग क्यों नहीं दिखलाता।

(29) इस्माईल के बेटों के नाम –नबीत, फीदार, अदबिएल, मिवसाम, मिसमाअ, दूम, मस्सा, हरद, तैमा इतूर, नफीस और किदीम हैं।

(तौरेत उत्पत्ति पर्व 25 आयत 13 से 15)

समीक्षक : अब्राहम और उसकी हाजिरा दसी से उत्पन्न पुत्र या इस्माईल है।

(30) मैं तेरे पिता की रुचि का भोजन बनाऊंगी। तू उसे लेकर अपने पिता के पास ले जाना जिससे वह मरने से पहले भोजन खा के तुझे आशीष देवे। रिवका ने अपने घर से अपने बड़े बेटे एसौ का अच्छा पहनावा लिया और उसके हाथों ओर गले पर बकरी के मेमने का चमड़ा लपेट दिया। तब याकूब अपने पिता के पास जाकर बोला 'मैं आपका सबसे बड़ा बेटा एसौ हूं, जैसा आपने कहा था मैंने वैसा ही किया है, उठिये अब मेरे शिकार में से मांस खाइये, जिससे आपके प्राण मुझे आशीष दें। (तौरेत उत्पत्ति पर्व 27 आयत 9 से 19)

समीक्षक : इनके सिद्ध और पैगम्बर छल–कपट से आशीर्वाद लेकर बनते हैं, योग्यता से नहीं। इससे बढ़कर बुरी बात और क्या हो सकती है।

(31) याकूब सवेरे उठा और उसने जिस पत्थर पर सिर रखा था, उसे खड़ा करके उस पर तेल डालकर उसका नाम बेतएल रखा। यह पत्थर जो मैंने खड़ा किया ईश्वर का घर होगा।

(तौरेत उत्पत्ति पर्व 28 आयत 18 से 22)

समीक्षक : क्या यही पत्थर ईश्वर का घर है जिसमें उनका ईश्वर रहता था, जिसे यह लोग पवित्र बेतएल कहते हैं। इन्होंने पत्थर पूजे और पुजवाये।

(32) ईश्वर ने राखिल को याद किया, उसकी बात सुनी और उसकी कोख खोली। वह गर्भवती हुई और उसने बेटी को जन्म दिया और कहा कि 'ईश्वर ने मेरी निंदा दूर की'।

समीक्षक : ईश्वर स्त्रियों की कोख खोलने वाला डाक्टर था क्या? ये नहीं बताते कि किस शस्त्र या दवाई से कोख खोली।

(33) ईश्वर ने आरामी लावन को स्वप्न में सावधान किया कि तू याकूब को बुरा भला मत कह। क्योंकि तू अपने पिता के घर का एकमात्र अभिलाषी है, तूने मेरे देवों को किसलिए चुराया है?

(तौरेत उत्पत्ति पर्व 31 आयत 24 और 30)

समीक्षक : बाइबल में ईश्वर हजारों मनुष्यों को स्वप्न में आया, बातें की, साक्षात मिला, खाया–पिया आदि, बातें लिखी हैं। लेकिन आजकल तो किसी को भी जागते या सोते हुए ईश्वर नहीं मिलता। इनका ईश्वर भी प्राचीन जंगली लोगों में से ही एक रहा होगा जो मूर्तियां पूजते थे, तभी तो उसने अपने देवों की चोरी के बारे में पूछा।

(34) याकूब अपने मार्ग में चला गया। राह में ईश्वर के दूत मिले जिन्हें उसने ईश्वर की सेना कहा।

(तौरेत उत्पत्ति पर्व 32 आयत 1–2)

समीक्षक : ईसाइयों का ईश्वर मनुष्य ही था, इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता क्योंकि वह मनुष्यों की तरह सेना रखता था। सेना के लिए शास्त्र भी रखता होगा और युद्ध भी करता होगा।

(35) याकूब अकेला रह गया और पौ फटने तक एक व्यकित से मल्लयुद्ध (कुश्ती) करता रहा, जब वह याकूब पर भारी नहीं पड़ा तो उसने उसकी जांघ की भीतर की नस को छुआ जिससे उसकी टांग की नस चढ़ गई। उसने कहा 'मुझे जाने दे पौ फटती है। याकूब ने कहा 'जब तक तू मुझे आशीष नहीं देता, मैं तुझे जाने नहीं दूंगा। उसने उसका नाम पूछा। तब याकूब ने अपना नाम बताया तो उसने कहा 'अब आगे से तेरा नाम याकूब नहीं 'इसराएल' होगा क्योंकि तूने ईश्वर

और मनुष्यों से राजा की भांति मल्लयुद्ध किया है। जब याकूब ने उसका नाम पूछा तो उसने कहा 'तू मेरा नाम क्यों पूछता है' और वह आशीष देकर चला गया। जहां याकूब को ईश्वर का साक्षात दर्शन हुआ और आशीर्वाद मिला था, उसने उस स्थान का नाम 'फलूएल' रखा। जब उसने सूर्य के प्रकाश में देखा तो उसकी जिस टांग की नस चढ़ गई थी। वह लंगड़ा रही थी। इसलिए इसराएल के वंशज आज भी मांस खाते समय टांग की उस नस को नहीं खाते जिसे ईश्वर ने छुआ था।

(तौरेत उत्पत्ति पर्व 32 आयत 24 से 32)

समीक्षक : ईसाइयों का ईश्वर शरीरवाला ही होगा तभी तो उसने याकूब से मल्लयुद्ध किया और याकूब ने उसे प्रत्यक्ष देखा। ईश्वर ने उसकी नाड़ी चढ़ा तो दी पर ठीक नहीं की। सरा और राखल पर पुत्र हाने की कृपा की, पूछने पर अपना नाम नहीं बताया, ऐसे कार्य मनुष्य ही करता है। इसलिए वह कभी ईश्वर नहीं हो सकता जिसके काम साधारण मनुष्यों के समान हों।

(36) ईश्वर का मुंह देखा। (तौरेत उत्पत्ति पर्व 33 आयत 10)

समीक्षक : अगर ईश्वर का मुंह है तो अन्य अंग भी होंगे और वह मनुष्यों की भांति जन्म लेता और मरता भी होगा।

(37) यहूदाह के सबसे बड़े पुत्र एर को परमात्मा ने दुष्ट होने के कारण मार डाला तब यहूदाह ने अपने दूसरे पुत्र ओनान को अपने भाई की पत्नी से संबंध बनाकर अपने भाई का वंश चलाने को कहा। ओनान अपने भाई की पत्नी के पास गया और यह सोचकर कि यह वंश मेरा न होगा वीर्य भूमि पर गिरा दिया। उसके इस कार्य को दुष्टकर्म मानकर ईश्वर ने उसे भी मार डाला। (प. 38 आ. 7—10)

समीक्षक : यह काम मनुष्य का हो सकता है, ईश्वर का नहीं। जब उसके साथ नियोग हुआ तो ईश्वर को उसकी बुद्धि शुद्ध कर देनी चाहिए थी, उसे मारना नहीं चाहिए था। इससे तो सिद्ध हो जाता है कि वेदों में बताया गया नियोग का नियम दूसरे देशों में भी प्रचलित था।

तौरेत यात्रा की पुस्तक

(38) जब मूसा बड़ा हुआ तो उसने देखा कि एक मिस्री उसके भाई

ईबरानी को मार रहा था। आसपास किसी को न देखकर मूसा ने उस मिस्री को मारकर रेत में दबा दिया। दूसरे दिन जब वह बाहर निकला तो उसने दो इबरानी झगड़ते देखकर उन्हें झगड़ने से रोका तो उनमें से एक ने कहा कि तुझे किसने हमारा न्याय करने को कहा है, क्या तू चाहता है कि जैसे तूने मिस्री को मार डाला है वैसे ही मुझे भी मार डाले। यह सुनकर मूसा डरकर भाग निकला।

(तौरेत यात्रा पर्व 2 आयत 11 से 15)

समीक्षक : ईसाई मत का आचार्य मूसा जो क्रोध आदि दुर्गुणों वाला, हत्यारा, राजदंड से बचकर भागने वाला था वह झूठा भी अवश्य होगा। अगर उसे ईश्वर मिला और पैगम्बर बना दिया, उसी ने यहूदी मत चलाया। जिनके मूल पूर्वज मूसा आदि जंगली अवस्था में थे, ज्ञानी नहीं तो उनके अनुयायियों में ज्ञान कहां से होगा अर्थात् वे अज्ञानी ही होंगे।

(39) जब वह एक तरफ देखने के लिए घूमा तो ईश्वर ने एक झाड़ी में से उसे 'मूसा–मूसा' कहकर पुकारा और कहा कि मेरे पास पांवों में जूती पहनकर मत आ क्योंकि यह स्थान पवित्र है।

(तौरेत या. प. 3 आयत 4–5)

समीक्षक : इनका ईश्वर मनुष्य को मारकर दबा देने वाले मूसा से मित्रता रखता है और ये उसे पैगम्बर मानते हैं। जब ईश्वर ने उसे पवित्र स्थान पर जूती ले जाने से मना किया तो ईसाई चर्च में जूते पहनकर क्यों जाते हैं?

प्रश्न : हम जूतों के स्थान पर टोपी उतार लेते हैं?

उत्तर : यह तो दूसरा अपराध है क्योंकि टोपी उतारने को न ईश्वर ने कहा और न ही तुम्हारी पुस्तक में लिखा है। जो उतारना चाहिए उसे तो तुम उतारते नहीं और जो नहीं उतारना चाहिए उसे तुम उतारते हो।

प्रश्न : यूरोप के देशों में शीत अधिक है इसलिए हम लोग जूती नहीं उतारते हैं?

उत्तर : क्या सिर में ठंड नहीं लगती। यूरोप वाले ठंड के कारण जूती नहीं उतारते परन्तु यहां के ईसाइयों को तो घर में और बिस्तर में आते समय जूती उतारनी चाहिए। यदि तुम ऐसा नहीं करते तो बाइबल के विरुद्ध चलते हो।

thearyasamaj.org

(40) ईश्वर ने मूसा को हाथ में पकड़ी हुई छड़ी धरती पर रखने को कहा, जो धरती पर रखते ही सर्प बन गई। मूसा डर कर भागने लगा तो ईश्वर ने उसे सर्प की पूंछ पकड़ने को कहा। पूंछ पकड़ते ही सर्प फिर छड़ी बन गया। तब ईश्वर ने मूसा को अपना हाथ गोद में रखने को कहा जो रखते ही हिम (बर्फ) के समान हो गया और दोबारा रखते ही फिर पहले जैसा हो गया। नील नदी का जल सूखी धरती पर गिरकर लहू हो जायेगा। (तौ. यात्रा पर्व 4 आयत 2 से 9)

समीक्षक : इनका ईश्वर कोई जादूगर ही रहा होगा क्योंकि ऐसे खेल तो आजकल जादूगर दिखाते हैं। बार–बार अपने को ईश्वर कहना, अपनी प्रशंसा आप करना है, दम्भी मनुष्य के लिए तो ठीक हो सकती है किसी श्रेष्ठ जन के लिए नहीं।

(41) फसह मेमना मारो, एक मुट्ठी जूफा लेकर उसे बर्तन में पड़े लहू में डुबोओ और दरवाजे की ऊपर की चौखट के पास दरवाजे के दोनों ओर छाप लगाओ। तुममें से कोई भी रात भर अपने घर के द्वार से बाहर न जाए। क्योंकि परमेश्वर मिस्र को मारने के लिए जब यहां से गुजरेगा तो वह द्वार पर बने लहू के निशान देखकर अपने नाशक तुम्हारे घरों में मारने नहीं भेजेगा।

(तौ. यात्रा पर्व 12 आयत 11–13)

समीक्षक : इनका ईश्वर लहू के छापे देखकर ही इसरायल कुल के लोगों का घर पहचानेगा, अन्यथा नहीं। ऐसी बात तुच्छ बुद्धि वाले ही सोच सकते हैं यह बात तो टोने करने वाले जैसी है। इससे पता चलता है कि यह पुस्तक किसी जंगली ने लिखी है, ईश्वर ने नहीं।

(42) तब परमेश्वर ने आधी रात को मिस्र देश में फिरऊन के पहिलौठे (पहला बेटा) से लेकर बंदीगृह मे पड़े हुए अन्य पशुओं के पहिलौठे भी नष्ट कर दिये। रात को जब फिरऊन, उसके सेवक उठे तो मिस्र में बड़ा विलाप हुआ क्योंकि ऐसा कोई घर न बचा था जिसमें कोई न मरा हो अर्थात् हर घर में किसी न किसी की मौत हुई थी।

(तौ. या. पर्व 12 आयत 29–30)

समीक्षक : ईसाइयों का ईश्वर कितना निष्ठुर है जिसने बिना अपराध किए इतने बच्चे, बूढ़े और पशु मार दिए और उसे दया न आई। ऐसा काम ईश्वर

thearyasamaj.org

को तो क्या साधारण मनुष्य को भी नहीं करना चाहिए। ईसाइयों का ईश्वर मांसाहारी है इसलिए वह दया कैसे करता?

(43) परमेश्वर ने मूसा से कहा छड़ी उठाकर समुद्र पर अपना हाथ बढ़ा इससे समुद्र के बीच भूमि सूखी हो जायेगी, इसरायल की संतानों से आगे बढ़ने को कहा कि ईश्वर तुम्हारे लिए युद्ध करेगा।

(तौरेत यात्रा पर्व 14 आयत 14 से 16)

समीक्षक : पहले इनका ईश्वर गडरिये की तरह इसरायल कुल की भेड़ों के पीछे घूमता था अब उनकी सेनाओं के लिए समुद्र में रास्ता बनाता और युद्ध करता कहा गया है। ईसाइयों का ईश्वर आजकल न जाने कहां खो गया है यदि मिल जाता तो समुद्र के बीच रेलगाड़ियों की पटरियां बनवा लेते जिससे संसार का उपकार हो जाता। ऐसी असंभव मूर्खों सी बातें लिखने वाला ईश्वर तो क्या, कोई बुद्धिमान व्यक्ति भी नहीं हो सकता।

(44) मैं परमेश्वर, तेरा ईश्वर ज्वलित सर्वशक्तिमान हूं, जो पितरों के अपराध (ईश्वर से वैर रखने) का दंड उनकी तीसरी–चौथी पीढ़ी तक देता हूं। (तौ. य. पर्व 20 आयत 5)

समीक्षक : क्या दुष्ट पिता की अच्छी संतान और अच्छे पिता की संतान दुष्ट नहीं होती? इस तरह पिता के अपराध का दंड तीसरी–चौथी पीढ़ी तक संतान को देना कैसा अन्याय है। ऐसा काम कोई नीच बुद्धि व्यक्ति ही करेगा, ईश्वर नहीं

(45) विश्राम के दिन को उसे पवित्र रखने के लिए स्मरण कर। छः दिन तू परिश्रम कर, सातवां दिन विश्राम का है उसे परमेश्वर ने आशीष दी है। (तो. या पर्व 20 आयत 8 से 11)

समीक्षक : क्या रविवार ही पवित्र दिन है। बाकी छः अपवित्र हैं, क्या ईश्वर ने रविवार को आशीष दी और बाकी दिनों को शाप दिया था अथवा क्या इनका ईश्वर छः दिन तक परिश्रम करने के बाद सातवें दिन थक कर सो गया था? भला रविवार में ऐसा क्या गुण दिखाई दिया जो उसे पवित्र कर दिया। ऐसी बेसिर–पैर की बातें लिखने वाला ईश्वर हो ही न हीं सकता।

(46) अपने पड़ोसी की झूठी गवाही मत दे। अपने पड़ोसी की स्त्री, दास–दासी, पशु, धन आदि किसी वस्तु का लालच न कर।

(तौ. या पर्व 20 आयत 16–17)

thearyasamaj.org

समीक्षक : ऐसा लगता है कि ईसाई पड़ोसी के माल का लालच करते होंगे, तभी तो उनकी पुस्तक में यह सब लिखा गया। हम तो मनुष्य मात्र को पड़ोसी मानते हैं, किसे पड़ोसी न मानें। ऐसी स्वार्थी बातें मनुष्यों की ही हो सकती हैं, ईश्वर की नहीं।

(47) यदि कोई किसी मनुष्य को मारे और वह मर जाये तो निश्चय ही उसका घात किया जाये, लेकिन यदि मनुष्य मारने की इच्छा न रखता हो और फिर भी ईश्वर इच्छा से मर जाये तब मैं तुझे भागने का स्थान बता दूंगा। (तौ या. पर्व 21 आयत 12–13)

समीक्षक : अगर इनका ईश्वर न्यायी होता तो मूसा ने जब एक आदमी को मारकर दबा दिया था तो उसे दंड जरूर देता। इनका ईश्वर पक्षपाती भी है कि उसने उस आदमी को मूसा को मारने को सौंपा और राजा से न्याय भी न होने दिया।

(48) परमेश्वर के लिए बैलों का बलिदान चढ़ाया, उनका आधा लहू पात्रों में रखा, आधा वेदी पर छिड़का, उस लहू को मूसा ने लोगों पर छिड़का और कहा यही परमेश्वर का नियम है। परमेश्वर ने मूसा से कहा कि तू मेरे पास पहाड़ पर आ मैं तुझे पत्थर की वह पट्टियां दूंगा, जिन पर मैंने अपनी आज्ञाएं लिखी हैं।

(तो. या. पर्व 2 आयत 5 से 12)

समीक्षक : परमेश्वर का बैलों का बलिदान लेना, वेदी पर लहू छिड़कना आदि बातें सब जंगली और असभ्य लोगों की हैं। जिनका परमेश्वर गाय–बैलों का नाश करता है उसके भक्त उनके प्रसाद को खाकर पेट क्यों न भरें और जगत की हानि क्यों न करें? ऐसे बुरे कार्य करने वाला उनका ईश्वर पहाड़ पर रहने वाला जंगली मनुष्य था तभी तो वह पत्थर पर लिखी हुई आज्ञायें देता था। झूठे दोष लगाना, इनके ईश्वर का स्वभाव होगा तभी तो इन्होंने वेदों में ऐसी बातें होने का दोष लगाया है जो वेदों में नहीं। इनका ईश्वर जो जंगलियों के बीच ईश्वर बन बैठा उससे किसी अच्छी बात की क्या आशा की जा सकती है।

(49) तू मुझे नहीं देख सकता क्योंकि मुझे देखकर कोई मनुष्य जीवित नहीं बचेगा। तू मेरे पास उस टीले पर खड़ा रह। जब मैं बाहर निकलूंगा तो तुझे पहाड़ की दरार में रखकर हाथ से ढंक लूंगा, जब

thearyasamaj.org

मैं हाथ उठाऊंगा तब तुझे मेरी पीठ दिखाई देगी, रूप नहीं।

(तौ. या. पर्व 33 आयत 20 से 23)

समीक्षक : ईसाइयों का ईश्वर केवल शरीरधारी मनुष्य है जो मूसा के साथ प्रपंच रचकर ईश्वर बन बैठा। जब उसने मूसा को हाथ से ढंका होगा तो क्या उसके हाथ का रूप उसे दिखाई नहीं दिया। बाइबल में ऐसी बहुत सी बातें भरी हुई हैं, इसलिए यह ईश्वरकृत नहीं हो सकती।

तौरेत की लैव्य व्यवस्था

(50) परमेश्वर ने मंडली के तम्बू में से मूसा को बुलाकर कहा कि इसरायल की संतानों से कह कि अपने पशुओं में से गाय, बैल, भेड़, बकरी आदि परमेश्वर के लिए भेंट लाओ।

(तौरेत लैव्य व्य. पर्व 1 आयत 1–2)

समीक्षक : इनका ईश्वर खानाबदोशों की तरह तम्बू में रहता है और लोगों से भेंट लेकर पशु मारकर खाता है। ऐसा मांसाहारी प्रपंची मनुष्य ही हो सकता है ईश्वर नहीं।

(51) जो बैल परमेश्वर के आगे बलि किया गया, हारुन के बेटे याजक ने उसका लहू लेकर यज्ञवेदी और मंडली के तंबू के द्वार पर छिड़का। फिर उस बैल की खाल निकालकर उसके टुकड़े–टुकड़े किए। तब याजक ने यज्ञवेदी में आग जलाकर और लकड़ियां चिनकर उन टुकड़ों, सिर और चिकनाई को उस आग पर विधि से रखा और जो आग से परमेश्वर की सुगंधि के लिए भेंट किया गया।

(तो. लैव्य व्य. पर्व 1 आयत 5 से 9)

समीक्षक : परमेश्वर अपने भक्त के हाथों बैल को मरवाये, लहू चारों ओर छिड़के, अग्नि में होम करके ईश्वर को सुगन्ध पहुंचावे। इन सब बातों को देखकर इनका ईश्वर कसाई के समान जान पड़ता है। इसलिए बाइबल को ईश्वर की लिखी हुई पुस्तक और ऐसे कर्म करने वाले को ईश्वर नहीं माना जा सकता।

(52) फिर मूसा ने कहा कि यदि वह अभिषेक किया हुआ याजक लोगों के समान पाप करे तो उस पाप का प्रायश्चित करने के लिए एक बढ़िया बछिया लावे और उसके सिर पर हाथ रखकर परमेश्वर के आगे बलि करे। (तौ. लैव्य. व्य. पर्व 4 आयत 1 से 4)

समीक्षक : कैसी विचित्र बात है कि इनका ईश्वर स्वयं पाप करवाता है और पाप का प्रायश्चित करने के लिए और पाप करवाता है। ऐसे दुष्ट कर्म करने–कराने वाले को ईश्वर मानकर मुक्ति की आशा रखना, कैसी अज्ञानता है यह?

(53) जब कोई अध्यक्ष पाप करे तो वह बढ़िया नर मेमना लाकर ईश्वर के आगे बलि करे कि यह पाप की भेंट है।

(तौ. लै पर्व 4 आयत 22 से 24)

समीक्षक : यदि इनके अध्यक्ष और न्यायाधीशों के पाप का दंड मेमने को दिया जाता है तो वे दिल खोलकर पाप करेंगे, पाप करने से नहीं डरेंगे। तभी तो ईसाई लोग पशु–पक्षी के प्राण लेने में शंकित नहीं होते। यदि ये अपने जंगलीपन को छोड़कर वेदमत को स्वीकार करें तभी इनका कल्याण हो सकता है।

(54) यदि उसके पास भेंट में भेड़ लाने की पूंजी न हो तो दो मादा उल्लू या कबूतर और कबूतर के दो बच्चे भेंट में लाये। यदि उनके लिए भी धन न हो तो सेर भर बढ़िया पिसान का दसवां भाग पाप की भेंट के लिए लावे। भेंट में दिए जाने वाले पक्षियों की गरदन मरोड़ कर मार दे, उसे अलग न करे।

(तौ. लै. पर्व 5 आयत 7 से 13)

समीक्षक : ईसाई मत में पाप करने से कोई भी नहीं डरता होगा क्योंकि पाप का प्रायश्चित इतना आसान है कि जो सभी कर सकते हैं। ये पाप भी करते हैं और प्रायश्चित के नाम पर जीवों को मारकर उनका मांस भी आनन्द से खाते हैं। जब पक्षियों का गला मरोड़ते होंगे तो वे कितनी देर तड़पते होंगे। जब सब पापों का प्रायश्चित इतनी आसानी से हो जाता है तब पाप से छुटकारा पाने के लिए ईसा पर विश्वास रखने का ढोंग क्यों करते हैं?

(55) सो उसी बलिदान की खाल और भोजन की भेंट चाहे वह तंदूर, कड़ाही या तवे पर पकाई गई हो, उसी याजक की होगी जिसने उसे चढ़ाया। (तो. लै. पर्व 7 आयत 8–9)

समीक्षक : ईसाइयों की पोपलीला तो पुजारियों की पोपलीला से हजार गुणा बढ़कर है। इनके पास तो प्रायश्चित के नाम पर खूब भोजन के पदार्थ आते होंगे जिन्हें चढ़ाकर इनके याजक मौज मनाते होंगे। ईश्वर ने सृष्टि के सब जीवों को बनाया है, इसलिए वह एक जीव की सन्तान मरवाकर दूसरे

को नहीं खिला सकता। परमेश्वर ऐसा काम कभी नहीं कर सकता इसलिए न तो इनका ईश्वर परमेश्वर कहलाने के योग्य है और न ही इनकी बाइबल ईश्वरकृत है।

तौरेत की गिनती की पुस्तक

(56) जब गदही ने परमेश्वर के दूतों को हाथों में तलवारें लिए राह में खड़ा देखा तो उसने अपना मार्ग बदल लिया इस पर बलआम ने उसे लाठी से मारा। जब ईश्वर ने गदही का मुंह खोला तो उसने बलआम से पूछा, 'मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है जो तुमने मुझे तीन बार लाठी से मारा। (तौरेत गिनती पर्व 22 आयत 23 और 28)

समीक्षक : पहली बात तो यह है कि गदहों को तो ईश्वर के दूत दिखाई देते थे परन्तु पोप और श्रेष्ठ मनुष्यों को ईश्वर या उसके दूत दिखाई नहीं देते। लगता है कि आजकल या तो परमेश्वर है नहीं, या गहरी नींद सो गया है या ईसाइयों से नाराज हो गया है। दूसरी बात कि इनके गदहों का मुंह खोलने भी परमेश्वर आता है और गदहे भी मनुष्यों की भांति बातें करते हैं। ऐसी गप्पें भरी हैं इनकी बाइबल में जिन पर कोई विश्वास नहीं कर सकता।

(57) सो अब लड़कों में से हर एक बेटे को और हर एक स्त्री को जिसने पुरुष से संयोग किया हो जान से मार दो और जो बेटियां पुरुषों से संयुक्त नहीं हुई उन्हें अपने लिए रखो।

(तौरेत गिनती पर्व 31 आयत 17 और 18)

समीक्षक : वाह रे! पैगम्बर मूसा और तुम्हारा ईश्वर धन्य है, जो इतना विषयी है कि कुमारी कन्याओं को अपने भोग के लिए मंगवाता है। वह तो पशु, स्त्री, बालक की हत्या करने और दूसरों का शीलभंग करने का नीचकर्म भी करता है। ऐसे ईश्वर को कोई बुद्धिमान तो नहीं मान सकता।

तौरेत सैमुअल की दूसरी पुस्तक

(58) एक रात परमेश्वर ने नातन के द्वारा अपने सेवक दाऊद को संदेश भेजा कि जब से इसरायल की सन्तान को मिस्र से निकालकर लाया हूं तब से मैं तम्बू में ही रह रहा हूं अब तू मेरे निवास के लिए एक घर बनवायेगा। (तौ. सै. पर्व 7 आयत 4 से 6)

thearyasamaj.org

समीक्षक : अब इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता कि इनका ईश्वर देहधारी मनुष्य है जो बहुत दिनों तक परिश्रम करने के बाद दाऊद द्वारा बनवाये जाने वाले घर में विश्राम करना चाहता है।

ईसाइयों को ऐसे ईश्वर और ऐसी पुस्तक को मानने में लज्जा आनी चाहिए।

तौरेत राजाओं की पुस्तक

(59) बाबुल (बेबिलोन) के राजा के राज्य के 19 वर्ष 5 मास और 7 दिन होने पर उसका एक अध्यक्ष अपनी सेना के साथ यरुसलम में आया और उसने परमेश्वर का मंदिर, राजा का भवन और हर छोटे बड़े भवन को जला दिया और यरुसलम की चारों ओर की भीतों (दीवारों) को गिरा दिया।

(तौरेत राजा. पर्व 25 आयत 8 से 10)

समीक्षक : ईश्वर ने तो दाऊद से कहकर अपने लिए घर बनवाया था और उस समय उसमें आराम कर रहा होगा। जब नबूसर अद्दान ने अपनी सेना के साथ सारा नगर बरबाद कर दिया उस समय ईश्वर और उसकी सेना उनका कुछ न बिगाड़ सकी। क्या इनके ईश्वर की शक्ति मिस्र के लड़के–लड़कियों और पशुओं को मारने तक ही सीमित थी।

बड़ी–बड़ी लड़ाइयां जीतने की बातें करने वाले ईश्वर ने अपनी जरा भी शक्ति न दिखाकर क्या अपना अपमान नहीं करवा लिया? ऐसी निकम्मी कहानियां इस पुस्तक में भरी पड़ी हैं।

जबूर काल समाचार की पुस्तक

(60) परमेश्वर ने इसरायल पर मरी भेजी और वहां सत्तर हजार पुरुष गिर गये। (काल पर्व 21 आयत 14)

समीक्षक : जिस इसरायल के पालन में रात–दिन लगा रहा और जिसे बहुत से वरदान दे रखे थे, क्रोध में आकर वहीं मरी (महामारी) भेज कर सत्तर हजार लोगों को मार डाला। सत्य ही कहा गया है, जो मनुष्य क्षण में प्रसन्न और क्षण में अप्रसन्न होता है, वह खतरनाक होता है। इनका ईश्वर ऐसा ही मनुष्य रहा होगा।

जबूर–अयूब की पुस्तक

(61) एक दिन ईश्वर के पुत्र और शैतान परमेश्वर के सामने आ खड़े हुए। तब परमेश्वर ने शैतान से पूछा–तू कहां से आया है? शैतान ने कहा–मैं पृथ्वी पर इधर–उधर घूमता हुआ यहां आया हूं। परमेश्वर ने पूछा–क्या तूने मेरे दास अयूब को जांचा है, जिसके समान पृथ्वी पर कोई नहीं है और वह सिद्ध और पवित्र जन ईश्वर और पाप से डरता है। तूने अकारण ही मुझे उसका नाश करने के लिए उकसाया है। शैतान ने कहा–चाम के बदले चाम देना मनुष्य का नियम है। अब तू उसके हाड़–मांस को छू तब वह तेरे सामने तुझे त्याग देगा। परमेश्वर ने शैतान से उसके प्राण बचाने को कहा और शैतान ने अयूब को सिर से पांव तक फोड़ों से भर दिया।

(जबूर अयूब पर्व 2 आयत 1 से 7)

समीक्षक : ईसाइयों के ईश्वर की सामर्थ्य देखो। शैतान उसके सामने उसके भक्तों को दुःख देता है पर न तो ईश्वर अपने भक्तों को बचा सकता है और न ही शैतान को दंड दे सकता है। यदि इनका ईश्वर सर्वज्ञ होता तब तो उसे बिना परीक्षा लिए सब कुछ पता होना चाहिए था और फिर शैतान से परीक्षा करवाने की उसे क्या आवश्यकता थी? इनका ईश्वर सर्वज्ञ है ही नहीं।

जबूर की उपदेश की पुस्तक

(62) मेरे अंतःकरण में बहुत बुद्धि और ज्ञान है। मैंने मन को बुद्धि, पागलपन और मूढ़ता को जानने में लगाया तो जान लिया कि यह भी मन का झंझट है। अधिक बुद्धि से शोक और अधिक ज्ञान से दुःख बढ़ता है।

(ज. उ. पर्व 1 आयत 16 से 18)

समीक्षक : बुद्धि और ज्ञान एक दूसरे के पर्यायवाची शब्द हैं। इनको अलग–अलग नहीं मानना चाहिए। बुद्धि के बढ़ने से दुःख और शोक होता है, ऐसी बात कोई विद्वान नहीं कह सकता। इसलिए इनकी बाइबल ईश्वरकृत है ही नहीं।

thearyasamaj.org

मत्ती रचित इंजील

(63) मरियम की सगाई यूसफ से हुई थी पर विवाह से पूर्व मरियम गर्भवती हो गई तो यह जानकर कह दिया कि वह पवित्र आत्मा से गर्भवती है। परमेश्वर के एक दूत ने स्वप्न में उसे दर्शन देकर कहा–तू अपनी स्त्री मरियम को अपने यहां लाने से मत डर क्योंकि उसको जो गर्भ रहा है सो पवित्र आत्मा से है।

(इंजील पर्व 1 आयत 18–20)

समीक्षक : यह बात प्रत्यक्ष–प्रमाण और सृष्टिक्रम के विरुद्ध है। परमेश्वर के इस नियम को कोई बदल और तोड़ नहीं सकता। इस तरह तो कोई भी कुमारी लड़की गर्भवती होने पर यही कहेगी और व्यभिचार फैल जायेगा। पुराणों में भी कुन्ती का सूर्य से गर्भवती होना ऐसी ही असंभव बात है। ईश्वर की कृपा से तब तक गर्भ नहीं होता जब तक संयोग न हो।

(64) तब आत्मा यीशू को जंगल में ले गया जिससे शैतान उसकी परीक्षा ले सके। वह चालीस रात–दिन भूखा रहा। तब शैतान ने कहा कि अगर तू ईश्वर का पुत्र है तो पत्थर को कह कर रोटियां बना दें अर्थात् पत्थर रोटियां बन जायें।

(इं पर्व 4 आयत 1 से 3)

समीक्षक : ईश्वर तो सर्वज्ञ है, उसे स्वयं सब कुछ पता चल जाता है फिर उसे शैतान से परीक्षा करवाने की क्या आवश्यकता थी। चालीस दिन भूखा हरने पर भला कोई क्या जीवित बचेगा? पत्थर की रोटियां बन सकती तो उसे 40 दिन भूखे क्यों रहना पड़ता। पत्थर को भगवान भी रोटियों में नहीं बदल सकता। ये बात भी ईश्वरीय नियम के विरुद्ध है।

(65) उसने उनसे कहा कि मेरे पीछे आओ, मैं तुम्हें मनुष्यों के मछुवे बनाऊंगा। वे तुरन्त जाल छोड़कर उसके पीछे हो लिए।

(इं पर्व 4 आयत 19–20)

समीक्षक : ईसा ने न अपने माता–पिता की सेवा की और दूसरों को भी अपने पीछे ले जाकर माता–पिता की सेवा नहीं करने दी। संभव है इसी को देखकर तौरेत में दस आज्ञाओं में लिखा है कि माता–पिता की सेवा और मान करो जिससे आयु बढ़े। ईसा ने मनुष्यों को अपने जाल में फंसाने के लिए

thearyasamaj.org

एक मत चलाया और आज भी पादरी भोले–भाले अज्ञानी लोगों को अपने जाल में फंसाकर उन्हें उनके माता–पिता से अलग कर रहे हैं।

(66) यीशू सारे गालील देश में प्रचार करता फिरा कि वह हर रोग और पीड़ा को दूर कर देता है, उसने भूतप्रेतों, मिरगी वाले और अधरंग रोग से पीड़ित रोगियों को ठीक कर दिया है।

(इं पर्व 4 आयत 23–24)

समीक्षक : आजकल भी बहुत से ढोंगी लोग भस्म आदि से भूतों को निकालने का दावा करते हैं लेकिन इसमें जरा भी सच्चाई नहीं है। अगर ईसा की बात को सच मानें तब तो इन पाखंडियों की बातों को भी सच मानना पड़ेगा। इसलिए इस बात को सच नहीं माना जा सकता।

(67) धन्य हैं वे जो मन में दीन हैं क्योंकि स्वर्ग में उन्हीं का राज्य है। जब तक आकाश और पृथ्वी न टल जायें तब तक यह नियम नहीं टल सकता। जो कोई एक छोटी सी भी आज्ञा टालेगा या दूसरों को टालने को कहेगा वह स्वर्ग में सबसे छोटा गिना जायेगा।

(इं पर्व 5 आयत 3, 18–19)

समीक्षक : अगर स्वर्ग एक है तो उसका राजा भी एक ही होगा। यदि सभी दीन राजा हो जायेंगे तो आपस में झगड़ते रहेंगे। जो मन में दीन होता है उसे सन्तोष कभी नहीं होता और न ही वह अभिमान रहित होता है। आकाश और पृथ्वी टल जायें तो यह नियम भी टल जायेगा यह कहना ठीक नहीं। ईश्वर के नियम अटल होते हैं। ऐसी अनित्य व्यवस्था मनुष्यों की होती है, ईश्वर की नहीं। यह बात तो केवल भय दिखाने के लिए है कि जो कोई इस नियम को तोड़ेगा वह स्वर्ग में सबसे छोटा गिना जायेगा।

(68) हमारी दिनभर की रोटी आज हमें दे, अपने लिए पृथ्वी का धन संचित मत कर।

(ई पर्व 6 आय 11 और 21)

समीक्षक : ऐसा जान पड़ता है कि इनका ईश्वर दरिद्री था तभी तो दिनभर की रोटी के लिए प्रभु से प्रार्थना करता व सिखाता है। यदि ईसा की बात को मानें तब तो किसी ईसाई को धन संचय न करना चाहिए और दान–पुण्य करके दीन हो जाना चाहिए।

(69) हर एक जो मुझे 'हे प्रभो, हे प्रभो कहता है, स्वर्ग के राज्य में प्रवेश नहीं करेगा। (ई पर्व 7 आ. 21)

समीक्षक : यदि ईसा का यह वचन सत्य है तो कोई भी ईसाई ऐसा न कहेगा और पाप से न बच सकेगा।

(70) उस दिन बहुत से मुझसे कहेंगे। तब मैं उनसे कहूंगा कि ऐ कुकर्म करने वालो! मैंने तुमको कभी नहीं जाना, मुझसे दूर हो जाओ। (इं पर्व 7 आयत 22–23)

समीक्षक : ईसा जंगली मनुष्यों को विश्वास कराने के लिए स्वर्ग में न्यायाधीश बनना चाहता था। यह केवल मनुष्यों को अपने जाल में फंसाने के लिए कही गई बात है।

(71) एक कोढ़ी ने उसे प्रणाम करके कहा, 'हे प्रभो! यदि आप चाहें तो मुझे शुद्ध कर सकते हैं। यीशु ने उसे छूकर कहा 'मैं तो चाहता हूं और वह ठीक हो गया। (इं पर्व 8 आयत 2 और 3)

समीक्षक : ये सब बातें भोले लोगों को फंसाने की हैं और सृष्टि क्रम के विरुद्ध हैं। अगर ईसा के हाथ लगाने से कोढ़ ठीक हो जाता है तब तो धन्वंतरि, शुक्राचार्य और कश्यप आदि के विषय में पाई जाने वाली बातें भी सत्य मान लेनी चाहिए। दैत्यों की मरी हुई सेना का फिर से जी उठना, कच के शरीर के टुकड़े–टुकड़े करके मछलियों को खिला देने के बाद भी शुक्राचार्य ने उसे जीवित कर दिया, एक तक्षक ने वृक्ष सहित मनुष्य को निगल लिया तो कश्यप ऋषि ने फिर से वृक्ष और मनुष्य को जीवित कर दिया, धन्वंतरि ने लाखों मुर्दों को जीवित कर दिया, लाखों कोढ़ी, अंधे और बहिरे ठीक कर दिए। यदि ईसाई पुराणो की बातों को झूठ कहते हैं तब उन्हें अपनी पुस्तक की इन बातों को भी सच नहीं मानना चाहिए।

(72) तब दो भूतग्रस्त मनुष्य कब्रिस्तान में से निकले और उन्होंने यीशु से कहा 'आप हमें पीड़ा देने को आए हैं। अगर आप हमें निकालते हैं तो हमें सूअरों के झुंड में घुसने दीजिए। तब यीशु ने उन्हें सूअरों के झुंड में ठहरा दिया और सूअरों का सारा झुंड किनारे से समुद्र में दौड़ गया और डूब कर मर गया। (इं. पर्व 8 आयत 28–32)

समीक्षक : मरे हुए मनुष्यों का कब्रिस्तान से निकलना और बातें करना

सब झूठी बातें हैं। यदि ईसाई लोग ईसा को पाप क्षमा और पवित्र करने वाला मानते हैं तो उसने उन भूतों को पवित्र क्यों नहीं कर दिया। सूअरों के झुंड के डूबने से उनके मालिकों को जो हानि हुई उसे भर क्यों न दिया? इन बातों को भ्रम में पड़ा हुआ कोई अज्ञानी ही मान सकता है।

(73) एक अधरंग के रोगी को जब उसके पास लाये तो यीशु ने उसका विश्वास देखकर कहा—हे पुत्र! ढाढस कर, तेरे पाप क्षमा किए गये हैं। मैं धर्मात्माओं को नहीं, परन्तु पापियों को पश्चाताप् के लिए बुलाने आया हूं। (इ. पर्व 9 आयत 2 और 13)

समीक्षक : पाप क्षमा करने की बात कहकर ही तो भोले लोगों को फंसाते हैं। जैसे अफीम का नशा उसी को होता है जो खाता है, दूसरे को नहीं, वैसे किसी का किया हुआ पाप दूसरे के पास कभी नहीं जाता। हर एक को अपने कर्मों का फल भोगना पड़ता है, यही ईश्वर का न्याय है। यदि ईश्वर जीव को उसके कर्मों का फल नहीं देगा तो अन्यायी हो जायेगा। धर्मात्मा लोग पाप करेंगे ही नहीं, तो उन्हें ईसा की आवश्यकता ही न होगी। जब पापियों को यह ज्ञान हो जायेगा कि उनके पाप क्षमा नहीं हो सकते और उन्हें उन कर्मों का फल भोगना ही पड़ेगा तो उन्हें भी ईसा की आवश्यकता नहीं रहेगी।

(74) यीशु ने अपने 12 शिष्यों को बुलाकर उन्हें अशुद्ध भूतों को बाहर निकाल कर रोगियों को स्वस्थ करने का काम सौंपा। बोलने हारे तो तुम नहीं हो तुम्हारे अन्दर तुम्हारे पिता का आत्मा बोलता है। यह मत समझो कि मैं पृथ्वी पर मेल करवाने आया हूं परन्तु मैं तो तलवार चलाने आया हूं। मैं पुत्र को पिता से, बेटी को मां से, बहू को सास से अलग करने आया हूं। मनुष्य के घर ही के लोग उसके वैरी होंगे। (इं पर्व 17 आयत 1, 20 और 34 से 36)

समीक्षक : इन शिष्यों में से ही एक 30 रुपयों के लोभ में ईसा को पकड़ायेगा और दूसरे अलग—अलग भागेंगे। भूतों का आना, निकालना और बिना औषधि के रोगियों को ठीक करना सब बातें झूठ और सृष्टिक्रम के विरुद्ध हैं। यदि जीव बोलने वाले नहीं हैं, ईश्वर बोलता है, तो जीव क्या करते हैं। इनका ईश्वर लड़ाई—झगड़ा करवाने और फूट डालने आया है, इससे तो लोगों को दुःख ही होगा,उपकार नहीं। जीव का सुख—दुःख ईश्वर भोगता होगा। यह बात भी मानने योग्य नहीं है। घर के लोगों को, घर के लोगों का शत्रु बनाना ये किसी

श्रेष्ठ पुरुष का काम नहीं। इसलिए यीशु को ईश्वर या उसका पुत्र माना ही नहीं जा सकता।

(75) तब यीशु ने उनसे पूछा तुम्हारे पास कितनी रोटियां हैं। उन्होंने कहा सात रोटियां और छोटी मछलियां। तो यीशु ने सभी को बिठाकर उनके टुकड़े तोड़कर शिष्यों द्वारा सभी लोगों को बांटे। खाने वालों में स्त्रियों और बच्चों को छोड़कर 4000 पुरुष थे। इसके बाद जो टुकड़े बचे उनसे सात टोकरे भरकर उठवाये।

(इं पर्व 15 आयत 34 से 38)

समीक्षक : यदि इनका ईश्वर सात रोटियों से इतनी रोटियां बना सकता है तो स्वयं गूलर का फल खाकर क्यों भटकता रहा। पत्थरों से रोटियां और मोहनभोग बनाकर अपना पेट क्यों नहीं भर लिया। ये सब बातें साधु वैरागी और चेले, भोले–भाले लोगों को ठगने के लिए करते हैं, वैसे ही ईसाई भी करते हैं।

(76) तब वह हर एक मनुष्य को उसके कार्य के अनुसार फल देगा।

(इं पर्व 16 आयत 27)

समीक्षक : यदि सबको अपने कर्म के अनुसार ही फल दिया जायेगा तो ईसाइयों का पाप क्षमा करने का उपदेश करना व्यर्थ है क्योंकि सब कर्मों के फल यथायोग्य देने से ही पूरा न्याय होता है, कुछ क्षमा करने और कुछ क्षमा न करने से नहीं।

(77) हे अविश्वासी और हठी लोगो! मैं तुमसे सत्य कहता हूं कि यदि तुममें राई के दाने के बराबर अर्थात थोड़ा सा भी विश्वास हो जाये तो तुम्हारे कहने से पहाड़ भी इधर से उधर जा सकता है और तुम्हारे लिए कोई काम करना असंभव न होगा।

(ई. पर्व 17 आयत 17 और 20)

समीक्षक : ईसाई लोग उपदेश देते हैं कि 'हमारे मत में आओ और पाप क्षमा करवा के मुक्ति पाओ? अगर ईसा में पाप छुड़ाने का सामर्थ्य होता तो उसने उन शिष्यों, जो उसके साथ घूमते थे, उनकी आत्माओं को निष्पाप, विश्वासी और पवित्र कर दिया होता लेकिन उसने ऐसा कुछ नहीं किया। संसार का और अपना कल्याण चाहने वाला कोई व्यक्ति ऐसे अविश्वासी, अपवित्र आत्मा और

अधर्मी लोगों की लिखी बातों पर विश्वास नहीं कर सकता। किसी ईसाई को पहाड़ हटाने को कहें और यदि वह न हटा सके तब तो वह ईश्वर में राई भर भी विश्वास नहीं रखता। यदि दोषों को पहाड़ कहें तो भी ठीक नहीं क्योंकि तब तो अंधे, कोढ़ी और भूतग्रस्तों को ठीक करना भी उन्हें सेचत करना ही होगा, लेकिन यह भी ठीक दिखाई नहीं देता क्योंकि ईसा ने अपेन शिष्यों को भी सेचत नहीं किया। जैसे जहां कोई वृक्ष न हो वहां एरंड का पेड़ ही सबसे अच्छा गिना जाता है वैसे ही जंगली मनुष्यों में ईसा का महत्व रहा होगा।

(78) मैं तुम्हें सच कहता हूं यदि तुम मन न फिराओ और बालकों के समान न हो जाओगे तो स्वर्ग के राज्य में प्रवेश न कर पाओगे।

(इं पर्व 18 आयत 3)

समीक्षक : यदि अपनी इच्छा से मन का फिराना स्वर्ग का कारण और न फिराना नरक का कारण है तब तो कोई किसी का पाप नहीं ले सकता ऐसा ही सिद्ध होता है। स्वर्ग में पवित्र और निर्मल हृदय लोग जो बालकों की तरह निष्कपट होते हैं उन्हीं को प्रवेश मिलता है, लेकिन यहां बालकों के समान अज्ञानी होने का भाव लिया गया है जो चुपचाप बिना कुछ पूछे ईसा की बात मान लें। जो जैसा होता है वह दूसरों को भी उसी तरह बनाना चाहता है। इसीलिए विद्याहीन ईसा जो स्वयं बालबुद्धि से (अज्ञानी) था उसने दूसरों को भी वैसा ही बनने को कहा।

(79) मैं तुमसे सच कहता हूं, धनवान का स्वर्ग के राज्य में प्रवेश करना कठिन होगा। ऊंट का सूई के नाके से निकल जाना भी आसान है, धनवान का स्वर्ग जाना उससे भी कठिन है।

(ई पर्व 19 आयत 23–24)

समीक्षक : इससे यह पता चलता है कि धनी लोग दरिद्र होने के कारण ईसा का सम्मान नहीं करते होंगे, इसलिए उसने ऐसा लिखा होगा। सभी धनी अच्छे और सभी निर्धन बुरे हों ऐसा नहीं हो सकता। अच्छे–बुरे सभी में होते हैं। ईसा ईश्वर का राज्य किसी एक देश में मानता होगा जबकि ईश्वर तो सर्वत्र है। ईसा के अनुसार तो सभी धनी नरक में जायेंगे और सभी दरिद्र स्वर्ग में। यदि धनी व्यक्ति अपने धन का प्रयोग विवेक से अच्छे कार्यों में करेगा तो वह निश्चय ही उत्तम गति को प्राप्त होगा इसलिए ईसा का यह विचार भी ठीक नहीं है।

thearyasamaj.org

(80) यीशु ने उनसे कहा कि नई सृष्टि में जब मनुष्य का पुत्र ऐश्वर्य के सिंहासन पर बैठेगा तो तुम मेरे 12 शिष्य 12 सिंहासनों पर बैठकर इसरायल के 12 कुलों का न्याय करोगे। तुम लोगों ने मेरे लिए घर–परिवार, भूमि आदि जो कुछ छोड़ा है, वह सौ–सौ गुणा होकर तुम्हें मिलेगा और तुम अनंत जीवन पाओगे।

(इं पर्व 19 आयत 28–29)

समीक्षक : ईसा की मृत्यु के बाद भी लोग उसके धर्म को छोड़ न दें इसलिए उसने अपने धर्म को पकड़वाने वाले शिष्य समेत को सिंहासन पर अपने पास बैठाने की बात की और इसरायल कुल के साथ विशेष न्याय करने और उनके पाप क्षमा की भी बात की है। जैसे किसी गोरे ने यदि काले को मार दिया तो उसे पक्षपात करके निरपराध कहकर छोड़ देते हैं। इनका ईश्वर भी ऐसा ही न्याय करता होगा। एक का न्याय शीघ्र कर देना और दूसरे को चिरकाल तक न्याय न देना कितना बड़ा अन्याय है।

एक को चिरकाल स्वर्ग और दूसरे को चिरकाल नरक का भोग देना भी तो अन्याय है। अंत वाले साधन और कर्मों का फल भी अंत वाला होना चाहिए फिर अनंत स्वर्ग या नरक देना उचित नहीं है।

दो जीवों के पाप–पुण्य समान नहीं होते इस तरह तो थोड़े–थोड़े अंतर वाले कई स्वर्ग और नरक होने चाहिए जहां जीव अपने कर्मों के अनुसार फल भोगें। इस ईसाइयों की पुस्तक में कहीं व्यवस्था न होने के कारण न तो इसे ईश्वरकृत माना जा सकता है और न ही ईसा को ईश्वर का पुत्र माना जा सकता है। सभी मनुष्यों और जीवों को ईश्वर ने ही उत्पन्न किया है इसलिए केवल ईसा को ही ईश्वर का पुत्र कहना ठीक नहीं।

(81) सबेरे जह वह नगर में गया और भूख लगने पर गूलर के वृक्ष के पास गया और उस पर फल न पाकर वृक्ष को शाप दे दिया, जिससे वह वृक्ष तुरंत सूख गया। (इ पर्व 21अ यत 18–19)

समीक्षक : ईसाई लोग ईसा को शान्त, धैर्यवान और सहनशील कहते हैं लेकिन वह तो क्रोधी, ऋतुज्ञान न रखने वाला अज्ञानी और जंगली मनुष्य के समान व्यवहार करता था। जिसने दोष न होते हुए भी गूलर के वृक्ष को शाप दे दिया। शाप से तो वृक्ष नहीं सूख सकता, कोई ऐसा पदार्थ डाला होगा जिससे वृक्ष सूख गया होगा।

thearyasamaj.org

(82) उन दिनों के क्लेश के पीछे सूर्य अंधियारा हो जायेगा, चांद ज्योति न देगा, तारे आकाश से गिर जायेंगे और आकाश की सेना गिर जायेगी। (इं पर्व 24 आयत 29)

समीक्षक : इनके ईश्वर को भूगोल का जरा भी ज्ञान न था तभी तो सूर्य और चाँद के प्रकाशहीन होने और तारों के गिरने की बात की। जैसे वह स्वयं सेना रखता था वैसे ही आकाश की सेना की भी कल्पना कर ली। इससे जान पड़ता है कि ईसा बढ़ई कुल में पैदा हुआ था इसलिए उसका ज्ञान भी लकड़ियां काटने–जोड़ने तक सीमित था। वह जंगली लोगों को मूर्ख बनाकर पैगम्बर बन बैठा और जो अच्छा–बुरा मन में आता था कह देता था इसलिए इस मत में कोई बात ठोस सिद्धान्तों के आधार पर सत्य सिद्ध नहीं होती।

(83) आकाश और पृथ्वी टल जायेंगे परन्तु मेरी बातें कभी न टलेंगी। (इं पर्व 24 आयत 35)

समीक्षक : आकाश तो अति सूक्ष्म होने से दिखाई ही नहीं देता वह हिलकर कहां जायेगा। इनका ईसा अपनी प्रशंसा आप करता है, जो मूर्खों का काम है।

(84) तब वह उनसे जो बांई ओर हैं कहेगा ओ शापित लोगों। मेरे पास से उस अनन्त आग में जाओ जो शैतान और उसके दूतों के लिए तैयार की गई है। (इं पर्व 25 आयत 41)

समीक्षक : इनका ईश्वर कितना पक्षपाती है जो अपने शिष्यों को स्वर्ग में और दूसरे लोगों को नरक में भेजता है। अगर इनका ईश्वर शैतान को न बनाता तो नरक भी न बनाना पड़ता। जब आकाश ही न रहेगा तो इनका स्वर्ग–नरक कहां ठहरेगा? जिस ईश्वर का दूत बागी हो जाये और वह उसे पकड़कर दंड न दे सके तो वह ईश्वर कैसा है? ऐसा ईसा न तो ईश्वर को बेटा हो सकता है और न ही बाइबल का ईश्वर, ईश्वर कहा जा सकता है।

(85) तब 12 शिष्यों में से एक यहूदा इस्करियोती उन लोगों के पास गया और याजकों से पूछा कि अगर मैं ईसा को आप लोगों के हाथ पकड़वा दूं तो आप मुझे क्या देंगे? उन्होंने उसे 30 रुपये देने स्वीकार किए। (इं पर्व 26 आयत 14–15)

समीक्षक : यहां ईसा की करामात की पोल खुल गई है कि जब उसके साथ रहने वाला उसका शिष्य ही पवित्रात्मा न हुआ तो वह मृत्यु के बाद किसी

को कैसे पवित्र करेगा। जिसके साक्षात् संबंध से किसी का कल्याण नहीं हुआ उसके मरे पीछे किसी का कल्याण नहीं हो सकता।

(86) जब वे खाते थे तब यीशु ने रोटी ले के धन्यवाद किया और उसके टुकड़े करके शिष्यों को खाने के लिए दिए और कहा लो खाओ, ये मेरा देह है। उसने कटोरा ले के उनको देकर कहा तुम इसे पियो क्योंकि यह मेरा लहू अर्थात नए नियम का लहू है।

(इं पर्व 26 आयत 26 से 28)

समीक्षक : खाने–पीने की चीजों को मांस और लहू कोई जंगली मनुष्य ही कह सकता है सभ्य नहीं। आजकल भी खाने–पीने की चीजों में यही भावना करके खाना कितनी बुरी बात है। जो लोग खाने–पीने की चीजों में यही भावना करके खाना कितनी बुरी बात है। जो लोग खाने–पीने की चीजों में अपने गुरु के मांस लहू की भावना नहीं छोड़ते तो वे औरों को कैसे छोड़ सकते हैं।

(87) और वह पिता को और जवदी के दोनों पुत्रों को अपने संग ले गया और शोक करने लगा। उसने कहा 'मेरा मन यहां तक उदास है कि मैं मरने पर हूं। थोड़ा आगे बढ़कर वह मुंह के बल गिरा और प्रार्थना की, 'हे पिता! अगर हो सके तो यह कटोरा मेरे पास से टल जाये। (इं पर्व 26 आयत 37 से 39)

समीक्षक : अगर वह ईश्वर का बेटा, त्रिकालदर्शी और विद्वान होता तो ऐसा अनुचित कार्य न करता। यह सब प्रपंच ईसा और उसके चेलों ने झूठमूठ बनाया है कि वह पाप क्षमा करने वाला और भूत–भविष्य का जानने वाला है। सच तो यह है कि वह न तो योगी या सिद्ध था और न ही विद्वान था, केवल साधारण अज्ञानी मनुष्य था।

(88) वह अभी बोल ही रहा था कि यहूदा (12 शिष्यों में से एक) आ पहुंचा और उसके साथ याजकों के प्रधान तथा बहुत से लोग लाठियां और तलवारें लिए हुए थे। उसने उन्हें पहले से बता रखा था कि जिसे वह चूमेगा उसे पकड़ ले। जब यहूदा ने यीशु को प्रणाम किया तो उन लोगों ने उसको पकड़ लिया और यीशु के बाकी शिष्य उसे छोड़ के भाग गए। अंत में दो लोगों ने झूठी गवाही दे दी कि 'यीशु ने कहा था कि मैं ईश्वर का मन्दिर गिराकर उसे तीन दिन में फिर बना सकता हूं। तब महायाजक ने यीशु से कहा–हमें बता कि तू ईश्वर

का पुत्र क्राइस्ट है या नहीं। यीशु ने कहा–तू तो कह चुका। इस पर महायाजक ने कहा कि इसने ईश्वर की निन्दा की है, इसके लिए अब हमें किसी गवाही की जरूरत नहीं है। तब सबने यीशु को वध के योग्य ठहराया और मार दिया। पिता बाहर आंगन में बैठा था तो एक दासी ने उसके पास आकर पूछा कि क्या वह भी यीशु गालीली के संग था, तो वह सब के सामने मुकर गया। एक दूसरी दासी ने जब कहा कि ये भी साथ था तो वह फिर मुकर गया और कसम खाने लगा कि मैं उस मनुष्य को नहीं जानता।

(इं पर्व 26 आयत 47 से 74)

समीक्षक : ईसा में तो इतना भी सामर्थ्य न था कि उसका चेला उसमें दृढ़ विश्वास करता, और उसके चेले भी कैसे थे जो लोभ में अपने गुरु को पकड़ाने वाले, झूठ बोलने वाले और झूठी कसमें खाते थे? ईसा भी तो ऐसा ही करामाती था, तौरेत में लिखा है कि लूत के घर आए हुए मेहमानों को मारने जब बहुत से लोग आ गए तो वहां ईश्वर के दो दूत बैठे थे उन्होंने उन लोगों को अन्धा कर दिया। यद्यपि यह बात भी असंभव है। ऐसी दुर्दशा से मरने से तो अच्छा था कि स्वयं किसी प्रकार अपने प्राण त्याग देता। किन्तु विद्या और बुद्धि के बिना ऐसा कैसे हो सकता था।

(89) मैं अभी अपने पिता से विनती नहीं करता हूं और वह मेरे पास स्वर्गदूतों की 12 सेनाओं से अधिक न पहुंचा देगा?

(इं पर्व 26 आयत 53)

समीक्षक : कितनी आश्चर्य की बात है कि ईसा अपने पिता की बड़ाई करता और उन्हें धमकाता तो जाता है परन्तु कुछ भी नहीं कर पाता। महायाजक के पूछने पर ईसा को सब कुछ सच–सच बता देना चाहिए था। याजकों का ईसा को झूठा दोष लगाकर इतनी बुरी तरह मारना भी उचित न था। हां, यदि ईसा झूठमूठ ईश्वर का बेटा न बनता तो शायद वे इतना कठोर व्यवहार न करते। वे लोग भी तो जंगली थे, वे इतनी विद्या, धार्मिकता और न्यायशीलता कहां से लाते?

(90) अध्यक्ष ने बार–बार पूछा–क्या तू यहूदियों का राजा है। यीशु ने कोई उत्तर नहीं दिया। तब पिलात के पूछने पर सबने उसे सूली पर चढ़ाने का फैसला किया और सूली पर चढ़ाने के लिए अध्यक्ष को

सौंप दिया। तब एक भवन में ले जाकर उसे लाल कपड़े और कांटों का मुकुट पहनाकर उसके दाएं हाथ में नर्कट पकड़ाया, फिर उसके सामने धुटने टेककर उसका उपहास करते हुए उसे यहूदियों का राजा कहा। उसके ऊपर थूका और वही नर्कट उसके सिर पर दे मारा। तब उन्होंने फिर से उसे उसके वस्त्र पहना दिए और सूली पर चढ़ाने ले गए। तब उन्होंने उसे सिरके में पित्त मिलाकर पीने को दिया जिसे यीशु ने चीखकर पीने से मना कर दिया। फिर उन्होंने उसे क्रूस पर चढ़ा दिया और उसके दोनों ओर दो डाकू भी क्रूस पर चढ़ाए गए। उन्होंने उसका दोषपत्र उसके सिर पर लगा दिया। तब सब लोगों ने उसे कहा–ओ मंदिर के गिराने वाले तू अपने को बचा, अगर तू ईश्वर का पुत्र है तो सूली से उतर आ, अगर तू इसरायल का राजा है तो सूली से उतरकर आएगा तब हम तेरा विश्वास करेंगे। जो ईश्वर पर भरोसा करता है, ईश्वर उसको बचाता है। सूली पर चढ़ाए जाने वाले डाकुओं ने भी उसकी निंदा की। दोपहर से तीसरे पहर तक सारे देश में अंधेरा हो गया। तीसरे पहर यीशु ने जोर से पुकारकर कहा "एली, एली, लामा सबक्तनी" अर्थात हे मेरे ईश्वर, तूने मुझे क्यों त्यागा है। तब एक व्यक्ति ने सिरके में स्पंज भिगोकर उसे पानी से गीला कर उसे पीने को दिया। (इं पर्व 27 आयत 11 से 50)

समीक्षक : ईश्वर न किसी का पिता है न कोई उसका पुत्र है। यीशु के साथ उसके मारने वालों का व्यवहार अच्छा नहीं था। अध्यक्ष के पूछने पर उसे सब कुछ सत्य बता देना चाहिए था। अगर सचमुच उसमें कोई चमत्कार करने की शक्ति थी तो उसे सबके सामने क्रूस से उतरकर सबको अपना शिष्य बना लेना चाहिए था। यदि वह त्रिकालदर्शी होता तो सिरके और पित्त के मिश्रण को पीने से इन्कार न करता। अगर करामाती होता तो इस तरह सूली पर चीखकर प्राण क्यों त्यागता? कोई कितनी भी चतुराई करे अंत में सच–सच और झूठ–झूठ सिद्ध हो ही जाता है। इससे सिद्ध होता है कि यीशु जंगली मनुष्यों से कुछ चतुर था, न वह ईश्वर का पुत्र था, न करामाती और न ही विद्वान था। यदि ऐसा होता तो वह इस तरह दुःख न भोगता।

(91) एक बड़ा भूकम्प हुआ कि परमेश्वर का एक दूत उतरा, उसने कब्र के द्वार से एक पत्थर लुढ़का दिया और उस पर बैठ गया। जैसे

ही उसने यह कहा कि वह यहां नहीं है वह जी उठा। यीशु स्त्रियों और शिष्यों से मिला, उन्होंने उसे प्रणाम किया। तब यीशु ने उन्हें गालील में पर्वत पर जाने को कहा। जब वे उस पर्वत पर पहुंचे तो उन्हें यीशु को देखकर आश्चर्य हुआ। यीशु ने उनको कहा कि मुझे स्वर्ग और पृथ्वी का सारा अधिकार दिया गया है। अब मैं सदा तुम्हारे साथ हूं।

(इं पर्व 28 आयत 2, 6, 9, 10, 16 से 20)

समीक्षक : ये बात सृष्टि और विद्याविरुद्ध है। ईश्वर के पास दूतों का होना और उन्हें इधर–उधर भेजना ये बातें तो यहां के अधिकारियों जैसी हैं। ईसा क्या उसी शरीर से स्वर्ग गया था जो जी उठा। तीन दिन में सूली पर शव सड़ा नहीं था क्या? अपने को पृथ्वी और स्वर्ग का अधिकारी बताना घमंड प्रकट करना ही है। मरे हुए व्यक्ति का जी उठना और शिष्यों से मिलना सब असंभव बातें हैं।

मार्क रचित इंजील

(92) यह क्या बढ़ई नहीं है। (इं मा पर्व 6 आयत 3)

समीक्षक : यूसफ बढ़ई था इसलिए ईसा भी बढ़ई था जो अपनी चतुराई से पैगम्बर और ईश्वर का बेटा बन बैठा था।

लूक रचित इंजील

(93) यीशु ने उससे कहा तू मुझे उत्तम क्यों कहता है, कोई उत्तम नहीं है, केवल एक ईश्वर उत्तम है।

(लू. प. 18 आ 19)

समीक्षक : जब ईसा ही एक अद्वितीय ईश्वर कहाता है तो ईसाइयों ने पवित्रात्मा पिता और पुत्र, दो और कहां से बना लिए?

समीक्षक : ऐसा मति रचित इंजील में कुछ नहीं लिखा होने से विश्वासयोग्य नहीं है। अगर ईसा चतुर और करामाती होता तो हेरोद के प्रश्नों के उत्तर देता, चुप न रहता। इससे सिद्ध होता है कि उसमें विद्या और करामात कुछ भी न थी।

thearyasamaj.org

योहन रचित सुसमाचार

(95) आदि में वचन ईश्वर का था, सब कुछ उसके द्वारा सृजा गया था इसलिए उसके बिना कुछ भी न था। उसमें जीवन था, जो सब मनुष्यों का उजियाला था।

(पर्व 1 आयत 1 से 4)

समीक्षक : आदि में वचन था तो वह बिना वक्ता के नहीं हो सकता, इसलिए वचन ईश्वर के संग था कहना गलत है। वचन आदि में हो और ईश्वर के संग हो दोनों बातें इकट्‌टी नहीं हो सकती। वचन के द्वारा सृष्टि नहीं हो सकती। उसका कारण ईश्वर होना ही चाहिए। ईश्वर तो बिना बोले ही सृष्टि की रचना करता है। जीव तो अनादि है फिर आदम के नाक में श्वास फूंकना झूठा हुआ। ईश्वर केवल मनुष्यों के जीवन का ही नहीं, पशुओं के जीवन का भी उजियाला है।

(96) जब बियारी (रात के भोजन का समय) के समय में शैतान ने शिमोन के पुत्र यहूदा इस्करियोती के मन में ईसा को पकड़वाने का विचार भर दिया था।

(योहन पर्व 13 आयत 2)

समीक्षक : यह बात सच नहीं है क्योंकि यदि शैतान स्वयं बहकता है तब तो मनुष्य भी बहक सकता है। यदि ईश्वर शैतान को बहकाता है तब ईश्वर मनुष्य को भी स्वयं बहका सकता है उसे शैतान को बीच में लाने की क्या आवश्यकता हैं, ऐसे घटिया काम ईश्वर के हो ही नहीं सकते। इसलिए ईसा न ईश्वर हो सकता है न ईश्वर का बेटा और न ही बाइबल ईश्वरकृत पुस्तक हो सकती है।

(97) तुम उदस मत होओ। मुझ पर विश्वास करो, मेरे पिता के घर रहने के बहुत से स्थान हैं, अगर न होते तो भी मैं स्थान करके वापस आकर तुम्हें अपने साथ रहने के लिए ले जाता। मेरे पहुंचाने के बिना कोई पिता के पास नहीं पहुंचता। मैं ही मार्ग, सत्य और जीवन हूं। अगर तुम मुझे जानते तो मेरे पिता को भी जानते।

(पर्व 14 आयत 1 से 7)

समीक्षक : ऐसा जान पड़ता है कि ईसा ने ईश्वर को ठेके पर ले रखा

thearyasamaj.org

है। ईश्वर उसके वश में अर्थात पराधीन है तभी तो उसके पास कोई व्यक्ति ईसा के पहुंचाये बिना नहीं पहुंच सकता और ईसा अपने मुंह से अपनी बड़ाई करता है 'मैं ही मार्ग, सत्य और जीवन हूं यह सब बातें किसी अज्ञानी की हो ही सकती हैं किसी विद्वान् की नहीं। ईश्वर किसी की सिफारिश नहीं सुनता। इसलिए ये सब बातें झूठी हैं।

(98) मैं तुमसे सच–सच कहता हूं, मुझ पर विश्वास करो। जो काम मैं करता हूं उन्हें वह भी करेगा और इनसे बड़े काम करेगा।

(यो पर्व 14 आयत 12)

समीक्षक : ईसाई लोग ईसा पर पूरा विश्वास रखते हैं तो भी मरे हुए व्यक्ति को जिन्दा नहीं कर सकते। ईसा ने भी ऐसा कोई काम नहीं किया होगा। आज तक कोई भी ईसाई ऐसा आश्चर्य का काम नहीं कर पाया। इसलिए इन झूठी बातों पर विश्वास नहीं किया जा सकता।

(99) जो अद्वैत सत्य ईश्वर है। (यो पर्व 17 आयत 3)

समीक्षक : जब अद्वैत ईश्वर एक है तब ईसाइयों द्वारा ईश्वर का पुत्र और पैगम्बर तीन कहना गलत है। इंजील में बहुत सी ऐसी बातें लिखी हैं, जो एक दूसरे के विरुद्ध हैं।

योहन के प्रकाशित वाक्य

(100) अपने–अपने सिरों पर सोने के मुकुट पहने, सात अग्निदीपक सिंहासनों पर ईश्वर के सातों आत्मा हैं। सिंहासन के आगे कांच का समुद्र है और आसपास चार प्राणी हैं जिनके नेत्र आगे–पीछे सभी ओर हैं अर्थात सब कुछ देखते हैं।

(यों प्र. पर्व 4 आयत 4 से 6)

समीक्षक : इनका स्वर्ग एक नगर के समान है और ईश्वर एक दीपक की अग्नि है जो सोने के आभूषण धारण करता है और जिसके आगे पीछे नेत्र हैं। उसके सिंहासन के आसपास सिंह आदि चार प्राणी हैं। बाइबल में ऐसी असंभव बातें लिखी होने के कारण इसे ईश्वरकृत नहीं माना जा सकता है।

(101) मैंने सिंहासन पर बैठने वाले के दाहिने हाथ में एक पुस्तक देखी जो दोनों ओर लिखी हुई थी और उस पर सात छापे दिए हुए

thearyasamaj.org

थे। पृथ्वी और स्वर्ग पर कोई भी उसे खोल और देख नहीं सकता था। उस पुस्तक को खोलने और पढ़ने वाला कोई न मिलने के कारण, मैं रोने लगा। (यों प्र. पर्व 5 आयत 1 से 4)

समीक्षक : ईसाइयों के स्वर्ग के सिंहासन पर बैठने वाले ऐसी पुस्तकें रखते हैं जिनके छापे या बंध खोलने वाला स्वर्ग और पृथ्वी में कोई नहीं है। योहन का रोना तो इस बात को सिद्ध करता है कि केवल ईसा ही उसे खोल सकता था, जो उसे नहीं मिला। यह तो जिसका विवाह उसका गीत वाली बात है।

(102) मैंने सिंहासन के आसपास चारों प्राणियों और प्राचीनों के बीच एक मेमना बंधा हुआ देखा जिसके सात सींग और सात नेत्र हैं, जो पृथ्वी पर भेजी हुई ईश्वर की सात आत्माएं हैं। (यो. प्र. पर्व 5 आयत 6)

समीक्षक : ईसाइयों के स्वर्ग में सब ईसाई, चार पशु और ईसा हैं, अन्य कोई नहीं। यहां तो ईसा के दो नेत्र थे और सींग नहीं थे परन्तु स्वर्ग में जाकर सात सींग और सात नेत्र हो गए। ईश्वर की सात आत्माओं ने सींग और नेत्रों का रूप धारण कर लिया था, ऐसी बातें अज्ञानी लोग ही मान सकते हैं, बुद्धिमान नहीं।

(103) जब उसने पुस्तक हाथ में ली तो चारों प्राणी और चौबीसों प्राचीन मेमने के आगे गिर पड़े। हर एक के हाथ में वीणा और धूप से भरा हुआ सोने का प्याला था, जो पवित्र लोगों की प्रार्थनाएं हैं। (यों प्र. पर्व 5 आयत 8)

समीक्षक : जब ईसा स्वर्ग में न पहुंचा तब ये धूप–दीप लेकर किसकी आरती करते होंगे? यहां तो प्रोस्टेंट ईसाई मूर्तिपूजा का खंडन करते हैं और इनके स्वर्ग में ईसा की पूजा होती है।

(104) जब मेमने ने पुस्तक का पहला छापा खोला जो चारों प्राणी मेघ के समान गरजे और बोले 'आ और देख!' तब एक सफेद घोड़ा आया जिस पर एक धनुषधारी बैठा था, उसे मुकुट दिया और वह जय करता हुआ विजय के लिए निकला। दूसरी छाप खोली तो लाल घोड़ा आया उसे पृथ्वी पर मेल समाप्त करने भेजा। तीसरी छाप खोलने पर काला और चौथी छाप खोलने पर पीला घोड़ा निकला जिस पर मृत्यु बैठा था। (यों प्रो पर्व 6 आयत 1 से 8)

thearyasamaj.org

समीक्षक : पुस्तकों के बंधन के छापों में से घुड़सवार निकलना कभी संभव नहीं हो सकता। इसके साथ ही पृथ्वी पर मेल समाप्त करवाना, कितना बुरा काम है। ऐसे कार्य ईसा ही किसी को सौंप सकता है, ईश्वर नहीं। इसमें अविद्या ही अविद्या है, जरा भी ज्ञान नहीं है।

(105) और वे जोर से पुकारते थे कि हे स्वामी पवित्र और सत्य! कब तक तू न्याय न करके पृथ्वी क निवासियों से हमारे खून का बदला नहीं लेता। उन्होंने हर एक को सफेद वस्त्र देकर कहा कि जब तक तुम्हारे संगी दास और भाई बंधकर यहां नहीं पहुंच जाते तब तक थोड़ी देर विश्राम करो। (यों प्र. पर्व 6 आयत 10–11)

समीक्षक : ईसाइयों का ईश्वर न्याय करने में देर लगाता है, वेदमार्ग में तो ईश्वर को न्यायकारी बताया गया है। जो न्याय करने में देर नहीं लगाता। इनका ईश्वर भी इनकी बातों में आकर इनके शत्रुओं से बदला लेने लगता है। कोई ईसाइयों से पूछे कि क्या आजकल इनके ईश्वर की कचहरी बंद है? तो वे कोई ठीक उत्तर नहीं दे पायेंगे। इनके स्वभाव इतने विषैले हैं कि मरे पीछे भी वैर लेना चाहते हैं। जहां शान्ति नहीं, वहां दुःख ही दुःख होगा, सुख हो ही नहीं सकता।

(106) जैसे तेज हवा चलने से गूलर के वृक्ष के कच्चे फल झड़ते हैं वैसे ही आकाश से तारे पृथ्वी पर गिर पड़े। आकाश जो पत्ते की तरह लपेटा जाता है, अलग हो गया

(यों प्र पर्व 6 आ 13–14)

समीक्षक : योहन को भूगोल और विज्ञान का कुछ भी ज्ञान न था, तभी उसने तारों के गिरने की बात लिखी। यदि उसे यह पता होता कि सूर्य के आकर्षण से सभी पदार्थ नियम में बंधे हैं और आकाश जड़ पदार्थ है तब वह तारे गिरने और आकाश को लपेटने की बात न लिखता।

(107) मैंने उनकी संख्या सुनी, इसरायल के संतानों की कुल संख्या 1 लाख 44 हजार और यहूदा के कुल में बारह हाजर पर छाप दी गई।

(यों प्र पर्व 7 आयत 4–5)

समीक्षक : बाइबल में जिसे ईश्वर लिखा है वह केवल इसरायल आदि ईसाइयों के कुलों का स्वामी है, संसार का नहीं। तभी तो उसने इसरायल आदि कुलों पर छाप लगाने की बात की है।

thearyasamaj.org

(108) इस कारण वे ईश्वर के सिंहासन के आगे हैं और उसके मंदिर में रात–दिन सेवा करते हैं।

(यो प्र पर्व 7 आयत 15)

समीक्षक : ईसाइयों की यह पूजा मूर्तिपूजा ही तो है और उनका देहधारी ईश्वर मनुष्य ही तो है तभी तो वह एक स्थान पर रहता है जिसकी ये रात–दिन पूजा करते हैं। लगता है इनका ईश्वर रात को भी नहीं सोता होगा तभी तो ये रात को भी पूजा कर पाते होंगे।

(109) दूसरा दूत, जिसके हाथ में सोने की धूपदानी में बहुत धूप था, वेदी के पास खड़ा हुआ। धूप का धुंआ पवित्र लोगों की प्रार्थनाओं के साथ ईश्वर तक पहुंच गया। तब दूत ने वेदी में से आग, धूपदानी में भरकर पृथ्वी पर डाल दी जिससे पृथ्वी पर गर्ज के साथ बिजलियां चमकीं और भूकंप हुए।

(यो प्र पर्व 8 आयत 3 से 5)

समीक्षक : क्या ईसाइयों के स्वर्ग की चमक–दमक वैरागियों के मन्दिर से कम है, जहां वेदी, धूप, दीप, नैवेद्य, बाजे वगैरह सब कुछ हैं, कुछ अधिक ही होगी।

(110) पहले दूत ने तुरही फूंकी और लहू से मिले हुए अंगारे पृथ्वी पर डाले, जिससे एक तिहाई पृथ्वी जल गई।

(यो प्र पर्व 8 आयत 7)

समीक्षक : ईसाइयों का ईश्वर व ईश्वर के दूत तुरही बजाने और आग गिराने का काम (प्रलय) तो ऐसे करते हैं मानों बालक खेल रहे हों। इनका ईश्वर विनाशकारी ही प्रतीत होता है।

(111) पांचवें दूत ने तुरही फूंकी तो मैंने आकाश से पृथ्वी पर गिरे हुए एक तारे को देखा जिसे एक अथाह कूप की कुंजी दी गई। जब उसने उस कूप को खोला तो उसमें से बड़ी भट्ठी के समान धुंआ निकला और उस धुंए से निकली हुई टिड्डियों ने पृथ्वी पर इस तरह अधिकार कर लिया जैसे बिच्छू करते हैं और उनसे कहा गया कि जिन मनुष्यों के माथे पर ईश्वर की छाप नहीं है, उन्हें पांच मास तक दंड दिया जाये। (यो प्र. पर्व 9 आयत 1 से 5)

समीक्षक : ऐसा जान पड़ता है कि तुरही का शब्द सुनकर तारे उन्हीं दूतों और उसी स्वर्ग में ही गिरे होंगे क्योंकि और तो कहीं भी उनके गिरने का कोई चिन्ह दिखाई नहीं देता। इनके ईश्वर ने प्रलय के लिए जो टिड्डियां कुंओं में पाल रखी थीं उन्हें माथे की छाप पड़ने का ज्ञान था। ऐसी बातों से मूर्खों को डराया और धोखा दिया जा सकता है किसी विद्वान या समझदार को नहीं। यह विद्या आर्यावर्त में तो नहीं चल सकती।

(112) और घुड़चढ़ों की संख्या 20 करोड़ थी।

(यो प्र. पर्व 9 आयत 16)

समीक्षक : अगर इतने घोड़े इनके स्वर्ग में रहते थे तो उनके रहने, चरने का स्थान कहां था? उनकी लीद से स्वर्ग में कितनी दुर्गन्ध फैल गई होगी। हम ईश्वर से यही प्रार्थना करते हैं कि ईसाइयों को इस अज्ञान से छुटकारा दिलाये।

(113) मैंने एक दूसरे पराक्रमी दूत को स्वर्ग से उतरते देखा जिसने मेघ को ओढ़ रखा था, उसके सिर पर मेघ का धनुष था, मुंह सूर्य की भांति और पांव आग के खम्भों के समान थे। उसने अपना दांया पांव समुद्र पर और बायां पांव पृथ्वी पर रखा।

(यों प्र. पर्व 11 आयत 1–2)

समीक्षक : इन दूतों की कथा तो पुराणों और भाटों की कथाओं से भी बढ़कर है।

(114) और लोगों के समान एक नर्कट (बांस की छड़ी) मुझे दिया गया और कहा कि उठ! ईश्वर के मंदिर को, वेदी को और उसमें भजन करने वालों को नाप। (यो. प्र. पर्व 11 आयत 1)

समीक्षक : ईसाइयों का स्वर्ग कैसा है जहां धरती की तरह मंदिर बनाये जाते हैं और नापे जाते हैं। इनके ईश्वर का मनुष्यों की तरह मुंह है जिसके द्वारा वह मांस लहू खाता–पीता है और ईसाई लोग ऐसी ही भावना से ईसा का मँस और लहू खाते हैं, प्रसाद के रूप में गिरजे में क्रास का आकार बनाना भी तो मूर्तिपूजा के समान ही है।

(115) स्वर्ग में ईश्वर का मंदिर खोला गया और उसके नियम का संदूक उसके मंदिर में दिखाई दिया। (यों प्र. पर्व 11 आयत 19)

thearyasamaj.org

समीक्षक : क्या सर्वव्यापक परमेश्वर का भी कोई मन्दिर हो सकता है, इससे पता चलता है कि इनका ईश्वर आकार वाला है चाहे वह स्वर्ग में हो या धरती पर। स्वर्ग में इनका मन्दिर बंद ही रहता होगा तभी तो जब खोला तो नियमों का संदूक दिखाई पड़ा। ईश्वर के नियमों का संदूक भी कभी–कभी ईसाई लोग देखते होंगे, उससे न जाने क्या प्रयोजन सिद्ध करते होंगे? यह सब बातें दूसरों को लुभाने के सिवाय कुछ नहीं हैं।

(116) स्वर्ग में एक स्त्री जिसने सूर्य पहना है, चांद जिसके पांवों के नीचे है और जिसके सिर पर बारह तारों का मुकुट है वह गर्भवती है और प्रसव पीड़ा से पीड़ित है, यह तो एक आश्चर्य है। और दूसरा आश्चर्य यह है कि स्वर्ग में एक बड़ा लाल अजगर है जिसके सात सिर हैं, दस सींग हैं और उसके सिर पर सात राजमुकुट हैं, उसकी पूंछ ने आकाश के तारों के एक तिहाई भाग को खींचकर पृथ्वी पर गिरा डाला। (यो प्र पर्व 12 आयत 1 से 4)

समीक्षक : जो कोई ईसाइयों के स्वर्ग में जाता होगा वहां भी लड़ाई के कारण दुःख पाता होगा। जहां उपद्रव और शान्ति भंग हो ऐसे स्वर्ग से तो यह पृथ्वीलोक ही अच्छा है।

(118) और वह अजगर गिराया गया। वह प्राचीन सांप जो दियावल और शैतान कहलाता है और जो सारे संसार का भरमाने हारा है। (यों प्र. पर्व. 12 आयत 9)

समीक्षक : क्या जब वह शैतान स्वर्ग में था तब वहां के लागों को नहीं भरमाता था? ऐसे शैतान को घेर कर मार क्यों नहीं डाला, उसे पृथ्वी पर क्यों गिरा दिया? यदि इनका ईश्वर ही शैतान को भरमाता है तब वह ईश्वर नहीं हो सकता। जगत में शैतान का जितना प्रभाव है उसकी तुलना में ईसाइयों के ईश्वर का राज तो कुछ भी नहीं है। ईसाइयों का ईश्वर तो शैतान को दंड भी नहीं दे सकता होगा। ऐसे ईसाइयों के ईश्वर को कोई बुद्धिहीन ही मान सकता है, बुद्धिमान नहीं।

(119) हाय पृथ्वी और समुद्र के वासियों! क्योंकि शैतान तुम्हारे पास उतरा है। (यो प्र पर्व 12 आयत 12)

समीक्षक : क्या इनका ईश्वर स्वर्ग का ही रक्षक और स्वामी है, पृथ्वी और समुद्र का नहीं है? यदि होता तो शैतान को लोगों के बहकाने से रोकता और

thearyasamaj.org

दंड देता। ऐसा जान पड़ता है कि ईसाइयों का अच्छा ईश्वर अलग होगा और शक्तिशाली दुष्ट ईश्वर दूसरा होगा।

(120) उसे बयालीस मास तक युद्ध करने का अधिकार दिया गया। उसने ईश्वर के और उसके तंबू की ओर स्वर्ग में रहने वालों की निंदा करने के लिए अपना मुंह खोला। उसे पवित्र लोगों से युद्ध करके उन्हें जीतने और हर एक कुल, उसके देश और उसकी भाषा पर अधिकार दिया गया। (यो. प्र. पर्व 13 आयत 5 से 7)

समीक्षक : पवित्र लोगों से युद्ध करने और पृथ्वी के लोगों को बहकाने के लिए शैतान और पशुओं को भेजना किसी दुष्ट बुद्धि वाले का काम ही हो सकता है, ईश्वर और उसके भक्तों का नहीं हो सकता।

(121) मैंने सियोन पर्वत पर एक मेमना खड़ा देखा जिसके साथ एक लाख 42 हजार जन थे, जिनके माथे पर उनका तथा उनके पिता का नाम लिखा था। (यो प्र. पर्व 14 आयत 1)

समीक्षक : जिस सियोन पहाड़ पर ईसा का बाप रहता था उसी पर ईसा रहता था। उसने एक लाख चवालीस हजार लोगों की गिनती कैसे की? क्या जिनके माथे पर नाम लिखे थे वही ईसाई स्वर्ग में गए और बाकी सब नरक में गए। क्या कभी ईसाइयों ने सियोन पर्वत पर जाकर देखा है कि ईसा और उसकी सेना वहां है भी या नहीं? क्या इनका ईश्वर पक्षी है जो उड़कर ऊपर–नीचे आता जाता रहता है? एक भूगोल में एक न्यायधीश होना ही चाहिए। एक न्यायाधीश दो–तीन या अनेक ब्रह्मांडों में सब जगह घूमकर न्याय नहीं कर सकता। वेदमत में एक सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान निराकार ईश्वर माना गया है जो सकल ब्रह्मांड को रचता और नियम में बांधकर चलाता है।

(122) आत्मा कहता है, हां कि वे अपने परिश्रम से विश्राम करेंगे परन्तु उनके कार्य उनके संग हो लेते हैं।

(यो प्र. पर्व 14 आयत 13)

समीक्षक : ईसाइयों का ईश्वर तो कहता है कि उनके कर्म उनके संग रहेंगे अर्थात् उन्हें कर्मानुसार फल दिये जायेंगे। ईसाई कहते हैं, ईसा पापों को ले लेगा और पाप क्षमा कर दिए जायेंगे। अब विचार करना होगा कि ईसाई सच कहते हैं या उनका ईश्वर। दोनों एक दूसरे के विरुद्ध कहते हैं इसलिए उनमें से एक ही सच्चा होगा और दूसरा झूठा अवश्य होगा।

thearyasamaj.org

(123) और उसे ईश्वर के कोप के बड़े रस के कुंड में डाला। रस के कुंड का रौंदन नगर के बाहर किया गया। रस के कुंड में से घोड़ों के लगाम तक लहू एक सौ कोस तक बह निकला।

(यो प्र. पर्व 14 आयत 19–20)

समीक्षक : ईसाइयों के ईश्वर का क्रोध बहुत अधिक होगा, तभी तो उसके कोप के कुंड भर जाते होंगे। लहू तो हवा लगने से झट जम जाता है शायद यह बाइबल लिखने वाला नहीं जानता होगा वरन् सौ कोस तक लहू का बहना न लिखता। ऐसी झूठी बातें तो पुराणों में भी नहीं लिखी गई हैं जिनकी ईसाई निंदा करते हैं।

(124) और देखो स्वर्ग में साक्षी के तम्बू का मंदिर खोला गया। (यो प्र. पर्व 15 आयत 5)

समीक्षक : यदि ईसाइयों का ईश्वर सर्वज्ञ होता, तो उसे साक्षियों की आवश्यकता ही न होती और वह स्वयं ही सब कुछ जान लेता। इसलिए इनका ईश्वर मनुष्य की तरह अल्पज्ञ है, सर्वज्ञ नहीं। बाइबल में ईश्वर और उसके दूतों के बारे में ऐसी अनगिनत बातें लिखी हैं, जिन पर कोई विश्वास नहीं कर सकता।

(125) ईश्वर ने उसके कुकर्मों को स्मरण किया है। जैसा उसने तुम्हें दिया है वैसा ही उसको भर दो और उसे उसके कर्मों के अनुसार दुगना दो। (यो प्र पर्व 18 आयत 5–6)

समीक्षक : ईसाइयों का ईश्वर अन्यायकारी है क्योंकि न्याय तो उसे कहते हैं जिसमें सबको उनके कर्मों के अनुसार फल मिले, न कम, न अधिक। जो ऐसे अन्यायी दुगना दंड या पक्षपात से दंड देने वाले ईश्वर को मानते हैं वे भी अन्यायी ही होंगे।

(126) क्योंकि मेमने का विवाह आ पहुंचा है और उसकी स्त्री ने अपने को तैयार किया है। (यो प्र. पर्व 19 आयत 7)

समीक्षक : ईसाइयों के स्वर्ग में विवाह भी होते हैं। क्योंकि ईसा का विवाह भी ईश्वर ने वहीं किया। उसकी संतान भी हुई होगी और संबंधी भी होंगे। वीर्यनाश से बल, बुद्धि, पराक्रम और आयु की हानि भी हुई होगी और अब तक ईसा ने शरीर त्याग भी अवश्य किया होगा क्योंकि जहां संयोग होता है

thearyasamaj.org

वहां वियोग भी अवश्य होता है। न जाने ईसाई अपनी अविद्या के कारण कब तक भ्रम में पड़े रहेंगे।

(127) और उसने अजगर को जो दियावल और शैतान है उसे पकड़कर हजार वर्षों तक बांध रखा। उसे अथाह कुण्ड में डालकर बंद करके छाप दे दी जिससे वह जब तक हजार वर्ष पूरे न हों तब तक फिर देशों के लोगों को न भरमाए।

(यो. प्र पर्व 20 आयत 2–3)

समीक्षक : बड़ी कठिनाई से तो उस सांप को पकड़ा लेकिन फिर भी उस दुष्ट को मारा नहीं। हजार वर्ष पूरे होने पर जब वह निकलेगा, तब फिर लोगों को भरमायेगा नहीं, ऐसा कैसे हो सकता है? वास्तव में शैतान कुछ भी नहीं है, ईसाइयों का भ्रम ही है। जैसे किसी ने लोगों से कहा– आओ तुम्हें देवता के दर्शन कराऊं? फिर एकान्त में एक मनुष्य को चर्तुभुज बनाकर खड़ा कर दिया और लोगों से कहा जब तक मैं न कहूं तब तक आंखें मत खोलना, आंखें बन्द ही रखना यदि कोई आंखें खोलेगा तो अंधा हो जायेगा और जब मैं कहूं फिर आंखें बन्द कर लेना। इस तरह देवता को दिखाकर लोगों को ठगा। ठीक इसी तरह ईसाई शैतान का नाम लेकर लोगों को ठगते हैं।

(128) जिसके सामने से आकाश और पृथ्वी भाग गए और उनके लिए जगह न मिली। तब मैंने सब छोटे–बड़े मृतकों को ईश्वर के सामने खड़े देखा और तब 'जीवन की पुस्तक' खोली गई और उनके कर्मों के अनुसार उनके लिए क्या करना चाहिए, इस पर विचार किया गया।

(यो प्र. पर्व 20 आयत 11–12)

समीक्षक : यदि पृथ्वी और आकाश ही भाग गए तो जिनके सामने से ये भागे वह उस समय कहां खड़े थे? मृतक जिस ईश्वर के सामने खड़े हुए वह ईश्वर और सिंहासन कहां ठहरा था? क्या ईश्वर के पास कोई ज्ञान न था कि उसे मृतकों का न्याय पुस्तक किसने बनाई थी? ऐसी अज्ञानपूर्ण बातों से ईसाइयों ने साधारण मनुष्य को ईश्वर बना दिया और सच्चे ईश्वर की ओर से आंखें मूंद ली।

(129) उनमें से एक मेरे पास आकर बोला कि आ मैं तुझे दुल्हन को अर्थात मेमने की स्त्री दिखाऊंगा।

(यों प्र. पर्व 21 आयत 9)

thearyasamaj.org

समीक्षक : ईसा ने स्वर्ग में अच्छी दुल्हन पाई होगी और मौज करता होगा। जो भी ईसाई उस स्वर्ग में जाते होंगे उन्हें भी स्त्रियां मिलती होंगी और वे विषयों में फंसकर रोगी होकर मरते होंगे। ऐसे स्वर्ग को तो दूर से ही हाथ जोड़ना अच्छा है।

(130) उसने उस नर्कट से नगर को नापा जो साढ़े सात सौ कोस लम्बा, इतना ही चौड़ा और ऊंचा था। उसकी दीवार को मनुष्य के हाथ के नाप से नापा कि 144 हाथ की थी। उस दीवार की जुड़ाई स्फटिक (बिल्लौरी) पत्थर से की गई थी। नगर निर्मल सोने का था जो कांच के समान चमकता था। नगर की दीवार की पहली नींव सूर्यकांत (स्फटिक) दूसरी नीलमणि, तीसरी लालड़ी, चौथी मरकत, पांचवीं, गोमेदक, छटी मणियों, सातवीं पीतमणि, आठवीं फिरोजा (हरीमणि), नवीं पुखराज, दसवीं लहसनिये, ग्यारहवीं धूम्रकांत और बारहवीं मर्टीष से बनी थी। बारह फाटक थे, हर एक फाटक एक–एक मोती से बना था। नगर की सड़क कांच जैसे स्वच्छ सोने की थी।

(यो प्र. पर्व 21 आयत 16 से 21)

समीक्षक : कैसा विचित्र है ईसाइयों के स्वर्ग का वर्णन। इनके स्वर्ग में तो सब मरने वाले जाते हैं वहां से निकलता कोई नहीं, तो स्वर्ग में असंख्य लोग कहां समाते होंगे जो अब तक मरे हैं। इतनी ऊंचाई नगर की कैसे हो सकती है? इतने बड़े–बड़े मोती द्वार बनाने के लिए कहां से निकले होंगे। अतः ये सब बातें लोगों को बहकाकर अपने मत में लाने के लिए ही लिखी गई हैं इनमें कुछ भी सच्चाई नहीं है।

(131) और कोई अपवित्र वस्तु अथवा घृणित कर्म करने वाला अथवा झूठ पर चलने वाला उसमें किसी रीति से प्रवेश नहीं करेगा।

(यों प्र. पर्व 21 आयत 27)

समीक्षक : यदि यह बात सत्य है तो ईसाई लोग ऐसा क्यों कहते हैं कि पापी लोग भी ईसा से पाप क्षमा करवा कर स्वर्ग में जा सकते हैं। यदि यह सत्य है तब तो इतना झूठ लिखने वाला योहन और ईसा भी स्वर्ग में नहीं गए होंगे। क्योंकि जब अकेला पापी स्वर्ग को प्राप्त नहीं हो सकता तो अनेक पापियों के पाप का भार उठाने वाला कैसे स्वर्ग में जा सकता है।

(132) जब कोई शाप न होगा और ईश्वर तथा मेमने का सिंहासन

उसमें होगा और उनके दास उसकी सेवा करेंगे। तब ईश्वर उनका मुंह देखेंगे ओर उनके माथे पर उनका नाम होगा। वहाँ रात नहीं होती इसलिए सूर्य के प्रकाश की आवश्यकता नहीं होती। ईश्वर उन्हें ज्योति देगा और वे सदैव राज्य करेंगे।

(यो. प्र. पर्व 22 आयत 3 से 5)

समीक्षक : क्या ईसाइयों के स्वर्ग में ईश्वर और ईसा हमेशा सिंहासन पर बैठे रहेंगे और उसके दास उनके सामने सदा मुंह देखा करेंगे। पहले यह तो बताओ कि तुम्हारे ईश्वर का मुंह गोरा, काला या कैसा है? तुम्हारा स्वर्ग भी बंधन ही है क्योंकि वहां छोटे–बड़े का भेदभाव है और फिर एक ही नगर में हमेशा रहना भी तो बंधन ही है। अगर वहां आकार वाले लोग रहते हैं तो दुःख भी अवश्य होता होगा। ऐसा ईश्वर सर्वज्ञ और सर्वेश्वर कभी नहीं हो सकता।

(133) देख! मैं शीघ्र आता हूं ओर मेरा प्रतिबिंब मेरे साथ है जिससे हर एक को जैसा उसका कर्म होगा वैसा फल दूंगा।

(यो. प्र. पर्व 22 आयत 12)

समीक्षक : जब यही बात है कि सब कर्मानुसार फल पाते हैं और पाप कभी क्षमा नहीं होते तब तो पाप क्षमा होते हैं बताने वाली इंजील झूठी है। यदि दोनों बातें इंजील में लिखी हैं तब भी इंजील मानने योग्य नहीं है। बाइबल में इतना झूठ लिखा है कि यदि थोड़ा सत्य भी होगा तो वह भी झूठ ही दिखाई देगा। आवश्यकता इस बात की है कि पढ़ा–लिखा वर्ग इसे पढ़े और इसमें लिखी हुई बातों की सच्चाई की समीक्षा करे तभी ईसाई लोग इस अज्ञान के अंधकार से निकल पायेंगे और आर्यावर्त में एक बार फिर वेदज्ञान का सूर्य अपनी ज्योति फैलायेगा।

●●●

thearyasamaj.org

इस्लाम मत का खंडन 14

ईसाई और इस्लाम मत में बहुत कम अन्तर हैं, कुछ बातें और नाम तो ऐसे हैं जैसे बाइबल से लेकर कुरान में जोड़ दिए गए हैं। यहां कुरान के आधार पर स्वामी जी ने बहुत सी गलत बातों का खंडन करके लोगों के अज्ञान को दूर करने का प्रयत्न किया है।

(1) आरंभ साथ नाम अल्लाह के क्षमा करने वाला दयाल।

(मंजिल 1 सिपारा 1 सूरत 1)

समीक्षक : कुरान किसी और का बनाया हुआ जान पड़ता है, अल्लाह का नहीं क्योंकि इसमें अल्लाह के नाम के साथ आरंभ करना लिखा है, स्वयं अल्लाह अपने नाम के साथ आरंभ नहीं कर सकता और न ही मनुष्यों को ऐसा करने की शिक्षा दे सकता है। इस तरह पाप का आरंभ खुदा के नाम के साथ होने से उसका नाम भी दूषित हो जायेगा। अगर खुदा क्षमा करने वाला और दयालु होता तो वह सृष्टि के मनुष्यों को अपने सुख के लिए अन्य प्राणियों को मारकर मांस खाने की आज्ञा क्यों देता क्योंकि वे प्राणी भी तो मनुष्य की भांति ईश्वर के बनाए हुए ही हैं। जब मुसलमान कसाई गाय आदि निरीह पशुओं का वध भी विस्मिल्लाह कह कर करते हैं और अपने अच्छे बुरे सभी कामों का आरंभ परमेश्वर के नाम से ही करते हैं तो इससे उनका खुदा क्षमा करने वाला और दयालु सिद्ध नहीं होता। अगर मुसलमान इसका अर्थ नहीं जानते तब इस वचन का लिखना व्यर्थ है।

(2) सब स्तुति परमेश्वर के वास्ते है जो परवरदिगार (पालन करने वाला) है सब संसार का। क्षमा करने वाला दयालु है।

(मं 1 सि 1 सुरतुल्फातिहा आयत 1–2)

समीक्षक : अगर कुरान का खुदा दयालु, सारे संसार का पालन करने वाला और सबको क्षमा करने वाला होता तो फिर दूसरे धर्म वालों और पशुओं को

मुसलमानों द्वारा मरवाने की आज्ञा कभी न देता। कुरान में लिखा है 'काफिरों को कत्ल करो, इसका अर्थ तो यह हुआ कि कुरान को मानने वाले सभी धर्मात्मा हैं और अन्य सभी लोग, जो कुरान को नहीं मानते, वे पापी हैं। इस बात को कोई भी बुद्धिमान व्यक्ति सत्य नहीं मानेगा। इसलिए कुरान ईश्वर का लिखा हुआ नहीं, किसी स्वार्थी व्यक्ति द्वारा लिखा हुआ ही हो सकता है।

(3) मालिक दिन न्याय का। तुझ ही की हम भक्ति करते हैं और तुझसे ही सहायता चाहते हैं, हमको सीधा रास्ता दिखा।

(मं 1 सि. 1 सू. 1 आयत 3 से 5)

समीक्षक : जान पड़ता है कि इनका खुदा नित्य न्याय नहीं करता। कुरान में कहा गया है कि मुसलमानों का मार्ग सच्चा है, दूसरों का झूठा है। अगर उनका रास्ता भलाई का होता तब उसमें केवल मुसलमानों की नहीं बल्कि सभी प्राणियों की भलाई की कामना की जाती। इस तरह इनके खुदा का पक्षपाती होना सिद्ध होता है। इसमें मुसलमानों को उसी की भक्ति करने और उसी से सहायता चाहने का उपदेश दिया है, तो क्या उनका खुदा बुरे कामों में भी सहायता देता है।

(4) उन लोगों को रास्ता दिखा दिया जिन पर तूने निआमत की (बहुमूल्य पदार्थ दिए)। जिन पर तूने अत्यनत क्रोध की दृष्टि की और जो गुमराह हैं, उनका मार्ग हमें मत दिखा।

(मं. 1 सि. सू 1 आयत 6–7)

समीक्षक : जब मुसलमान लोग पुनर्जन्म और पहले किए हुए पुण्य–पाप को नहीं मानते तो फिर बिना पुण्य–पाप किए सुख–दुःख देने से इनका खुदा पक्षपाती हो जाता है, क्योंकि बिना कारण किसी पर क्रोध और दया की ही नहीं जा सकती। पिछले कर्म वे मानते नहीं, इस जन्म में कुरान के अनुसार चलने के कारण पाप करते नहीं होंगे, तो फिर बार–बार दया और क्षमा किस बात के लिए मांगते हैं। इन्हें अक्षर ज्ञान देने वाला कौन है? क्योंकि जब तक कोई ज्ञान न दे तब तक तो पुस्तक लिखी नहीं जा सकती। फिर इनके खुदा ने अरबी भाषा में ही पुस्तक क्यों लिखी? जिसे केवल अरब देश के लोग ही आसानी से पढ़ सकते हैं, दूसरे नहीं। जिस पुस्तक में पक्षपातपूर्ण बातें पाई जायें, वह ईश्वरकृत हो ही नहीं सकती। वेद और संस्कृत भाषा को पढ़ने के लिए सभी को समान परिश्रम करना पड़ता है इसलिए इसमें पक्षपात का दोष नहीं है।

thearyasamaj.org

(5) यह पुस्तक परहेजगारों (धार्मिक लोगों) को मार्ग दिखाती है। जो लोग इस पुस्तक पर और तेरी तथा तुझसे पहले उतारी गई कयामत पर विश्वास रखते हैं, नमाज पढ़ते हैं, उसकी दी हुई वस्तु को खर्च करते हैं और अपने मालिक की शिक्षा के अनुसार चलते हैं वे ही पापों से छुटकारा पाने वाले हैं और जो विश्वास नहीं करते उनके दिलों और कानों पर अल्लाह ने मोहर लगा रखी है और आंखों पर अज्ञान का परदा डाल रखा है। (मं 1, सि1, सू2, आ. 2से 7)

समीक्षक : जो लोग स्वभाव से धर्म पर चलते हैं, उन्हें तो मार्ग दिखाने की आवश्यकता ही नहीं है लेकिन जो लोग झूठे मार्ग पर चल रहे हैं यदि कुरान उन्हें मार्ग नहीं दिखला सकता, तो फिर इसका होना व्यर्थ है। क्या इनका खुदा पाप–पुण्य और पुरुषार्थ किए बिना ही अपना खजाना इन्हें खर्च करने को दे देता है, अगर देता है तो सबको बराबर क्यों नहीं देता। अगर ये लोग बाइबल को विश्वास करने योग्य मानते हैं तो मुसलमान इस पर कुरान जैसा विश्वास क्यों नहीं करते। जब बाइबल पहले लिखी जा चुकी थी तो फिर कुरान अलग से क्यों लिखा गया? बाइबल और कुरान की बहुत सी बातें आपस में मिलती हैं, शायद ही किसी बात में थोड़ा मतभेद हो। अगर ईसाई और मुसलमान ही खुदा की शिक्षा पर चलने वाले हैं तब तो उनमें कोई पापी नहीं होना चाहिए। उनके अधर्मी और पापी लोगों को भी छुटकारा (मोक्ष) मिल जाये और दूसरे मत के धर्मात्मा लोगों को भी न मिले कितना बड़ा अन्याय और अन्धेर है। अपने मत को न मानने वालों की अच्छाई बुराई देखे बिना उन्हें काफिर कह देना, इनकी धर्मान्धता नहीं तो क्या है? अगर स्वयं परमेश्वर ने दूसरे धर्म वालों के दिलों और कानों पर मोहर लगा दी है और आंखों पर पर्दा डाल दिया है तब तो उनके द्वारा किए जाने वाले पाप–पुण्य का दोष ईश्वर के सिर पर ही होना चाहिए, उन लोगों पर नहीं, क्योंकि उन्होंने पाप–पुण्य स्वतन्त्रता से नहीं किया।

(6) उनके दिलों में रोग है, अल्लाह ने उनका रोग बढ़ा दिया। (मं. 1, सि. 1, सू. 2 आयत 10)

समीक्षक : खुदा का यह काम तो शैतान के शैतानपन से भी बढ़कर बुरा है, जो बिना किसी अपराध के उसने उनका रोग बढ़ा दिया, उनके दिल और कानों पर मोहर लगा दी। यह काम ईश्वर का हो ही नहीं सकता, इससे सिद्ध होता है कि इनका खुदा स्वार्थी मनुष्य ही है।

(7) जिसने तुम्हारे लिए पृथ्वी का बिछौना और आसमान की छत को बनाया। (मं. 1. सि. 1, सू. 2 आयत 22)

समीक्षक : आकाश को छत के समान मानना उनकी अविद्या को ही प्रकट करता है। ऐसा जान पड़ता है कि वे पृथ्वी को केवल घर ही मानते हैं, तभी आसमान को उसकी छत कहते हैं।

(8) अगर तुम्हें उस वस्तु में संदेह हो जो हमने पैगम्बर के ऊपर उतारी है तो उस जैसी एक सूरत ले आओ। अगर तुम अपने को सच्चा मानते हो तो अल्लाह के बिना अपने साक्षियों और अपने लोगों को पुकारो। ऐसा तुम कभी नहीं करोगे और उस आग से डरोगे जिसका ईंधन मनुष्य है और काफिरों के लिए तो पत्थर तैयार किए गए हैं। (मं. 1, सि. 1, सू. 2, आयत 23–24)

समीक्षक : उस वस्तु के समान दूसरी वस्तु न बने यह तो मानने योग्य बात नहीं, क्योंकि अकबर के समय में मौलवी फैजी ने बिना नुक्ते के कुरान लिखा था। वह कौन सी दोजख (नरक) की आग है जिसका ईंधन मनुष्य है, आग तो सब कुछ जला देती है फिर केवल मनुष्य ही ईधन क्यों? काफिरों के लिए पत्थर तैयार करना तो पुराणों जैसी बात हो गई, जो अपने–अपने मत वालों को स्वर्ग भेजते हैं, दूसरों को नरक में। इसलिए इनकी ये सब बातें झूठी हैं। मनुष्य चाहे किसी भी धर्म का हो अगर वह धार्मिक है तो सुख पाता है और अगर अधर्मी है तो दुःख पाता है। ईश्वर किसी से पक्षपात नहीं करता। इनका खुदा स्वार्थी मनुष्य ही होगा, ईश्वर नहीं हो सकता।

(9) जो ईश्वर पर विश्वास करते हैं और अच्छे काम करते हैं उन्हें स्वर्गों का सुख मिलता है जिनके नीचे नहरें चलती हैं। जब उन्हें मेवों के भोजन दिए जायेंगे तो वे कहेंगे ये वह वस्तु है जो हमें पहिले भी दिए गए थे और उनके लिए पवित्र बीवियां सदैव वहां रहने वाली हैं। (मं. 1 सि. 1, सू 2, आयत 25)

समीक्षक : जो पदार्थ पृथ्वी में रहते हुए मिलते हैं वही उन्हें स्वर्ग में मिलेंगे, तो फिर उनके स्वर्ग और पृथ्वी में केवल इतना ही अंतर है कि यहां की तरह स्वर्ग में लोग जन्म लेते और मरते नहीं हैं। यहां की स्त्रियां सदा नहीं रहतीं परन्तु स्वर्ग में तो स्त्रियां सदा रहती हैं और उन्हें कयामत के दिन तक अपने लिए पुरुष साथी की प्रतीक्षा करनी पड़ती होगी क्योंकि खुदा ने वहां स्त्रियों

thearyasamaj.org

के लिए ही सदैव रहने का प्रबन्ध किया है, पुरुषों के लिए नहीं। संभव है कि वहां वे खुदा के आश्रय में ही समय काटती होंगी। मुसलमानों का स्वर्ग और गोसांइयों का गोलोक एक सा ही दिखाई देता है।

(10) खुदा ने आदम को पहले सारे नाम सिखाये, फिर फरिश्तों के सामने कहा अगर तुम सच्चे हो तो मुझे उनके नाम बताओ। जब आदम ने फरिश्तों को उनके नाम बता दिए तो खुदा ने कहा–मैंने तुमसे कहा था कि निश्चय ही मैं पृथ्वी और आसमान की छिपी वस्तुओं और प्रकट–अप्रकट सभी कर्मों को जानता हूं।

(मं. 1, सि. 1, सू. 2 आयत 31–33)

समीक्षक : इनका खुदा ऐसा धोखा देकर फरिश्तों के सामने अपनी बड़ाई सिद्ध करता है। विद्वान लोग तो इसे झूठा घमंड ही कहेंगें। केवल जंगली लोगों को ही ऐसी सिद्ध की हुई बातों से बहकाया जा सकता है, दूसरों को नहीं।

(11) तब खुदा ने फरिश्तों को आदम को दंडवत् करने को कहा। बाकी सबने तो कर दिया, लेकिन अभिमानी और काफिर होने के कारण शैतान ने नहीं किया।

(मं.1, सि. 1, सू. 2 आयत 34)

समीक्षक : इनका खुदा सर्वज्ञ नहीं है। क्योंकि यदि सर्वज्ञ होता तो शैतान को पैदा ही न करता। कितनी विचित्र बात है कि शैतान ने खुदा का हुक्म नहीं माना और खुदा उसका कुछ भी न बिगाड़ सका।

अगर एक काफिर शैतान को ही खुदा काबू नहीं कर सका तो मुसलमान जिन करोड़ों लोगों को काफिर कहते हैं उन्हें कैसे काबू करेगा? किसी का रोग बढ़ा देना और किसी को गुमराह कर देना ये सब बातें या तो खुदा ने शैतान से सीखीं होंगी या फिर शैतान ने अपने उस्ताद खुदा से सीखीं होंगी।

(12) हमने आदम से कहा कि तू और तेरी पत्नी स्वर्ग में रहकर आनंद से जो चाहो खाओ, परन्तु उस वृक्ष के पास मत जाना यदि जाओगे तो पापी हो जाओगे। शैतान के बहकावे में आकर उन्होंने स्वर्ग का आनन्द खो दिया। तब हमने कहा कि उतरो, तुम में से कोई आपसी शत्रु है, तुम्हारा ठिकाना पृथ्वी ही है। इस तरह आदम अपने स्वामी की कुछ बातें सीख कर पृथ्वी पर आ गया।

(मं. 1, सि. 1, सू. 2 आयत 35 से 37)

thearyasamaj.org

समीक्षक : इनके खुदा की अल्पज्ञता के क्या कहने हैं? अभी तो स्वर्ग में रहने का आशीर्वाद दिया और थोड़ी देर बाद उन्हें निकलने को कह दिया। खुदा ने वह वृक्ष क्या अपने लिए उत्पन्न किया था? यदि दूसरों के लिए तो आदम को रोका क्यों? इनका स्वर्ग पहाड़ पर होगा या आकाश पर, तभी तो खुदा ने आदम को नीचे उतार दिया। आदमी के पंख तो हैं नहीं, उसे नीचे गिरा दिया गया होगा। आदम खुदा से क्या बातें सीखकर आया, यह नहीं बताया। इनके स्वर्ग में भी मिट्टी होती होगी तभी वहां आदमी बना होगा, क्योंकि बिना मिट्टी के शरीर के इन्द्रिय सुख तो कोई भोग नहीं सकता। जब इनके स्वर्ग में आदमी जन्म लेता है तो उसकी मृत्यु भी अवश्य होती होगी। यदि वहां मृत्यु होती है तो कुरान में लिखी यह बात झूठ सिद्ध हो जाती है कि बीबियां सदैव बहिश्त (स्वर्ग) में रहती हैं।

(13) उस दिन से डरो जब कोई जीव किसी जीव पर भरोसा नहीं करेगा, न उसकी सिफारिश की जायेगी, न उससे बदला लिया जायेगा, न ही उसे सहायता दी जायेगी।

(मं 1, सि 1, सू 2 आयत 48)

समीक्षक : बुराई करने से तो सदा डरना चाहिए, किसी विशेष दिन नहीं। जब किसी की सिफारिश स्वीकार नहीं की जायेगी, तो फिर पैगम्बर की सिफारिश पर खुदा स्वर्ग देगा यह बात सच नहीं हो सकेगी? खुदा केवल स्वर्ग वालों की सहायता करता है, नरक वालों की नहीं, तब तो इनका खुदा पक्षपाती है।

(14) हमने मूसा को किताब और मौजिजे (दिव्यशक्तियां) दिये।

(मं. 1, सि. 1, सू. 2 आयत 53)

समीक्षक : अगर मूसा को किताब दी, फिर कुरान क्यों लिखा गया। दिव्यशक्तियां देने की बात बाइबल और कुरान दोनों में लिखी हैं परन्तु यह बात मानने योग्य नहीं है। जो खुदा उस समय दिव्यशक्तियां देता था वह अब इन्हें क्यों नहीं देता? जबकि खुदा के मानने वाले तो अब भी पाए जाते हैं। अगर भलाई और बुराई करने का उपदेश दोनों पुस्तकों में एक सा है तो दूसरी पुस्तक क्यों लिखी गई। छल–कपट करके आजकल भी स्वार्थी लोग अज्ञानियों के सामने विद्वान बन जाते हैं, यह कोई कठिन काम नहीं है।

(15) और कहो कि क्षमा मांगते हैं, हम तुम्हारे और अधिक भलाई करने वालों के पाप क्षमा करेंगे।

(मं. 1, सि. 1, सू. 2 आयत 58)

thearyasamaj.org

समीक्षक : जब स्वयं खुदा पाप क्षमा करके पापियों को आश्रय देगा तो फिर कोई पाप करने से क्यों डरेगा। अगर खुदा अपराध के अनुसार जीवों को दंड नहीं देता तो वह अन्यायी हो जाता है क्योंकि वह न्यायकारी है इसलिए यह पुस्तक ईश्वरकृत नहीं हो सकती।

(16) जब मूसा ने अपनी कौम के लिए पानी मांगा तो हमने कहा कि अपना असा (दंड) पत्थर पर मार। तब उसमें से बारह चश्मे बह निकले। (मं.1, सि. 1, सू–2 आयत 60)

समीक्षक : एक पत्थर की शिला पर डंडा मारने से बारह झरनों का निकलना सर्वधा असंभव है। हां, भीतर से पोला करके पहले ही पानी भर रखा हो तभी संभव हो सकता है। ऐसी असंभव बातें कोई अज्ञानी ही कर सकता है, ईश्वर नहीं।

(17) हमने उनको कहा कि तुम निन्दित बन्दर हो जाओ, जो उनके सामने और पीछे थे उनको यह भय दिया और ईमानदारों को शिक्षा दी। (मं. 1, सि. 1, सू. 2, आयत 65–66)

समीक्षक : अगर खुदा ने केवल भय देने के लिए बन्दर बनने को कहा और वे बन्दर नहीं बने तो खुदा का कहना झूठ हुआ और उसने छल किया। जिसमें ऐसी बातें लिखी हों वह पुस्तक न तो खुदा की बनाई हुई हो सकती है और न ही ऐसा छल करने वाला खुदा हो सकता है।

(18) इस तरह खुदा मुर्दों को जिलाता है और तुमको अपनी निशानियां दिखाता है कि तुम समझो।

(मं. 1, सि. 1, सू. 2, आयत 73)

समीक्षक : अगर खुदा मुर्दों को जिलाता था तो अब क्यों नहीं जिलाता? क्या अब वे कयामत की रात तक कबरों में पड़े रहेंगे? पृथ्वी, सूर्य, चांद और संसार के विविध पदार्थ ईश्वर की निशानियां नहीं हैं क्या?

(19) वे सदा बहिश्त (स्वर्ग) में वास करने वाले हैं।

(मं. 1, सि. 1, सू. 2 आयत 82)

समीक्षक : किसी भी जीव में अनन्त पुण्य और पाप करने की सामर्थ्य नहीं होती जिससे वह हमेशा स्वर्ग या नरक में रहे। जो कर्म अनंत नहीं तो फिर उनका फल भी अनंत नहीं हो सकता। कयामत की रात को न्याय होगा तो

thearyasamaj.org

मनुष्यों के पाप–पुण्य बराबर होने चाहिये। सृष्टि को बने हुए सात–आठ हजार साल बताते हैं तो क्या इससे पहले इनका खुदा बेकार बैठा था और कयामत के बाद भी निकम्मा ही बैठा रहेगा। परमेश्वर सदा सक्रिय रहता है और सबको उनके कर्मों के अनुसार फल देता रहता है, इसलिए न तो कुरान का खुदा ही सच्चा है और न ही कुरान की यह बात सच्ची है।

(20) हमने तुमसे प्रतिज्ञा करवाई थी कि तुम अपने लोगों का खून न बहाना और उन्हें घर से मत निकालना, इसके तुम ही साक्षी हो। फिर तुम अपने ही लोगों को मार रहे हो और उन्हें घरों से निकाल रहे हो। (मं. 1, सि. 1, सू. 2 आयत 84–85)

समीक्षक : परमात्मा तो सर्वज्ञ है वह भला प्रतिज्ञा क्यों करवायेगा? प्रतिज्ञा करना–कराना तो अल्पज्ञों (मनुष्यों) का काम है। आपस का लहू न बहाना और अपने मत वालों को घर से बाहर न निकालने का मतलब तो यह हुआ कि दूसरे मत वालों का लहू बहाने और उन्हें घरों से निकालने को उचित मान लिया। ऐसी ही पक्षपात और मूर्खता की बातें बाइबल में लिखी हैं। इसलिए कुरान स्वतंत्र रूप से लिखी पुस्तक नहीं है। कुछ बातों को छोड़कर सब बाइबल से नकल की गई है।

(21) ये वे लोग हैं जिन्होंने आखरत के बदले यहां की जिंदगी मोल ली है। उनका पाप कभी हलका न किया जायेगा और न ही उन्हें सहायता दी जायेगी। (मं. 1, सि. 1, सू. 2, आयत 86)

समीक्षक : ऐसी ईर्ष्या–द्वेष की बातें ईश्वर की नहीं हो सकती हैं। यदि ईश्वर पापियों के पाप बिना दंड दिए हलके करेगा तो अन्याय होगा। अगर सजा देकर हलके किये जायेंगे तब तो उन लोगों के भी हलके हो जायेंगे जिनके बारे में इस आयत में लिखा गया है। यदि उन्हें दंड देकर भी उनके पाप हलके न किए जायें तो भी अन्याय होगा।

धर्मात्माओं के पाप तो स्वयं हलके ही रहते हैं, उन्हें इनका खुदा क्या हलका करेगा। यह कथन किसी विद्वान का नहीं है। धर्मात्माओं को सुख और पापियों को दुःख उनके कर्मों के अनुसार ही मिलना चाहिए, यही ईश्वर का न्याय है।

(22) निश्चय ही हमने मूसा को किताब दी, उसके बाद हम पैगम्बर को लाये और मरियम के पुत्र ईसा को दैवीशक्ति देकर प्रकट किया। उसके साथ रुहलकुद्दस (जेबराईल) को भेजा जो हरदम उसके साथ

thearyasamaj.org

रहता था। जब तुम्हारे पास पैगम्बर उस वस्तु सहित आया जिसे तुम नहीं चाहते थे, तब तुमने अभिमान किया। एक मत को झुठलाया और एक को मार डालते हो। (मं. 1, सि. 1 सू. 2 आयत 87)

समीक्षक : कुरान इस बात का साक्षी है कि मूसा को किताब दी और उसका मानना मुसलमानों के लिए आवश्यक है। इस तरह उसमें जो दोष हैं वे सब मुसलमानों के मत में आ गए। ईसा को दैवी शक्ति देना आदि बातें सृष्टिक्रम के विरुद्ध हैं। अगर उस समय दैवी शक्ति दी जाती थी तो वर्तमान समय में भी ऐसा होना चाहिए। इन बातों को माना नहीं जा सकता क्योंकि वर्तमान समय में ऐसा नहीं होता।

(23) और इससे पहले काफिरों पर विजय चाहते थे जो कुछ पहचाना था जब उनके पास वह आया, झट काफिर हो गए। काफिरों पर लानत है अल्लाह की। (मं. 1, सि. 1, सू. 2 आयत 88)

समीक्षक : जैसे तुम दूसरे मत वालों को काफिर कहते हो वैसे ही वे भी तुम्हें काफिर कहते होंगे। अब बताओ कौन सच्चा है और कौन झूठा। सच पूछा जाये तो जो बातें सब मत वालों की मिलती हैं वे ही सच्ची हैं, बाकी झूठी हैं।

(24) आनन्द का सन्देशा ईमानदारों को। अल्लाह, फरिश्तों, पैगम्बरों जिबराइल और मीकाइल का जो शत्रु है, अल्लाह भी ऐसे काफिरों का शत्रु है। (मं. 1, सिं., 1, सू. 2 आयत 97–98)

समीक्षक : मुसलमान 'खुदा लाशरीक' मानते हैं, फिर इतने शरीफ कहां से आ गए? क्या जो औरों का शत्रु है, वह खुदा का भी शत्रु है। यदि ऐसा है तो इनका मानना ठीक नहीं है क्योंकि ईश्वर किसी का शत्रु नहीं हो सकता।

(25) और अल्लाह खास (प्रधान) करता है, जिसको चाहता है साथ अपनी दया के। (मं. 1, सि. 1, सू. 2 आयत 105)

समीक्षक : ऐसा जान पड़ता है कि इनका ईश्वर जो दया करने के योग्य न हो, उस पर भी दया करता है और उसे प्रधान बनाता है। इसका अर्थ तो यह हुआ कि इनके खुदा की प्रसन्नता पर सुख–दुख निर्भर करते हैं। यदि ऐसा है तो बुरे कर्म करने से कोई नहीं डरेगा।

(26) ऐसा न हो कि काफिर लोग ईर्ष्या करके तुमको ईमान से फेर देवें क्योंकि उनमें से ईमान वालों के बहुत से दोस्त हैं। (मं. 1, सि. 1, सू. 2 आयत 101)

thearyasamaj.org

समीक्षक : खुदा ही उनको सावधान करता है कि कहीं काफिर लोग उनका ईमान न डिगा देवें। यदि इनका ईश्वर सर्वज्ञ होता तो ऐसी बातें न करता।

(27) तुम जिधर मुंह करो उधर ही मुंह अल्लाह का है।

(मं. 1, सि. 1, सू 2, आयत 115)

समीक्षक : अगर यह बात सच्ची है तो फिर मुसलमान 'किबले' की ओर मुंह क्यों करते हैं। अगर तुम यह कहते हो कि 'किबले' की ओर मुंह करने का हुक्म है तो एक दूसरे की विरोधी बातों में से एक तो झूठी होगी। अगर अल्लाह का मुंह है, तो वह सब ओर हो ही नहीं सकता, क्योंकि मुंह तो एक ओर ही होता है।

(28) जो आकाश और भूमि का उत्पन्न करने वाला है। वह जो कुछ करना चाहता है, वह उसे करना नहीं पड़ता केवल 'हो जा' कह देने से ही वह काम हो जाता है। (मं. 1, सि. 1, सू. 2 आयत 117)

समीक्षक : खुदा ने किसे हुक्म दिया? किसने सुना? क्या बनाया? किस कारण से बनाया? जब यह मानते हैं कि सृष्टि के पूर्व खुदा के सिवाय कोई दूसरी वस्तु न थी तो यह संसार कहां से आया? बिना कारण के तो कोई छोटी सी वस्तु भी नहीं बनती फिर इतना बड़ा संसार कारण बिना केवल 'हो जा' कहने से बन ही नहीं सकता। यह सब अज्ञानियों की बातें हैं। बताओ तो, कि यह जगत बना कैसे?

इस्लाम समर्थक : खुदा की इच्छा से।

समीक्षक : तुम्हारे खुदा की इच्छा से इतना बड़ा जगत और सब कुछ बन सकता है तो तुम्हारी इच्छा से एक मक्खी की टांग भी क्यों नहीं बन सकती?

इस्लाम समर्थक : खुदा सर्वशक्तिमान है, इसलिए जो चाहे कर सकता है।

समीक्षक : सर्वशक्तिमान का अर्थ क्या है?

इस्लाम समर्थक : जो चाहे सो करे।

समीक्षक : तो क्या खुदा दूसरा खुदा भी बना सकता है? अपने आपको मार सकता है, मूर्ख रोगी और अज्ञानी भी बन सकता है?

इस्लाम समर्थक : ऐसा कभी नहीं बन सकता।

समीक्षक : ईश्वर अपने और दूसरों के गुण, कर्म, स्वभाव के विरुद्ध कुछ भी नहीं कर सकता। जैसे संसार में किसी वस्तु को बनाने के लिए तीन पदार्थों

thearyasamaj.org

का होना आवश्यक है : एक बनाने वाला कुम्हार, दूसरा मिट्टी जिससे घड़ा बनेगा, तीसरा साधन (चाक) जिसके द्वारा घड़ा बनाया जायेगा वैसे ही इस जगत के बनने से पहले परमेश्वर, जीव और प्रकृति तीन तत्व थे! इसलिए कुरान की यह बात कि सृष्टि से पूर्व कुछ न था, झूठी है।

(29) जब हमने लोगों के लिए काबे को पवित्र स्थान सुख देने को बनाया तुम नमाज के लिए इब्राहीम के स्थान को पकड़ो।

(मं. 1 सि. 1, सू. 2 आयत 125)

समीक्षक : क्या काबे से पहले खुदा ने कोई पवित्र स्थान नहीं बनाया था? अगर नहीं बनाया था तो पहले उत्पन्न हुए लोग बिना पवित्र स्थान के ही रहे थे। ऐसा जान पड़ता है कि ईश्वर को पवित्र स्थान बनाने की याद ही नहीं आई होगी।

(30) वो कौन मनुष्य है जो अपने को मूर्ख बनाकर इब्राहीम के दीन (धर्म) से फिर जाये और निश्चय हमने दुनिया में उसी को पसन्द किया और निश्चय आखरत में वे ही नेक हैं।

(मं. 1, सि. 1, सू.2, आयत 130)

समीक्षक : यह कैसे संभव हो सकता है कि जो इब्राहीम के धर्म को न मानें वे सब मूर्ख हैं। खुदा ने केवल इब्राहीम को ही क्यों पसन्द किया? अगर वह धर्मात्मा था तो और भी बहुत से धर्मात्मा होंगे। यदि धर्मात्मा नहीं था तो उसे पसन्द करना उचित न था। सच तो यह है कि ईश्वर धर्मात्मा को ही पसन्द करता है, अधर्मी को नहीं।

(31) निश्चय हम तेरे मुख को आसमान में फिरता देखते हैं, अवश्य हम तुझे उस किबले की ओर फेरेंगे कि उसको पसन्द करे। बस अपना मुख मस्जिदुल्हराम की ओर फेर, जहां कहीं तुम हो अपना मुख उसकी ओर फेर लो। (मं. 1, सि. 2, सू. 2, आयत 144)

समीक्षक : यह तो बहुत बड़ी बुतपरस्ती (मूर्तिपूजा) है। जैसे तुम मस्जिद किबले को खुदा नहीं समझते हो, फिर भी उसकी ओर मुंह करके नमाज पढ़ते हो, वैसे ही दूसरे लोग भी मूर्ति को ईश्वर नहीं मानते हैं किन्तु उसके सामने बैठकर परमेश्वर की भक्ति करते हैं। तुम लोगों को मूर्तियां तोड़ने से पहले मस्जिद किबले के बुत को तोड़ना चाहिए।

thearyasamaj.org

अगर तुम कहते हो कि कुरान में हुक्म है कि किबले की ओर मुंह करके नमाज पढ़ो, तो पुराणों में ईश्वर के अवतार व्यास जी का वचन है कि मूर्ति के सामने बैठकर ईश्वर का ध्यान करो। आपके मुहम्मद साहब ने छोटे बुत को अपने मत से निकालकर पहाड़ सा बुत मक्के की मस्जिद खडा कर दिया। जब तक तुम अपनी बुतपरस्ती नहीं छोड़ देते तब तक तुम्हें मूर्तिपूजा की निन्दा से दूर रहना चाहिए। बुतपरस्ती से बचना चाहते हो तो वैदिक धर्म अपना लो, उसमें मूर्ति पूजा नहीं है।

(32) जो लोग अल्लाह के मार्ग में मारे जाते हैं उनके लिए यह मत कहो कि ये मृतक हैं, किन्तु वे जीवित हैं।

(मं. 1, सि. 2, सू. 2, आयत 154)

समीक्षक : ईश्वर के मार्ग में मरने की क्या आवश्यकता है? ईश्वर तो सबको सुख देता है, वह क्यों किसी को अपने नाम पर मरने–मारने के लिए कहेगा। यह सब स्वार्थी लोगों का अपना ढंग है कि वे धर्म के नाम पर लोगों को लड़ने के लिए उकसा कर स्वयं लाभ उठाते हैं।

(33) और यह कि अल्लाह कठोर दुःख देने वाला है। शैतान के पीछे मत चलो वह तुम्हारा शत्रु है। वही तुम्हें ऐसी बुरी आज्ञा देगा कि तुम कहो अल्लाह को नहीं जानते।

(मं. 1, सि. 2, सू. 2, आयत 165 से 169)

समीक्षक : क्या तुम्हारा खुदा सभी पापियों को कठोर दंड देने वाला और पुण्य करने वालों पर दयालु है या केवल मुसलमानों पर दयालु और अन्य पर दयाहीन है? अगर ऐसा पक्षपाती है तब वह ईश्वर नहीं हो सकता। अगर वह पक्षपाती न होकर सभी धर्म करने वालों पर दयालु और अधर्म करने वालों के लिए कठोर है तब तो मुहम्मद साहब और कुरान को मानने की आवश्यकता ही नहीं रह जाती है। ऐसा जान पड़ता है कि इनका खुदा अल्पज्ञ है जो पहले से नहीं जानता था कि शैतान बुराई करेगा, अगर जानता, तो शैतान को पैदा ही न करता। यदि परीक्षा लेने के लिए शैतान को पैदा किया तब भी खुदा का अल्पज्ञ होना ही सिद्ध होता है क्योंकि यदि सर्वज्ञ होता तब तो परीक्षा लेने की आवश्यकता ही नहीं होती। अब देखना यह है कि शैतान को किसने बहकाया? यदि अपने आप बहक गया तब तो सभी जीव अपने आप बहक सकते हैं, फिर उन्हें बहकाने के लिए शैतान की कोई जरूरत नहीं रह जाती। यदि खुदा ने

thearyasamaj.org

बहकाया तब तो इनका खुदा शैतान से भी बड़ा शैतान होगा। सच बात तो यह है कि कुसंग और अविद्या ही मनुष्य को भ्रान्त करती है, शैतान नहीं।

(34) तुम पर मुर्दा, लहू और सूअर का मांस हराम है और अल्लाह के बिना जिस पर कुछ पुकारा जावे।

(मं. 1., सि. 2, सू. 2, आयत 173)

समीक्षक : मुर्दे का मांस खाना मना किया है। जो अपने आप मर जाए वह तो मुर्दा है, जिसे ये मार देते हैं क्या उसे मुर्दा नहीं कहा जायेगा? जिसमें से जीव निकल जाता है तो शेष मुर्दा ही रह जाता है। सूअर का मांस खाने का निषेध किया तो क्या मनुष्य का मांस खाना उचित है? परमेश्वर के नाम पर हिंसा करना और दूसरे प्राणियों की हत्या करने से क्या इनका ईश्वर कलंकित नहीं होता? फिर जिन जीवों को मुसलमान मारते हैं क्या उन्हें ईश्वर ने पैदा नहीं किया, क्या ईश्वर उन्हें अपनी सन्तान नहीं समझता। जो गाय संसार का इतना उपकार करती है उसे मारने का निषेध न करके जगत को कितनी हानि पहुंचाई है, इनके मत ने। ऐसी बातें खुदा या खुदा की पुस्तक की हो ही नहीं सकती।

(35) रोज़े की रात तुम्हारे लिए हलाल की गई मदनोत्सव करना अपनी बीवियों से। अल्लाह ने जाना कि तुम व्यभिचार करते हो, इसलिए उसने तुमको क्षमा कर दिया कि तुम उनको ढूंढो जो अल्लाह ने तुम्हारे लिख लिख दिया है अर्थात् रात से जब दिन निकले तब तक खाओ पीओ और मौज करो। (मं. 1, सि. 2, सू. 2, आयत 187)

समीक्षक : मुसलमानों का मत चलने से पहले किसी ने किसी पौराणिक से 'चान्द्रायण व्रत' जो महीने भर का होता था, उसकी शास्त्र द्वारा बताई गई विधि के बारे में पूछा होगा। शास्त्र में लिखा है कि दोपहर में चन्द्र की कला घटने–बढ़ने के अनुसार घटाना–बढ़ाना अर्थात् दोपहर के भोजन की मात्रा चन्द्रमा की कला के बढ़ने के साथ बढ़ायें और घटने के साथ घटायें। उस पौराणिक को शास्त्र का वचन समझ न आया होगा और उसने चन्द्रमा का दर्शन करके खाना कह दिया होगा। मुसलमानों ने स्त्रियों का समागम भी जोड़कर रात को जितनी बार चाहो खाओ, दिन में व्रत रखना लिख दिया। जबकि पुराणों में व्रत में स्त्री–समागम का त्याग है। दिन में न खाकर रात को खाना सृष्टिक्रम के विपरीत है।

thearyasamaj.org

(36) अललाह के मार्ग में उनसे लड़ो जो तुमसे लड़ते हैं। तुम उनको जहां पावो मार डालो, कत्ल से कुफ्र बुरा है। यहां तक उनसे लड़ो कि कुफ्र न रहे और अल्लाह का दीन हो। उन्होंने जितनी ज्यादती तुम पर की है तुम भी उतनी ही उनके साथ करो।

(मं., सिं. 2 सू. 2, आयत 190 से 194)

समीक्षक : अगर कुरान में ऐसी बातें न लिखी होतीं तो मुसलमान लोग दूसरे धर्म वालों पर इतना अत्याचार न करते कत्ल से कुफ्र को बुरा मानते हैं अर्थात् किसी को मार देना बुरा नहीं है लेकिन इस्लाम धर्म को न मानना बुरा है। इसीलिए इनका मन दूसरे धर्म वालों के प्रति कठोर है और यह उन्हें मारते आए हैं और मारते रहेंगे। यह तो सरासर अन्याय है। अगर कोई अज्ञानी हमें गाली दे तो क्या हम भी उसे गाली दें। यह बात न ईश्वर की, न किसी धर्मात्मा विद्वान की और न ही ईश्वर रचित पुस्तक की हो सकती है। यह तो किसी स्वार्थी और धर्मान्ध व्यक्ति की ही हो सकती है।

(37) अल्लाह झगड़े को मित्र नहीं रखता। ऐ लोगों जो ईमान लाए हो, इस्लाम में प्रवेश करो।

(मं. 1., सि. 2, सू. 2 आयत 205–208)

समीक्षक : अगर खुदा झगड़े को अच्छा नहीं समझता तो मुसलमानों को झगड़ा करने की प्रेरणा क्यों देता है और झगड़ालू मुसलमानों से मित्रता क्यों रखता है। अगर मुसलमानों का मत अपनाने से ईश्वर प्रसन्न होता है, तब वह सारे संसार का ईश्वर नहीं हो सकता। इसलिए कुरान ईश्वरकृत पुस्तक नहीं हो सकती और न ही इसमें कहा गया ही ईश्वर का वचन हो सकता है।

(38) खुदा जिसको चाहे अनन्त रिजक देवे।

(मं. 1, सि. 2, सू. 2, आयत 212)

समीक्षक : अगर खुदा पाप–पुण्य देखे बिना ऐसे ही रिजक (सम्पत्ति) दे देता है, तब तो अच्छे–बुरे कर्मो में कोई भेद नहीं रह जाता और सुख–दुख देना ईश्वर की इच्छा पर निर्भर हो जाता है। इसीलिए मुसलमान दूसरों पर मनमाने अत्याचार करते हैं।

(39) तुम रजस्वला के पास तब तक मत जाओ जब तक वह पवित्र न हो जाए। जिस तरह खेत का स्वामी खेत में जाता है उसी तरह

तुम अपनी बीवियों के पास जाओ। अल्लाह तुमको व्यर्थ की शपथ में नहीं डालता। (मं. 1, सि. 2, सूरत 2 आयत 222 से 225)

समीक्षक : रजस्वला स्त्री का संग न करना तो अच्छी बात लिखी है, लेकिन स्त्रियों को खेती तुल्य कहकर यह कह देना जैसे चाहो उनके पास जाओ, ठीक नहीं है। क्योंकि इससे मनुष्य विषयी बन जाता है। अगर खुदा बेकार शपथ में नहीं डालता तब तो सब झूठ बोलेंगे और शपथ तोड़ेंगे। इस तरह तो इनका खुदा झूठ की स्थापना करने वाला बन जाता है।

(40) वो कौन मनुष्य है जो अल्लाह को उधार देवे। अच्छा बस अल्लाह दुगना करे उसे उसके लिए।

(मं. 1, सि. 2, सू. 2, आयत 245)

समीक्षक : जो सारे संसार को बनाने वाला है वह मनुष्य से कर्ज मांगे, ऐसा कभी नहीं हो सकता। उधार लेकर दुगना चुकाने की बात तो ऐसे जान पड़ती है कि इनका खुदा साहूकार का काम करता था और इनके खुदा का भंडार किसी कारोबार के घाटे से खाली हो गया जो उसे उधार लेकर दुगना देना स्वीकार करना पड़ा। ऐसा उधार उन लोगों को लेना पड़ता है जिनका खर्च आमदन से अधिक होता है, ईश्वर को नहीं। इससे इनके खुदा का मनुष्य होना ही सिद्ध होता है।

(41) उनमें कोई ईमान न लाया और कोई काफिर हुआ, जो अल्लाह चाहता न लड़ते, जो चाहता है, अल्लाह करता है।

(मं. 1,, सि. 3, सू. 2 आयत 253)

समीक्षक : इससे तो ऐसा प्रतीत होता है कि जितनी लड़ाई होती हैं सब ईश्वर की इच्छा से ही होती हैं। अगर ईश्वर अधर्म करना चाहे तो वह भी कर सकता है तो वह ईश्वर नहीं है। कोई भला मनुष्य भी शांति भंग करके लड़ाई नहीं करवाना चाहेगा फिर ईश्वर ऐसा क्यों करेगा? इसलिए कुरान ईश्वर रचित नहीं, किसी स्वार्थी मनुष्य द्वारा लिखा गया है।

(42) जो कुछ आसमान और पृथ्वी पर है, सब उसी के लिए है? चाहे उसकी कुर्सी ने आसमान और पृथ्वी को समा लिया है।

(मं. 1, सि. 3, सू. 2 आयत 255)

समीक्षक : ईश्वर निराकार है उसे किसी पदार्थ की आवश्यकता नहीं है,

thearyasamaj.org

इसलिए उसने संसार के सब पदार्थ जीवों के लिए बनाए हैं, अपने लिए नहीं। अगर उसकी कुर्सी है तो वह एकदेशी है इसलिए उसे ईश्वर नहीं कहा जा सकता क्योंकि ईश्वर तो सर्वज्ञ है।

(43) अल्लाह सूर्य को पूर्व से लाता है तू पश्चिम से ले आ। बस जो काफिर था, हैरान हुआ था। निश्चय ही अल्लाह पापियों को मार्ग नहीं दिखलाता। (मं. 1, सि. 3, सूत्र 2, आयत 258)

समीक्षक : यह बात अविद्या की है। सूर्य को कोई नहीं लाता। सूर्य तो अपनी परिधि में घूमता रहता है। कुरान लिखने वाले को भूगोल और खगोल विद्या नहीं आती थी, तभी उसने ऐसा लिखा है। धर्मात्मा तो स्वयं सीधे मार्ग पर चलते हैं अगर इनका खुदा पापियों या भूले हुए लोगों को मार्ग नहीं दिखाता तो फिर ऐसे खुदा की क्या आवश्यकता है? कर्त्तव्य न पालन करना ही लिखना, इनकी सबसे बड़ी भूल है।

(44) चार जानवरों से ले उनकी सूरत पहचान रख। फिर हर पहाड़ पर उनमें से एक–एक टुकड़ा रख दे और उनको बुला, वे तेरे पास दौड़ते चले आयेंगे। (मं. 1, सि., 3 सू. 2, आ. 260)

समीक्षक : मुसलमानों का खुदा तमाशा दिखाने वालों के समान तमाशा करता है। मूर्ख लोग ही फंसेंगे, ऐसे लोगों के जाल में। बुद्धिमान लोगों को तो इसमें खुदा की बुराई ही दिखाई देगी।

(45) जिसको चाहे नीति देता है। (मं. 1, सि. 3, सू. 2, आयत 269)

समीक्षक : अगर इनका खुदा विद्वान और पक्षपात रहित होता तो सबको समान रूप से नीति का उपदेश देता। किसी को नीति और किसी को अनीति का उपदेश देने वाला ईश्वर नहीं माना जा सकता।

(46) जो लोग व्याज खाते हैं, वे कबरों से नहीं खड़े होंगे।
(मं. 1, सि.3, सू. 2, आयत 275)

समीक्षक : व्याज खाने वाले अनिश्चित काल तक कबरों में पड़े रहेंगे, ऐसा कोई अज्ञानी ही कह सकता है, ईश्वर नहीं।

(47) वह जिसको चाहेगा क्षमा करेगा, जिसको चाहे दंड देगा क्योंकि वह सब वस्तु पर बलवान है।
(मं., 1, सि. 3,, सू. 2., आयत 284)

thearyasamaj.org

समीक्षक : क्षमा करने योग्य को क्षमा न करना और अयोग्य को क्षमा करना तो अन्धेर नगरी चौपट राजा वाली कहावत सिद्ध करती है। अगर ईश्वर जिसे चाहता है पापी बना देता है और दुःख देता है तथा जिसे चाहता है उसे धर्मात्मा बना देता है और सुख देता है तब तो जीव के कर्मों का फल ईश्वर ही भोगता होगा, जीव नहीं। क्योंकि जीव जब सब कुछ ईश्वर के कहने से ही करेगा, तब वह फल क्यों भोगेगा?

(48) इससे अच्छी खबर परहेजगारों को क्या दूं कि अल्लाह की ओर से उनके लिए ऐसा स्वर्ग रचा गया है जिसमें नहरें चलती हैं, सदा रहने वाली शुद्ध बीवियां है। अल्लाह उन्हें बन्दों के साथ देखने वाला है। (मं. 1, सि. 3, सू. 3 आयत 15)

समीक्षक : ऐसी बातें जिस पुस्तक में हों उसे परमेश्वर कृत तो क्या, किसी बुद्धिमान की लिखी हुई भी नहीं माना जा सकता। कोई इनसे पूछे कि जो बीवियां सदा स्वर्ग में रहती हैं वे वही उत्पन्न हुई थी या यहां से उत्पन्न होकर वहां गई हैं। यदि यहां से वहां गई हैं तो कयामत से पहले उन्हें स्वर्ग में बुलाकर खुदा ने अपना कयामत के दिन न्याय का नियम क्यों तोड़ा? यदि वे वहां पैदा हुई हैं तो कयामत के दिन तक पुरुषों के बिना वहां कैसे रहेंगी? खुदा ने बीवियों को तो सदा रहने वाले स्वर्ग में बुला लिया लेकिन पुरुषों के लिए ऐसा स्वर्ग न बनाकर उन पर बड़ा अन्याय किया है। इसलिए मुसलमानों का खुदा नासमझ और अन्यायी है।

(49) निश्चय ही अल्लाह की ओर से दीन धर्म इस्लाम है (मं. 1, सि. 3,, सू. 3 आयत 19)

समीक्षक : क्या ईश्वर मुसलमानों का ही है, दूसरों का नहीं है? क्या 1425 वर्ष पूर्व संसार में कोई ईश्वरीय धर्म था ही नहीं। इन सब बातों से यही सिद्ध होता है कि कुरान किसी पक्षपाती ने ही बनाया है।

(50) प्रत्येक जीव को उसका कमाया हुआ पूरा देकर न्याय किया जायेगा। अल्लाह ही मुल्क का मालिक है। जिसको चाहे देता है, जिससे चाहे छीन लेता है, जिसको चाहे सम्मान देता है जिसको चाहे अप्रतिष्ठा देता है, सब कुछ तेरे ही हाथ में है प्रत्येक वस्तु पर तू ही बलवान है। रात को दिन में और दिन को रात में बदल देता है, मृतक को जीवित और जीवित को मृतक बना देता है, जिसको चाहे अनन्त अन्न

देता है। मुसलमानों को उचित है कि वे काफिरों को मित्र न बनायें। अगर तुम चाहते हो कि अल्लाह तुम्हारा पक्ष करे तो तुम ऐसा ही करो। अल्लाह करुणामय है वह निश्चय ही तुम्हारे पाप क्षमा करेगा।

(मं. 1, सि. 3,, सू. 3 आयत 25 से 31)

समीक्षक : अगर प्रत्येक जीव को उसके कर्मो का पूरा फल दिया जायेगा तब तो किसी को क्षमा नहीं किया जा सकता। अगर किसी को क्षमा किया जाता है, किसी को प्रतिष्ठा दी जाती है और किसी से छीन ली जाती है तो ईश्वर अन्यायी हो जाता है। ईश्वर रात–दिन तो बनाता है परन्तु दिन में रात और रात में दिन नहीं करता और न ही जीवित को मृत और मृतक को जीवित करता है। ईश्वर अपनी व्यवस्था में कोई अदल–बदल नहीं करता। कितना पक्षपात है इनके मत में, मुसलमान अगर दुष्ट भी हो तो उसे मित्र बना लो, दूसरा कोई धर्मात्मा भी हो तो उसे मित्र न बनाओ। इससे पता चलता है कि कुरान, कुरान का खुदा और मुसलमान लोग केवल पक्षपात और अविद्या से भरे हुए ही हैं। मुहम्मद साहब का यह कहना है कि अगर तुम मेरा पक्ष करोगे तो खुदा तुम्हारा पक्ष करेगा और तुम्हारे पाप भी क्षमा करेगा, यही प्रकट करता है कि हजरत मुहम्मद का अन्तःकरण शुद्ध नहीं था और उन्होंने अपना मतलब सिद्ध करने के लिए कुरान बनाया था।

(51) जिस समय फरिश्तों ने कहा कि ऐ मरियम! खुदा ने तुझे जगत की सब स्त्रियों से अधिक पसन्द और पवित्र किया है।

(मं. 1, सि. 3,, सू. 3, आयत 41)

समीक्षक : इनके खुदा और फरिश्ते मनुष्यों की तरह बातें करते हैं, परन्तु आजकल ऐसा कहीं दिखाई नहीं देता। जिस समय ईसाई और मुसलमानों का मत चला उस समय उन देशों में जंगली और विद्याहीन मनुष्य थे, इसलिए ये विद्या–विरुद्ध बातें फैलाने में सफल हो गए। अब विद्वान लोग इनकी पोल खोलने लगे हैं।

(52) उसको कहता है कि 'हो' बस हो जाता है। काफिरों ने धोखा दिया, ईश्वर ने धोखा दिया, ईश्वर बहुत मकर करने वाला है।

(मं. 1, सि. 3, सू. 3, आयत 46 और 53)

समीक्षक : मुसलमान लोग मानते हैं कि सृष्टि से पूर्व खुदा के सिवाय

thearyasamaj.org

कुछ न था, तब खुदा ने किससे कहा 'हो' और उसके कहने से कौन हो गया? मुसलमान लोग सात जन्म में यह सिद्ध नहीं कर सकते कि कारण के बिना कार्य होता है। जैसे माता–पिता के बिना हमारा शरीर नहीं हो सकता, उसी प्रकार ईश्वर, प्रकृति और जीव के बिना यह जगत नहीं हो सकता। जो धोखा दे, मकर करे, छल करे वह ईश्वर हो ही नहीं सकता। ईश्वर तो क्या? कोई उत्तम मनुष्य भी ऐसा काम नहीं करता।

(53) क्या तुमको यह बहुत न होगा कि अल्लाह तुमको 3 हजार फरिश्तों के साथ सहायता दे।

(मं. 1, सि. 4,, सू. 3, आयत 124)

समीक्षक : अगर मुसलमानों को तीन हजार फरिश्तों की सहायता न मिलती तो इनकी बादशाहत नष्ट हो गई होती। अब सहायता नहीं मिलती होगी इसलिए इनके राज्य नष्ट हो रहे हैं।

(54) और काफिरों पर हमको सहाय कर। अल्लाह तुम्हारा उत्तम सहायक और कारसाज है। जो तुम अल्लाह के मार्ग में मारे जाओ या मर जाओ, अल्लाह की दया बहुत अच्छी है।

(मं. 1, सि. 4, सू. 3, आयत 147, 150, 157)

समीक्षक : मुसलमान अपने मत से बाहर लोगों को मारने के लिए खुदा से प्रार्थना करते हैं। क्या परमेश्वर इतना भोला है कि इनकी बात मान लेगा। अगर मुसलमानों का खुदा कारसाज होता तब तो मुसलमानों का कोई भी काम न बिगड़ता। अगर ईश्वर मुसलमानों के मोह में फंसा है, तो ऐसे पक्षपाती ईश्वर की धर्मात्मा पुरुष उपासना नहीं कर सकते।

(55) और अल्लाह तुमको अप्रत्यक्ष नहीं करता परन्तु अपने पैगम्बरों से जिसको चाहे पसंद करे। बस अल्लाह और उसके रसूल पर ईमान लाओ। **(मं. 1, सि. 4, सू.3, आयत 179)**

समीक्षक : अगर मुसलमान लोग खुदा के सिवाय किसी पर ईमान नहीं लाते तो पैगम्बर को बीच में शामिल क्यों कर लिया? अगर पैगम्बर पर भी ईमान लाने को कहा है तो इसी से पैगम्बर भी शरीक हो गया, तब वे अपने खुदा को लाशरीक कैसे कह सकते हैं। इसका मतलब तो यह हुआ कि इनका खुदा पैगम्बर को शरीक किए बिना अपना चाहा हुआ काम पूरा नहीं कर सकता, तो अवश्य असमर्थ होगा।

thearyasamaj.org

(56) ऐ ईमानवालो! सन्तोष करो, परस्पर थामे रखो और लड़ाई में लगे रहो। अल्लाह से डरो कि तुम छुटकारा पाओ।

(मं.1, सि. 4,, सू. 3, आयत 200)

समीक्षक : कुरान का खुदा और पैगम्बर दोनो लड़ाईबाज हैं, तभी तो लड़ाई की आज्ञा देते रहते हैं कभी शांति की बात नहीं कहते। लड़ाई करने की आज्ञा देने वाला, शांति भंग करता है। क्या नाममात्र खुदा से डरने से छुटकारा पाया जाता है या अधर्मयुक्त लड़ाई से डरने से। यदि पहला पक्ष है तब तो डरना न डरना बराबर है, परन्तु यदि दूसरा पक्ष है तो डरना ठीक है।

(57) ये अल्लाह की हदें हैं कि जो अल्लाह और उसके रसूल की आज्ञा मानेगा वह स्वर्ग में जायेगा और जो इनकी आज्ञा नहीं मानेगा वह सदा जलती रहने वाली आग में जलाया जायेगा और उसके लिए खराब करने वाला दुःख है। (मं.1, सि. 4, सू. 4, आयत 13–14)

समीक्षक : खुदा ने मुहम्मद साहब को पैगम्बर मानकर शरीक कर लिया, यह बात स्वयं उन्होंने ही कुरान में लिख दी। इतना ही नहीं खुदा ने स्वर्ग भी उनके साथ सांझा कर लिया। जब किसी भी बात में इनका खुदा स्वतन्त्र नहीं है तो उसे लाशरीक कहना व्यर्थ है। ऐसी एक दूसरे की विरोधी बातें ईश्वरीय पुस्तक में नहीं हो सकती।

(58) एक परमाणु के बराबर भी अल्लाह अन्याय नहीं करता। और जो भलाई होवे उसका दुगना फल उसको देता है।

(मं. 1, सि. 5, सू. 4, आयत 40)

समीक्षक : अगर खुदा परमाणु भर भी अन्याय नहीं करता तो फिर पुण्य को दुगना कैसे कर देता है? और मुसलमानों का पक्ष करने और कर्मों के फल को घटाने–बढ़ाने से वह अन्यायी हो जाता है।

(59) जब तेरे पास से निकलते हैं। तो तेरे कहने के विपरीत सोचते हैं। अल्लाह उनकी सलाह को लिखता है। अल्लाह ने उनकी कमाई वस्तु के कारण से उनको उल्टा–उल्टा किया। क्या तुम चाहते हो कि अल्लाह के गुमराह किए हुए को मार्ग पर लाओ? बस अल्लाह जिसको गुमराह करे उसे कभी मार्ग नहीं मिलेगा।

(मं.1, सि. 5, सू. 4, आयत 81,88)

thearyasamaj.org

समीक्षक : ईश्वर तो सर्वज्ञ है फिर उसे लिखने की क्या आवश्यकता। मुसलमान तो कहते हैं कि शैतान मनुष्य को गुमराह करता है लेकिन यहां तो लिखा है कि खुदा गुमराह करता है, फिर अल्लाह और शैतान में तो कोई भेद नहीं रह जाता।

(60) और अपने हाथों को न रोकें, उनको पकड़ लो और जहां पाओ, मार डालो। मुसलमान को मारना योग्य नहीं। जो कोई अनजाने से मार डाले बस एक गर्दन मुसलमान का छोड़ना है। और खून बहा उन लोगों की ओर सौंपी हुई, उस कौम से जो होवें और तुम्हारे लिए दान कर देंवे, जो दुश्मन की कौम से हैं। अगर कोई जानबूझ कर मुसलमान को जान से मार डाले वह सदा के लिए दोजख (नरक) में रहेगा, उस पर अल्लाह का क्रोध और लानत है।

(मं. 1, सि. 5, सू. 4, आयत 91 से 93)

समीक्षक : कितना पक्षपात है इनके कुरान में। मुसलमान को न मारो, दूसरे जहां मिलें उन्हें मार डालो। भूल से अगर कोई मुसलमान मारा जाता है तो उसका प्रायश्चित करना पड़ता है लेकिन दूसरे लोगों को मारने से स्वर्ग मिलता है। मुसलमान को जान—बूझकर मारने वाला सदा के लिए नरक में जाता है तो फिर गैर—मुसलमानों को मारने पर स्वर्ग देने वाला खुदा पक्षपाती नहीं तो और क्या। वेदमत ही श्रेष्ठ है जिसमें सभी को समान समझा जाता है। श्रेष्ठ मार्ग पर चलना उचित है और दुष्ट मार्ग पर चलना बुरा लिखा है, वेद में।

(61) शिक्षा (कुरान) प्रकट होने के पीछे जिसने रसूल से विरोध किया और मुसलमानों के विरुद्ध पक्ष लिया उसको हम अवश्य नरक में भेजेंगे। (मं., 1, सि.5, सू.4, आयत 115)

समीक्षक : मुहम्मद साहब ने यह सब कुछ खुदा के नाम से इसलिए लिखा है जिससे इनका धर्म बढ़ता रहे, और इन्हें भोग पदार्थ और आनन्द मिलता रहे।

(62) जो अल्लाह, फरिश्तों, किताबों, रसूलों और कयामत के साथ कुफर करे, वह निश्चय ही गुमराह है। अगर बार—बार ईमान लाकर फिर छोड़ देगा तो अल्लाह उनको माफ न करेगा और राह न दिखलायेगा।

(मं. 1, सि. 5, सू. 4, आयत 136—137)

thearyasamaj.org

समीक्षक : खुदा को लाशरीक कहते जाना और उसके साथ बहुत से शरीक भी मानते जाना क्या यह दो परस्पर विरोधी बातें नहीं है? क्या इनका खुदा 3 बार कुफर करने वालों को माफ कर देता है, और राह दिखा देता है? अगर ऐसा है तो चौथी बार कुफर करने से माफ कर देने में क्या हर्ज है? इससे पाप कैसे बढ़ जायेगा।

(63) निश्चय अल्लाह बुरे लोगों को और काफिरों को जमा करेगा दोजख में। बुरे लोग अल्लाह को धोखा देते हैं और अल्लाह उनको धोखा देता है। ऐ ईमानवालो! मुसलमानों को छोड़कर काफिरों को मित्र मत बनाओ।

(मं. 1, सि. 5,, सू. 4, आयत. 140, 142, 144)

समीक्षक : मुसलमान स्वर्ग में जाते हैं और अन्य लोग नरक में जाते हैं इसका उनके पास क्या प्रमाण है? जो खुदा धोखा देने वालो को धोखा देता है और मेल करने वाले से मेल करता है तो फिर ऐसे खुदा से मेल करने से तो साधारण मनुष्य से मेल करें जो प्रत्यक्ष दिखाई तो देता है। क्या एक मुसलमान को एक दुष्ट मुसलमान से मित्रता करनी चाहिए और किसी श्रेष्ठ दूसरे मत वाले से नहीं? ऐसा कहना उचित कैसे माना जा सकता है।

(64) ऐ लोगों! यह बात सत्य है कि तुम्हारे पास खुदा की ओर से पैगम्बर आया, बस तुम उस पर ईमान लाओ। अल्लाह माबूद अकेला है। (मं 1, सि. 6, सू. 4, आयत 170–171)

समीक्षक : जब पैगम्बर पर ईमान लाना है तब तो ईमान में भी पैगम्बर खुदा का सांझी हो गया। अल्लाह एकदेशी है, सर्वत्र व्यापक नहीं है तभी उसके पास पैगम्बर आते–जाते रहते हैं। इसमें कहीं ईश्वर को सर्वज्ञ लिखा है, कहीं एकदेशी। इससे तो ऐसा प्रतीत होता है कि कुरान खुदा नें नहीं, कई लोगों ने मिलकर लिखा हो, तभी तो इसमें बहुत सी बातें एक–दूसरे के विरुद्ध पाई जाती हैं।

(65) तुम पर हराम किया मुर्दार,, लहू और सूअर का मांस जिस पर अल्लाह के बिना कुछ और पढ़ा जावे, गला घोंटे, लाठी मारे, ऊपर से गिर पड़ें, सींग मारे और दरिंदे का खाया हुआ।

(मं. 2, सि 6, सू. 5, आयत 3)

thearyasamaj.org

समीक्षक : इतने पदार्थ हराम हैं तो बाकी सभी जीव, कीड़ी, मनुष्य आदि तो मुसलमानों को हलाल होंगे। ऐसी कल्पना तो मनुष्य ही कर सकता है। ईश्वर नहीं।

(66) अल्लाह को उधार दो अवश्य मैं तुम्हारी बुराई दूर करुंगा और तुम्हें बहिश्तों में भेजूंगा। (मं. 2, स. 6, सू.5, आयत 12)

समीक्षक : मुसलमानों के खुदा के पास अधिक धन नहीं होगा, यदि होता तो मनुष्यों से उधार न मांगता। उन्हें स्वर्ग भेजने के नाम पर धन देने को क्यों कहता। इस तरह मुहम्मद साहब ने खुदा के नाम पर अपना मतलब ही साधा है।

(67) जिसको चाहता है क्षमा करता है, जिसको चाहे दुःख देता है। जो कुछ किसी को भी नहीं दिया वह तुम्हें दिया।

(मं. 2, सि. 6, सू 5, आयत 18, 20)

समीक्षक : जैसे शैतान जिसको चाहता है पापी बना देता है वैसे ही मुसलमानों का खुदा जिसे चाहता है क्षमा करता है, न चाहे तो क्षमा नहीं करता। जब जीव पाप–पुण्य करने में खुदा के अधीन है तब तो स्वर्ग–नरक में भी खुदा को ही जाना चाहिए जीव को नहीं। जैसे सेना जब युद्ध करती है, किसी को मारती है तो उसकी भलाई–बुराई सेनापति की होती है, सेना की नहीं।

(68) आज्ञा मानो अल्लाह की और आज्ञा मानो रसूल की।

(मं. 2, सि. 7, सू.5, आयत 92)

समीक्षक : इनके खुदा को लाशरीक कहना गलत है, क्योंकि रसूल उसका शरीक है।

(69) अल्लाह ने माफ किया जो हो चुका और जो कोई फिर करेगा अल्लाह उससे बदला लेगा। (मं. 2, सि 7, सू. 5, आयत 95)

समीक्षक : पापों को दंड दिए बिना क्षमा करने का अर्थ है पापों को बढ़ावा देना। स्वयं पाप छोड़ने का पुरुषार्थ किए बिना, प्रार्थना करने पर भी कोई किसी के पाप नहीं छुड़ा सकता। ऐसी बातें जिस पुस्तक में हो वह ईश्वरकृत नहीं हो सकती।

(70) उस मनुष्य से अधिक पापी कौन है जो अल्लाह पर झूठ बांध लेता है। जो कहता है खुदा ने मेरी ओर आयत भेजी, तो दूसरा कहता

thearyasamaj.org

है मैं भी अल्लाह की आयत उतारुंगा।

(मं. 2, सि. 7, सू. 6, आयत 93)

समीक्षक : इस बात से जान पड़ता है कि मुहम्मद साहब कहते थे कि मेरे पास खुदा की ओर से आयत आती है। तब उनके किसी विरोधी ने भी कहा कि मेरे पास भी आयतें उतरती हैं मुझे भी पैगम्बर मानो। उसको हटाने और अपना प्रभाव बढ़ाने के लिए मुहम्मद साहब ने ऐसा लिखा होगा।

(71) अल्लाह ने हमको उत्पन्न किया और सूरतें बनाई और आदम को फरिश्तों को सिजदा करने को कहा। सबने सिजदा किया पर शैतान ने न किया। उसने कहा—मैं आदम से अच्छा हूं इसलिए सिजदा नहीं करूंगा। मुझे तुमने आग से बनाया है और आदम को मिट्टी से बनया है। खुदा ने उसे उसके अभिमान के कारण स्वर्ग से निकाल दिया। तब शैतान ने कहा—तूने मुझे गुमराह किया है इसलिए मैं उनके लिए तेरे सीधे मार्ग पर बैठूंगा और तू उनको धन्यवाद करने वाला न बन पायेगा। तब खुदा ने उसे दुर्दशा करके निकाल दिया और कहा जो आदम तेरा पक्ष लेगा उसे मैं नरक में डालूंगा।

(मं 2, सि. 8, सू. 7, आयत 11 से 18)

समीक्षक : खुदा न तो शैतान को दबा सका और न ही उसकी आत्मा को पवित्र कर सका। खुदा ने उसे दंड न देकर छोड़ दिया, ये उसकी कितनी बड़ी भूल थी। शैतान सबको बहकाने वाला है, तो खुदा शैतान को बहकाने वाला होगा क्योंकि शैतान ने प्रत्यक्ष कहा कि तूने मुझे गुमराह किया। इससे जान पड़ता है कि खुदा में पवित्रता नहीं पाई जाती और सब बुराइयों की जड़ खुदा ही हुआ। फरिश्तों से मनुष्यों की तरह बातें करने से देहधारी, अल्पज्ञ, न्यायरहित मनुष्य ही मुसलमानों का खुदा है।

(72) निश्चय ही तुम्हारा मालिक अल्लाह है जिसने छः दिनों में आसमानों और पृथ्वी को बनाया फिर करार पकड़ा, अर्श पर। दीनता से अपने मालिक को पुकारो।

(मं. 2, सि. 8, सू 7, आयत 54—55)

समीक्षक : छः दिन में जगत को बनाकर सातवें दिन स्वर्ग के सिंहासन पर बैठकर आराम करने वाला सर्वशक्तिमान, सर्वव्यापक ईश्वर कभी नहीं हो सकता। क्या तुम्हारा खुदा बहरा है, जो जोर से पुकारने पर सुनता है? खुदा

thearyasamaj.org

अब तक सोता है या जागता है? यदि जागता है तो अब क्या काम करता है? कुछ न कुछ तो करता ही होगा।

(73) मत फिरो पृथ्वी पर झगड़ा करते।

(मं 2 सि 8 सू 7 आयत 74)

समीक्षक : झगड़ा न करना तो अच्छी बात है लेकिन कई स्थानों पर जेहाद करना और काफिरों को मारना भी लिखा है। ये दोनों बातें एक दूसरे के विपरीत हैं। ऐसा जान पड़ता है जब इनके मुहम्मद साहब की शक्ति कम होती होगी, झगड़ा न करने की बात करते होंगे और जब शक्ति बढ़ जाती होगी तो मारने की आज्ञा जारी कर देते होंगे। इस तरह परस्पर विरुद्ध होने से दोनों बातें सत्य नहीं हैं।

(74) बस एक ही बार अपना असा (दंड) डाल दिया और वह अजगर था प्रत्यक्ष। (मं, 2, सि. 9, सू. 7, आयत 107)

समीक्षक : इन शब्दों को पढ़कर ऐसा जान पड़ता है कि मुसलमानों का खुदा और पैगम्बर दोनों ही ऐसी झूठी बातों को मानते थे, इसलिए दोनों ही विद्वान नहीं थे। ये बातें काल्पनिक हैं।

(75) हमने उन पर मेह, टिड्डी, चिचडी, मेंढक और लहू का तूफान भेजा, उनसे बदला लेकर उन्हें दरिया में डुबा दिया। हमने इसराईल को दरिया से पार उतार दिया। निश्चय ही वह धर्म झूठा है कि जिसमें वे हैं और उनका कार्य भी झूठा है।

(मं. 2, सि. 9, सू. 7 आयत 133, 136, 138, 139)

समीक्षक : इनका खुदा सर्वशक्तिमान नहीं है तभी उसे अपने शत्रुओं से बदला लेने के लिए वर्षा, टिड्डी दल जैसे हथियारों का प्रयोग करना पड़ता है। वह पक्षपाती है जो एक जाति को डुबाता है और दूसरी को पार उतारता है। वह अपने मत को ठीक और दूसरे अनगिनत लोगों के मत को झूठा कहता है। ऐसा कभी हो ही नहीं सकता कि किसी एक मत के सभी लोग अच्छे और दूसरे मत के सभी बुरे हों। इस तरह की बातें लिखने से इनकी ईर्ष्या और असहनशीलता ही प्रकट होती है, इसलिए कुरान ईश्वरकृत नहीं हो सकता।

(76) बस तू, मुझको अलबत्ता देख सकेगा, जब प्रकाश किया उसके मालिक ने पहाड़ की ओर उसको परमाणु–परमाणु किया। गिर पड़ा मूसा बेहोश। (मं. 2, सि.9, सू. 7, आयत 143)

thearyasamaj.org

समीक्षक : जो दिखाई देता है वह ईश्वर सर्वव्यापक नहीं हो सकता। चमत्कार दिखाना विद्या के विरुद्ध है। अगर उस समय परमात्मा चमत्कार दिखाता था तो अब क्यों नहीं दिखाता? अतः ये बातें मानने योग्य नहीं हैं।

(77) और मालिक से डर और उसे दीनता से याद कर, धीमी आवाज से दोनों समय (प्रातः सायं) सुबह और शाम को।

(मं 2, सि. 9, सू. 7, आयत 205)

समीक्षक : कुरान में कहीं ऊंची आवाज में और कहीं धीमी आवाज में खुदा को पुकारो लिखा है। इनमें से एक ही बात सच्ची हो सकती है, दूसरी नहीं। सच्ची कौन सी है, झूठी कौन सी है इन्हें बताना चाहिए।

(78) प्रश्न करते हैं तुझको लूटों से कह लूट वास्ते अल्लाह के और रसूल के और डरो अल्लाह से।

(मं. 2, सि. 9, सू. 8 आयत 1)

समीक्षक : खुदा और पैगम्बर के नाम से लूट करने को कहना और साथ ही अल्लाह का डर बतलाना, है न कितनी आश्चर्य की बात। इतना होने पर भी हमारा मत उत्तम है, कहते हुए इन्हें लज्जा नहीं आती।

(79) काफिरों की जड़ें काटो। मैं तुम्हें हजार फरिश्तों की सहायता दूंगा। काफिरों के दिलों में भय डालूंगा। बस मारो, ऊपर गर्दन के मारो, उनमें से प्रत्येक पोरी (संधि) पर।

(मं. 2, सि. 9, सू. 8 असश्त 7,9,12)

समीक्षक : मुसलमानों का खुदा और पैगम्बर कितने दयाहीन हैं जो उन्हें काफिरों की जड़ें काटने, उनकी गर्दन और हाथ—पैरों के जोड़ों को काटने को कहते हैं। इतना ही नहीं उनके इस काम में अपने फरिश्तों सहित सहायता देने का विश्वास भी दिलाते हैं। ऐसे खुदा से तो दूर रहना ही अच्छा है।

(80) अल्लाह मुसलमानों के साथ है तुम उसे पुकारो। ऐ लोगो जो ईमान लाए हो तो अल्लाह और रसूल की तथा अपनी अमानत की चोरी मत करो। और मकर करता था अल्लाह और अल्लाह भला मकर करने वालों का है। (मं. 2, सि.9, सू. 8 आ. 19, 24I, 27, 30)

समीक्षक : ईश्वर तो सारी सृष्टि का है परन्तु मुसलमानों का खुदा पक्षपाती होने के कारण केवल उन्हीं लोगों का है जो अल्लाह और रसूल पर विश्वास

करते हैं। इनका खुदा पुकारे बिना नहीं सुनता। खुदा, रसूल और अपनी अमानत को छोड़कर दूसरों की चोरी करने को बुरा नहीं मानता। जो मकर करता है और मकर करने वालों का संगी है। इस तरह तो इनका खुदा अज्ञानी, अधर्मी, छली, कपटी और दंभी ही है। इनका कुरान ऐसे लोगों द्वारा ही बनाया गया होगा, नहीं तो ऐसी बातें क्यों लिखी होतीं।

(81) उनसे यहां तक लड़ो कि काफिरों का जरा भी बल रहे और अल्लाह के वास्ते दीन (धर्म) हो। और जानों तुम कि जो वस्तु अल्लाह के नाम पर लूटते हो उसका पांचवां हिस्सा रसूल के लिए निकालो। (मं 2, सि 9, सू 8 आयत 39, 41)

समीक्षक : इस प्रकार अन्याय से लड़ने–लड़ाने और शांति भंग करने वाला मुसलमानों के खुदा के सिवाय दूसरा कोई हो ही नहीं सकता। अल्लाह के नाम पर सब जगत को लूटना और लुटवाना और फिर उस लूट के माल में पांचवा भाग मांगकर हिस्सेदार बनना, ऐसे काम तो डाकू ही करते हैं। न जाने ऐसा खुदा, पैगम्बर और कुरान मनुष्यों को दुःख देने के लिए कहां से आ गए? ऐसा मत न होता तो संसार में शांति बनी रहती।

(82) फरिश्ते जब काफिरों पर कब्जा करके उन्हें मुख और पीठ पर मारते हैं तो कहते हैं कि अब जलने का मजा चखो। हमने उनके पाप के कारण उनको मारा और उनकी कौम को डुबा दिया, तुम भी जो कुछ कर सकते हो, करो। (मं 2, सि 9, सू8, आयत 50, 54, 60)

समीक्षक : खुदा मुसलमानों के शत्रुओं को मारा और डुबाया करता था तो फिर अब ऐसा क्यों नहीं करता? तुम अपने से अलग मत वालों को हानि पहुंचाओ कितनी बुरी आज्ञा देता है इनका खुदा? अगर इनका खुदा दयालु और न्यायकारी होता तो ऐसी आज्ञाएं कभी न देता। इससे सिद्ध होता है कि इनका खुदा दयालु, धार्मिक और विद्वान मनुष्य भी नहीं है, नहीं तो कुरान में ऐसी बातें क्यों लिखता?

(83) ऐ नबी किफायत है तुझको अल्लाह और उनको जिन्होंने मुसलमानों से तेरा पक्ष किया। ऐ नबी रगवत अर्थात् चाह चस्का दे मुसलमानों को ऊपर लड़ाई के, जो हो तुम में से 20 आदमी संतोष करने वाले तो पराजय करें दो सौ का। बस खाओ उस वस्तु से कि

लूटा है तुमने हलाल पवित्र और डरो अल्लाह से वह क्षमा करने वाला दयालु है। (मं. 2, सि 10, सू8 आयत 64, 65, 69)

समीक्षक : यह न्याय, विद्वता और धर्म की बात नहीं है कि जो अपना पक्ष ले, वह चाहे अन्याय भी करे तो भी उसी को लाभ पहुंचाया जाये। जो प्रजा में लड़ाई करवाए, लूटमार के पदार्थों को हलाल बताये उसी को दयालु और क्षमा करने वाला लिखना किसी विद्वान् का काम नहीं हो सकता इसलिए कुरान ईश्वरकृत नहीं है।

(84) अल्लाह स्वर्ग में उन लोगों के समीप रहता है जिनके पुण्य बड़े हैं। जो ईमान लाए हो मत पकड़ो अपने बापों को, भाइयों और मित्रों को जो दोस्त रखें कुफर को ऊपर ईमान के। फिर उतारी अल्लाह ने तसल्ली अपनी, अपने रसूल और मुसलमानों के ऊपर। तुमने उसको लश्कर उतारते हुए नहीं देखा? जो उसने काफिरों को सजा देने के लिए उतारा। फिर–फिर आवेगा अल्लाह पीछे उसके ऊपर। उन लोगों से, जो ईमान नहीं लाते, और लडाई करो।

(मं. 2, सि. 10, सू. 9 आयत 22, 23, 26 से 29)

समीक्षक : अगर अल्लाह स्वर्ग में मुसलमानों के समीप रहता है तो वह सर्वव्यापक नहीं हो सकता। अगर वह सर्वव्यापक नहीं तो सृष्टिकर्त्ता और न्यायाधीश भी नहीं हो सकता। अपने मां–बाप, भाई और मित्र को बुराई करने पर भी छुड़वाना अन्याय की बात है। हां, इतना कहा है कि उनका बुरा उपदेश मत मानो परन्तु सदा उनकी सेवा करो। अगर खुदा पहले मुसलमानों पर विशेष कृपा रखता था और उनकी सहायता के लिए लश्कर उतारता था, तो अब क्यों नहीं ऐसा करता? अब बार–बार काफिरों को दंड देने क्यों नहीं आता? क्या लड़ाई के बिना खुदा पर विश्वास नहीं होता? इन सब बातों को देखकर इनका खुदा तलवार के बल पर दूसरों को दबाकर रखने वाला अन्यायी ही प्रतीत होता है। इसलिए न तो इनके खुदा को ईश्वर माना जा सकता है और न ही कुरान को ईश्वरीय पुस्तक ही।

(85) हम बाट देखते हैं कि अल्लाह तुमको स्वयं या हमारे हाथों से अजाब पहुंचाये। (मं 2, सि 10, सू 9, आयत 52)

समीक्षक : ऐसा जान पड़ता है कि सभी मुसलमान ईश्वर की पुलिस में हैं जिनके हाथों उनका खुदा किसी भी दूसरे मतवालों को मारने के लिए पकड़ा

thearyasamaj.org

देता है। अगर मुसलमान ईश्वर को प्रिय है तो क्या दूसरे मत वाले करोड़ों लोग ईश्वर को प्रिय नहीं हैं। ऐसी बातें तो अंधेर नगरी चौपट राजा के राज्य में ही हो सकती हैं, कोई बुद्धिमान ऐसी बातों को उचित नहीं मान सकता।

(86) अललाह ने ईमान वालों से प्रतिज्ञा की है कि उन्हें स्वर्ग मिलेगा जहा सदा नहरें बहती हैं और सदा रहने वाली बीवियां रहती हैं। उसके और उसके घर के बीच अदन के स्वर्ग और बहुत प्रसन्नता है। और यह कि मुराद पाना बड़ा। बस ठट्ठा करते हैं उनसे, ठट्ठा किया है–अललाह ने उनसे। (मं. 2, सि. 10, सू 9, आयत 72, 79)

समीक्षक : अपने मतलब के लिए खुदा का नाम लेकर स्त्री–पुरुषों को लोभ में फंसाने के लिए ही यह सब कहा गया है। मनुष्य तो आपस में ठट्ठा करते हैं, लेकिन इनका ईश्वर भी मनुष्यों से ठट्ठा करता है जो उचित दिखाई नहीं देता। इस प्रकार ईश्वर और मनुष्य में कोई भेद नहीं रह जाता।

(87) रसूल और उस पर विश्वास रखने वाले लोगों ने जिहाद किया। उन्होंने अपने जीवन और अपने धन के साथ इन्हीं लोगों की भलाई की। और मोहर रखी अल्लाह ने उनके दिलों के ऊपर जो उस पर ईमान नहीं लाते। (मं 2, सि 10, सू 9, आयत 88, 93)

समीक्षक : वे ही लोग भले हैं जो मुहम्मद साहब पर ईमान लायें, बाकी सब बुरे हैं, क्या ये अविद्या और पक्षपात से भरी हुई बात नहीं है? जब खुदा ने मुसलमानों को पाप करने की स्वीकृति दे ही दी तो फिर उनके द्वारा किए जाने वाले पापों का दोषी तो खुदा है, जिसने उनके अच्छे विचारों पर रोक लगा दी। दूसरे मतों वाले लोगों के दिलों पर भी रोक लगा दी जिससे वे भी इस्लाम के विरुद्ध कोई अच्छा विचार प्रकट न करें। यह कितना बड़ा अन्याय है इनके खुदा का।

(88) उनसे माल लेकर तू उनको गुप्त रूप से भीतर–बाहर से पवित्र कर। निश्चय ही अल्लाह ने मुसलमानों से जानें मोल ले के, बदले में उनको स्वर्ग का सुख दिया है लड़ेंगे बीच मार्ग अल्लाह के बस मारेंगे और मर जायेंगे। (मं 2, सि. 11, सू 9, आयत 103, 111)

समीक्षक : मुसलमानों से माल लेकर उन्हें पवित्र करना इस बात में तो ये गुसांइयों के समान हैं। कितना अच्छा सौदागर हैं खुदा? जो मुसलमानों के हाथों से दूसरे गरीबों के प्राण लेने में अपना लाभ समझता है और दूसरों को

मारने वाले लोगों को स्वर्ग देता है। इस तरह मुसलमानों का खुदा न तो दयालु सिद्ध होता है और न न्यायकारी ही।

(89) ऐ लोगों जो ईमान लाए हो तो दृढ़ता से उन लोगों से जो तुम्हारे पास हैं और काफिर हैं, लड़ो। क्या नहीं देखते कि ये बलाओं में डाले जाते हैं बीच हर वर्ष के एक या दो बार। वे न तो तौबा करते हैं और न ही शिक्षा लेते हैं।

(मं 2, सि 11, सू 9, आयत 123, 126)

समीक्षक : खुदा मुसलमानों को विश्वासघात करना सिखाता है कि अपने पड़ोसी और किसी के सेवक से जब भी अवसर मिले लड़ाई करें और घात करें। मुसलमानों ने कुरान में लिखी होने के कारण बहुत सी बुराइयां अपना ली हैं।

(90) तुम्हारे परवरदिगार अल्लाह ने 6 दिनों में आसमानों और पृथ्वी को बनाया, फिर अर्श पर करार पकड़ा, और काम की तदबीर करता है। (मं. 3, सि. 11, सू 10, आयत 3)

समीक्षक : इनका खुदा पदार्थ–विद्या को नहीं जानता तभी तो छः दिन में सृष्टि का निर्माण करने की बात करता है। एक ओर तो कुरान कहता है कि खुदा के 'हो' कहने भर से काम हो जाता है फिर उसने छः दिन लगाए इसलिए यह कथन झूठ है। इनका खुदा अगर सर्वव्यापक होता तो स्वर्ग में क्यों ठहरता और उसे काम का यत्न करने की क्या आवश्यकता थी? इसीलिए इनका खुदा न सर्वव्यापक है और न ही सर्वशक्तिमान। कुरान ईश्वर का नहीं किसी जंगली मनुष्य द्वारा बनया गया है।

(91) शिक्षा और दया मुसलमानों के वास्ते।

(मं. 3, स. 12, सू 10, आयत 57)

समीक्षक : अगर ईमानदारों को ही मुसलमान कहते हैं तो उनके लिए शिक्षा की क्या आवश्यकता? दूसरों को शिक्षा देनी नहीं है तो कुरान लिखा ही क्यों। इनका पक्षपाती खुदा शिक्षा और दया केवल मुसलमानों पर ही करता है, अन्य प्राणियों पर नहीं।

(92) वह परीक्षा लेगा कि कर्मों मं तुममें से कौन अच्छा है? अगर कहे कि मृत्यु के बाद तुम उठा लिये जाओगे।

(मं 3, सि 12, सू 11, आयत 7)

thearyasamaj.org

समीक्षक : इनका खुदा सर्वज्ञ नहीं है तभी तो जीवों के कर्मों की परीक्षा लेता है और यदि मृत्यु पीछे उठाता है तो अपना ही नियम तोड़ता है कि मृत्यु हो जाने पर कोई जीवित नहीं होता। इसलिए यह कथन भी झूठ है।

(93) पृथ्वी अपना पानी निगल जा, आसमान बस कर कहते ही पानी सूख गया। कौम की निशानी अल्लाह ने तुम्हारे लिए ऊंटनी बनाई है, बस उसे छोड़ दो अल्लाह की पृथ्वी पर खाती फिरे।

(मं 3, सि 12, सू 11, आयत 44 और 64)

समीक्षक : पृथ्वी और आकाश जड़ होने के कारण सुनने की शक्ति नहीं रखते। खुदा ने ऊंटनी निशानी दी है तो उसके ऊंट और हाथी, घोड़े भी होंगे। खुदा अपनी ऊंटनी पृथ्वी पर लोगों के खेत खाने के लिए छोड़ता है। वह अपनी ऊंटनी पर सवारी भी करता होगा। ऐसी बातें कोई मनुष्य ही कर सकता है, ईश्वर नहीं।

(94) जब तक आसमान और पृथ्वी रहें तब तक उसके बीच सदा रहो। जो लोग सुभागी हुए वे जब तक आकाश और पृथ्वी रहेगी, सदा स्वर्ग में ही रहेंगे। (मं 3, सि. 1, सू 11 आयत 107—108)

समीक्षक : जब लोग कयामत के दिन स्वर्ग और नरक में सदा के लिए रहने चले जायेंगे तब पृथ्वी की क्या आवश्यकता रहेगी। अगर स्वर्ग, नरक, आसमान और पृथ्वी की बनी रहने की अवधि समान है, तब स्वर्ग में सदा रहने की बात झूठ सिद्ध हो जाती है।

(95) यूसफ ने अपने बाप से कहा कि मैंने एक स्वप्न में देखा।

(मं 3 सि 12, सू 12, आयत 4 से 49)

समीक्षक : इसमें पिता—पुत्र संवाद के रूप में मनुष्यों का इतिहास किसी ने लिख दिया है

(96) अल्लाह ने बिना खंभों के आकाश ठहराया और फिर स्वर्ग पर ठहरा। फिर उसने आज्ञा मानने वाले सूरज चांद बनाए फिर पृथ्वी बनाई। फिर उसने आसमान से पानी गिराकर पानी के नाले बहाये। अल्लाह जिसे चाहे भोजन देता है जिसे चाहे तंग करता है।

(मं 3, सि 13, सू 13, आयत 2,3,17,26)

समीक्षक : अगर मुसलमानों का खुदा विज्ञान के बारे में और गुरुत्वाकर्षण

thearyasamaj.org

शक्ति के बारे में जानता कि सभी ग्रह एक दूसरे की चुम्बकीय शक्ति से टिके हुए हैं तो बिना खंभों के आसमान टिकाने की बात न करता। यदि उसे मेघविद्या का ज्ञान होता तो ऊपर से पानी गिराने के साथ पानी ऊपर पहुंचाने की बात भी लिखता। जिसे जी चाहे भोजन देना और किसी को तंग करना ये स्वभाव जंगली मनुष्यों का ही हो सकता है। न्यायकारी ईश्वर तो हर जीव को उसके कर्मों के अनुसार हर वस्तु देता है।

(97) अल्लाह जिसको चाहता है गुमराह करता है और जिसे चाहता है उस मनुष्य को मार्ग दिखलाकर उसका ध्यान अपनी ओर करता है।

(मं 3, सि 13, सू 13, आयत 27)

समीक्षक : जो गुमराह करता है वह शैतान है। जब अल्लाह गुमराह करता है तो फिर अल्लाह और शैतान में क्या फर्क है। बहकाने के कारण अगर शैतान को बुरा कहते हैं तब तो अल्लाह को भी बुरा कहना चाहिए और दोनों को नरक में भेजना चाहिए।

(98) इसीलिए हमने कुरान को 'अर्बी' में उतारा, जो पक्ष करेगा तू उनकी इच्छा का, पीछे इसके आई तेरे पास विद्या से। बस सिवाय इसके नहीं कि ऊपर तेरे पैगाम पहुंचाना है और हमारे ऊपर है हिसाब लेना। (मं 3, सि 13, सू. 13, आयत 37, 40)

समीक्षक : अगर खुदा ऊपर रहता है और उसने कुरान ऊपर से उतारा है तो इनका खुदा एकदेशी होने के कारण सर्वज्ञ ईश्वर हो ही नहीं सकता। संदेश पहुंचाने के लिए हरकारा (दूत) मनुष्य को चाहिए ईश्वर तो स्वयं सब कुछ देखता, सुनता और जानता है। इसलिए कुरान किसी अल्पज्ञ मनुष्य का बनाया हुआ ही है।

(99) सूर्य–चन्द्र को घूमने वाला बना दिया। निश्चय ही आदमी अन्याय और पाप करने वाला है।

(मं 3, सि 13, सू 14, आयत 33–34)

समीक्षक : ईश्वर ने सूर्य चन्द्र और पृथ्वी को भी सदा घूमते रहने वाले ही बनाया है। यदि पृथ्वी अपनी धुरी पर न घूमती तब तो कई वर्षों का दिन–रात होता। अगर मनुष्य निश्चय अन्याय और पाप करने वाला है तब कुरान की शिक्षा व्यर्थ ही है क्योंकि गुण–कर्म–स्वभाव तो ईश्वर भी नहीं बदल सकता। इसलिए पापी कभी पुण्यात्मा और पुण्यात्मा कभी पापी नहीं बन सकता। संसार में पुण्यात्मा और पापी सदा दिखाई देते हैं।

thearyasamaj.org

(100) बस जब ठीक करूं मैं उसको और फूंक दूं बीच उसके रूह अपनी से। बस गिर पड़ो वास्ते उसके सिजदा करते हुए। कहा एक रब मेरे इस कारण गुमराह किया तूने मुझको अवश्य जीनत दूंगा मैं वास्ते उनके बीच पृथ्वी के गुमराह करूंगा।

(मं 3, सि 14, सू 15, आयत 29, 39 से 46)

समीक्षक : जब खुदा ने अपनी रूह आदम में फूंक दी तब तो वह भी खुदा हुआ, अगर खुदा न हुआ तो सिजदा (नमस्कार) करने में अपना शरीक क्यों किया? क्योंकि आप लोग मानते हो कि शैतान को खुदा ने बहकाया, मनुष्य को भी खुदा गुमराह करता है तब तो आपका खुदा शैतानों का भी गुरु जान पड़ता है। शैतान ने उसके सामने कहा कि मैं बहकाऊंगा तो भी खुदा ने उसे दंड देकर मार क्यों न डाला।

(101) निश्चय भेजे हमने बीच हर उम्मत के पैगम्बर। जब हम उसको चाहते हैं यह कहते हैं हम उसको। बस हो जाती है।

(मं 3, सि 14, सू 16 आयत 36, 40)

समीक्षक : जब सब कौमों पर पैगम्बर भेजे हैं और सब लोग पैगम्बर की राय पर चलते हैं तब वे काफिर कैसे हुए। तुम अपने पैगम्बर के सिवाय दूसरे पैगम्बर को नहीं मानते ऐसा पक्षपात क्यों? जब सब देशों में पैगम्बर भेजे तो आर्यावर्त में किसे भेजा? जब खुदा चाहता है 'हो जा' कह देता है पृथ्वी हो जाती है, जड़ वस्तु नहीं सुनती शायद इनका कुरान लिखने वाला नहीं जानता था। जब खुदा के सिवाय कोई था ही नहीं तो खुदा हुक्म किसे देता था? कौन सुनता था और कौन हो जाता था? ये सब अविद्या की बातें अज्ञानी लोग ही मानते हैं।

(102) और नियत करते हैं वास्ते अल्लाह के बेटियां–पवित्रता हैं उसको और वास्ते उनके हैं जो कुछ चाहें। कसम अल्लाह की अवश्य भेजे हैं हमने पैगम्बर। (मं 3, सि 14, सू 16, आयत 57, 63)

समीक्षक : अल्लाह के वास्ते बेटियां ही निश्चित की जाती हैं बेटे क्यों नहीं। अगर बेटियां ही नियत की जाती है तो उसका कोई कारण तो अवश्य होगा? कसम झूठ बोलने वाला खाता है, सच बोलने वाला नहीं। इनके खुदा की बात पर लोग विश्वास नहीं करते होंगे तभी उसे उन्हें विश्वास दिलाने के लिए कसम खानी पड़ती होगी।

(103) ये वे बेखबर लोग हैं, अल्लाह ने जिनके दिलों, कानों और आंखों पर मोहर लगा रखी है। हर जीव को जो कुछ किया है पूरा दिया जायेगा और उनसे अन्याय नहीं किया जायेगा।

(मं 3, सि 14, सू 16, आयत 108—111)

समीक्षक : जिन जीवों को खुदा ने मोहर लगाकर पराधीन कर दिया तो फिर उनको उनके कर्मों का फल मिलना ही नहीं चाहिए। उनके कर्मों का फल तो उसे मिलना चाहिए जिसके कहने पर वे कर्म करते हैं। जब उन्होंने स्वतन्त्रता से कर्म किए ही नहीं तो उन कर्मों के फल भी उन्हें नहीं दिए जाने चाहिए। अगर उन्हें पूरा फल दिया जायेगा तो क्षमा किस बात की करते हैं? अगर क्षमा करते हैं तो पूरा न्याय नहीं होता होगा। ऐसे गड़बड़ी वाले काम किसी अज्ञानी मनुष्य के हो सकते हैं, ईश्वर के नहीं।

(104) हमने दोजख को काफिरों के घेरने का स्थान बनाया। हर आदमी के गले में उसकी कर्म पुस्तक लगा दी है। जिसे हम कयामत के दिन खोलेंगे। और बहुत मारे हमने कुरनून से पीछे नूह के।

(मं 4, सि 15, सू 17, आयत 8, 13, 17)

समीक्षक : जो कुरान, पैगम्बर, खुदा को मानने वालें हैं उनके लिए स्वर्ग है और जो इन्हें नहीं मानते उनके लिए नरक, कितना पक्षपात है इनके मत में। कुरान के मानने वाले सभी अच्छे और न मानने वाले सभी बुरे हैं, ऐसा हो सकता है क्या? सबकी गर्दन में कर्म—पुस्तक लगा दी है परन्तु हमें तो किसी के गले में दिखाई नहीं देती। यदि सबको उनके कर्मों का फल देना है तो उन्हें कर्म करने की स्वतन्त्रता होनी चाहिए। मनुष्यों के दिलों, कानों और आंखों पर मोहर लगाकर रखना और उनके पापों को क्षमा करना, कैसी बच्चों को बहलाने वाली बात के समान है। जीव को उसके कर्मों के अनुसार फल मिलता है तो जन्म के समय जीव जो कर्म—रेखा लेकर आता है वह पूर्व जन्म के कर्मों के अनुसार ही होती है। कोई माने या न माने। पूर्वजन्म के कर्मों से ही मनुष्य की कर्म—रेखा बनती है और उसे उन कर्मों के अनुसार सुख—दुःख मिलता है। यदि बिना अपराध किसी जीव को मारा, तो इनका खुदा अन्यायी हो गया। ईश्वर न्यायकारी है, खुदा अन्यायी है तो ईश्वर नहीं हो सकता।

(105) और हमने समूद को ऊंटनी का प्रमाण दिया। और बहका जिसको बहक सके। जिस दिन हम सब लोगों को उनके पेशवाओं

के साथ बुलायेंगे, उनके दाहिने हाथों में उन्हें दी गई कर्म–पुस्तक होगी। (मं 4, सि 15, सू 17 आयत 59, 64, 71)

समीक्षक : खुदा की एक निशानी ऊंटनी है जिससे खुदा के होने का पता चलता है। यदि खुदा ने शैतान को बहकाने का हुक्म दे दिया तब तो वह स्वयं पापी हो गया। कयामत के दिन खुदा न्याय करेगा तो इसका मतलब यह हुआ कि जब तक प्रलय नहीं होगी लोग पाप करते रहेंगे और उन्हें कोई दंड नहीं मिलेगा।

फिर न्याय करते समय दूसरे पैगम्बरों को गवाही के लिए बुलाया जायेगा। इससे तो यही सिद्ध होता है कि इनका ईश्वर सर्वज्ञ नहीं है। वेद और मनुस्मृति का न्याय देखो जिसमें क्षण भर भी देर नहीं होती और न्याय करते समय ईश्वर को किसी गवाही की आवश्यकता भी नहीं होती। इसलिए कुरान ईश्वरकृत नहीं है।

(106) उनके लिए स्वर्ग का बाग हमेशा के लिए है। जिसके नीचे नहरें चलती हैं। वहां उन्हें गहने और सोने के कंगन और हरे लाहि के वस्त्र पहनायें जायेंगे और उनके तख्तों पर ताफ्ते के बने तकिए होंगे। जिनका पुण्य अच्छा है वे स्वर्ग का लाभ उठायेंगे।

(मं 4, सि 15, सू. 18, आयत 31)

समीक्षक : मुसलमानों के स्वर्ग में बाग, गहने, कपड़े, गद्दी, तकिए आनन्द के लिए मिलते हैं वे तो यहां भी मिलते हैं। इसलिए उनके स्वर्ग में यहां से अन्याय के सिवाय कुछ भी अधिक नहीं है क्योंकि अन्त वाले कर्मों का अनन्त फल मिलना अन्याय ही है। सदा मिलने वाला सुख भी थोड़े समय के बाद दुःख रूप हो जाता है। इसलिए इनका सदा के लिए स्वर्ग सुख देने का सिद्धान्त ठीक नहीं। वेदों के अनुसार महाकल्प तक मुक्ति सुख भोगकर पुनर्जन्म पाना ही सत्य सिद्धान्त है।

(107) उन्होंने जब भी अन्याय किया हमने उनको मारा और हमने उनके मारने की प्रतिज्ञा स्थापन की।

(मं. 4, सि. 15 सू. 18 आयत 59.)

समीक्षक : क्या बस्ती के सब लोग इकट्ठे पापी होते हैं? क्या इनका ईश्वर अन्याय हो जाने के बाद प्रतिज्ञा करता है? इससे तो यही सिद्ध होता है कि इनका खुदा सर्वज्ञ नहीं है और पाप होने से नहीं रोक सकता और मारने की प्रतिज्ञा करने के कारण दयाहीन भी है।

thearyasamaj.org

(108) उस लड़के के मां–बाप ईमान वाले थे, बस डरे हम यह कि पकड़े उनको सरकशी में और कुफर में। यहां तक कि पहुंचा सूर्य डूबने की जगह, उसे कीचड़ के चश्मे में डूबते हुए पाया। उसने कहा ऐजल करनैन! निश्चय याजूज माजूज फिसाद करने वाले हैं बीच पृथ्वी के। (मं 4, सि 16, सूरत 18 आयत 80, 86, 94)

समीक्षक : मुसलमानों का खुदा कितना बेसमझ है, जो इस बात से डरता है कि लड़के के मां–बाप को कोई उसके मार्ग से बहका न दे। यह कभी ईश्वर नहीं सोच सकता। ये सूर्य को रात के समय एक झील में डूबता हुआ मानते हैं। सूर्य तो पृथ्वी से बहुत बड़ा है फिर वह पृथ्वी की झील या समुद्र में कैसे डूब सकता है।

इनके खुदा को भूगोल और खगोल विद्या का जरा भी ज्ञान नहीं है तभी तो उसे इतना भी नहीं पता कि सूर्य–पृथ्वी आदि ग्रह घूमते हैं। ऐसा जान पड़ता है कि कुरान के मानने वालों के पास भी विद्या नहीं है तभी तो वे इस पुस्तक को मानते हैं। आप ही पृथ्वी का बनाने वाला राजा न्यायाधीश है और आप ही याजूज माजूज को पृथ्वी में फसाद करने देता है। यह बात ईश्वर के गुण–कर्म स्वभाव के बिल्कुल विपरीत है। इसलिए इनका खुदा ईश्वर है ही नहीं।

(109) बीच किताब में मरियम को याद करो जो अपने लोगों के मकान से पूर्व में जा पड़ी। तब खुदा ने अपनी रूह को एक पुष्ट आदमी की सूरत में भेजा। मरियम ने उससे कहा कि अगर तू परहेजगार है तो मैं तेरी शरण पकड़ती हूं। तब उसने कहा कि मुझे तेरे मालिक ने भेजा है कि मैं तुझे एक पवित्र लड़का दे जाऊं। मरियम ने कहा–यह कैसे हो सकता है न तो मुझे आदमी ने हाथ लगाया है और न ही मैं बुरा काम करने वाली हूं। बस उसके साथ गर्भवती हो गई और उसके साथ दूर जंगल में जा पड़ी। (मं 4, सि 16, सू 19, आयत 83)

समीक्षक : यदि सब फरिश्ते खुदा की रूह हैं तो वे खुदा से अलग पदार्थ नहीं हो सकते। दूसरा यह अन्याय है कि मरियम जो किसी का संग करना नहीं चाहती थी उसे खुदा के हुक्म से फरिश्ते ने गर्भवती कर दिया। ये सब बातें सभ्यता के विरुद्ध होने के कारण किसी ईश्वरकृत पुस्तक में नहीं हो सकती, इसलिए कुरान ईश्वर का बनाया हुआ नहीं है।

thearyasamaj.org

(110) क्या नहीं देखा तूने यह कि हमने काफिरों को बहकाने के लिए शैतानों को भेजा है। (मं 4, सि 16, सू 19 आयत 83)

समीक्षक : अगर इनके खुदा ने ही मनुष्यों को बहकाने के लिए शैतानों को भेजा है तो फिर बहकने वाले लोगों का इसमें क्या दोष, अगर खुदा सच्चा और न्यायकारी है तो उसे इसका फल उन लोगों को न देकर स्वयं भोगना चाहिए यदि वह ऐसा नहीं करता, तो इनका खुदा अन्यायी और पापी ही कहलायेगा।

(111) मैं निश्चय ही तौबा करने वाले मनुष्य को क्षमा करता हूं। जो मुझ पर ईमान लाता है और अच्छे कर्म करता है उसे मार्ग मिल जाता है। (मं 4. सि. 16, सू. 20, आयत 82)

समीक्षक : अगर पाप करने के बाद तौबा करने से पाप क्षमा हो जाते हैं तो कोई भी पाप करने से नहीं डरेगा और पाप बहुत बढ़ जायेगा। जिस पुस्तक में ऐसा लिखा है उसका बनाने वाला परमेश्वर हो ही नहीं सकता, इसलिए कुरान ईश्वरीय पुस्तक नहीं है।

(112) हमने पृथ्वी के ऊपर पहाड़ बना दिये जिससे पृथ्वी हिल न जाये। (मं 4, सि. 17, सू 21, आयत 31)

समीक्षक : अगर इनका खुदा पृथ्वी का घूमना आदि बातें जानता तो पहाड़ बनाकर पृथ्वी को हिलने से रोकने की बात न करता। पृथ्वी तो भूकम्प आने पर भी नहीं गिरती अपनी जगह पर ही है। अतः इनका खुदा अज्ञानी मनुष्य ही है।

(113) हमने उस औरत को अपने गुप्त अंगों की रक्षा करने की शिक्षा दी और उसके बीच अपनी रुह को फूंक दिया।

(मं 4, सि. 17, सू 21, आयत 91)

समीक्षक : ऐसी अश्लील बातें खुदा तो क्या, कोई सभ्य मनुष्य भी कभी नहीं करेगा। परमेश्वर के नाम पर ऐसी बातें लिखने से कुरान दूषित ही होता है। यदि वेदों की भांति अच्छी बातें इसमें भी होतीं तो इसकी भी प्रशंसा होती।

(114) क्या तूने नहीं देखा कि पृथ्वी और आकाश के बीच रहने वाले सूय, चन्द्र, तारे, पहाड़, वृक्ष और जानवर सब खुदा को सिजदा करते हैं। स्वर्ग में रहने वालों को रेशमी वस्त्र और सोने–चांदी और मोतियों के कंगन पहनाये जायेंगे। और मेरे घर को पवित्र रख उसके आसपास घूमने और खड़े रहने वाले लोगों के लिए। उन्हें चाहिए कि

thearyasamaj.org

वे अपनी मैल दूर करके अपनी भेंट के साथ कदीम घर के चारों ओर फिरें और अल्लाह का नाम याद करें।

(मं. 4, सि 17, सू 22, आयत 18, 23, 26, 29, 34)

समीक्षक : भला! सूर्य, चन्द्र, पहाड़ वृक्ष आदि जड़ वस्तुएं जो परमात्मा को जान नहीं सकतीं वे उसकी भक्ति कैसे कर सकती हैं। इनका स्वर्ग धरती के राजाओं का महल ही जान पड़ता है उससे अधिक कुछ नहीं क्योंकि ऐसे वस्त्र आभूषण तो वहां भी पहनने को मिल जाते हैं। इनके खुदा का अगर घर है तो वह उसमें रहता भी होगा और फिर इनका खुदा भेंट लाने को कहता और उसे स्वीकार भी करता है, और पशुओं को मरवाकर खिलाता भी है। इस तरह तो खुदा और मुसलमान तो पुराणों और जैनियों से भी बड़े मूर्तिपूजक हैं क्योंकि वे लोग तो छोटी–छोटी मूर्तियों की पूजा करते हैं और मुसलमान तो इतने बड़े खुदा के घर की पूजा करते हैं।

(115) फिर निश्चय तुम कयामत के दिन उठाये जाओगे।

(मं 4, सि 18, सू 23, आ. 16)

समीक्षक : क्या कयामत तक मुर्दे कबरों में पड़े सड़ते रहेंगे और क्या पुण्यात्मा लोग उसी दुर्गन्ध में रहकर दुःख भोगते रहेंगे? इनका ऐसा न्याय अन्याय ही है और दुर्गन्ध से रोग उत्पन्न होने के कारण इनका खुदा और मुसलमान पाप के भागी ही होंगे।

(116) उस दिन की गवाही देंगे ऊपर उनकी जुबानें, हाथ–पांव उनके साथ उस वस्तु के कि ये करते। अल्लाह आसमानों का नूर है और पृथ्वी का, नूर उसके मानिंद ताक की है बीच उसके दीप हों और दीप, शीशे के कंदील के बीच में, मानों तारा चमकता है। दीपक जैतून के तेल से रोशन किया जाता है, न पूर्व की ओर है, न पश्चिम की ओर, समीप है तेल उसका रोशन हो जावे जो न लगे ऊपर रोशनी के मार्ग दिखाता है, अल्लाह नूर अपने को जिसका चाहता है।

(मं 4, सि 18, सू 24, आयत 24, 35)

समीक्षक : जड़ पदार्थ हाथ पैर आदि कभी गवाही नहीं देते, ये बात सृष्टिक्रम के विरुद्ध है। क्या इनका खुदा आग और बिजली है जो रोशनी देकर मार्ग दिखाता है। ऐसे उदाहरण किसी साकार वस्तु में तो घट सकते हैं, निराकार ईश्वर में नहीं।

(117) अल्लाह ने हर जानवर को पानी से उत्पन्न किया है उनमें से कुछ पेट के बल चलते हैं। जो कोई खुदा और उसके रसूल की आज्ञा का पालन करे उस पर दया किए जाओ।

(मं 4, सि 18 सू 24 आयत 45, 52, 54, 56)

समीक्षक : जिन जीवों के शरीर में सभी तत्व दिखाई देते हैं उन्हें केवल पानी से उत्पन्न कहना अविद्या और अज्ञान ही है। अगर अल्लाह के साथ उसके रसूल की आज्ञा का भी पालन करना है तो रसूल खुदा का शरीक हो जाता है इसलिए इनका खुदा को लाशरीक कहना झूठ है।

(118) बादलों के साथ आसमान फट जायेगा और फरिश्ते उतरेंगे। काफिरों के साथ झगड़ा कर और झगड़ा बढ़ा। अल्लाह बुराइयों को भलाइयों से बदल देगा। जो कोई तोबा करे और अच्छे कर्म करे बस निश्चय आता है, अल्लाह की तरफ।

(मं 4, सि 19, सू 25 आयत 25, 52, 70, 71)

समीक्षक : आकाश कोई साकार वस्तु नहीं है जो बादलों के साथ फट जायेगा। इनका खुदा तो झगड़े बढ़ाने और शांति भंग करने वाला है। इनका खुदा यदि पापों को पुण्यों में बदल देता है तो फिर पाप करने से कोई नहीं डरेगा क्योंकि उन्हें इस बात का विश्वास होगा कि तौबा करके पापों से छुटकारा मिल जायेगा। ये सब बातें विद्या के विरुद्ध हैं।

(119) हमने मूसा की तरह बही की रात को मेरे बंदों को ले चल, निश्चय तुम पीछा किए जाओगे। फिरोन ने नगरों में जमा करने वाले लोग भेजे। और वह जिस पुरुष ने मुझे पैदा किया है, जो मुझे खिलाता–पिलाता है मैं उसीसे आशा रखता हूं कि वह कयामत के दिन मेरा अपराध क्षमा करे।

(मं 5, सि 19, सू26, आयत 52, 53, 78, 79)

समीक्षक : जब खुदा ने मूसा को किताब दी तब फिर दाऊद, ईसा और मुहम्मद साहब को किताबें क्यों दी? परमेश्वर के किसी काम में तो भूल नहीं होती लेकिन मुसलमानों के खुदा की पहली किताब में भूल रह गई होगी। जिसे दूर करने के लिए तीन और पुस्तकें भेजीं, परन्तु ये पुस्तकें भी एक दूसरे के विरुद्ध होने के कारण सत्य सिद्ध नहीं होती। यदि परमात्मा ने जीव पैदा किए हैं तो वे मरते भी हैं। यदि परमात्मा बिना कर्मफलों को ध्यान में रखे

खिलाता–पिलाता तब तो सभी को एक समान ही भोजन मिलना चाहिए, किसी को बढ़िया और किसी को घटिया नहीं मिलना चाहिए। यदि परमात्मा ही परहेज करवाने वाला है तब तो मुसलमानों को कोई रोग नहीं होना चाहिए? यदि वही पैदा करता है और वही मारता है तब तो इसका पाप–पुण्य भी खुदा को ही मिलना चाहिए। हां, यदि परमात्मा कर्मों के अनुसार जन्म देता है, सुख–दुःख देता है, मृत्यु देता है, तब उचित है। यदि कयामत की रात किसी के पाप क्षमा करता है तो अन्यायी हो जाता है और अगर नहीं करता तो कुरान का लिखा हुआ झूठ सिद्ध हो जाता है।

(120) नहीं तू परन्तु आदमी की तरह हमारी बस ले आ कुछ निशानी जो है तू सच्चों से। कहा ये ऊंटनी है उसके लिए पानी पीना है एक बार। (मं 5 सि 19, सू 26, आयत 154–155)

समीक्षक : पत्थर से ऊंटनी निकलना और ऊंटनी की निशानी देना जंगली और असभ्य लोग ही मान सकते हैं। ऐसी व्यर्थ बातें जिस पुस्तक में हों वह ईश्वरीय नहीं हो सकती।

(121) ए मूसा! निश्चय ही मैं अल्लाह हूं। अपना असा (दंड) डाल दे, तब उसे सांप की तरह हिलते देख मूसा डर गया। तब अल्लाह ने कहा–मेरे समीप मेरे पैगम्बर नहीं डरते। अल्लाह कोई माबूद नहीं परन्तु वह स्वर्ग का मालिक है। शरारत या उद्दंडता मत करो, मेरे पास मुसलमान बनकर चले आओ।

(मं 5, सि 19, सू 27, आयत 9, 10, 26, 31)

समीक्षक : इनका खुदा बार–बार अपनी प्रशंसा करता है, जो श्रेष्ठ मनुष्यों का काम नहीं है, इसलिए वह खुदा कैसे हो सकता है। सातवें आसमान का मालिक होने के कारण इनका खुदा एक स्थान में रहता है। वह सर्वव्यापक नहीं हो सकता। यदि शरारत करना बुरा है तो इनके खुदा और मुहम्मद साहब ने अपनी स्तुति और चमत्कारों के वर्णनों से कुरान क्यों भर दिया। मुहम्मद साहब इतने लोगों को मारता और मरवाता है तो क्या यह शरारत नहीं है? कुरान ऐसी ही उलटी–सीधी बातों से भरा हुआ होने के कारण ईश्वरीय पुस्तक नहीं है।

(122) और तू पहाड़ों को जमें हुए बादलों के समान चलते हुए देखेगा। अल्लाह की कारीगरी देख जिसने हर वस्तु को दृढ़ किया,

thearyasamaj.org

निश्चय ही वह उस वस्तु से खबरदार है जो करते हो।

(मं 5, सि. 20, सू 27, आयत 88)

समीक्षक : कुरान बनाने वालों के देश में पहाड़ बादलों के समान चलते होंगे, और तो कहीं नहीं चलते। खुदा की खबरदारी का तो कहना ही क्या जिसने शैतान जैसे बागी को अब तक न तो पकड़ा है और न ही दंड दिया है। इससे बड़ी और क्या असावधानी होगी खुदा की?

(123) मूसा ने उसको मुक्का मारकर मार डाला और कहा–'ऐ रब, मैंने अन्याय किया है, बस मुझे क्षमा कर दो।' उस दयालु खुदा ने उसे क्षमा कर दिया। मालिक तुझे उत्पन्न करता है, जो कुछ चाहता है और पसंद करता है।

(मं 5, सि 20, सू 28, आयत 15, 16, 68)

समीक्षक : ईसाइयों और मुसलमानों का खुदा मूसा को मनुष्य की हत्या करने पर भी क्षमा कर देता है, जैसी चाहता है वैसी उत्पत्ति करता है, किसी को राजा, किसी को कंगाल और किसी को विद्वान, किसी को मूर्ख पैदा करता है। ऐसा लिखने से न तो कुरान सत्य हो सकता है और अन्यायकारी होने के कारण वह खुदा नहीं हो सकता है।

(124) मनुष्य को मां–बाप की भलाई करने की आज्ञा दी और अगर वे तुझसे खुदा के साथ उन्हें शरीक करने को कहें तो तू उनकी बात मत मान। हमने नूह को उस कौम के बीच पचास कम हजार वर्ष रहने भेजा। (मं. 5, सि 20–21, सू 29 आयत 8, 14)

समीक्षक : माता–पिता की सेवा करना अच्छी बात है, अगर खुदा के साथ शरीक होना चाहें तो उसे न मानना भी ठीक है। अगर वे झूठ बोलने को कहें तो क्या उसे भी मान लेना चाहिए? इसलिए यह बात आधी अच्छी है और आधी बुरी। अगर नूह को ईश्वर जीवों के बीच रहने भेजता है तो बाकी जीवों को कौन भेजता है? यदि सभी को ईश्वर ही भेजता है तब तो सभी पैगम्बर ही होने चाहिए। उस समय यदि मनुष्यों की आयु हजार वर्ष होती थी, तो अब क्यों नहीं होती? अतः यह सब बातें ठीक न होने के कारण कुरान को ईश्वरकृत पुस्तक नहीं माना जा सकता।

(125) अल्लाह पहली बार उत्पत्ति करता है, दूसरी बार करेगा, फिर उसी की ओर फेरे जाओगे। जिस दिन कयामत होगी उस दिन पापी

निराश होंगे। जो लोग ईमान लायेंगे उन्हें श्रृगार कर बाग में रखा जायेगा। अगर हम एक वायु भेज दें तो खेती पीली हो जाये। इसी प्रकार मोहर रखता है, अल्लाह उन लोगों के दिलों पर जो उसे नहीं जानते। (मं 5, सि. 21, सू 30, आयत 11, 12, 15, 51, 59)

समीक्षक : यदि अल्लाह दो बार ही सृष्टि की उत्पत्ति करता है, तीसरी बार नहीं। तब तो पहली बार उत्पत्ति करने के बाद और दूसरी बार के बाद उसकी सारी शक्ति व्यर्थ चली जाती होगी। यदि कयामत के दिन पापी निराश होंगे, इसका यह मतलब है कि मुसलमानों को छोड़कर बाकी सभी निराश होंगे तो यह न्याय नहीं कहा जा सकता। मुसलमान दूसरों को पापी ही मानते हैं। यदि मुसलमानों को स्वर्ग के बाग में सुन्दर वस्त्र, आभूषण पहनाकर रखा जाता है तो वहां भी पृथ्वी की भांति सुनार, माली आदि होते होंगे और चोरियां भी होती होंगी? खुदा वहां भी चोरों को दंड देकर नरक में भेजता हेगा, तब तो सदा स्वर्ग में रहने की बात झूठी हो जायेगी। वायु चलने से खेती पीली पड़ जायेगी इससे पता चलता है कि इनके खुदा को खेती की विद्या आती होगी। यदि खुदा ने अपनी विद्या से सब बात जान ली है तो फिर भय दिखाना अपना घमंड प्रकट करना ही है। यदि खुदा ने जीवों के दिलों पर मोहर लगा दी है तो जो पाप जीव करते हैं, उनका फल जीव को नहीं खुदा को ही मिलना चाहिए।

(126) अल्लाह ने बिना खंभों के आसमान खड़े कर दिए, पृथ्वी को हिलने से रोकने के लिए उस पर पहाड़ रख दिए, दिन के बीच में रात और रात के बीच में दिन को प्रवेश करा दिया। अल्लाह की देन से दरिया में किश्तियां चलती हैं जिससे तुम्हें उसकी निशानी दिखाई दे। (मं 5, सि 21, सू 31, आयत 2, 10, 29, 31)

समीक्षक : आकाश की उत्पत्ति करना, पृथ्वी को हिलने से बचाने के लिए पहाड़ रखना, दिन और रात तो कभी समाप्त ही नहीं होते क्योंकि पृथ्वी के घूमने के कारण हमेशा उसके एक हिस्से में जब दिन होता है और दूसरे में रात। इसी तरह जब पहले हिस्से में रात होती है तो दूसरे में दिन होता है, इस तरह दिन के बीच रात रखने और रात के बीच दिन रखने आदि सभी बातें विद्या के विरुद्ध ही हैं। नौकाएं मनुष्य ने अपने बुद्धि–कौशल से चलाई हैं यदि खुदा की कृपा से चलतीं तब तो पत्थर की बनी नौकायें भी चलनी

thearyasamaj.org

चाहिए लेकिन ऐसा नहीं होता। इस प्रकार ऐसी अज्ञानता की बातें होने के कारण यह पुस्तक किसी विद्वान या ईश्वर की बनाई हुई नहीं हो सकती।

(127) आसमान से काम की तदबीर करता है पृथ्वी की तरफ और फिर ऊपर चढ़ जाता है। उसका एक दिन यहां के एक हजार वर्ष के बराबर है। वह प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष को जानने वाला है। उस फरिश्ते में अपनी रुह फूंककर, पुष्ट किया। मौत के फरिश्ता जो तुम्हारे साथ नियत किया गया है वह तुम पर कब्जा करेगा। अगर हम चाहते तो हर एक जीव को उसकी शिक्षा देते परन्तु शिक्षा न देने से मेरी यह बात सिद्ध होती है कि बहुत से जीवों को इकट्ठे मारकर नरक को अवश्य भरुंगा।

(मं. 5, सि 21, सू 32, आयत 5, 6, 9, 11, 13)

समीक्षक : इससे सिद्ध होता है कि मुसलमानों का खुदा एकदेशी है। अगर व्यापक होता तो उतराना चढ़ना न कहते। दूत भी आदमी ही भेजता है, सर्वज्ञ ईश्वर नहीं। इनका ईश्वर हजार वर्षों में आने जाने का प्रबन्ध करने के कारण सर्वशक्तिमान भी नहीं है। अगर मौत का फरिश्ता है तो उस फरिश्ते को मारने वाला भी कोई होगा। यदि वह नित्य है, नहीं मरता, तो फिर खुदा के बराबर शरीक हुआ। ईश्वर नरक को भरने के लिए जीवों को शिक्षा नहीं देता, जिससे लोगों को दुःख देकर तमाशा देखता रहे तब तो उनका खुदा अन्यायी और दयाहीन है। ऐसी पुस्तक ईश्वरकृत नहीं हो सकती और ऐसा दयाहीन ईश्वर कभी नहीं हो सकता।

(128) अगर तुम मृत्यु और कत्ल से भागोगे तो तुमको कभी लाभ न देगा। ऐ बीवियों नबी की! जो कोई आवे तुम में से प्रत्यक्ष निर्लज्जता से, दुगना किया जायेगा उसके वास्ते अज़ाब और है यह ऊपर अल्लाह के सहल। (मं 5, सि 21, सू 33, आयत 16, 30)

समीक्षक : ऐसा मुहम्मद साहब ने इसलिए लिखवाया होगा कि लड़ाई में मरने से डर कर कोई न भागे और विजय हमारी हो। धर्म फैले और ऐश्वर्य बढ़ जाये। और यदि बीवियां निर्लज्ज होकर न आवें तो उन पर अजाब हो, यह कहां का न्याय है कि अल्लाह आसानी से किसी पर अजाब दुगना कर दे।

(129) अपने घरों में रहकर अल्लाह और रसूल की आज्ञा का पालन करो, उसके सिवाय किसी की नहीं। जब जैद (बेटे) ने उससे चाह

पूरी कर ली तो हमने तुझको उससे ब्याह दिया ताकि ऊपर ईमान वालों के बीच बीवियों की तंगी न हो, इसलिए बेटों की स्त्रियों से चाह पूरी करने की आज्ञा खुदा द्वारा की गई। नहीं है ऊपर नबी के तंगी बीच उस वस्तु के। नहीं है मुहम्मद बाप किसी मर्दों का। और हलाल की स्त्री ईमान वाली जो बिना महर के अपनी जान नबी के वास्ते दे। उनमें से तू जिसको चाहे अपनी तरफ ढील दे, जिसे चाहे न दे, इससे तुझे कोई पाप नहीं लगेगा। ऐ लोगों! जो ईमान लाए हो तो पैगम्बर के घरों में प्रवेश मत करो।

(मं 5, सि 22, सू 33, आयत 33, 37, 38, 40, 50, 51, 53)

समीक्षक : मुसलमान स्त्रियों को घर में कैद रखकर उन पर कितना अन्याय करते हैं। क्या उनका मन बाहर भ्रमण करके सृष्टि की वस्तुएं देखना नहीं चाहता? यदि अल्लाह और रसूल दोनों की आज्ञा एक है तो दोनों की आज्ञा पालन करो कहना व्यर्थ है। यदि दोनों की आज्ञा एक दूसरे के विरुद्ध होगी तो एक खुदा और दूसरा शैतान हो जायेगा। इनका खुदा दूसरे का मतलब नष्ट कर अपना सिद्ध हो ऐसी लीला रचता है। मुहम्मद साहब विषयी थे तभी तो बेटे की स्त्री को अपनी स्त्री बना लिया। जंगली व्यक्ति भी बेटे की स्त्री को छोड़ देता है परन्तु इनके नबी को ऐसा करने में कोई झिझक नहीं होती। यदि नबी किसी का बाप नहीं है तो जैद (लेपालक) किस का बेटा था जिसकी स्त्री को पैगम्बर ने अपने घर में डाल लिया। यदि कोई पराई स्त्री नबी से प्रसन्न होकर विवाह करना चाहे तो भी हलाल है। नबी जिस स्त्री को चाहे रखे जिसे चाहे छोड़ दे लेकिन पैगम्बर यदि अपराधी भी हो तो भी स्त्रियां उसे नहीं छोड़ सकती, कैसा अधर्म है यह? पैगम्बर किसी के भी घर में प्रवेश कर सकता है लेकिन कोई उसके घर में प्रवेश नहीं कर सकता। इस कुरान को ईश्वरकृत और मुहम्मद साहब को पैगम्बर मानना अज्ञानी और बुद्धिहीन लोगों का ही काम है।

(130) तुम्हारे लिए उचित नहीं है कि तुम उसके पीछे उसकी बीवियों से निकाह करके रसूल को दुःख दो, यह अल्लाह की दृष्टि में पाप है। जो लोग अल्लाह और रसूल को दुःख देते हैं, उनको अल्लाह ने लानत की है। जो लोग मुसलमानों और मुसलमान औरतों को दुःख देते हैं निश्चय ही वह झूठ और प्रत्यक्ष पाप करते हैं। ऐसे लोग जहां

thearyasamaj.org

मिलें उन्हें खूब मारा और कत्ल किया जाये। ऐ रब हमारे! उनको दुगना अजाब से और लानत से बड़ी लानत कर।

(मं 5, सि 22, सू 23, आयत 53, 57, 58, 61, 68)

समीक्षक : खुदा अपनी खुदाई को कैसे धर्म की आड़ से दिखला रहा है। जैसे दूसरों को तो अल्लाह को दुःख देने से रोकता है वैसे ही अल्लाह को दूसरों को दुःख देने से क्यों नहीं रोकता। जो साधारण मनुष्य की तरह इनका खुदा दुःखी होता है तो वह ईश्वर हो ही नहीं सकता क्योंकि ईश्वर सुख–दुःख से ऊपर है। जैसे मुसलमानों और उनकी स्त्रियों को दुःख देना बुरा है वैसे ही दूसरों को दुःख देना मुसलमान बुरा क्यों नहीं मानते। जैसे खुदा मुसलमानों को यह आज्ञा देता है कि दूसरे लोगों को जहां पाओ, मारो और कत्ल कर दो, यदि कोई दूसरा धर्म ऐसी आज्ञा मुसलमानों के लिए जारी कर दे तो क्या मुसलमानों को यह बात बुरी लगेगी या नहीं। फिर खुदा से अपने से दूसरों को दुगना दंड देने की प्रार्थना करना, अधर्म और महापाप नहीं तो क्या है? यही कारण है कि मुसलमान दुष्ट कर्म करने से नहीं डरते। शिक्षा न होने के कारण इनमें और जंगली पशु में कोई अन्तर नहीं है।

(131) अल्लाह वह पुरुष है जो हवाओं को भेजकर बादलों को उठाता है और ये बादल कब्रिस्तान पर बरसते और मुर्दों को जीवित करते हैं। और फिर खुदा कबरों से निकाले हुए इन जीवों को अपनी दया से सदा रहने वाले घर में रख देता है जहां उन्हें न मेहनत करनी पड़ती है और न ही थकावट और रोग होते हैं।

(मं 5, सि 22, सू 35, आयत 9, 35)

समीक्षक : इनका खुदा वायु भेजकर बादलों को उठाता है और मुर्दों को जीवित करता फिरता है। जो घर होंगे, वे बनाए गए होंगे। जो वस्तु बनाई जाती है वह नष्ट भी होती है। जिसका शरीर है वह परिश्रम के बिना दुःखी भी होता है और रोगी भी होता है। जो एक स्त्री से समागम करता है वह बिना रोग के नहीं बचता और जो बहुत सी स्त्रियों से विषयभोग करता है, वह रोग से कैसे बचेगा? मुसलमानों का सदा बहिश्त में रहना कभी सुखदायक नहीं हो सकता।

(132) कसम है कुरान दृढ़ की। निश्चय तू भेजे हुए में से है। ऊपर मार्ग सीधे के। उतारा है गालिब दयावान ने।

(मं. 5, सि 23, सू 36 आयत 2 से 5)

thearyasamaj.org

समीक्षक : यदि कुरान खुदा का बनाया होता तो वह स्वयं इसकी कसम क्यों खाता? अगर नबी खुदा का भेजा हुआ होता तो बेटे की स्त्री पर मोहित क्यों होता? कुरान का मार्ग सीधा है, यह भी झूठ है क्योंकि सीधा मार्ग वह होता है जिसमें सत्य मानना, सत्य बोलना, सत्य करना, पक्षपात रहित न्याय और धर्म का आचरण हो और इसके विपरीत कुछ न किया जाये। यह बात न कुरान में पाई जाती है और न ही इनके खुदा के स्वभाव में। यदि इनके मुहम्मद साहब पैगम्बर होते तो उन्हें विद्यावान और शुभगुणों से युक्त होना चाहिए था। इसलिए न ही कुरान ईश्वरकृत है और न ही इनका खुदा ईश्वर है।

(133) और जैसे ही उनमें सांस फूंका जायेगा वे कबरों से निकलकर मालिक की ओर दौड़ेंगे और उनके पांव इस बात की गवाही देंगे कि वह जिसे 'हो जा' कहता है बस हो जाता है।

(मं 5, सि 23, सू 36, आयत 53, 65, 82)

समीक्षक : कुरान में लिखा है कि उस समय खुदा के सिवाय कोई वस्तु नहीं थी, जब कोई था ही नहीं तो खुदा ने किसे आज्ञा दी, किसने सुनी और कौन बन गया। इसलिए यह बात सत्य नहीं मानी जा सकती। अगर कोई वस्तु थी तो कुरान का यह कथन झूठा है कि कुछ नहीं था। पांव कभी भी गवाही नहीं देते। ऐसी झूठी और विरोधी बातें लिखी हुई होने के कारण कुरान ईश्वरकृत हो ही नहीं सकता।

(134) पीने वालों के लिए सफेद मजेदार शराब का प्याला फिराया जायेगा। उनके पास सुन्दर आंखों वाली स्त्रियां आंखें झुकाये बैठी होंगी। क्या बस हम नहीं मरेंगे। और अवश्य लूत निश्चय पैगम्बरों में से था। जब हमने उसे और उसके सब लोगों को मुक्ति दी। परन्तु एक बुढ़िया पीछे रहने वालों में है। फिर मारा हमने औरों को।

(मं 6, सि 23, सू 37, आयत 45 से 49, 58, 133 से 136)

समीक्षक : यहां तो मुसलमान शराब को बुरा बताते हैं और इनके स्वर्ग में शराब की नदियां बहती हैं। वहां सुन्दर स्त्रियां होने के कारण किसी का चित्त स्थिर न रहता होगा। वहां लोग भी शरीर वाले ही होते होंगे क्योंकि शरीर के बिना तो भोग विलास हो ही नहीं सकता। फिर ऐसे स्वर्ग में जाना व्यर्थ ही है जहां यहां की तरह भोग और रोग पाये जाते हैं। यदि लूत को पैगम्बर मानते हो तो यह लूत वही है जिसके बारे में बाइबल में लिखा है कि उसकी

thearyasamaj.org

दो लड़कियों ने उससे समागम करके दो लड़के पैदा किये। अगर इस बात को मानते हो तो लूत को पैगम्बर मानना व्यर्थ है। अगर ऐसे लोगों और उनके साथियों को खुदा मुक्ति देता है, तब तो इनका खुदा भी वैसा ही है। बुढ़िया को कहानी सुनाने वाला और पक्षपात से दूसरों को मारने वाला खुदा कभी नहीं हो सकता, ऐसे खुदा को मुसलमान ही मान सकते हैं, दूसरे नहीं।

(135) उनके लिए स्वर्ग के द्वार खुले हैं जहां तकियों के सहारे बैठे हुए लोगों को मेवे और पीने के पदार्थ मिलेंगे। उनके पास आंखें झुकाए समान आयु वाली स्त्रियां होंगी। सबने आदम को सिजदा किया लेकिन शैतान ने नहीं किया। खुदा ने शैतान से कहा 'मैंने तुझे अपने दोनों हाथों से बनाया है, तुझे सिजदा करने से किसने रोका और तूने अभियान क्यों किया। तब शैतान ने कहा कि मैं उससे अच्छा हूं क्योंकि तूने मुझे आग से बनाया है और आदम को मिट्टी से। खुदा ने शैतान को आसमान से निकल जाने को कहा पर उसके माफी मांग लेने पर उसे कयामत के दिन तक छोड़ दिया। शैतान ने प्रतिज्ञा की कि मैं तेरी प्रतिष्ठा के लिए लोगों को इकट्ठा करके बहकाऊंगा।

(मं 6, सि 23, सू 38 आयत 50 से 52, 73 से 82)

समीक्षक : कुरान में जिस स्वर्ग और जिन पदार्थों का वर्णन है वे न सदा से थे और न ही सदा रह सकते हैं क्योंकि जो पदार्थ संयोग से बनते हैं उनका वियोग या अंत भी अवश्य होता है। इसलिए इनका बहिश्त और उसमें रहने वाले भी सदा नहीं रह सकते। तकिए, मेवे आदि के वर्णन लगता है कि इनका मजहब चलने के समय अरब बहुत गरीब देश था। इसलिए स्वर्ग का लालच देकर मुहम्मद साहिब ने अपने मत में फंसा लिया। स्वर्ग में स्त्रियां कहां से आईं और जहां स्त्रियां हैं वहा सुख कहां?

खुदा ने शैतान से स्वयं कहा कि मैंने तुझे अपने दोनों हाथों से बनाया है इससे सिद्ध होता है कि इनका खुदा मनुष्य ही था। जो शैतान को दंड नहीं दे सका। वह सर्वज्ञ और सर्वशक्तिमान भी नहीं हो सकता। जिस खुदा का घर सातवें आसमान पर था उसने काबे को अपना पहला घर क्यों लिखा?

इनका खुदा तो केवल स्वर्ग का जिम्मेदार था। ईश्वर तो सारी सृष्टि का स्वामी है। शैतान को अगर खुदा ने बहकाया तो वह शैतान का गुरु है। और यदि शैतान अपने आप बहका है तो और लोग भी अपने आप बहक सकते हैं उन्हें बहकाने

के लिए शैतान की क्या आवश्यकता। शैतान को दंड न देकर खुला छोड़ देने से तो ऐसा जान पड़ता है कि शैतान से अधर्म करवाने में उसका हाथ भी है।

(136) अल्लाह दयालु है जो निश्चय ही सारे पाप क्षमा करता है। सारी पृथ्वी उसकी मुट्ठी में है और आसमान उसने दाहिने हाथ पर लपेटा हुआ है। कयामत के दिन पृथ्वी अपने मालिक के प्रकाश से चमक जायेगी और सबके कर्मपत्र रखें जायेंगे। पैगम्बरों और गवाहों को लाकर फैसला किया जायेगा।

(मं 6, सि 24, सू 39, आयत 53, 67, 69)

समीक्षक : यदि इनका खुदा पापों को क्षमा करता है तो वह एक दुष्ट पर दया करके उसके पापों को क्षमा करके दूसरे बहुत से धर्मात्माओं को दुःख पहुंचाने के कारण दयाहीन है। अपराध क्षमा करने से अपराध करने वाले को बढ़ावा मिलता है। क्या परमेश्वर अग्नि की तरह प्रकाश वाला है, कर्मपत्र कौन लिखता है और कहां जमा रहते हैं? पैगम्बरों और गवाहों को बुलाकर न्याय देने से जान पड़ता है कि इनका खुदा न तो सर्वज्ञ है और न ही समर्थ है। यदि कर्मों के अनुसार न्याय करता है तो फिर कुरान में दिलों पर मोहर लगाने, शिक्षा न देने, शैतान द्वारा बहकाने जैसी बातें क्यों लिखी गई हैं?

(137) उतारना किताब का अल्लाह गालिब जानने वाले की ओर से है। क्षमा करने वाला पापों का और स्वीकार करने वाला तोबाः था।

(मं 6, सि 24, सू 40, आयत 2–3)

समीक्षक : अल्लाह का नाम इसलिए लिया गया जिससे भोले लोग इस पुस्तक को मान लें जिसमें थोड़ा सत्य और बाकी सब असत्य भरा हुआ है जो थोड़ा सा सत्य है वह भी झूठ के साथ मिलकर बिगड़ा सा है। इसलिए कुरान, कुरान का खुदा और इसे मानने वाले पाप को बढ़ाने वाले ही हैं। इसीलिए तो मुसलमान लोग पाप और उपद्रव करने से नहीं डरते हैं।

(138) हमने दो दिन में आसमान बना कर उसमें डाल दिया जीव और उसके कर्म को। जब उसके पास जायेंगे तो उसके कान, आंखें और चमड़ी उसके कर्मों की गवाही देंगी। जब वह अपने चमड़े से पूछेगा कि तूने हमारे विरुद्ध गवाही क्यों दी तो वह कहेगा कि मुर्दों को जिलाने वाला जो खुदा है उसने हमें दूसरों के साथ गवाही देने को बुलाया था। (मं 6, सि. 24, सू 41, आयत 12, 20, 21)

समीक्षक : सर्वशक्तिमान ईश्वर तो क्षणभर में सब कुछ बना सकता है परन्तु मुसलमानों का खुदा दो दिन में सात आसमानों को बना सका। अगर खुदा ने कान, आंख और चमड़े को गवाही देने के लिए बुलाना था तो उन्हें जड़ क्यों बनाया? क्योंकि जड़ वस्तु तो बोल नहीं सकती। जीव का चमड़े से पूछना कि तूने मेरे विरुद्ध गवाही क्यों दी और चमड़े का उत्तर देना कि खुदा ने दिलायी मैं क्या करुं? यह अविश्वसनीय बातें हैं, ठीक उसी तरह जैसे कोई यह कहे कि मैंने बांझ स्त्री के पुत्र का विवाह देखा। यदि पुत्र ही होता हो वह बांझ क्यों कहलाती। अगर खुदा मुर्दों को जिलाता है तो मारता ही क्यों है? कयामत की रात तक मुर्दे कहां जमा होते रहते हैं, उनका न्याय शीघ्र क्यों नहीं होता। इन सब बातों से जिसे खुदा कहते हैं उसका ईश्वर होना सिद्ध नहीं होता।

(139) खुदा के पास आसमानों और पृथ्वी की कुंजियां हैं जिनसे वह ताले खोलता है, जिसे भोजन देना चाहता है देता है और जिसे चाहे तंग करता है। वह जो कुछ चाहे उत्पन्न करता है जिसको बेटियां देता है और जिसे चाहे बेटे देता है। वह जिसे चाहे बांझ बना देता है। किसी में इतनी शक्ति नहीं है कि अल्लाह से बात करे क्योंकि या तो उसके भेजे फरिश्ते पैगाम लाते हैं या फिर वह परदे के पीछे से बोलता है। (मं 6, सि 25, सू 42, आयत 12, 49, 50, 51)

समीक्षक : अल्लाह सब जगह ताले लगाकर रखता है तब तो उसके पास कुंजियों का भंडार होगा। वह जिसे चाहे बिना पुण्यकर्म के सुख दे देता है ओर जिसे चाहे बिना पाप किए दुःख देता है, कितना अन्यायी है इनका खुदा? बेटे–बेटियां देने की बात इसलिए लिख दी जिससे स्त्रियां भी इनके जाल में फंस जायें। यदि खुदा जिसे चाहता है उत्पन्न करता है तब तो वह दूसरा खुदा भी उत्पन्न कर सकता होगा?

मनुष्यों को तो बेटे–बेटियां खुदा देता है परन्तु पशु–पक्षियों और अन्य जीवों को संतान कौन देता है? स्त्री–पुरुष के समागम के बिना मनुष्य, पशु, पक्षी किसी की भी सन्तान क्यों नहीं होती? किसी को अपनी इच्छा से बांझ रखकर दुःख देने से क्या लाभ होता है उसे?

खुदा से केवल फरिश्ते ही बाते कर सकते हैं, इस बात से फरिश्ते और पैगम्बर अपना ही मतलब निकालते होंगे। परदे के पीछे से बात करने वाला कोई चालाक मनुष्य ही होगा, ईश्वर नहीं। ईश्वर सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान और

thearyasamaj.org

सर्वव्यापक है उसे फरिश्तों के द्वारा जानकारी प्राप्त नहीं करनी पड़ती। इसलिए यह कुरान ईश्वरकृत नहीं हो सकता।

(140) जब ईसा प्रत्यक्ष प्रमाण से आया

(मं 6 सि 25 सू 43 आयत 63)

समीक्षक : जब ईसा को खुदा ने भेजा और उसके उपदेश इंजील में थे तो फिर उसके विरुद्ध कुरान क्यों लिखा? इसलिए ये दोनों ही पुस्तकें ईश्वरकृत नहीं हैं।

(141) उसको पकड़कर दोजख के बीचो–बीच घसीटो, वहां वे इसी प्रकार रहेंगे और उन्हें सुन्दर आंखों वाली गोरियों से ब्याह देंगे।

(मं 6, सि 25, सू 44 आयत 47, 54)

समीक्षक : खुदा का न्याय कैसा है वह प्राणियों को पकड़कर घसीटने की आज्ञा देता है। इस तरह तो मुसलमान दूसरे धर्म वालों और निर्बलों को पकड़कर सताते रहेंगे। वह पुरोहित की तरह सांसारिक मनुष्य के विवाह करवाता है, क्या यही उसकी न्याय व्यवस्था है?

(142) जब तुम काफिरों से मिलो उन्हें मारकर उनकी गर्दनें चूर–चूर कर दो और उन्हें कैद कर लो। और बहुत सी बस्तियां हैं जो शक्ति में तेरी बस्ती से कठिन थीं। जिन्होंने तुझको निकाला था। हमने उन्हें मार दिया, किसी ने उनकी सहायता नहीं की। उस स्वर्ग की, जहां परहेजगारों को भेजने की प्रतिज्ञा की है, प्रशंसा करते हैं। उसमें स्वच्छ पानी और दूध की नहरें हैं। पीने वालों के लिए शराब की नहरें हैं और साफ किये गए शहद की भी। उनके मालिक ने उनके लिए मेवे भी वहां रखे हैं। (मं 6, सि 26, सू 47, आयत 4, 13, 15)

समीक्षक : कुरान के उपदेशों के प्रभाव से ही मुसलमान, गदर मचाने वाले, स्वार्थी और दयाहीन हैं। जिन्होंने मुहम्मद साहब को निकाला, खुदा ने उनको मारा, कितना पक्षपाती है इनका खुदा? दूध तो शीघ्र खराब होने वाली वस्तु है उसकी नहरें तो हो ही नहीं सकती। इसलिए कुरान की बातें मानने योग्य नहीं हैं।

(143) पृथ्वी हिलाने से हिल जायेगी। पहाड़ टुकड़े–टुकड़े होकर उड़ जायेंगे। खुदा के दाहिनी और बाईं ओर उसके सहायक खड़े रहते हैं। सुनहरे प्यालों में शराब लेकर लड़के फिरते हुए उसकी आज्ञा का

पालन करेंगे और उसके विरुद्ध न बोलकर उसका सिर नहीं दुखायेंगे। वहां तरह–तरह के पशु–पक्षियों का मांस और मेवे खाने को मिलेंगे। वहां सोने के तारों वाले पलंगों पर तकिए लगे होंगे और वहां हमने कुमारी और समान आयु वाली सुहागनों को उत्पन्न किया है। मैं कसम खाकर कहता हूं कि प्राणी उन्हें खाकर अपना पेट भरेंगे और बिछौनों पर उन स्त्रियों के साथ आनन्द भोगेंगे।

(मं 7, सि 27, सू 56, आयत 4 से 9, 15 से 23, 34 से 37, 53, 75)

समीक्षक : पृथ्वी तो पहले भी हिलती थी और सदा हिलती रहेगी। इससे मालूम पड़ता है कि कुरान बनाने वाला पृथ्वी को स्थिर मानता था। जब पहाड़ टुकड़े–टुकड़े होकर उड़ेंगे, तब तो जीव भी उड़ जायेंगे तब उनका दूसरा जन्म क्यों नहीं होगा। इनका खुदा आदमी ही है तभी तो उसके दायें–बायें सेवक खड़े रहते होंगे।

अगर इनके स्वर्ग में पलंग तकिए और सुन्दर स्त्रियां हैं तो वहां सुनार भी होते होंगे और रोग भी होंगे। क्योंकि जहां अच्छा खाने को मिलेगा, काम कोई होगा नहीं, वहां भोजन भी नहीं पचेगा और लोग रोगी ही होंगे। अगर वहां भी काम करना पड़ता है तब तो पृथ्वी और स्वर्ग में कोई अन्तर नहीं रह जाता। अगर वहां लड़के होंगे तो उनके मां–बाप और संबंधी भी होंगे, इससे झगड़े भी होते होंगे और रोग भी होते होंगे।

अगर वहां लोग मांस खाते हैं तब तो कसाइयों, शराब बेचने वालों, सुनारों आदि की दुकानें भी होंगी। इनके स्वर्ग में यदि लोग मांस खाते और मदिरा पीते हैं तब तो वहां स्त्रियां होनी ही चाहिये, नहीं तो उनके सिरों में गरमी चढ़ जायेगी और वे पागल हो जायेंगे। अगर खुदा स्वर्ग में कुंवारी लड़कियों को उत्पन्न करता है तो कुमार लड़कों को भी उत्पन्न करता होगा। उन कुमारी लड़कियों का विवाह तो यहां से स्वर्ग भेजे जाने वाले लोगों से हो जाता है तो फिर वहां पैदा होने वाले लड़कों का विवाह किससे होता होगा?

यहां बराबर आयु वाली स्त्रियां पतियों के साथ रहती हैं, लिखा है। यह भी ठीक नहीं है क्योंकि पुरुष की आयु स्त्री से हमेशा अधिक होनी चाहिए। यदि नरक वाले लोग थोर के वृक्षों को खाकर पेट भरेंगे तब तो वहां ऐसे वृक्ष उगते भी होंगे।

इनके स्वर्ग की कल्पना अरब देश से कुछ अधिक और नरक से कुछ कम

thearyasamaj.org

दिखाई देती है। इनका खुदा कसमें खाता है, यह काम झूठ बोलने वाले ही करते हैं। इसलिए इनका खुदा ईश्वर न होकर कोई चालाक मनुष्य ही दिखाई देता है।

(144) अल्लाह उन्हीं लोगों से मित्रता रखता है जो उसके मार्ग में लड़ते हैं। (मं 7, सि 28, सू 61, आयत 4)

समीक्षक : इनके खुदा ने ऐसे उपदेश करके अरब वालों को सबसे लड़वाकर सबको उनका शत्रु बना दिया। मनुष्य जाति में विरोध बढ़ाने और धर्म का नाम लेकर लड़वाने वाला कभी ईश्वर नहीं माना जा सकता।

(145) ऐ नबी क्यों हराम करता है उस वस्तु को जिसे खुदा ने तेरे लिए हलाल किया है। तू अपनी बीवियों की प्रसन्नता चाहता है और अल्लाह क्षमा करने वाला दयालु है। जल्दी है मालिक उसका जो वह तुमको छोड़ देते तो यह है कि उसको तुमसे अच्छी मुसलमान, ईमानवाली, सेवा करने वाली, तोबा करने वाली, भक्ति करने और रोजा रखने वाली पुरुष देखी और बिन देखी हुई बीवियां बदल दे।

(मं 7, सि. 28, सू 66, आयत 1,5)

समीक्षक : इनका खुदा मुहम्मद साहब के घर के भीतर और बाहर का प्रबन्ध करने वाला दास दिखाई देता है। पहली आयत का संबंध दो कहानियों से है। एक मुहम्मद साहब अपनी कई बीवियों में से एक के घर अपना प्रिय शहद का शर्बत पी रहे थे वहां देर लग जाने पर दूसरी बीवियां नाराज हो गई तो मुहम्मद साहब ने कसम खाकर कहा कि अब नहीं पीयेंगे। दूसरी मुहम्मद साहब रात को जिस बीवी की बारी थी उसके घर गए परन्तु वह मायके गई हुई थी इसलिए उन्होंनें वहां एक दासी को बुलाकर पवित्र किया।

पता चलने पर जब वह नाराज हुई तो मुहम्मद साहब ने सौगन्ध खाई कि ऐसा न करुंगा और उसे दूसरों को कहने से मना कर दिया।

फिर उन्होंने दूसरी बीवी से जा कहा। तब खुदा ने यह आयत उतारी जिस वस्तु को हमने तेरे लिए हलाल किया था उसे तू हराम क्यों करता है'। जो खुदा घर के झगड़ों का निपटारा करता है, पक्षपात करता है वह खुदा कैसे हो सकता है? और जो अनेक स्त्रियों को रखे और दासियों से सम्बन्ध बनाये वह पैगम्बर कैसे हो सकता है? इनका खुदा और पैगम्बर दोनों ही मनुष्य हैं ईश्वर नहीं।

इस आयत से लगता है खुदा ने मुहम्मद की बीवी को धमकाया होगा कि

thearyasamaj.org

यदि तू विरोध करेगी तो मुहम्मद साहब तुझे छोड़ देंगे और उनका खुदा तुझसे अच्छी बीवी बदल कर उन्हें दे देगा। इससे सिद्ध होता है कि कुरान स्वार्थी मनुष्य का लिखा हुआ है, ईश्वरकृत नहीं है।

(146) ऐ नबी झगड़ा कर काफिरों और गुप्त शत्रुओं से और उनके ऊपर सख्ती कर। (मं 7, सि 28, सू 66 आयत 9)

समीक्षक : जो खुदा पैगम्बर और मुसलमानों को दूसरे धर्म वालों से लड़ने के लिए उकसाता है, वह ईश्वर नहीं हो सकता क्योंकि अन्याय करना ईश्वर का स्वभाव नहीं है।

**(147) जिस दिन आसमान फट जायेगा, वह उस दिन सुस्त होगा। तब आठ फरिश्ते तेरे मालिक का तख्त ऊ
पर उठायेंगे। उस दिन तुम उसके सामने अपने दायें हाथ में अपना कर्मपत्र लिखे हुए लाओगे। तुम्हारी कोई बात उससे छिपी हुई नहीं होगी और जिसे बायें हाथ में कर्मपत्र दिया होगा, वह कहेगा हाय न दिया गया होता मैं कर्मपत्र अपना।**

(मं 7, सि 29, सू 69 आयत 16 से 19, 25)

समीक्षक : आकाश कोई वस्त्र तो है नहीं जो फट जाये। अगर ये ऊपर लोक को आसमान कहते हैं तो यह बात विद्या के विरुद्ध है। इनका खुदा मनुष्य ही है तभी तो वह तख्त पर बैठता है और आठ कहार उसे उठाते हैं।

ऐसा खुदा सर्वज्ञ सर्वव्यापक और सर्वशक्तिमान हो ही नहीं सकता, जो कर्मपत्र पढ़कर न्याय करता हे, जिसके दाएं हाथ में कर्मपत्र हो उन पुण्यात्माओं को स्वर्ग और जिन पापात्माओं के बायें हाथ में कर्मफल हो उन्हें नरक में भेजता है और जो एक स्थान पर रहता है। यह सब बातें इनके खुदा का मनुष्य होना ही सिद्ध करती हैं।

(148) चढ़ते हैं फरिश्ते और रुह तरफ उसकी वह अजाब होगा बीच उस दिन के कि है परिमाण उसका पचास हजार वर्ष। जब कि निकलेंगे कबरों में से दौड़ते हुए मानों कि वह बुतों के स्थानों की ओर दौड़ते हैं। (मं 7, सि 29 सू 70 आयत 4–43)

समीक्षक : पचास हजार वर्ष का दिन होता है तब तो रात भी इतनी ही बड़ी होती होगी, असंभव है इतना बड़ा दिन होना। कबरों में मुर्दों को यह सूचना कैसे दी जाती है कि वे कर्मपत्र लेकर खुदा की कचहरी में पहुंचें।

thearyasamaj.org

जब तक खुदा की कचहरी नहीं लगती तब तक तो पुण्यात्मा भी दुःख झेलते होंगे? जब पचास हजार वर्षों के दिन में न्याय पाने वालों की कतार लगती होगी तब तो वह खड़े–खड़े थक कर फिर मर जाते होंगे? एक बार कचहरी बंद होने पर इनका खुदा और फरिश्ते क्या लम्बे समय तक निकम्मे बैठे रहते हैं या मौज मस्ती करते रहते हैं? ऐसी बातें जंगली ही मान सकते हैं कोई विद्वान नहीं मानेगा।

(149) निश्चय उत्पन्न किया तुम को कई प्रकार से। क्या नहीं देखा तुमने कैसे उत्पन्न किया अल्लाह ने सात आसमानों को और बीच चांद को प्रकाशक और सूरज को दीपक किया।

(मं 7, सि 29, सू 71, आयत 14 से 16)

समीक्षक : यदि खुदा ने जीवों को बनाया है तो वे सदा स्वर्ग में नहीं रह सकते। सृष्टि का नियम है कि ईश्वर ने जो वस्तु बनाई है उसका नाश भी होता है। सात आसमान ऊपर तले बन नहीं सकते क्योंकि आकाश निराकार पदार्थ है।

यदि साकार मान भी लें तो सूरज चांद एक ऊपर और एक नीचे के आसमान को ही प्रकाश देंगे बाकी आसमानों में तो अन्धेरा ही रहेगा। इसलिए इनकी ये सब बातें मानने योग्य नहीं हैं।

(150) मस्जिदें अल्लाह के लिए हैं, उसके साथ किसी दूसरे को मत पुकारो। (मं 7, सि 29, सू 72 आयत 18)

समीक्षक : यदि यह बात सत्य है तो मुसलमान कलमें में खुदा के साथ मुहम्मद को क्यों पुकारते हैं 'लाइल्लाह इल्लिा, मुहम्मदर्रसूल्ला' यह कहना कुरान के विरुद्ध है। अगर मस्जिदें खुदा के घर हैं तब तो मुसलमान बहुत बड़े मूर्तिपूजक हैं क्योंकि जैनी और पौराणिक छोटी मूर्ति को ईश्वर का घर मानते हैं और मुसलमान इतनी बड़ी मस्जिद को, इसलिए मुसलमान बुतपरस्त हैं उन्हें दूसरों की निन्दा करने का कोई अधिकार नहीं है।

(151) इकट्ठा किया जायेगा सूरज और चांद।

(मं 7, सि 29, सू 75, आयत 9)

समीक्षक : सूरज और चांद कभी इकट्ठे नहीं हो सकते। सूरज चांद ही क्यों इकट्ठे करने हैं, बाकी सभी लोग क्यों नहीं इकट्ठे करते। ऐसी असंभव बातें जिस कुरान में लिखी हैं वह ईश्वरकृत हो ही नहीं सकता।

(152) और उनके ऊपर सदा रहने वाले लड़के फिरेंगे, जब तू उनको देखेगा तो अनुमान करेगा कि मोती बिखरे हुए हैं। उनको चांदी के कंगन पहिनाए जायेंगे और उनका रब उन्हें पवित्र शराब पिलायेगा। (मं 7, सि 29 सू 76, आयत 19, 21)

समीक्षक : ऐसा जान पड़ता है कि जवान लोग और स्त्रियां उनको तृप्त नहीं कर सकतीं, इसलिए कुकर्म करने के लिए मोतियों से सुन्दर लड़के रखे गए हैं, और कुरान के इसी वचन की आड़ लेकर ही दुष्ट लोगों ने लड़कों के साथ कुकर्म करने शुरु कर दिए हैं। इनके स्वर्ग में स्वामी को आनन्द मिलता है और सेवक को दुःख, ऐसा पक्षपात क्यों है?

खुदा ही जहां शराब पिलाता है तब तो वह लड़कों का सेवक ही माना जायेगा, फिर उसका सम्मान क्या रहेगा? जहां विषय भोग होते हैं, वहां सन्तान भी उत्पन्न होती है, इसलिए इनके स्वर्ग में भी सन्तान का जन्म होता होगा और उस सन्तान को खुदा पर ईमान लाए बिना और भक्ति किए बिना ही स्वर्ग मिल जाता होगा? कुछ लोगों को ईमान लाने पर और कुछ को धर्म के बिना ही स्वर्ग सुख देने से बड़ा अन्याय और क्या होगा?

(153) बदल दिए जायेंगे कर्मानुसार। और प्याले हैं भरे हुए। जिस दिन खड़े होंगे रूह और फरिश्ते सफ बांध कर। (मं 7, सि 30, सू 78, आयत 26, 34, 38)

समीक्षक : यदि सबको कर्मों के अनुसार ही फल मिलता है तो फरिश्तों, हूरों (स्त्रियां) और मोतियों के समान लड़कों ने ऐसे कौन से कर्म किए हैं जिनसे उन्हें हमेशा के लिए स्वर्ग में रहने का अधिकार मिल गया।

शराब के प्याले पीयेंगे तो नशे में आकर लड़ेंगे भी। रूह नाम का फरिश्तों का सरदार है क्या खुदा उसे और दूसरे फरिश्तों को कतार में खड़ा करके उनसे सब जीवों को सजा दिलायेगा? तो खुदा इस सारी पलटन को लेकर शैतान को पकड़ कर निष्कंटक राज्य क्यों नहीं करता?

(154) जब सूरज लपेटा जाये, तारे मैले हों जायें, पहाड़ चलाए जायें और आसमान की खाल उतारी जाये। (मं 7, सि 30 सू 81 आयत 1 से 3, 11)

समीक्षक : यह सारी बातें अज्ञानता ही प्रकट करती हैं। कुरान लिखने

वाले को कुछ भी ज्ञान न होगा, तभी उसने ऐसी असंभव बातें लिखकर जंगली लोगों पर अपना प्रभाव बढ़ाया है।

(155) जब आसमान फट जाये, तारे झड़ जायें, दरिया चीर जायें और कबरों से मुर्दे जीवित हो जायें।

(मं 7, सि 30, सू 82, आयत 1 से 4)

समीक्षक : ये सब बातें असंभव और नासमझी की ही है। इन्हें लिखने से कुरान के बनाने वाले की मूर्खता ही प्रकट होती है। इससे सिद्ध होता है कि कुरान ईश्वरकृत नहीं है।

(156) कसम है आसमान बुर्जों वाले की। किन्तु वह कुरान है बड़ा। बीच लौह महफूजे के। (मं 7, सि 30, सू 85, आयत 1, 21, 22)

समीक्षक : अगर कुरान बनाने वाले ने भूगोल पढ़ा होता तो वह आकाश को बुर्जों वाले किले के समान क्यों कहता। यदि वह राशियों को बुर्ज कहता है तो अन्य बुर्ज क्यों नहीं हैं? ये सब तारे लोक हैं, बुर्ज नहीं हैं। यदि यह कुरान खुदा ने बनाया है तब तो वह भी अविद्या से भरा होगा। तभी उस ने विद्या और तर्क के विरुद्ध बातें इसमें भर दी हैं।

(157) निश्चय वे मकर करते हैं, एक मकर। और मैं भी मकर करता हूँ एक मकर। (मं 7, सि 30, सू 86 आयत 15–16)

समीक्षक : मकर का अर्थ है ठगी। इनका खुदा चोरी और ठगी का जवाब चोरी और ठगी से ही देता होगा जो किसी प्रकार भी उचित नहीं कहा जा सकता।

(158) और जब आयेगा मालिक तेरा और फरिश्ते पंक्ति बांध के। और लाया जायेगा उस दिन दोजख को।

(मं 7, सि 30 सू 89, आयत 21–22)

समीक्षक : इनका खुदा एक सेनापति के समान अपनी सेना को कतार बांध के घुमाने वाला ही दिखाई देता है और नरक को इन्होंने घड़ा समझ रखा है जिसे भरते जायेंगे। परन्तु यह नहीं सोचा कि अनगिनत कैदी उसमें समायेंगे कैसे?

(159) बस कहा था वास्ते उनके खुदा के पैगम्बर ने, रक्षा करो खुदा की ऊंटनी की और उसको पानी पिलाना। बस झुठलाया उसको, बस

thearyasamaj.org

पांव काटे उसके, बस मरी डाली ऊपर उनके, रब उनके ने।

(मं 7, सि 30, सू 91, आयत 13–14)

समीक्षक : इनका खुदा ऊंटनी पर चढ़कर सैर करता होगा तभी तो उसने ऊंटनी रखी होगी? बिना कयामत के उसने झूठ बोलने वालों पर महामारी क्यों डाल दी? वह तो केवल कयामत वाले दिन ही न्याय करता है, इस तरह उसने अपना नियम क्यों तोड़ डाला? ऊंटनी का बार–बार वर्णन होने से सिद्ध होता है कि कुरान अरब देश के किसी रहने वाले ने ही लिखा है।

(160) जो ऐसे नहीं रुकेगा, उसको हम बालों के साथ घसीटेंगे। वह माथा ही झूठा और अपराधी है। हम दोजख के फरिश्ते को बुलायेंगे।

(मं 7, सि 30, सू 96, आयत 15, 16, 18)

समीक्षक : भला माथा भी कभी झूठा और अपराधी हो सकता है? खुदा इन चपरासियों के माथे के बाल पकड़कर घसीटने से भी न बचा। ऐसे काम करने वाला क्या कभी खुदा हो सकता है? इनका खुदा चालाक मनुष्य ही है।

(161) निश्चय उतारा हमने कुरान को बीच रात कदर के। तू क्या जाने कि कदर की रात क्या है? उसमें फरिश्ते और पवित्रात्मा उतरते हैं, मालिक की आज्ञा से हर काम के लिए।

(मं 7, सि 30, सू 97, आयत 1, 2, 4)

समीक्षक : यदि एक रात में ही कुरान उतारा तो यह आयत उस समय में उतरी और धीरे–धीरे उतारा यह बात कैसे सत्य सिद्ध होगी। इसमें लिखा है कि फरिश्ते और पवित्रात्मा खुदा के हुक्म से संसार का प्रबन्ध करने के लिए आते हैं। इससे स्पष्ट हो जाता है कि इनका खुदा मनुष्य की तरह एकदेशी है।

अब तक कुरान में खुदा, फरिश्ते और पैगम्बर तीन का वर्णन पढ़ा था अब एक पवित्रात्मा चौथा आ गया बीच में। ये पवित्रात्मा क्या है? ईसाई मत में भी पिता, पुत्र और पवित्रात्मा तीन का ही वर्णन है लेकिन कुरान में चौथा भी बढ़ गया है।

अगर पवित्रात्मा इन तीनों से अलग है तो खुदा, फरिश्ते और पैगम्बर को पवित्रात्मा कहा जाये या नहीं? यदि तीनों पवित्रात्मा हैं तो फिर अकेले खुदा को ही पवित्रात्मा क्यों कहा जाये? कसमें खाना भले लोगों का काम नहीं है

thearyasamaj.org

लेकिन इनका खुदा बार–बार कसमें खाता है। इसलिए न तो खुदा ईश्वर है और न ही कुरान ईश्वरकृत पुस्तक है।

स्वामी दयानन्द ने स्पष्ट कहा है 'मुझसे पूछो तो यह किताब न ईश्वर, न विद्वान की बनाई हुई और न विद्या की हो सकती है। इसमें जो थोड़ा सा सत्य है वे वेदादि पुस्तकों के अनुकूल होने से जैसे मुझको ग्राह्य है वैसे ही दूसरे धर्मों के निष्पक्ष विद्वानों को भी ग्राह्य है। इसके बिना जो कुछ इसमें है वह सब अविद्या, भ्रम जाल और मनुष्य की आत्मा को पशु समान बनाकर शांति भंग करा के, विद्रोह फैला के दुःख उत्पन्न करने वाला ही है।

परमात्मा सब मनुष्यों पर कृपा करे कि सबके सब प्रीति, परस्पर मेल और एक दूसरे के सुख की उन्नति करने में प्रवृत्त हों (जुट जायें)। यदि सब विद्वान लोग ऐसा करें तो परस्पर विरोध दूर करने, मेल होकर आनन्द में एक होकर सत्य की प्राप्ति में कोई कठिनाई नहीं होगी।

अल्लोपनिषद नियम

प्रश्न : क्या तुमने सब अथर्ववेद देखा है? यदि देखा है तो अल्लोपनिषद् देखो। यह उसमें साफ लिखा है। फिर क्यों कहते हो कि अथर्ववेद में मुसलमानों का नाम निशान भी नहीं है?

उत्तर : जिस किसी के पास बीस काण्डों वाली मंत्र संहिता अथर्ववेद है उसे देख लो, उसमें कहीं तुम्हारे मत या पैगम्बर का नामो–निशान नहीं मिलेगा। यह अल्लोपनिषद् न तो अथर्ववेद में, न उसके गोपथ ब्राह्मण या किसी शाखा में है। ऐसा अनुमान है कि अकबर के समय में किसी थोड़ी संस्कृत और अरबी भाषा जानने वाले ने इसे लिखा होगा तभी इसमें दोनों भाषाओं के शब्द मिलते हैं।

यदि इसका अर्थ देखा जाये तो यह बनावटी, वेद और व्याकरण के विरुद्ध है। ऐसी और भी बहुत सी उपनिषदें दूसरे मत वालों ने बना ली हैं, जिसमें स्वरोपनिषद्, रामतापनी, गोपाल तापनी और नृसिंह तापनी आदि हैं।

अथर्ववेद जिसकी रचना ईश्वर द्वारा सृष्टि के आदिकाल में ऋषियों के माध्यम से हुई उसमें लगभग 1400–1500 वर्ष पूर्व आरम्भ हुए धर्म का वर्णन हो ही नहीं सकता। ऐसे ग्रन्थ लोगों को भ्रम में डालने के लिए ही बनाए गये हैं।

thearyasamaj.org

प्रश्न : आज तक किसी ने ऐसा नहीं कहा जैसा अब तुम कहते हो, हम तुम्हारी बात कैसे मानें?

उत्तर : हमारी बात झूठ नहीं हो सकती इसे आप मानों या न मानों, इससे कुछ फर्क नहीं पड़ता। मैंने तो इसे गलत सिद्ध कर दिया अब यदि आप अथर्ववेद, गोपथ इसकी शाखाओं में जैसा तुम कहते हो वैसा लिखा दिखा दो और विषय के साथ संबंध रखने वाले अर्थों से उसे सत्य सिद्ध कर दो तो तुम्हारी बात प्रमाण सहित होने से सत्य मानी जा सकती है।

प्रश्न : हमारा मत अच्छा है। इसमें सब प्रकार का सुख और अंत में मुक्ति होती है?

उत्तर : सब मत वाले ऐसा ही कहते हैं फिर किसकी बात सच मानी जाये। हम तो यही मानते हैं कि सत्यभाषण, अहिंसा, दया आदि शुभ गुण सब धर्मों में अच्छे हैं और वाद–विवाद, ईर्ष्या–द्वेष, झूठ बोलना आदि कर्म सब धर्मों में बुरे हैं। यदि तुम सत्यमत ग्रहण करना चाहते हो तो वैदिक मत को ग्रहण करो।

स्वामी दयानन्द जी का मंतव्य

'सर्वतंत्र या सार्वजनिक धर्म उसको कहते हैं जिसे सदा में सब मानते आए हैं, मानते हैं और मानते रहेंगे, इसीलिए उसको सनातन नित्य धर्म कहते हैं कि जिसका विरोधी कोई भी न हो। अविद्यायुक्त या भ्रमित करने वाले मत को बुद्धिमान लोग नहीं मानते हैं। जिसको सत्यमानी, सत्यवादी, सत्यकारी, परोपकारी, पक्षपातरहित विद्वान मानते हैं वही सबको मानने योग्य है और जिसको नहीं मानते वह छोड़ देने योग्य है। अब तो वेद आदि सत्यशास्त्र हैं जिन्हें ब्रह्मा से लेकर जैमिनी मुनि तक सब ने माना है उनमें वर्णन किए ईश्वर आदि पदार्थ जिनको मैं भी मानता हूँ, सब के सामने प्रकाशित करता हूँ।'

'मैं अपना मन्तव्य उसी को जानता हूँ जो तीनकाल में सबको एक सा मानने योग्य है। जो सत्य है उसको मानना, मनवाना और जो असत्य है उसे छोड़ना, छुड़वाना ही मेरा उद्देश्य है। मेरा नया मत चलाने का कोई विचार नहीं है। यदि मैं पक्षपात करता तो आर्यावर्त में प्रचलित अनेक तों में से किसी एक मत को स्वीकार कर लेता। मैं अधर्मयुक्त कोई बात स्वीकार नहीं करता हूँ और धर्मयुक्त कोई बात छोड़ना नहीं चाहता हूँ।'

'मनुष्य वही है जो दूसरों के सुख–दुःख को अपने सुख–दुःख के समान

जाने। अन्याय करने वाले बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरे।

इतना ही नहीं, अपनी पूरी सामर्थ्य से धर्मात्माओं (चाहे वे अनाथ, निर्बल और गुणरहित हों) की रक्षा, उन्नति और प्रिय आचरण करे तथा अधर्मी चाहे सनाथ, बलवान और गुणवान हो तो भी उसका नाश, अवनति और अप्रिय आचरण करे, अर्थात् जहाँ तक हो सके न्यायकारियों के बल की उन्नति और अन्यायकारियों के बल को हानि पहुँचाने में सदा लगा रहे।

इस काम में चाहे उसे कितना भी कष्ट उठाना पड़े तो भी अपने इस मनुष्यरूप धर्म को न छोड़े।'

●●●

thearyasamaj.org